नमो नमो निम्मलदंसणस्स

पूज्य आनंद-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर-गुरुभ्यो नमः

सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि

भाग 11

आगम - ५

'भगवती' मूलं एवं वृत्तिः [४]

मूल संशोधक :- पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्यश्री आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराजसाहेब

अभिनव-संकलनकर्ता :- आगम दिवाकर मुनिश्री दीपरत्नसागरजी [M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]

पूज्य शासनप्रभावक आचार्यश्री हर्षसागरसूरिजी की प्रेरणा से
'वर्धमान जैन आगम मंदिर संस्था' पालिताणा

ईस प्रोजेक्ट के संपूर्ण-अनुदान-दाता

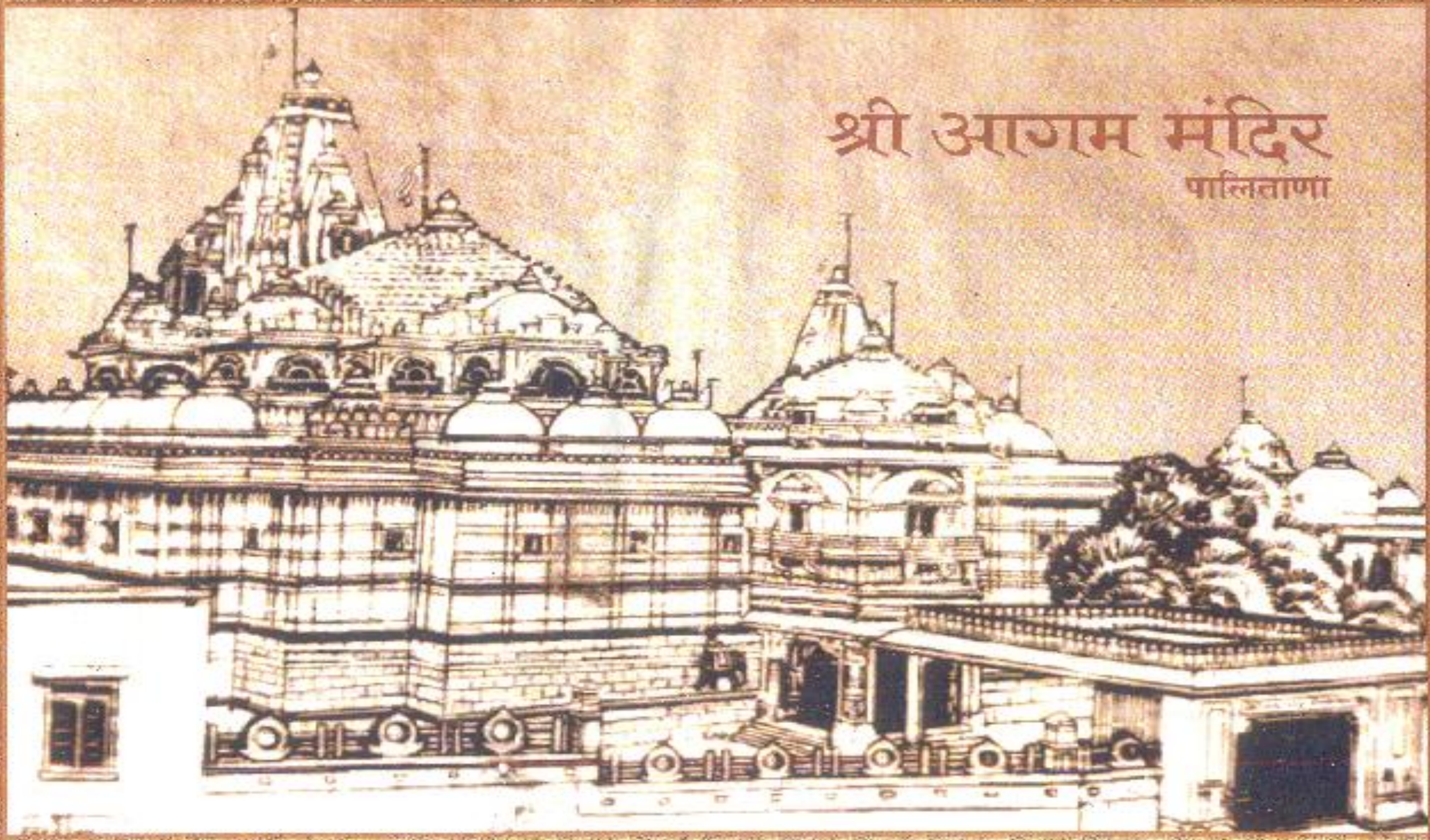

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि

मूल संशोधक

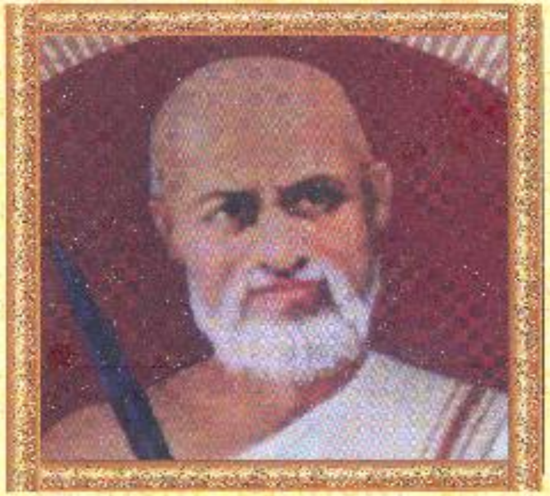

पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्य
श्री आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराज

अभिनव-संकलनकर्ता

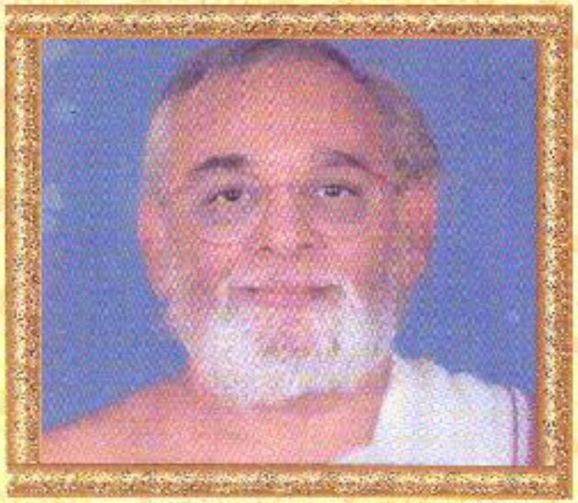

आगम दिवाकर मुनिश्री दीपरत्नसागरजी
[M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]

प्रत-प्राप्ति और पेज-सेटिंग कर्ता : www.jainelibrary.org के चेरमन श्री प्रवीणभाई शाह, अमेरिका
मुद्रक : नवप्रभात प्रिन्टींग प्रेस अमदाबाद Mo 9825598855 / 9825306275

आगम

वाचना शताब्दी वर्ष

[भाग-११] श्री भगवती-अंगसूत्रम्- भाग-४

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

पूज्य श्रीआनंद-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर गुरूभ्यो नम:

“भगवती” मूलं एवं वृत्ति:

(अपरनाम- “व्याख्याप्रज्ञप्ति”) शतक- २१ से ४१

[मूलं एवं अभयदेवसूरि रचित वृत्ति:]

[आद्य संपादक: - पूज्य आगमोद्धारक आचार्यदेव श्री आनंदसागर सूरीश्वरजी म॰ सा॰]

(किञ्चित् वैशिष्ठ्यं समर्पितेन सह)

पुन: संकलनकर्ता→ **मुनि दीपरत्नसागर** (M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि)

28/07/2017, शुक्रवार, २०७३ श्रावण शुक्ल ५

‘सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि’ श्रेणि भाग-११

श्री आगमोद्धारक-वाचना-शताब्दी-वर्ष-निमित्त ‘आगम-वृत्ति-मुद्रण-प्रोजेक्ट’

सामाचारी-संरक्षक, ज्ञानधनी, आगम-संशोधक, तीव्र-मेधावी, समाधिमृत्यु-प्राप्त, बहुमुखीप्रतिभाधारक

पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्यदेव श्री आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराज साहेब

◆ जिन्होने शुद्ध-श्रद्धा, सम्यक्-श्रुत आराधना, यथाख्यातचारित्र के प्रति गति और अंत समय देह-ममत्व के त्याग के द्‌वारा कायोत्सर्ग नामक अभ्यंतर-तप कि मिशाल कायम कि है ऐसे बहुश्रुत आचार्य श्री सागरानंदसूरीश्वरजी महाराज का परिचय कराना मेरे लिए नामुमकिन है, फ़िर भी गुरुभक्ति बुद्धि से श्रद्धांजली स्वरुप एक मामुली सी झलक पैस करने का यह प्रयास मात्र है |

◆ चारित्र-ग्रहण के बाद अल्प कालमे जो अपने गुरुदेव की छत्रछाया से दूर हो गये, तो भी गुरुदेव के स्वर्ग-गमन को सिर्फ़ कर्मो का प्रभाव मानकर अपने संयम के लक्ष्य प्रति स्थिर रहते हुए अकेले ज्ञान-मार्ग कि साधना के पथ पर चले | पढाई के लिए ही कितने महिनो तक रोज एकासणा तप के साथ बारह किल्लोमिटर पैदल विहार भी किया | लेकिन अपने मंझिल पे डटे रहे, और परिणाम स्वरुप संस्कृत एवं प्राकृत भाषा का, प्राचीन लिपिओ का, व्याकरण-न्याय-साहित्य आदि का सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त किया | जैन आगमशास्त्रो के समुद्र को भी पार कर गए|

◆ एक अकेला आदमी भी क्या नहीं कर शकता? इस प्रश्न का उत्तर हमें इस महापुरुष के जीवन और कवन से मिल गया, जब वे चल पड़े देवर्द्धिगणी क्षमाश्रमण के स्थापित पथ पर. बिना किसी सहाय लिए हुए सिर्फ अकेले ही "जैन-आगम-शास्त्रो" को दीर्घजीवी बनाने के लिए अनेक हस्तप्रतो से शुद्ध-पाठ तैयार किये | दो वैकल्पिक आगम, कल्पसूत्र और निर्युक्तिओ को जोड़कर ४५ आगम-शास्त्रो को संशोधित कर के संपादित किया | फिर पालीताणामें आगम मंदिर बनवाकर आरस-पत्थर के ऊपर ये सभी आगम-साहित्य को कंडारा, सूरतमें ताम्रपत्र पर भी अंकित करवाए और "आगम मंजूषा" नाम से मुद्रण भी करवा के बड़ी बड़ी पेटीमें रखवा के गाँव गाँव भेज दिए | वर्तमानकालमे सर्व प्रथमबार ऐसा कार्य हुआ |

◆ सिर्फ मूल आगम के कार्य से ही उन के कदम रुके नही थे, उन्होंने आगमो की वृत्ति, चूर्णि, निर्युक्ति, अवचूरी, संस्कृत-छाया आदि का भी संशोधन-सम्पादन किया | उपयोगी विषयो के लिए उन्होंने एक लाख श्लोक प्रमाण संस्कृत-प्राकृत नए ग्रंथो की रचना भी की | कितने ही ग्रंथो की प्रस्तावना भी लिखी | ये सम्यक्-श्रुत मुद्रित करवाने के लिए आगमोदय समिति, देवचंद लालभाई इत्यादि विभिन्न संस्था की स्थापना भी की |

◆ ज्ञानमार्ग के अलावा सम्मेतशिखर, अंतरीक्षजी, केशरियाजी आदि तीर्थरक्षा कर के सम्यक-दर्शन-आराधना का परिचय भी दिया | राजाओं को प्रतिबोध कर के और वाचनाओ द्‌वारा अपनी प्रवचन-प्रभावकता भी उजागर करवाई | बालदिक्षा, देवद्रव्य-संरक्षण, तिथि-प्रश्न इत्यादि विषयोमे सत्य-पक्षमें अंत तक दृढ़ रहे | जैनशासन के लिए जब जरुरत पड़ी तब अदालती कारवाईंओ का सामना भी बड़ी निडरता से किया था |

◆ सागरानंदजी के नाम से मशहूर हो चुके पूज्य आनंदसागरसूरीश्वरजीने अपने परिवार स्वरुप ७०० साधू-साध्वीजी भी शासन को भेट किये |

...ये थे हमारे गुरुदेव "सागरजी"...

......मुनि दीपरत्नसागर...

संयमैकलक्षी, उपधान-तप-प्रेरक, चारित्र-मार्ग-रागी, प्रवचन-पटु, सुपरिवार-युक्त

पूज्य गच्छाधिपतिआचार्यदेव श्री देवेन्द्रसागरसूरीश्वरजी महाराज साहेब

*** परमपूज्य आचार्यश्री आनंदसागरसूरीश्वरजी के पाट-परंपरामे हुए तिसरे गच्छाधिपति थे पूज्य आचार्य श्री देवेन्द्रसागरसूरीश्वरजी, जो एक पून्यवान् आत्मा थे, दीक्षा ग्रहण के बाद अल्पकालमे ही एक शिष्य के गुरु बन गये | फ़िर क्या ! शिष्यो कि संख्या बढती चली, बढ़ते हुए पुन्य के साथ-साथ वे आखिर 'गच्छाधिपति' पद पे आरूढ़ हो गए | इस महात्मा का पुन्य सिर्फ शिष्यों तक सिमित नही था, वे जहा कहीं भी 'उपधान-तप' की प्रेरणा करते थे, तुरंत ही वहां 'उपधान' हो जाते थे | प्रवचनपटुता एवं पर्षदापुन्य के कारण उन के उपदेश-प्राप्त बहोत आत्माओने संयम-मार्ग का स्वीकार किया | खुद भी संयमैकलक्षी होने के कारण चारित्रमार्ग के रागी तो थे ही, साथसाथ ज्ञानमार्ग का स्पर्श भी उन का निरंतर रहेता था | आप कभी भी दुपहर को चले जाइए, वे खुद अकेले या शिष्य-परिवार के साथ कोई भी ग्रन्थ के अध्ययन-अध्यापनमें रत दिखाई देंगे |

*** ये तो हमने उनके जीवन के दो-तीन पहेलु दिखाए | एक और भी अनुसरणीय बात उन के जीवनमें देखने को मिली थी- 'आराधना-प्रेम'. कैसी भी शारीरिक स्थिति हो, मगर उन्होंने दोनों शाश्वती ओलीजी, [पोष}दशमी, शुक्ल पंचमी, त्रिकाल देववंदन, पर्व या पर्वतिथि के देववंदन आदि आराधना कभी नहीं छोड़ी | आखरी सालोमें जब उन को एहसास हो गया की अब 'अंतिम-आराधना' का अवसर नजदीक है, तब उन के मुहमें एक ही रटण बारबार चालु हो गया- "*अरिहंतनुं शरण, सिद्धनुं शरण, साधुनुं शरण, केवली भगवंते भाखेला धर्मनुं शरण* " इसी चार शरणो के रटण के साथ ही वे समाधि-मृत्यु-रूप सम्यक् निद्रा को प्राप्त हुए थे | ऐसे महान् सूरिवर को भावबरी वंदना | *** मुनि दीपरत्नसागर...

◆◆◆ श्री वर्धमान जैन आगम मंदिर संस्था, पालिताणा ◆◆◆

पूज्यपाद आनंदसागर-सूरीश्वरजी की बौद्धिक-प्रतिभा का मूर्तिमंत स्वरुप ऐसी इस संस्था की स्थापना विक्रम-संवत १९९९ मे महा-वद ५ को हुइ| *पूज्य आचार्य हर्षसागरसूरिजी की प्रेरणा से* जिन की तरफ़ से इस *सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि* के लिए संपूर्ण द्रव्य-सहाय की प्राप्ति हुइ |

शिल्प-स्थापत्य, शिलोत्कीर्ण आगम और समवसरण स्थित नयनरम्य ४५ चौमुख जिन-प्रतिमाजी से सुशोभित ऐसा ये 'आगममंदिर' है, जो शत्रुंजय-गिरिराज कि तलेटीमे स्थित है | वर्तमान २४ जिनवर, २० विहरमान जिनवर और १ शाश्वत मिलाकर ४५ चौमुखजी यहा बिराजमान है | जहां ४० समवसरण की रचना मेरु पर्वत के तिनो काण्ड के वर्णो के अनुसार चार अलग-अलग रंगो के आरस-पत्थर से बना है, देवो द्वारा रचित समवसरण के शास्त्र वर्णन-अनुसार आगम-मंदिर कि समवसरण का स्थापत्य है | ऐसी अनेक विशेषता से युक्त ये आगममंदिर है |

****** मुनि दीपरत्नसागर...***

'सागर-समुदाय-एकता-संरक्षक, तीर्थ-उद्धार-कार्य-प्रवृत्त, गुणानुरागी'

इस "सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि' श्रेणि भाग १ से ४० के संपूर्ण अनुदान के प्रेरणादाता

पूज्य शासनप्रभावक आचार्य श्री हर्षसागरसूरिजी महाराज साहेब

पूज्यपाद स्व॰ गच्छाधिपति देवेन्द्रसागर-सूरीश्वरजी के विनयी शिष्य एवं दो गच्छाधिपतिओ के मुख्य सहायक के रुपमे 'सागर समुदाय' के सुचारु संचालक पूज्य हर्षसागरसूरिजी, जिन की प्रेरणा से ये "सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि" के मुद्रण के लिए संपूर्ण द्रव्यराशि प्राप्त हुई , उनका अत्यल्प परिचय यहां करेंगे| समुदाय-एकता के लिए सदैव प्रयत्नशील रहते हुए ये महात्मा *समुदाय के साधु-साध्वीजी* की आवश्यकताओकी पूर्ती के लिए भी प्रवृत्त रहेते है, प्राचीन-अर्वाचीन तीर्थो के जीर्णोद्धार एवं विकाश के लिए भी उत्साहित रहेते है, ज्ञान-क्षेत्र अछूता न रहे इसीलिए अनुमोदना, अनुदान एवं समय मिलने पर शास्त्र-वांचनमें भी रूचि रखते है | समुदाय के जरूरतमंद साध्वीजी भगवंतो के आवास का विषय हो या साध्वीजी के विहारमें मजदूर का वेतन चुकाना हो, ऐसे छोटे-छोटे कार्यो के प्रति भी उन का लक्ष्य रहेता है | दर्शन-शुद्धि के लिए जब उन्होंने समग्र भारतवर्ष के १०० साल तक के पुराने जिनालयो में १८ अभिषेक की प्रेरणा की, उस वक्त लगभग सभी अभिषेक-सामग्री की द्रव्य-शुद्धि का ख़याल रखते हुए अपनी मेधावी बुद्धि का परिचय दिया था, साथमे अनुकंपा भाव से पुजारी या विधि करानेवाले को यत्किंचित् बहुमान प्रगट करते हुए कुछ धन-राशि प्रदान करवाई |

ऐसे बहुगुण-संपन्न महात्मा पूज्य आचार्यश्री हर्षसागर-सूरिजी को हम भावभरी वंदना करते हुए इस श्रुतकार्य का प्रारंभ करने जा रहे है |

**** मुनि दीपरत्नसागर*

[कात्रेज]पूना, शंखेश्वर, कपडवंज, प्रभासपाटण आदि स्थानोमे आगममंदिर के प्रेरक, कर्मग्रंथ अभ्यासु, निस्पृह महात्मा

पूज्यपाद गच्छाधिपति आचार्य श्री दौलतसागर-सूरीश्वरजी महाराज साहेब

(एवं) अजातशत्रु, स्वाध्याय-रसिक, प्रशांतमूर्ती और अपने गुरु के प्रीतिपात्र

परम पूज्य आचार्य श्री नंदीवर्धनसागर-सूरिजी महाराज साहेब

इस पवित्र श्रुत-कार्यमे दोनो सूरिवरो का स्मरण करते हुए कोटि कोटि वंदना के साथ

.......मुनि दीपरत्नसागर

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

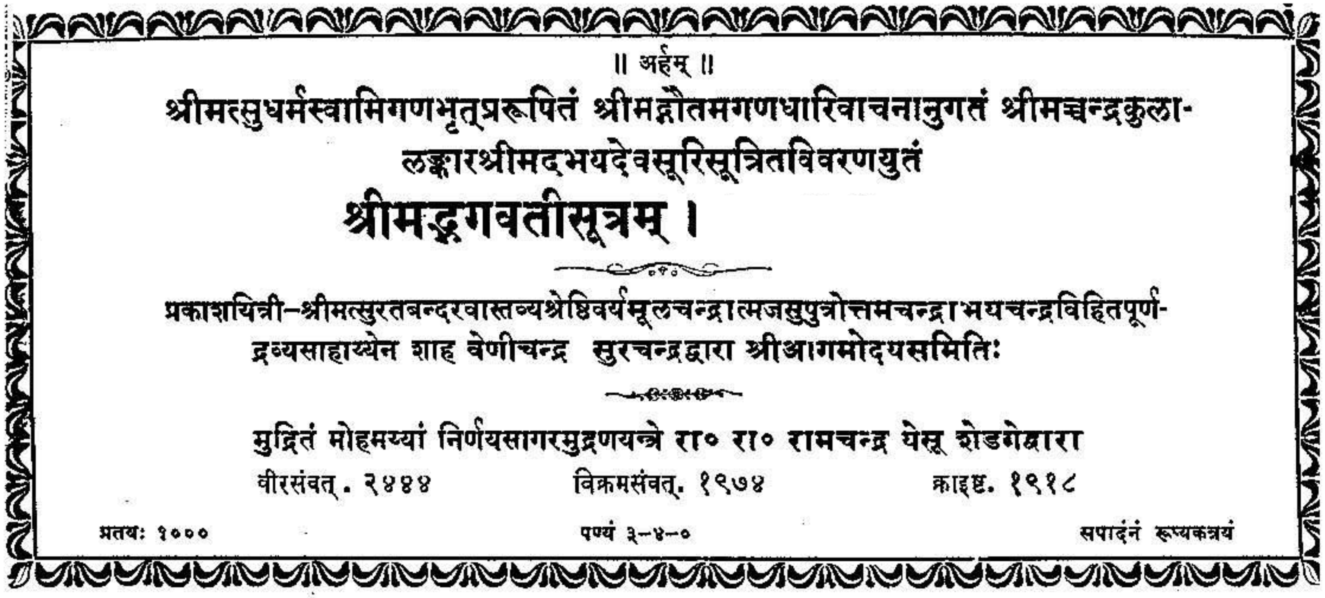

॥ अर्हम् ॥

श्रीमत्सुधर्मस्वामिगणभृत्प्ररूपितं श्रीमद्गौतमगणधारिवाचनानुगतं श्रीमच्चन्द्रकुला-
लङ्कारश्रीमदभयदेवसूरिसूत्रितविवरणयुतं

श्रीमद्भगवतीसूत्रम् ।

प्रकाशयित्री–श्रीमत्सुरतबन्दरवास्तव्यश्रेष्ठिवर्यमूलचन्द्रात्मजसुपुत्रोत्तमचन्द्राभयचन्द्रविहितपूर्ण-
द्रव्यसाहाय्येन शाह वेणीचन्द्र सुरचन्द्रद्वारा श्रीआगमोदयसमितिः

मुद्रितं मोहमय्यां निर्णयसागरमुद्रणयन्त्रे रा० रा० रामचन्द्र येसू शेडगेद्वारा

वीरसंवत्. २४४४ विक्रमसंवत्. १९७४ क्राइष्ट. १९१८

प्रतयः १००० पण्यं ३–४–० सपादं रूप्यकत्रयं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवती-(अङ्ग)सूत्रस्य मूल “टाइटल पेज”

मूलाङ्का: ८६८ + ११४ **भगवती (अङ्ग)सूत्रस्य विषयानुक्रम** दीप-अनुक्रमा: १०८७

मूलांक::	विषय:	पृष्ठांक:	मूलांक:	विषय:	पृष्ठांक:	मूलांक:	विषय:	पृष्ठांक:
♦	शतकं - १		..♦	......शतकं - ३		..♦	......शतकं - ५	
००१	उद्देशक: ०१ चलन		१७०	उद्देशक: ०२ चमरोत्पात		२६४	उद्देशक: ०९ राजगृह	
०२६	उद्देशक: ०२ दु:ख		१७८	उद्देशक: ०३ क्रिया		२७१	उद्देशक: १० चन्द्रमा	
०३४	उद्देशक: ०३ कांक्षाप्रदोष		१८४	उद्देशक: ०४ यान		♦	शतकं - ६	
०४६	उद्देशक: ०४ कर्मप्रकृति		१८९	उद्देशक: ०५ स्त्री		२७२	उद्देशक: ०१ वेदना	
०५२	उद्देशक: ०५ पृथ्वी		१९१	उद्देशक: ०६ नगर		२७७	उद्देशक: ०२ आहार	
०६९	उद्देशक: ०६ यावंत		१९३	उद्देशक: ०७ लोकपाल		२७८	उद्देशक: ०३ महा-आश्रव	
०७९	उद्देशक: ०७ नैरयिक		२०१	उद्देशक: ०८ देवाधिपति		२८६	उद्देशक: ०४ सप्रदेशक	
०८५	उद्देशक: ०८ बाल		२०५	उद्देशक: ०९ इन्द्रिय		२९१	उद्देशक: ०५ तमस्काय	
०९४	उद्देशक: ०९ गुरुत्व		२०६	उद्देशक: १० परिषद्		३००	उद्देशक: ०६ भव्य	
१०२	उद्देशक: १० चलत		♦	शतकं - ४		३०२	उद्देशक: ०७ शाली	
♦	शतकं - २		२०७	उद्देशका: १-४ लोकपाल-विमान		३१३	उद्देशक: ०८ पृथ्वी	
१०५	उद्देशक: ०१ स्कंदक		२१०	उद्देशका: ५-८लोकपालराजधानी		३१७	उद्देशक: ०९ कर्म	
११८	उद्देशक: ०२ समुद्घात		२११	उद्देशक: ०९ नैरयिक		३२०	उद्देशक: १० अन्ययूथिक	
११९	उद्देशक: ०३ पृथ्वी		२१२	उद्देशक: १० लेश्या		♦..	शतकं - ७....	
१२२	उद्देशक: ०४ इन्द्रिय		♦..	शतकं - ५.....		३२७	उद्देशक: ०१ आहार	
१२३	उद्देशक: ०५ अन्यतीर्थिक		२१५	उद्देशक: ०१ रवि		३३९	उद्देशक: ०२ विरति	
१३८	उद्देशक: ०६ भाषा		२२०	उद्देशक: ०२ वायु		३४५	उद्देशक: ०३ स्थावर	
१३९	उद्देशक: ०७ देव		२२३	उद्देशक: ०३ जालग्रंथिका		३५१	उद्देशक: ०४ जीव	
१४०	उद्देशक: ०८ चमरचंचा		२२५	उद्देशक: ०४ शब्द		३५३	उद्देशक: ०५ पक्षी	
१४१	उद्देशक: ०९ समयक्षेत्र		२४१	उद्देशक: ०५ छद्मस्थ		३५५	उद्देशक: ०६ आयु	
१४२	उद्देशक: १० अस्तिकाय		२४४	उद्देशक: ०६ आयु		३६१	उद्देशक: ०७ अनगार	
♦..	शतकं - ३.....		२५३	उद्देशक: ०७ पुद्गल		३६५	उद्देशक: ०८ छद्मस्थ	
१५१	उद्देशक: ०१ चमरविकुर्वणा		२६२	उद्देशक: ०८ निर्ग्रन्थीपुत्र		३७१	उद्देशक: ०९ असंवृत	

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

मूलाङ्का: ८६८ + ११४ | भगवती (अङ्ग)सूत्रस्य विषयानुक्रम | दीप-अनुक्रमा: १०८७

मूलांक:	विषय:	पृष्ठांक:	मूलांक:	विषय:	पृष्ठांक:	मूलांक:	विषय:	पृष्ठांक:
..♦	.....शतकं - ७		..♦	.....शतकं - १०		..♦	.....शतकं - १२	
३७७	उद्देशक: १० अन्यतीर्थिक		४८२	उद्देशक: ०३ आत्मऋद्धि		५४२	उद्देशक: ०५ अतिपात	
♦	शतकं - ८		४८७	उद्देशक: ०४ श्यामहस्ती		५४६	उद्देशक: ०६ राहू	
३८१	उद्देशक: ०१ पुद्गल		४८८	उद्देशक: ०५ देव		५५०	उद्देशक: ०७ लोक	
३८९	उद्देशक: ०२ आशीविष		४९०	उद्देशक: ०६ सभा		५५२	उद्देशक: ०८ नाग	
३९७	उद्देशक: ०३ वृक्ष		४९३	उद्देशका: ०७-३४ अंतर्द्वीप		५५४	उद्देशक: ०९ देव	
४००	उद्देशक: ०४ क्रिया		♦	शतकं - ११		५६०	उद्देशक: १० आत्मा	
४०१	उद्देशक: ०५ आजीविक		४९४	उद्देशक: ०१ उत्पल		♦	शतकं - १३	
४०५	उद्देशक: ०६ प्रासुकआहार		४९९	उद्देशक: ०२ शालूक		५६३	उद्देशक: ०१ पृथ्वी	
४१०	उद्देशक: ०७ अदत्तादान		५००	उद्देशक: ०३ पलाश		५६७	उद्देशक: ०२ देव	
४१२	उद्देशक: ०८ प्रत्यनिक		५०१	उद्देशक: ०४ कुम्भिक		५६८	उद्देशक: ०३ नरक	
४२२	उद्देशक: ०९ प्रयोगबन्ध		५०२	उद्देशक: ०५ नालिक		५६९	उद्देशक: ०४ पृथ्वी	
४३०	उद्देशक: १० आराधना		५०३	उद्देशक: ०६ पद्म		५८४	उद्देशक: ०५ आहार	
♦	शतकं - ९		५०४	उद्देशक: ०७ कर्णिक		५८५	उद्देशक: ०६ उपपात	
४३८	उद्देशक: ०१ जम्बू		५०५	उद्देशक: ०८ नलिन		५८९	उद्देशक: ०७ भाषा	
४४०	उद्देशक: ०२ ज्योतिष्क		५०६	उद्देशक: ०९ शिवराजर्षि		५९३	उद्देशक: ०८ कर्मप्रकृति	
४४४	उद्देशका: ०३-३० अंतर्द्विप		५१०	उद्देशक: १० लोक		५९४	उद्देशक: ०९ अनगारवैक्रिय	
४४५	उद्देशक: ३१ असोच्चा		५१४	उद्देशक: ११ काल		५९५	उद्देशक: १० समुद्घात	
४५१	उद्देशक: ३२ गांगेय		५२५	उद्देशक: १२ आलभिका		♦..	शतकं - १४.....	
४६०	उद्देशक: ३३ कुण्डग्राम		♦..	शतकं - १२.....		५९६	उद्देशक: ०१ चरम	
४७१	उद्देशक: ३४ पुरुषघातक		५२९	उद्देशक: ०१ शंख		६००	उद्देशक: ०२ उन्माद	
♦..	शतकं - १०.....		५३४	उद्देशक: ०२ जयंति		६०३	उद्देशक: ०३ शरीर	
४७३	उद्देशक: ०१ दिशा		५३७	उद्देशक: ०३ पृथ्वी		६०७	उद्देशक: ०४ पुद्गल	
४७७	उद्देशक: ०२ संवृतअनगार		५३८	उद्देशक: ०४ पुद्गल		६१२	उद्देशक: ०५ अग्नि	

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

मूलाङ्का: ८६८ + ११४ **भगवती (अङ्ग)सूत्रस्य विषयानुक्रम** दीप-अनुक्रमा: १०८७

मूलांक::	विषय:	पृष्ठांक:	मूलांक:	विषय:	पृष्ठांक:	मूलांक:	विषय:	पृष्ठांक:
..♦	.....शतकं - १४		..♦	.....शतकं - १७		..♦	.....शतकं - १९	
६१५	उद्देशक: ०६ आहार		७०६	उद्देशक: ०४ क्रिया		७७०	उद्देशक: ०८ निर्वृत्ति	
६१८	उद्देशक: ०७ संश्लिष्ट		७०८	उद्देशका: ६-११ पृथ्व्यादिकाय		७७४	उद्देशक: ०९ करण	
६२४	उद्देशक: ०८ अंतर		७१५	उद्देशक: १२ एकेन्द्रिय		७७५	उद्देशक: १० व्यंतर	
६३१	उद्देशक: ०९ अनगार		७१६	उद्देशका:१३-१७ नागादिकुमार		♦	शतकं - २०	
६३६	उद्देशक: १० केवली		♦	शतकं - १८		७७९	उद्देशक: ०१ बेईन्द्रिय	
♦	शतकं - १५		७२१	उद्देशक: ०१ प्रथम		७८१	उद्देशक: ०२ आकाश	
६३७	--गोशालक		७२७	उद्देशक: ०२ विशाखा		७८३	उद्देशक: ०३ प्राणवध	
♦	शतकं - १६		७२८	उद्देशक: ०३ माकंदीपुत्र		७८५	उद्देशक: ०४ उपचय	
६६०	उद्देशक: ०१ अधिकरण		७३३	उद्देशक: ०४ प्राणातिपात		७८६	उद्देशक: ०५ परमाणु	
६६६	उद्देशक: ०२ जरा		७३६	उद्देशक: ०५ असुरकुमार		७८९	उद्देशक: ०६ अंतर	
६७०	उद्देशक: ०३ कर्म		७४०	उद्देशक: ०६ गुडवर्णादि		७९२	उद्देशक: ०७ बन्ध	
६७२	उद्देशक: ०४ जावंतिय		७४२	उद्देशक: ०७ केवली		७९३	उद्देशक: ०८ भूमि	
६७३	उद्देशक: ०५ गंगदत्त		७४९	उद्देशक: ०८ अनगारक्रिया		८०१	उद्देशक: ०९ चारण	
६७७	उद्देशक: ०६ स्वप्न		७५०	उद्देशक: ०९ भव्यद्रव्य		८०३	उद्देशक: १० आयु	
६८२	उद्देशक: ०७ उपयोग		७५३	उद्देशक: १० सोमिल		♦	शतकं - २१	०१५
६८३	उद्देशक: ०८ लोक		♦..	शतकं - १९.....		८०६	वर्ग्ग: १ शाली-आदि	०१५
६८७	उद्देशक: ०९ बलिन्द्र		७५८	उद्देशक: ०१ लेश्या		८१५	वर्ग्गा:२-८ मूलअलसी, वंश,	०१८
६८८	उद्देशक: १० अवधि		७६०	उद्देशक: ०२ गर्भ			इक्षु,सेडिय, अभ्ररुह, तुलसी	----
६८९	उद्देशक: ११-१४ द्विपादि०		७६१	उद्देशक: ०३ पृथ्वी		♦	शतकं - २२	०२१
♦..	शतकं - १७.....		७६५	उद्देशक: ०४ महाश्रव		८२२	वर्ग्गा:१-६ताड़,निम्ब,अगस्ति	०२१
६९३	उद्देशक: ०१ कुंजर		७६६	उद्देशक: ०५ चरम			वेंगन, सिरियक,पुष्पकलिका	----
६९९	उद्देशक: ०२ संयत		७६८	उद्देशक: ०६ द्वीप		♦	शतकं - २३	०२२
७०३	उद्देशक: ०३ शैलेशी		७६९	उद्देशक: ०७ भवन		८२९	वर्ग्गा:१-४आलू,लोही,आय,पाठा	०२२

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

मूलांक::	विषय:	पृष्ठांक	मूलांक:	विषय:	पृष्ठांक:	मूलांक:	विषय:	पृष्ठांक:
♦	शतकं - २४	०२५	♦	शतकं - २८	२९२	♦	शतकं - ३५	३४४
८३५	उद्देशक: ०१ नैरयिक	०२५	९९२	उद्देशका: १-११ जीव आदि--	२९२	१०४४	एकेन्द्रिय शतकानि-१२	----
८४३	उद्देशक: ०२ परिमाण	०५१		जाव २६ शतक	----	♦	शतकं - ३६	३५६
८४४	उद्देशक: ०३-११नागादिकुमारा	०५७	♦	शतकं - २९	२९५	१०५८	बेन्द्रिय शतकानि-१२	----
८४६	उद्देशक: १२-१६ पृथ्व्यादि	०६१	९९५	उद्देशका: १-११ जीव आदि--	२९५	♦	शतकं - ३७	३५८
८५३	उद्देशक: १७-२० बेईन्द्रियादि	०८२		जाव २६ शतक	----	१०६१	त्रिन्द्रिय शतक	----
८५७	उद्देशक: २१-२४ मनुष्यादि	१००	♦	शतकं - ३०	२९९	♦	शतकं - ३८	३५८
♦	शतकं - २५	११९	९९८	उद्देशका: १-११ समवसरण,	२९९	१०६२	चतुरिन्द्रिय शतक	----
८६१	उद्देशका: १-१२ लेश्या, द्रव्य,	११९		लेश्या आदि	----	♦	शतकं - ३९	३५८
	संस्थान, युग्म,पर्यव, निर्ग्रन्थ	---	♦	शतकं - ३१	३११	१०६३	असंज्ञीपंचेन्द्रिय शतकानि	----
	संयत, ओघ, भव्य, अभव्य,	---	१००३	उद्देशका: १-२८ युग्म, नरक,	३११	♦	शतकं - ४०	३५९
	सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि	---		उपपात आदि विषयका:	----	१०६४	संज्ञीपंचेन्द्रिय शतकानि	----
♦	शतकं - २६	२७२	♦	शतकं - ३२	३१७	♦	शतकं - ४१	३६६
९७५	उद्देशका: १-११ जीव, लेश्या,	२७२	१०१६	उद्देशका: १-२८ नारकस्य---	३१७	१०६८ से	उद्देशका: १-१९६ राशियुग्म,	----
	पखिय, दृष्टि, अज्ञान, ज्ञान,	---		उद्वर्तन, उपपात, लेश्यादि	----	---१०७९	त्र्योजराशि, द्वापरयुग्मराशि	----
	संज्ञा,वेद,कषाय,उपयोग,योग	---	♦	शतकं - ३३	३१८		कल्योजराशि इत्यादि	----
♦	शतकं - २७	२९१	१०१८	एकेन्द्रिय शतकानि-१२	३१८		------------------------------	---
९९१	उद्देशका: १-११ जीव आदि--	२९१	♦	शतकं - ३४	३२४	१०८० से	उपसंहार गाथा	३७३---
	जाव २६ शतक	---	१०३३	एकेन्द्रिय शतकानि-१२	३२४	---१०८६	परिसमाप्त:	---३७७

[भगवती- मूलं एवं वृत्ति:] इस प्रकाशन की विकास-गाथा

यह प्रत सबसे पहले "(श्रीमद्) भगवतीसूत्र" के नामसे सन १९१८ (विक्रम संवत १९७४) में आगमोदय समिति द्वारा प्रकाशित हुई, इस के संपादक-महोदय थे पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्यदेव श्री आनंदसागरसूरीश्वरजी (सागरानंदसूरिजी) महाराज साहेब |

इसी प्रत को फिर से दुसरे पूज्यश्रीओने अपने-अपने नामसे भी छपवाई, जिसमे उन्होंने खुदने तो कुछ नहीं किया, मगर इसी प्रत को ऑफसेट करवा के, अपना एवं अपनी प्रकाशन संस्था का नाम छाप दिया. जिसमे किसीने पूज्यपाद् सागरानंदसूरिजी के नाम को आगे रखा, और अपनी वफादारी दिखाई, तो किसीने स्वयं को ही इस पुरे कार्य का कर्ता बता दिया और श्रीमद्सागरानंदसूरिजी तथा प्रकाशक का नाम ही मिटा दिया |

✤हमारा ये प्रयास क्यों? ✤ आगम की सेवा करनेके हमें तो बहोत अवसर मिले, ४५-आगम सटीक भी हमने ३० भागोमे १२५०० से ज्यादा पृष्ठोमें प्रकाशित करवाए है, किन्तु लोगो की पूज्य श्री सागरानंदसूरीश्वरजी के प्रति श्रद्धा तथा प्रत स्वरुप प्राचीन प्रथा का आदर देखकर हमने इसी प्रत को स्केन करवाई, उसके बाद एक स्पेशियल फोरमेट बनवाया, जिसमे बीचमे पूज्यश्री संपादित प्रत ज्यों की त्यों रख दी, ऊपर शीर्षस्थानमे आगम का नाम, फिर शतक-वर्ग्ग-उद्देशक-मूलसूत्र- आदि के नंबर लिख दिए, ताँकि पढ़नेवाले को प्रत्येक पेज पर कौनसा शतक, उद्देशक आदि चल रहे है उसका सरलता से ज्ञान हो शके, बायीं तरफ आगम का क्रम और इसी प्रत का सूत्रक्रम दिया है, उसके साथ वहाँ 'दीप अनुक्रम' भी दिया है, जिससे हमारे प्राकृत, संस्कृत, हिंदी गुजराती, इंग्लिश आदि सभी आगम प्रकाशनोमें प्रवेश कर शके | हमारे अनुक्रम तो प्रत्येक प्रकाशनोमें एक सामान और क्रमशः आगे बढते हुए ही है, इसीलिए सिर्फ क्रम नंबर दिए है, मगर प्रत में गाथा और सूत्रों के नंबर अलग-अलग होने से हमने जहां सूत्र है वहाँ कौंस [-] दिए है और जहां गाथा है वहाँ ||-|| ऐसी दो लाइन खींची है|

हमने एक अनुक्रमणिका भी बनायी है, जिसमे प्रत्येक शतक, वर्ग्ग एवं उद्देशक लिख दिये है और साथमें इस सम्पादन के पृष्ठांक भी दे दिए है, जिससे अभ्यासक व्यक्ति अपने चहिते शतक या विषय तक आसानी से पहुँच शकता है | अनेक पृष्ठ के नीचे विशिष्ठ फूटनोट भी लिखी है, जिसमे उस पृष्ठ पर चल रहे ख़ास विषयवस्तु की, मूल प्रतमें रही हुई कोई-कोई मुद्रण-भूल की या क्रमांकन सम्बन्धी जानकारी प्राप्त होती है |

शासनप्रभावक पूज्य आचार्यश्री हर्षसागरसूरिजी म०सा० की प्रेरणासे और श्री वर्धमान जैन आगममंदिर, पालिताणा की संपूर्ण द्रव्य सहाय से ये 'सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि' भाग-११ का मुद्रण हुआ है, हम उन के प्रति हमारा आभार व्यक्त करते है |

......मुनि दीपरत्नसागर.

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [४७०-४७२]

दीप अनुक्रम [५६३-५६६]

“भगवती-सूत्र” [शतक-२१]

व्याख्यातं विंशतितमशतम्, अथावसरायातमेकविंशतितममारभ्यते, अस्य चादावेवोद्देशकवर्गसङ्ग्रहायेयं गाथा—

सालि कल अयसि वंसे इक्खू दब्भे य दब्भ तुलसी य। अट्ठेए दस वग्गा असीतिं पुण होंति उद्देसा ॥१॥

रायगिहे जाव एवं वयासी–अह भंते! साली वीही गोधूमजवजवाणं एएसि णं भंते! जीवा मूलत्ताए वक्कमंति ते णं भंते! जीवा कओहिंतो उव० किं नेरइएहिंतो उव० तिरि० मणु० देव० जहा वक्कंतीए तहेव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ एकविंशतितमं शतकं आरभ्यते

अत्र एकविंशतितमे शतके प्रथम-वर्ग्गः आरब्धः

प्रत सूत्रांक [६८८] + गाथा दीप अनुक्रम [८०६-८०७]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥८००॥

उववाओ नवरं देववज्जं, ते णं भंते ! जीवा एगसमएणं केवतिया उववज्जंति ?, गोयमा ! जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा वा असंखेज्जा वा उववज्जंति, अवहारो जहा उप्पलुद्देसे, तेसि णं भंते ! जीवाणं केमहालिया सरीरोगाहणा प० ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणं धणुहपुहुत्तं, ते णं भंते जीवा ! नाणावरणिज्जस्स कम्मस्स किं बंधगा अबंधगा ? जहा उप्पलुद्देसे, एवं वेदेवि उदएवि उदीरणाएवि । ते णं भंते ! जीवा किं कण्हलेस्सा नील० काउ० छव्वीसं भंगा दिट्ठी जाव इंदिया जहा उप्पलुद्देसे, ते णं भंते ! सालीवीही गोधूम जवजवगमूलगजीवे कालओ केवचिरं होति ?, गोयमा ! जह० अंतोमु० उक्कोसे० असंखेज्जं कालं ॥ से णं भंते ! साली वीही गोधूमजवजवगमूलगजीवे पुढवीजीवे पुणरवि सालीवीही जाव जवजवगमूलगजीवे केवतियं कालं सेवेज्जा ?, केवतियं कालं गतिरागतिं करिज्जा ?, एवं जहा उप्पलुद्देसे, एएणं अभिलावेणं जाव मणुस्सजीवे आहारो जहा उप्पलुद्देसे ठिती जह० अंतोमु० उक्कोसे० वासपुहुत्तं समुग्घायसमोहया उव्वट्टणा य जहा उप्पलुद्देसे । अह भंते ! सव्वपाणा जाव सव्वसत्ता साली वीही जाव जवजवगमूलगजीवत्ताए उववन्नपुव्वा ?, हंता गोयमा ! असतिं अदुवा अणंतखुत्तो । सेवं भंते ! २ त्ति ॥ (सूत्रं ६८८) ॥ २१–१ ॥

'साली'त्यादि सूत्रम्, 'सालि'त्ति शाल्यादिधान्यविशेषविषयोद्देशकदशात्मकः प्रथमो वर्गः शालिरेवोच्यते, एवमन्यत्रापीति, उद्देशकदशकं चैवं—"मूले १ कंदे २ खंधे ३ तया य ४ साले ५ पवाल ६ पत्ते य ७ । पुप्फे ८ फल ९ बीए १०-

२१ शतके वर्गः १ शालीमूलोद्देशकः सू ६८८

॥८००॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

* अत्र प्रत्येक वर्ग्गे दश-दश उद्देशका; सन्ति

प्रत सूत्रांक [६८८] + गाथा दीप अनुक्रम [८०६-८०७]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

वियं एक्केक्को होइ उद्देसो ॥ १ ॥" इति, 'कल'त्ति कलायादिधान्यविषयो द्वितीयः २ 'अयसि'त्ति अतसीप्रभृतिधान्यविषयस्तृतीयः ३ 'वंसे'त्ति वंशादिपर्वगविशेषविषयश्चतुर्थः ४ 'इक्खु'त्ति इक्ष्वादिपर्वगविशेषविषयः पञ्चमः ५ 'दब्भे'त्ति दर्भशब्दस्योपलक्षणार्थत्वात् 'सेडियभंडियकोन्तियदब्भे' इत्यादितृणभेदविषयः षष्ठः ६ 'अब्भे'त्ति वृक्षे समुत्पन्नो विजातीयो वृक्षविशेषोऽध्यवरोहकस्तत्प्रभृतिशाकप्रायवनस्पतिविषयः सप्तमः ७ 'तुलसी य'त्ति तुलसीप्रभृतिवनस्पतिविषयोऽष्टमो वर्गः ८ 'अट्ठेते दसवग्ग'त्ति अष्टावेतेऽनन्तरोक्ता दशानां दशानामुद्देशकानां सम्बन्धिनो वर्गाः–समुदाया दशवर्गा अशीतिः पुनरुद्देशका भवन्ति, वर्गे वर्गे उद्देशकदशकभावादिति, तत्र प्रथमवर्गस्तत्रापि च प्रथम उद्देशको व्याख्यायते, तस्य चेदमादिसूत्रम्—'रायगिहे'इत्यादि, 'जहा वक्कंतीए'त्ति यथा प्रज्ञापनायाः षष्ठपदे, तत्र चैवमुत्पादो–नो नारकेभ्य उत्पद्यन्ते किन्तु तिर्यग्मनुष्येभ्यः, तथा व्युत्क्रान्तिपदे देवानां वनस्पतिषूत्पत्तिरुक्ता इह तु सा न वाच्या मूले देवानामनुत्पत्तेः पुष्पादिष्वेव शुभेषु तेषामुत्पत्तेरत एवोक्तं 'नवरं देववज्जं'ति । 'एक्को वे'त्यादि, यद्यपि सामान्येन वनस्पतिषु प्रतिसमयमनन्ता उत्पद्यन्त इत्युच्यते तथाऽपीह शाल्यादीनां प्रत्येकशरीरत्वादेकाद्युत्पत्तिर्न विरुद्धेति । 'अवहारो जहा उप्पलुद्देसए'त्ति उत्पलोद्देशक एकादशशतस्य प्रथमस्तत्र चापहार एवं–'ते णं भंते ! जीवा समये २ अवहीरमाणा २ केवतिकालेणं अवहीरंति ?, गोयमा ! ते णं असंखेज्जा समए २ अवहीरमाणा २ असंखेज्जाहिं उस्सप्पिणीहिं अवसप्पिणीहिं अवहीरंति नो चेव णं अवहिया सिय'त्ति 'ते णं भंते ! जीवा णाणावरणिज्जस्स कम्मस्स किं बंधगा अबंधगा?' इतः परं यदुक्तं 'जहा उप्पलुद्देसए'त्ति अनेनेदं सूचितं–'गोयमा ! नो अबंधगा बंधए वा बंधगा वे'त्यादि, एवं वेदोदयोदीरणा अपि वाच्याः,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

∗ अत्र प्रत्येक वर्ग्गे दश-दश उद्देशका; सन्ति

प्रत सूत्रांक [६८८] + गाथा दीप अनुक्रम [८०६-८०७]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥८०१॥

लेश्यासु तु तिसृषु षड्विंशतिर्भङ्गाः–एकवचनान्तत्वे ३ बहुवचनान्तत्वे ३ तथा त्रयाणां पदानां त्रिषु द्विकसंयोगेषु प्रत्येकं चतुर्भङ्गिकाभावाद् द्वादश एकत्र च त्रिकसंयोगेऽष्टाविति षड्विंशतिरिति। 'दिट्ठी'त्यादि, दृष्टिपदादारभ्येन्द्रियपदं यावदुदुत्पलोद्देशकवन्नेयं, तत्र दृष्टौ मिथ्यादृष्टयस्ते ज्ञानेऽज्ञानिनः योगे काययोगिनः उपयोगे द्विविधोपयोगाः, एवमन्यदपि तत एव वाच्यं। 'से णं भंते'इत्यादिना 'असंखेज्जं काल' मित्येतदन्तेनानुबन्ध उक्तः, अथ कायसंवेधमाह–'से ण'मित्यादि, 'एवं जहा उप्पलुद्देसए'त्ति, अनेन चेदं सूचितं–'गोयमा! भवादेसेणं जहन्नेणं दो भवग्गहणाइं उक्कोसेणं असंखेज्जाइं भवग्गहणाइं कालादेसेणं जहन्नेणं दो अंतोमुहुत्ता उक्कोसेणं असंखेज्जं काल'मित्यादि, 'आहारो जहा उप्पलुद्देसए'त्ति एवं चासौ–'ते णं भंते! जीवा किमाहारमाहारेंति?, गोयमा! दव्वओ अणंतपएसियाइं' इत्यादि, 'समुग्घाए'इत्यादि, अनेन च यत्सूचितं तदर्थलेशोऽयं–तेषां जीवानामाद्यास्त्रयः समुद्घातास्तथा मारणान्तिकसमुद्घातेन समवहता म्रियन्ते असमवहता वा, तथोद्वृत्तास्ते तिर्यक्षु मनुष्येषु चोत्पद्यन्त इति ॥ एकविंशतितमशते प्रथमः ॥ २१–१ ॥

अह भंते! साली वीही जाव जवजवाणं एएसि णं जे जीवा कंदत्ताए वक्कमंति ते णं भंते! जीवा कओहिंतो उववज्जंति एवं कंदाहिकारेण सच्चेव मूलुद्देसो अपरिसेसो भाणियव्वो जाव असतिं अदुवा अणंतखुत्तो सेवं भंते २ त्ति ॥२१–२॥ एवं खंधेवि उद्देसओ नेयव्वो ॥२१–३॥ एवं तयाएवि उद्देसो भाणियव्वो ॥ २१–४ ॥ सालेवि उद्देसो भाणियव्वो ॥२१–५॥ पवालेवि उद्देसो भाणियव्वो ॥२१–६॥ पत्तेवि उद्देसो भाणियव्वो ॥२१-७॥ एए

२१ शतके वर्गः १ शालीकन्दादिउद्दे. २–१० कलायादि-मूलादिवर्गाः २–१० सू ६८९-६९०

॥८०१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र एकविंशतितमे शतके प्रथम-वर्ग्ग: परिसमाप्त:

अथ एकविंशतितमे शतके द्वितियात् अष्टमपर्यन्ता: वर्ग्गा: आरब्धा:

* अत्र प्रत्येक वर्ग्गे दश-दश उद्देशका; सन्ति

प्रत सूत्रांक [६८९--६९०]

दीप अनुक्रम [८०८--८२१]

सत्तवि उद्देसगा अपरिसेसं जहा मूले तहा नेयवा ॥ एवं पुप्फेवि उद्देसओ नवरं देवा उववज्जंति जहा उप्पलुद्देसे चत्तारि लेस्साओ असीति भंगा ओगाहणा जह० अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणं अंगुलपुहुत्तं सेसं तं चेव सेवं भंते ! २॥२१८॥ जहा पुप्फे एवं फलेवि उद्देसओ अपरिसेसो भाणियवो ॥२१–९॥ एवं बीएवि उद्देसओ ॥२१–१०॥ एए दस उद्देसगा ॥ पढमो वग्गो समत्तो ॥ २१-१ (सूत्रं ६८९) ॥ अह भंते ! कलायमसूरतिलमुग्गमासनिप्फावकुलत्थआलिसंदगसडिणपलिमंथगाणं एएसि णं जे जीवा मूलत्ताए वक्कमंति ते णं भंते ! जीवा कओहिंतो उवव० ? एवं मूलादीया दस उद्देसगा भाणियवा जहेव सालीणं निरवसेसं तं चेव ॥ बितिओ वग्गो समत्तो ॥ २१-२ ॥ अह भंते ! अयसिकुसुंभकोद्दवकंगुरालगतुवरीकोदूसासणसरिसवमूलगबीयाणं एएसि णं जे जीवा मूलत्ताए वक्कमंति ते णं भंते ! जीवा कओहिंतो उववज्जंति ? एवं एत्थवि मूलादीया दस उद्देसगा जहेव सालीणं निरवसेसं तहेव भाणियवं ॥ तइओ वग्गो समत्तो ॥ २१-३ ॥ अह भंते ! वंसवेणुकणककक्कावंसवारुवंसदंडाकुडाविमाचंडावेणुयाकल्लाणीणं एएसि णं जे जीवा मूलत्ताए वक्कमंति एवं एत्थवि मूलादीया दस उद्देसगा जहेव सालीणं, नवरं देवो सवत्थवि न उववज्जति, तिन्नि लेसाओ सवत्थवि छवीसं भंगा सेसं तं चेव ॥ चउत्थो वग्गो समत्तो ॥ २१-४ ॥ अह भंते ! उक्खुइक्खुवाडियावीरणाइक्कडभमाससुंठिसत्तवेत्ततिमिरसतपोरगनलाणं एएसि णं जे जीवा मूलत्ताए वक्कमंति एवं जहेव वंसवग्गो तहेव एत्थवि मूलादीया दस उद्देसगा, नवरं खंधुद्देसे देवा उववज्जंति, चत्तारि लेसाओ सेसं तं चेव ॥ पंचमो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

* अत्र प्रत्येक वर्ग्गे दश-दश उद्देशका; सन्ति

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [६८९-६९०]

दीप अनुक्रम [८०८-८२१]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥८०२॥

२१ शतके वर्गः १ शालीकन्दादिउद्दे- २-१० कलायादि- मूलादिवर्गाः२-१० सू ६८९-६९०

वग्गो समत्तो ॥ २१-५ ॥ अह भंते ! सेडियभंडियदब्भकोतियदब्भकुसदब्भगयोइदलअंजुलआसाढगरोहियंसमुतवखीरभुसएरिंडकुरुभकुंदकरवरसुंठविभंगुमहुवयणथुरगसिप्पियसुंकलितणाणं एएसि णं जे जीवा मूलत्ताए वक्कमंति एवं एत्थवि दस उद्देसगा निरवसेसं जहेव वंसस्स ॥ छट्ठो वग्गो समत्तो ॥ २१-६ ॥ अह भंते ! अब्भरुहवोयाणहरितगतंदुलेज्जगतणवत्थुलचोरगमज्जारयाईचिल्लियालक्कदगपिप्पलियदव्विसोत्थिकसायमंडुक्किमूलगसरिसवअंबिलसागजिवंतगाणं एएसि णं जे जीवा मूल एवं एत्थवि दस उद्देसगा जहेव वंसस्स ॥ सत्तमो वग्गो समत्तो ॥ २१-७ ॥ अह भंते ! तुलसीकण्हदलफणेज्जाअज्जाचूयणाचोराजीरादमणामरुयाइं दीवरसयपुप्फा णं एएसिणं जे जीवा मूलत्ताए वक्कमंति एत्थवि दस उद्देसगा निरवसेसं जहा वंसाणं ॥ अट्ठमो वग्गो समत्तो ॥२१-८॥ एवं एएसु अट्ठसु वग्गेसु असीतिं उद्देसगा भवंति ॥ (सूत्रं ६९०) एक्कवीसतिमं सयं समत्तं ॥२१॥

एवं समस्तोऽपि वर्गः सूत्रसिद्धः, एवमन्येऽपि नवरमशीतिर्भङ्गा एवं–चतसृषु लेश्यास्वेकत्वे ४ बहुत्वे ४ तथा पदचतुष्टये षट्सु द्विकसंयोगेषु प्रत्येकं चतुर्भङ्गिकासद्भावात् २४ तथा चतुर्षु त्रिकसंयोगेषु प्रत्येकमष्टानां सद्भावात् ३२ चतुष्कसंयोगे च १६ एवमशीतिरिति, इह चेयमवगाहनाविशेषाभिधायिका वृद्धोक्ता गाथा—“मूले कंदे खंधे तयाय साले पवाल पत्ते य । सत्तसुवि धणुपुहुत्तं अंगुलिमो पुप्फफलबीए ॥ १ ॥” [मूले कन्दे स्कन्धे त्वचि शाले प्रवाले पत्रे च सप्तस्वपि धनुष्पृथक्त्वं पुष्पफलबीजेष्वङ्गुलीपृथक्त्वम् ॥ १ ॥] इति ॥ ॥ एकविंशतितमशतं वृत्तितः परिसमाप्तम् ॥

एकविंशं शतं प्रायो, व्यक्तं तदपि लेशतः । व्याख्यातं सद्गुणाधायी, गुडक्षेपो गुडेऽपि यत् ॥ १ ॥

॥८०२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ एकविंशतितमे शतके द्वितियात् अष्टमपर्यन्ता: वर्ग्गा: परिसमाप्ता: ⁎ अत्र प्रत्येक वर्ग्गे दश-दश उद्देशका; सन्ति

तत् परिसमाप्ते एकविंशतितमं शतकं अपि परिसमाप्तं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [६९१] + गाथा

दीप अनुक्रम [८२२- -८२८]

व्याख्यातमेकविंशतितमं शतम्, अथ क्रमायातं द्वाविंशं व्याख्यायते, तस्य चादावेवोद्देशकवर्गसङ्ग्रहायेयं गाथा—

तालेगट्ठियबहुबीयगा य गुच्छा य गुम्म वल्ली य। छद्दस वग्गा एए सट्ठिं पुण होंति उद्देसा ॥ १ ॥ रायगिहे जाव एवं वयासी–अह भंते ! तालतमालतक्कलितेतलिसालसरलासारगल्लाणं जाव केयतिकदलचम्मरुक्खगुंतरुक्खहिंगुरुक्खलवंगरुक्खपूयफलखज्जूरिनालएरीणं एएसि णं जे जीवा मूलत्ताए वक्कमंति ते णं भंते ! जीवा कओहिंतो उववज्जंति?, एवं एत्थवि मूलादीया दस उद्देसगा कायव्वा जहेव सालीणं, नवरं इमं नाणत्तं मूले कंदे खंधे तयाय साले य एएसु पंचसु उद्देसगेसु देवो न उववज्जति, तिन्नि लेसाओ, ठिती जहन्नेणं अंतोमु० उक्कोसेणं दसवाससहस्साइं, उवरिल्लेसु पंचसु उद्देसएसु देवो उववज्जति, चत्तारि लेसाओ ठिती जहन्नेणं अंतोमु० उक्कोसेणं वासपुहुत्तं ओगाहणा मूले कंदे धणुहपुहुत्तं खंधे तयाय साले य गाउयपुहुत्तं पवाले पत्ते धणुहपुहुत्तं, पुप्फे हत्थपुहत्तं, फले बीए य अंगुलपुहुत्तं, सव्वेसिं जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं सेसं जहा सालीणं, एवं एए दस उद्देसगा ॥ पढमो वग्गो समत्तो ॥ २२-१ ॥ अह भंते ! निंबंबजंबुकोसंबतालअंकोल्लपीलुसेलुसल्लइमोयइमालुयबउलपलासकरंजपुत्तंजीवगरिट्ठवहेडगहरितगभल्लायउंबरियखीरणिधायईपियालपूइयणिवायगसेण्हयपासियसीसवअयसिपुन्नागनागरुक्खसीवन्नअसोगाणं एएसि णं जे जीवा मूलत्ताए वक्कमंति एवं मूलादीया दस उद्देसगा कायव्वा निरवसेसं जहा तालवग्गो ॥ बितिओ वग्गो समत्तो ॥ २२-२ ॥ अह भंते ! अत्थियातिंदुयबोरकविट्ठअंबाडगमाउलिंगबिल्लआमलगफणसदाडिमआसत्थउंबरवडणग्गोह-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र द्वाविंशतितमं शतकं आरभ्यते

द्वाविंशतितमं-शतके षड् वर्ग्गा: वर्तते, प्रतेक वर्ग्गे दश-दश उद्देशका: सन्ति

प्रत सूत्रांक [६९१] + गाथा दीप अनुक्रम [८२२- -८२८]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति: व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥८०३॥ नंदिरुक्खपिप्पलिसतरपिलक्खुरुक्खकाउंबरियकुच्छुंभरियदेवदालितिलगलउयछत्तोहसिरीससत्तवन्नदहिवन्न- लोद्धधवचंदणअज्जुणणीवकुडुगकलंबाणं एएसि णं जे जीवा मूलत्ताए वक्कमंति ते णं भंते ! एवं एत्थवि मूलादीया दस उद्देसगा तालवग्गसरिसा नेयव्वा जाव बीयं ॥ तइओ वग्गो समत्तो ॥ २२-३ ॥ अह भंते ! वाइंगणिअल्लइपोडइ एवं जहा पन्नवणाए गाहाणुसारेणं णेयव्वं जाव गंजपाडलावासिअंकोल्लाणं एएसि णं जे जीवा मूलत्ताए वक्कमंति एवं एत्थवि मूलादीया दस उद्देसगा तालवग्गसरिसा नेयव्वा जाव बीयंति निरवसेसं जहा वंसवग्गो ॥ चउत्थो वग्गो समत्तो ॥ २२-४ ॥ अह भंते ! सिरियकाणवनालियकोरंटगबंधु- जीवग मणोज्जा जहा पन्नवणाए पढमपदे गाहाणुसारेणं जाव नलणी य कुंदमहाजाईणं एएसि णं जे जीवा मूलत्ताए वक्कमंति एवं एत्थवि मूलादीया दस उद्देसगा निरवसेसं जहा सालीणं ॥ पंचमो वग्गो सम्मत्तो ॥ २२-५ ॥ अह भंते ! पूसफलिकालिंगीतुंबीतउसीएलावालुंकी एवं पदाणि छिंदियव्वाणि पन्नवणागाहाणुसारेणं जहा तालवग्गे जाव दधिफोल्लइकाकलिसोक्कलिअक्कबोंदीणं एएसि णं जे जीवा मूलत्ताए वक्कमंति एवं मूला- दीया दस उ० कायव्वा जहा तालवग्गो नवरं फलउद्देसे ओगाहणाए जहन्ने० अंगुल० असंखे० भागं उक्को० धणुहपुहुत्तं ठिती सव्वत्थ जहन्नेणं अंतोमु० उक्कोसेणं वासपुहत्तं सेसं तं चेव ॥ छट्ठो वग्गो समत्तो ॥ २२-६ ॥ एवं छसुवि वग्गेसु सट्ठि उद्देसगा भवंति ॥ (सूत्रं ६९१) बावीसतिमं सयं सम्मत्तं ॥ २२ ॥ ‘ताले’त्यादि, तत्र ‘ताले’त्ति ताडतमालप्रभृतिवृक्षविशेषविषयोद्देशकदशकात्मकः प्रथमो वर्गः, उद्देशकदशकं च २२ शतके तालादि-मूलादि वर्गाः ६ सू ६९१ ॥८०३॥ Jain Education International · For Personal & Private Use Only · www.jainelibrary.org
	द्वाविंशतितमं-शतके षड् वर्ग्गा: वर्तते, प्रतेक वर्ग्गे दश-दश उद्देशका: सन्ति

प्रत सूत्रांक [६९१] + गाथा

दीप अनुक्रम [८२२-८२८]

मूलकन्दादिविषयभेदात् पूर्ववत् । 'एगट्ठिय'त्ति एकमस्थिकं फलमध्ये येषां ते तथा, ते च निम्बाम्रजम्बूकौशाम्बादयस्ते द्वितीये वाच्याः । 'बहुबीयगा य'त्ति बहूनि बीजानि फलानि येषां ते तथा, ते चास्थिकतेन्दुकबदरकपित्थादयो वृक्षविशेषास्ते तृतीये वाच्याः । 'गुच्छा य'त्ति गुच्छा–वृन्ताकीप्रभृतयस्ते चतुर्थे वाच्याः 'गुम्म'त्ति गुल्माः सिरियकनवमालिकाकोरण्टकादयस्ते पञ्चमे वाच्याः 'वल्ली य'त्ति वल्ल्यः पुंफलीकालिङ्गीतुम्बीप्रभृतयस्ताः षष्ठे वर्गे वाच्या इत्येवं षष्ठवर्गो वल्लीत्यभिधीयते 'छद्दसवग्गा एए'ति षड्दशोद्देशकप्रमाणा वर्गा 'एते' अनन्तरोक्ताः अत एव प्रत्येकं दशोद्देशकप्रमाणत्वात् वर्गाणामिह षष्टिरुद्देशका भवन्तीति ॥ इदं च शतमनन्तरशतवत्सर्वं व्याख्येयं, यस्तु विशेषः स सूत्रसिद्ध एव, इयं चेह वृद्धोक्ता गाथा–''पत्त पवाले पुप्फे फले य बीए य होइ उववाओ । रुक्खेसु सुरगणाणं पसत्थरसवन्नगंधेसु ॥ १ ॥ [सुरगणानामुत्पादः प्रशस्तरसवर्णगन्धवतां वृक्षाणां पत्रे प्रवाले पुष्पे फले बीजे च भवति ॥ १ ॥] इति ॥ द्वाविंशतितमशतं वृत्तितः परिसमाप्तम् ॥ २२ ॥

द्वाविंशं तु शतं व्यक्तं, गम्भीरं च कथञ्चन । व्यक्तगम्भीरभावाभ्यामिह वृत्तिः करोतु किम् ? ॥ १ ॥

व्याख्यातं द्वाविंशं शतम्, अथावसरायातं त्रयोविंशं शतमारभ्यते, अस्य चादावेवोद्देशकवर्गसङ्ग्रहायेयं गाथा—

नमो सुयदेवयाए भगवईए ॥ आलुयलोही अवया पाढी तह मासवन्निवल्ली य । पंचेते दसवग्गा पन्नासा होंति उद्देसा ॥ १ ॥ रायगिहे जाव एवं० अह भंते ! आलुयमूलगसिंगबेरहलिदरुक्खकंडरियजारुच्छीरबिरालि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र द्वाविंशतितमं शतकं परिसमाप्तं

अत्र त्रयोविंशतितमं शतकं आरभ्यते

प्रत सूत्रांक [६९२] + गाथा

दीप अनुक्रम [८२९-८३४]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥८०४॥

किट्ठिकुंदुकण्हकडडसुमहुपयलइमहुसिंगिणिरुहासप्पसुगंधा छिन्नरुहा बीयरुहा णं एएसि णं जे जीवा मूलत्ताए वक्कमंति एवं मूलादीया दस उ० कायव्वा वंसवग्गसरिसा नवरं परिमाणं जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति, अवहारो गोयमा! ते णं अणंता समये अवहीरमाणा २ अणंताहिं ओसप्पिणीहिं उस्सप्पिणीहिं एवतिकालेणं अवहीरंति नो चेव णं अवहरिया सिया ठिती जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, सेसं तं चेव ॥ पढमो वग्गो समत्तो ॥२२-१॥ अह भंते! लोहीणीहूथीहूथिवगा अस्सकन्नी सीउंढी मुसंढीणं एएसि णं जीवा मूल एवं एत्थवि दस उद्देसगा जहेव आलुवग्गे, णवरं ओगाहणा तालवग्गसरिसा, सेसं तं चेव सेवं भंते! ॥ बितिओ वग्गो समत्तो ॥२३-२॥ अह भंते! आयकायकुहुणकुंदुरुक्कउव्वेहलियासफासज्जाछत्तावंसाणियकुमाराणं एतेसि णं जे जीवा मूलत्ताए एवं एत्थवि मूलादीया दस उद्देसगा निरवसेसं जहा आलुवग्गो नवरं ओगाहणा तालुवग्गसरिसा, सेसं तं चेव, सेवं भंते! २त्ति ॥ तइओ वग्गो समत्तो ॥ २३-३ ॥ अह भंते! पाढामिए वालुंकि मधुररसारा वल्लिपउमामोंढरिदंतिचंडीणं एतेसि णं जे जीवा मूल एवं एत्थवि मूलादीया दस उद्देसगा आलुयवग्गसरिसा नवरं ओगाहणा जहा वल्लीणं, सेसं तं चेव, सेवं भंते! २ त्ति ॥ चउत्थो वग्गो समत्तो ॥ २३-४ ॥ अह भंते! मासपन्नीमुग्गपन्नीजीवसरिसवकएणुयकाओलिखीरकाकोलिभंगिणहिंकिमिरासिभद्दमुच्छणंगलइपओयाकिंणापउलपाढेहरेणुयालोहीणं एएसि णं जे जीवा मूल० एवं एत्थवि दस उद्देसगा निरवसेसं आलुयवग्गसरिसा ॥ पंचमो वग्गो

२३ शतके आलुकादिवर्गाः ५ सू ६९२

॥८०४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

*त्रयोविंशतितमं शतके पञ्च-वर्ग्गा: वर्तते, प्रत्येक वर्ग्गे दश-दश उद्देशका: सन्ति

प्रत सूत्रांक [६९२] + गाथा

दीप अनुक्रम [८२९--८३४]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

समत्तो ॥ २३-५ ॥ एवं एत्थ पंचसुवि वग्गेसु पन्नासं उद्देसगा भाणियव्वा सव्वत्थ देवा ण उववज्जंतित्ति तिन्नि लेसाओ। सेवं भंते ! २ ॥ तेवीसइमं सयं समत्तं ॥ २३ ॥(सूत्रं ६९२)

'आलुए'त्यादि, तत्र 'आलुय'त्ति आलुकमूलकादिसाधारणशरीरवनस्पतिभेदविषयोद्देशकदशकात्मकः प्रथमो वर्गः, 'लोही'ति लोहीप्रभृत्यनन्तकायिकविषयो द्वितीयः 'अवइ'त्ति अवककवकप्रभृत्यनन्तकायिकभेदविषयस्तृतीयः 'पाढ'त्ति पाठामृगवालुङ्कीमधुररसादिवनस्पतिभेदविषयश्चतुर्थः 'मासवन्नीमुग्गवन्नी य'त्ति माषपर्णीमुद्गपर्णीप्रभृतिवल्लीविशेषविषयः पञ्चमः तन्नामक एवेति, पञ्चैतेऽनन्तरोक्ता दशोद्देशकप्रमाणा वर्गा दशवर्गाः यत एवमतः पञ्चाशदुद्देशका भवन्तीह शत इति ॥ त्रयोविंशतितमशतं वृत्तितः परिसमाप्तम् ॥ २३ ॥

प्राक्तनशतवन्नेयं, त्रयोविंशं शतं यतः । प्रायः समं तयो रूपं, व्याख्याऽतोऽत्रापि निष्फला ॥ १ ॥-

व्याख्यातं त्रयोविंशं शतम्, अथावसरायातं चतुर्विंशं शतं व्याख्यायते, तस्य चादावेवेदं सर्वोद्देशकद्वारसङ्ग्रहगाथाद्वयम्—

उववायपरीमाणं संघयणुच्चत्तमेव संठाणं । लेस्सा दिट्ठी णाणे अन्नाणे जोग उवओगे ॥१॥ सन्नाकसायइंदियसमुग्घाया वेदणा य वेदे य । आउं अज्झवसाणा अणुबंधो कायसंवेहो ॥ २ ॥ जीवपदेजीवपदे जीवाणं दंडगंमि उद्देसो । चउवीसतिमंमि सए चउव्वीसं होंति उद्देसा ॥ ३ ॥ रायगिहे जाव एवं वयासी–णेरइयाणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र त्रयोविंशतितमं शतकं परिसमाप्तं

अत्र चतुर्विंशतितमं शतकं आरभ्यते

आगम (०५)	[भाग-११] “भगवती”– अंगसूत्र-५ (मूलं+वृत्ति:) शतक [२४], वर्ग्ग [-], अंतर्-शतक [–], उद्देशक [१], मूलं [६९३] + गाथा:
प्रत सूत्रांक [६९३] + गाथा दीप अनुक्रम [८३५- -८३८]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति: व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥८०५॥ भंते ! कओहिंतो उववज्जंति किं नेरइएहिंतो उववज्जंति तिरिक्खजोणिएहिंतो उववज्जंति मणुस्सेहिंतो उववज्जंति देवेहिंतो उववज्जंति ?, गोयमा ! णो नेरइएहिंतो उववज्जंति तिरिक्खजोणिएहिंतोवि उववज्जंति मणुस्सेहिंतोवि उववज्जंति णो देवेहिंतो उववज्जंति, जइ तिरिक्खजोणिएहिंतो उववज्जंति किं एगिंदियतिरिक्खजोणिएहिंतो उववज्जंति बेइंदियतिरिक्खजोणिय० तेइंदियतिरिक्खजोणिय० चउरिंदियतिरिक्खजोणिय० पंचिंदियतिरिक्खजोणिएहिंतो उववज्जंति ?, गोयमा ! नो एगिंदियतिरिक्खजोणिएहिंतो उववज्जंति णो बेंदिय० णो तेइंदिय० णो चउरिंदिय० पंचिंदियतिरिक्खजोणिएहिंतो उववज्जंति, जइ पंचिंदियतिरिक्खजोणिएहिंतो उववज्जंति किं सन्नीपंचिंदियतिरिक्खजोणिएहिंतो उववज्जंति असन्नीपंचिंदियतिरिक्खजोणिएहिंतो उववज्जंति ?, गोयमा ! सन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिएहिंतो उववज्जंति असन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिएहिंतोवि उववज्जंति, जइ सन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिएहिंतो उववज्जंति किं जलचरेहिंतो उववज्जंति थलचरेहिंतो उववज्जंति खहचरेहिंतो उववज्जंति ?, गोयमा ! जलचरेहिंतो उववज्जंति थलचरेहिंतोवि उववज्जंति खहचरेहिंतोवि उववज्जंति, जइ जलचरथलचरखहचरेहिंतो उववज्जंति किं पज्जत्तएहिंतो उववज्जंति अपज्जत्तएहिंतो उववज्जंति ?, गोयमा ! पज्जत्तएहिंतो उववज्जंति णो अपज्जत्तएहिंतो उववज्जंति, पज्जत्ताअसन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिए णं भंते ! जे भविए नेरइएसु उववज्जित्तए से णं भंते ! कतिसु पुढवीसु उववज्जेज्जा ?, गोयमा ! एगाए रयणप्पभाए पुढवीए उववज्जेज्जा, पज्जत्ताअसन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिए णं भंते ! जे भविए रयण- २४ शतके उद्देशः १ असञ्ज्ञिपर्यन्तोत्पादः सू ६९३ ॥८०५॥ Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org
	असंज्ञी-पर्यंत: उत्पत्ति:

प्रत सूत्रांक [६९३] + गाथा दीप अनुक्रम [८३५-८३८]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्पभाए पुढवीए नेरइएसु उववज्जित्तए से णं भंते ! केवतिकालट्ठितीएसु उववज्जेज्जा ?, गोयमा ! जहन्नेणं दसवाससहस्सट्ठितीएसु उक्कोसेणं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागट्ठितीएसु उववज्जेज्जा १, ते णं भंते ! जीवा एगसमएणं केवतिया उववज्जंति ?, गोयमा ! जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा वा असंखेज्जा वा उववज्जंति २, तेसि णं भंते ! जीवाणं सरीरगा किंसंघयणी पन्नत्ता ?, गोयमा ! छेवट्ठसंघयणी प० ३, तेसि णं भंते ! जीवाणं केमहालिया सरीरोगाहणा पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणं जोयणसहस्सं ४, तेसि णं भंते ! जीवाणं सरीरगा किंसंठिता पन्नत्ता ?, गोयमा ! हुंडसंठाणसंठिया पन्नत्ता, ५ तेसि णं भंते ! जीवाणं कति लेस्साओ प० ?, गो० ! तिन्नि लेस्साओ प० तं०–कण्हलेस्सा नीललेस्सा काउलेस्सा ६, ते णं भंते ! जीवा किं सम्मदिट्ठी मिच्छादिट्ठी सम्मामिच्छादिट्ठी ?, गोयमा ! णो सम्मदिट्ठी मिच्छादिट्ठी णो सम्मामिच्छादिट्ठी ७, ते णं भंते ! जीवा किं णाणी अन्नाणी ?, गोयमा ! णो णाणी अन्नाणी नियमा दुअन्नाणी तं०–मइअन्नाणी य सुयअन्नाणी य ८–९, ते णं भंते ! जीवा किं मणजोगी वयजोगी कायजोगी ?, गोयमा ! णो मणजोगी वयजोगीवि कायजोगीवि १०, ते णं भंते ! जीवा किं सागारोवउत्ता अणागारोवउत्ता ?, गोयमा ! सागारोवउत्तावि अणागारोवउत्तावि ११, तेसि णं भंते ! जीवाणं कति सन्नाओ पन्नत्ताओ ?, गोयमा ! चत्तारि सन्ना पं० तं०–आहारसन्ना भयसन्ना मेहुणसन्ना परिग्गहसन्ना १२, तेसि णं भंते ! जीवाणं कति कसाया प० ?, गो० ! चत्तारि कसाया प०, तं०–कोहकसाए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

असंज्ञी-पर्यंत: उत्पत्ति:

प्रत सूत्रांक [६९३] + गाथा

दीप अनुक्रम [८३५-८३८]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥८०६॥

२४ शतके उद्देशः १ असञ्ज्ञिपर्यन्तोत्पादः सू ६९३

माणकसाए मायाकसाए लोभकसाए १३, तेसि णं भंते ! जीवाणं कति इंदिया प० ?, गो० ! पंचिंदिया प० तं०–सोइंदिए चक्खिदिए जाव फासिंदिए १४, तेसि णं भंते ! जीवाणं कति समुग्घाया प० ?, गो० ! तओ समुग्घाया प०, तं०–वेयणासमुग्घाए कसायसमुग्घाए मारणंतियसमुग्घाए १५, ते णं भंते ! जीवा किं सायावेयगा असायावेयगा ?, गो० ! सायावेयगावि असायावेयगावि १६, ते णं भंते ! जीवा किं इत्थीवेयगा पुरिसवेयगा नपुंसगवेयगा ?, गो० ! णो इत्थीवेयगा णो पुरिसवेयगा नपुंसगवेयगा १७, तेसि णं भंते ! जीवाणं केवतियं कालं ठिती प० ?, गो० ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं पुव्वकोडी १८, तेसि णं भंते ! जीवाणं केवतिया अज्झवसाणा प० ?, गो० ! असंखेज्जा अज्झवसाणा प०, ते णं भंते ! किं पसत्था अप्पसत्था ?, गोयमा ! पसत्थावि अप्पसत्थावि १९, से णं भंते ! पज्जत्ताअसन्निपंचिंदियतिरिजोणियेत्ति कालओ केवच्चिरं होइ ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं पुव्वकोडी २०, से णं भंते ! पज्जत्ताअसन्नीपंचिंदियतिरिक्खजोणिए रयणप्पभाए पुढविए णेरइए पुणरवि पज्जत्ताअसन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिएत्ति केवतियं कालं सेवेज्जा केवतियं कालं गतिरागतिं करेज्जा ?, गोयमा ! भवादेसेणं दो भवग्गहणाइं कालादेसेणं जहन्नेणं दस वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागं पुव्वकोडिमब्भहियं एवतियं कालं सेवेज्जा एवतियं कालं गतिरागतिं करेज्जा २१ । पज्जत्ताअसन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिए णं भंते ! जे भविए जहन्नकालट्ठितीएसु रयणप्पभापुढविनेरइएसु उववज्जित्तए से णं भंते ! केवइकालट्ठितीएसु उवव-

॥८०६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

असंज्ञी-पर्यंतः उत्पत्तिः

प्रत सूत्रांक [६९३] + गाथा

दीप अनुक्रम [८३५-८३८]

ज्जेज्जा ?, गोयमा ! जहन्नेणं दसवाससहस्सट्ठितीएसु उक्कोसेणवि दसवाससहस्सट्ठितीएसु उववज्जेज्जा, ते णं भंते ! जीवा एगसमएणं केवतिया उववज्जंति ?, एवं सचेव वत्तव्वया निरवसेसा भाणियव्वा जाव अणुबंधोत्ति, से णं भंते ! पज्जत्ताअसन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिए जहन्नकालट्ठितीए रयणप्पभापुढविणेरइए जहन्नकाल० २ पुणरवि पज्जत्तअसन्नि जाव गतिरागतिं करेज्जा ?, गोयमा ! भवादेसेणं दो भवग्गहणाइं कालादेसेणं जहन्नेणं दसवाससहस्साइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणं पुव्वकोडी दसहिं वाससहस्सेहिं अब्भहियाइं एवतियं कालं सेवेज्जा एवतियं कालं गतिरागतिं करेज्जा २। पज्जत्ताअसन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिए णं जे भविए उक्कोसकालट्ठितीएसु रयणप्पभापुढविनेरइएसु उववज्जित्तए से णं भंते ! केवतियकालठिईएसु उववज्जेज्जा ?, गोयमा ! जहन्नेणं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागठिईसु उववज्जेज्जा उक्कोसेणवि पलिओवमस्स असंखेज्जइभागट्ठितीएसु उवव०, ते णं भंते ! जीवा अवसेसं तं चेव जाव अणुबंधो। से णं भंते ! पज्जत्ताअसन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिए उक्कोसकालट्ठितीयरयणप्पभापुढविनेरइए पुणरवि पज्जत्ता जाव करेज्जा ?, गोयमा ! भवादेसेणं दो भवग्गहणाइं कालादेसेणं जहन्नेणं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागं अंतोमुहुत्तमब्भहियं उक्कोसेणं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागं पुव्वकोडिअब्भहियं एवतियं कालं सेवेज्जा एवइयं कालं गतिरागतिं करेज्जा ३। जहन्नकालट्ठितीयपज्जत्ताअसन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिए णं भंते ! जे भविए रयणप्पभापुढविनेरइएसु उववज्जित्तए से णं भंते ! केवतियकालठितीएसु उववज्जेज्जा ?, गोयमा ! जहन्नेणं दसवा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

असंज्ञी-पर्यंतः उत्पत्तिः

प्रत सूत्रांक [६९३] + गाथा दीप अनुक्रम [८३५-८३८]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥८०७॥

२४ शतके उद्देशः १ असञ्ज्ञिप-र्यन्तोत्पादः सू ६९३

ससहस्सट्ठितीएसु उक्कोसे० पलिओवमस्स असंखेज्जइभागट्ठितीएसु उवव०, ते णं भंते ! जीवा एगसमएणं केव० सेसं तं चेव णवरं इमाइं तिन्नि णाणत्ताइं आउं अज्झवसाणा अणुबंधो य, जहन्नेणं ठिती अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणवि अंतोमु०, तेसि णं भंते ! जीवाणं केवतिया अज्झवसाणा प० ?, गो० ! असंखेज्जा अज्झवसाणा प०, ते णं भंते ! किं पसत्था अप्पसत्था ?, गोयमा ! णो पसत्था अप्पसत्था, अणुबंधी अंतोमुहुत्तं सेसं तं चेव । से णं भंते ! जहन्नकालट्ठितीए पज्जत्ताअसन्निपंचिंदिय० रयणप्पभा जाव करेज्जा ?, गोयमा ! भवादेसेणं दो भवग्गहणाइं कालादे० जह० दसवाससह० अंतोमु० अब्भहियाइं उक्कोसेणं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागं अंतोमुहुत्तमब्भहियं एवतियं कालं सेविज्जा जाव गतिरागतिं करेज्जा ४ । जहन्नकालट्ठितीयपज्जत्तअसन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिए णं भंते ! जे भविए जहन्नकालट्ठिइएसु रयणप्पभापुढविनेरइएसु उववज्जि ए से णं भंते ! केवतियकालट्ठितीएसु उववज्जेज्जा ?, गोयमा ! जह० दसवाससहस्सट्ठितीएसु उक्कोसेणवि दसवाससहस्सट्ठितीएसु उववज्जेज्जा, ते णं भंते ! जीवा सेसं तं चेव ताइं चेव तिन्नि णाणत्ताइं जाव से णं भंते ! जहन्नकालट्ठितीयपज्जत्तजाव जोणिए जहन्नकालट्ठितीयरयणप्पभा पुणरवि जाव गोयमा ! भवादेसेणं दो भवग्गहणाइं कालादेसेणं जहन्नेणं दसवाससहस्साइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणवि दसवाससहस्साइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं एवइयं कालं सेवेज्जा जाव करेज्जा ५ । जहन्नकालट्ठितीयपज्जत्तजाव तिरिक्खजोणिया- णं भंते ! भविए उक्कोसकालट्ठितीएसु रयणप्पभापुढविनेरइएसु उववज्जित्तए से णं भंते ! केवतियकालठि-

॥८०७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

असंज्ञी-पर्यंत: उत्पत्ति:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [६९३] + गाथा

दीप अनुक्रम [८३५--८३८]

तीएसु उववज्जेज्जा ?, गो० ! जहन्नेणं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागट्ठितीएसु उववज्जेज्जा उक्कोसेणवि पलिओवमस्स असंखेज्जइभागट्ठितीएसु उववज्जेज्जा, ते णं भंते ! जीवा अवसेसं तं चेव ताइं चेव तिन्नि णाणत्ताइं जाव से णं भंते ! जहन्नकालट्ठितीयपज्जत्तजावतिरिक्खजोणिए उक्कोसकालट्ठितीयरयणजाव करेज्जा ?, गोयमा ! भवादेसेणं दो भवग्गहणाइं कालादेसेणं जहन्नेणं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागं अंतोमुहुत्तमब्भहियं उक्कोसेणवि पलिओवमस्स असंखेज्जइभागं अंतोमुहुत्तेणऽब्भहियं एवतियं कालं जाव करेज्जा ६। उक्कोसकालट्ठिइयपज्जत्तअसन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिए णं भंते ! जे भविए रयणप्पभापुढविनेरइएसु उववज्जित्तए से णं भंते ! केवतिकालस्स जाव उवव० ?, गोयमा ! जहन्नेणं दसवाससहस्सठिइएसु उक्कोसेणं पलिओवमस्स असंखेज्जइजावउववज्जेज्जा, ते णं भंते ! जीवा एगसमएणं अवसेसं जहेव ओहियगमएणं तहेव अणुगंतव्वं, नवरं इमाइं दोन्नि नाणत्ताइं–ठिती जहन्नेणं पुव्वकोडी उक्कोसेणवि पुव्वकोडी एवं अणुबंधोवि अवसेसं तं चेव, से णं भंते ! उक्कोसकालट्ठितीयपज्जत्तअसन्निजाव तिरिक्खजोणिए रयणप्पभाजाव गोयमा ! भवादेसेणं दो भवग्गहणाइं कालादेसेणं जहन्नेणं पुव्वकोडी दसहिं वाससहस्सेहिं अब्भहिया उक्कोसेणं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागं पुव्वकोडीए अब्भहियं एवतियं जाव करेज्जा ७। उक्कोसकालट्ठितीयपज्जत्ते तिरिक्खजोणिए णं भंते ! जे भविए जहन्नकालट्ठितीएसु रयणजाव उवव० से णं भंते ! केवति जाव उववज्जेज्जा ?, गो० ! जह० दसवाससहस्सट्ठितीएसु उक्कोसेणवि दसवाससहस्सट्ठितीएसु उववज्जेज्जा, ते णं भंते ! सेसं तं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

असंज्ञी-पर्यंत: उत्पत्ति:

प्रत सूत्रांक [६९३] + गाथा दीप अनुक्रम [८३५--८३८]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥८०८॥

२४ शतके उद्देशः १ असञ्ज्ञिपर्यन्तोत्पादः सू ६९३

चेव जहा सत्तमगमए जाव से णं भंते! उक्कोसकालट्ठिती जाव तिरिक्खजोणिए जहन्नकालट्ठितीयरयणप्पभा जाव करेज्जा?, गोयमा! भवादेसेणं दो भव० कालादे० जह० पुव्वकोडी दसहिं वाससहस्सेहिं अब्भहिया उक्कोसेणवि पुव्वकोडी दसवाससहस्सेहिं अब्भहिया एवतियं जाव करेज्जा ८। उक्कोसकालट्ठितीयपज्जत्तजाव तिरिक्खजोणिए णं भंते! जे भविए उक्कोसकालट्ठितीएसु रयणजाव उववज्जित्तए से णं भंते! केवतिकालं जाव उववज्जेज्जा?, गोयमा! जहन्नेणं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागट्ठितीएसु उक्कोसेणवि पलिओवमस्स असंखेज्जइभागट्ठितीएसु उववज्जेज्जा, ते णं भंते! जीवा एगसमएणं सेसं जहा सत्तमगमए जाव से णं भंते! उक्कोसकालट्ठितीयपज्जत्तजावतिरिक्खजोणिए उक्कोसकालट्ठितीयरयणप्पभाजावकरेज्जा?, गोयमा! भवादेसेणं दो भवग्गहणाइं कालादेसेणं जहन्नेणं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागं पुव्वकोडीए अब्भहियं उक्कोसेणवि पलिओवमस्स असंखेज्जइभागं पुव्वकोडीए अब्भहियं एवतियं कालं सेवेज्जा जाव गतिरागतिं करेज्जा ९। एवं एते ओहिया तिन्नि गमगा ३ जहन्नकालट्ठितीएसु तिन्नि गमगा उक्कोसकालट्ठितीएसु तिन्नि गमगा ९ सव्वे ते णव गमा भवंति (सूत्रं ६९३)॥

'उववाए'त्यादि, एतच्च व्यक्तं, नवरं 'उववाय'त्ति नारकादयः कुत उत्पद्यन्ते? इत्येवमुपपातो वाच्यः 'परीमाणं'ति ये नारकादिषूत्पत्स्यन्ते तेषां स्वकाये उत्पद्यमानानां परिमाणं वाच्यं 'संघयणं'ति तेषामेव नारकादिषूत्पित्सूनां संहननं वाच्यम् 'उच्चत्तं'ति नारकादियायिनामवगाहनाप्रमाणं वाच्यम्, एवं संस्थानाद्यप्यवसेयम् 'अणुबंधो'त्ति विवक्षितपर्याये- ॥८०८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

असंज्ञी-पर्यंत: उत्पत्ति:

प्रत सूत्रांक [६९३] + गाथा

दीप अनुक्रम [८३५--८३८]

णाव्यवच्छिन्नेनावस्थानं 'कायसंवेहो'त्ति विवक्षितकायात् कायान्तरे तुल्यकाये वा गत्वा पुनरपि यथासम्भवं तत्रैवागमनम् ॥ अथाधिकृतशतस्योद्देशकपरिमाणपरिज्ञानार्थं गाथामाह—'जीवपए'इत्यादि, इयं च गाथा पूर्वोक्तद्वारगाथाद्वयात् क्वचित् पूर्वं दृश्यत इति । तत्र प्रथमोद्देशको व्याख्यायते, तत्र च कायसंवेधद्वारे—'से णं भंते ! पज्जत्ताअसन्नी'त्यादि, 'भवादेसेणं'ति भवप्रकारेण 'दो भवग्गहणाइं'ति एकत्रासञ्ज्ञी द्वितीये नारकस्ततो निर्गतः सन्ननन्तरतया सञ्ज्ञित्वमेव लभते न पुनरसञ्ज्ञित्वमिति, 'कालाएसेणं'ति कालप्रकारेण कालत इत्यर्थः दश वर्षसहस्राणि नारकजघन्यस्थितिरन्तर्मुहूर्त्ताभ्यधिकानि असञ्ज्ञिभवसम्बन्धिजघन्यायुःसहितानीत्यर्थः, 'उक्कोसेण'मित्यादि, इह पल्योपमासङ्ख्येयभागः पूर्वभवासञ्ज्ञिनारकोत्कृष्टायुष्करूपः पूर्वकोटी चासञ्ज्ञ्युत्कृष्टायुष्करूपेति, एवमेते सामान्येषु रत्नप्रभानारकेषूत्पित्सवोऽसञ्ज्ञिनः प्ररूपिताः, अथ जघन्यस्थितिषु तेषूत्पित्सूँस्तान् प्ररूपयन्नाह—'पज्जत्ते'त्यादि, सर्वं चेदं प्रतीतार्थमेव, एवमुत्कृष्टस्थितिषु रत्नप्रभानारकेषूत्पित्सवोऽपि प्ररूपणीयाः, एवमेते त्रयो गमा निर्विशेषणपर्याप्तकासञ्ज्ञिनमाश्रित्योक्ताः, एवमेत एव तं जघन्यस्थितिकं २ उत्कृष्टस्थितिकं ३ चाश्रित्य वाच्यास्तदेवमेते नव गमाः, तत्र जघन्यस्थितिकमसञ्ज्ञिनमाश्रित्य सामान्यनारकगम उच्यते–'जहन्ने'त्यादि, 'आउं अज्झवसाणा अणुबंधो य'त्ति आयुरन्तर्मुहूर्त्तमेव जघन्यस्थितेरसञ्ज्ञिनोऽधिकृतत्वात्, अध्यवसायस्थानान्यप्रशस्तान्येवान्तर्मुहूर्त्तस्थितिकत्वात्, दीर्घस्थितेर्हि तस्य द्विविधान्यपि तानि संभवन्ति कालस्य बहुत्वात्, अनुबन्धश्च स्थितिसमान एवेति । कायसंवेधे च नारकाणां जघन्याया उत्कृष्टायाश्च स्थितेरुपर्यन्तर्मुहूर्त्तं वाच्यमिति ४ । एवं जघन्यस्थितिकं तं जघन्यस्थितिकेषु तेषूत्पादयन्नाह–'जहन्नकालट्ठिई'त्यादि ५ ॥ एवं जघन्यस्थितिकं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

असंज्ञी-पर्यंत: उत्पत्ति:

प्रत सूत्रांक [६९३] + गाथा

दीप अनुक्रम [८३५-८३८]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥८०९॥

तमुत्कृष्टस्थितिषु तेषूत्पादयन्नाह–'जहन्ने'त्यादि ६, एवमुत्कृष्टस्थितिकं तं सामान्येषु तेषूत्पादयन्नाह–'उक्कोसकाले'त्यादि ७, एवमुत्कृष्टस्थितिकं तं जघन्यस्थितिकेषु तेषूत्पादयन्नाह–'उक्कोसकाले'त्यादि ८, एवमुत्कृष्टस्थितिषूत्पादयन्नाह–'उक्कोसकाले'त्यादि ९ ॥ एवं तावदसञ्ज्ञिनः पञ्चेन्द्रियतिरश्चो नारकेषूत्पादो नवधोक्तः, अथ सञ्ज्ञिनस्तस्यैव तथैव तमाह—

जइ सन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिएहिंतो उववज्जंति किं संखेज्जवासाउयसन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिएहिंतो उववज्जंति असंखेज्जवासाउयसन्निपंचिंदियतिरिक्खजाव उववज्जंति ?, गोयमा ! संखेज्जवासाउयसन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिएहिंतो उववज्जंति णो असंखेज्जवासाउयसन्निपंचिंदियजाव उववज्जंति, जइ संखेज्जवासाउयसन्निपंचिंदियजाव उववज्जंति किं जलचरेहिंतो उववज्जंति ? पुच्छा, गोयमा ! जलचरेहिंतो उववज्जंति जहा असन्नी जाव पज्जत्तएहिंतो उववज्जंति णो अपज्जत्तेहिंतो उववज्जंति, पज्जत्तसंखेज्जवासाउयसन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिए णं भंते ! जे भविए णेरइएसु उववज्जित्तए से णं भंते ! कतिसु पुढवीसु उववज्जेज्जा ?, गोयमा ! सत्तसु पुढवीसु उववज्जेज्जा तंजहा–रयणप्पभाए जाव अहेसत्तमाए, पज्जत्तसंखेज्जवासाउयसन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिए णं भंते ! जे भविए रयणप्पभपुढविनेरइएसु उववज्जित्तए से णं भंते ! केवतियकालट्ठितीएसु उववज्जेज्जा ?, गोयमा ! जहन्नेणं दसवाससहस्सट्ठितीएसु उक्कोसेणं सागरोवमट्ठितीएसु उववज्जेज्जा, ते णं भंते ! जीवा एगसमएणं केवतिया उववज्जंति ?, जहेव असन्नी, तेसि णं भंते ! जीवाणं सरीरगा किंसंघयणी प० ?, गोयमा ! छव्विहसंघयणी प०, तं०–वइरोसभनारायसंघयणी उसभनारायसंघयणी जाव छेवट्ठ-

२४ शतके उद्देशः १ सञ्ज्युत्पादः सू ६९४

॥८०९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संज्ञी-जीवानाम् उत्पत्ति:

प्रत
सूत्रांक
[६९४]

दीप
अनुक्रम
[८३९]

संघयणी, सरीरोगाहणा जहेव असन्नीणं जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणं जोयणसहस्सं, तेसि णं भंते ! जीवाणं सरीरगा किंसंठिया प० ?, गोयमा ! छव्विहसंठिया प०, तंजहा–समचउरंस० निग्गोह० जाव-हुंडा, तेसि णं भंते ! जीवाणं कति लेस्साओ प० ?, गोयमा ! छल्लेसाओ पन्नत्ताओ, तंजहा–कण्हलेस्सा जाव सुक्कलेस्सा, दिट्ठी तिविहावि तिन्नि नाणा तिन्नि अन्नाणा भयणाए जोगो तिविहोवि सेसं जहा अस-न्नीणं जाव अणुबंधो, नवरं पंच समुग्घाया प० तं०–आदिल्लगा, वेदो तिविहोवि, अवसेसं तं चेव जाव से णं भंते ! पज्जत्तसंखेज्जवासाउय जाव तिरिक्खजोणिए रयणप्पभा जाव करेज्जा ?, गोयमा ! भवादेसेणं जहन्नेणं दो भवग्गहणाइं उक्कोसेणं अट्ठ भवग्गहणाइं कालादेसेणं जहन्नेणं दसवाससहस्साइं अंतोमुहुत्तम-ब्भहियाइं उक्कोसेणं चत्तारि सागरोवमाइं चउहिं पुव्वकोडीहिं अब्भहियाइं एवतियं कालं सेवेज्जा जाव करेज्जा १। पज्जत्तसंखेज्ज जाव जे भविए जहन्नकालजाव से णं भंते ! केवतियकालठितीएसु उववज्जेज्जा ?, गो० ! जह० दसवा० ठितीएसु उक्कोसेणवि दसवाससहस्सट्ठितीएसु जाव उववज्जेज्जा, ते णं भंते जीवा एवं सो चेव पढमो गमओ निरवसेसो भाणियव्वो जाव कालादेसेणं जहन्नेणं दसवाससहस्साइं अंतोमुहुत्तमब्भ-हियाइं उक्कोसेणं चत्तारि पुव्वकोडीओ चत्तालीसाए वाससहस्सेहिं अब्भहियाओ एवतियं कालं सेवेज्जा एव-तियं कालं गतिरागतिं करेज्जा २, सो चेव उक्कोसकालट्ठितीएसु उववन्नो जहन्नेणं सागरोवमट्ठितीएसु उक्कोसे-णवि सागरोवमट्ठितीएसु उववज्जेज्जा, अवसेसे परिमाणादीओ भवादेसपज्जवसाणो सो चेव पढमगमो णेयव्वो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संज्ञी-जीवानाम् उत्पत्ति:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [६९४]

दीप अनुक्रम [८३९]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

[८१०॥

२४ शतके उद्देशः १ सञ्ज्ञ्युत्पादः सू ६९४

जाव कालादेसेणं जहन्नेणं सागरोवमं अंतोमुहुत्तमब्भहियं उक्कोसेणं चत्तारि सागरोवमाइं चउहिं पुव्वकोडीहिं अब्भहियाइं एवतियं कालं सेविज्जा जावकरेज्जा ३, जहन्नकालट्ठितीयपज्जत्तसंखेज्जवासाउयसन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिए णं भंते ! जे भविए रयणप्पभपुढविजाव उववज्जित्तए से णं भंते ! केवतिकालट्ठितीएसु उववज्जेज्जा ?, गोयमा ! जहन्नेणं दसवाससहस्सट्ठितीएसु उक्कोसेणं सागरोवमट्ठितीएसु उववज्जेज्जा, ते णं भंते ! जीवा अवसेसो सो चेव गमओ नवरं इमाइं अट्ठ णाणत्ताइं–सरीरोगाहणा जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणं धणुहपुहुत्तं, लेस्साओ तिन्नि आदिल्लाओ, णो सम्मदिट्ठी मिच्छादिट्ठी णो सम्मामिच्छादिट्ठी, णो णाणी दो अन्नाणा णियमं, समुग्घाया आदिल्ला तिन्नि, आउं अज्झवसाणा अणुबंधो य जहेव असन्नीणं अवसेसं जहा पढमगमए जाव कालादेसेणं जहन्नेणं दसवाससहस्साइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणं चत्तारि सागरोवमाइं चउहिं अंतोमुहुत्तेहिं अब्भहियाइं एवतियं कालं जाव करेज्जा ४, सो चेव जहन्नकालट्ठितीएसु उववन्नो जहन्नेणं दसवाससहस्सट्ठितीएसु उक्कोसेणवि दसवाससहस्सट्ठितीएसु उववज्जेज्जा, ते णं भंते ! एवं सो चेव चउत्थो गमओ निरवसेसो भाणियव्वो जावकालादेसेणं जहन्नेणं दसवाससहस्साइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणं चत्तालीसं वाससहस्साइं चउहिं अंतोमुहुत्तेहिं अब्भहियाइं एवतियं जाव करेज्जा ५। सो चेव उक्कोसकालट्ठितीएसु उववन्नो जहन्नेणं सागरोवमट्ठितीएसु उववज्जेज्जा उक्कोसेणवि सागरोवमट्ठितीएसु उववज्जेज्जा ते णं भंते ! एवं सो चेव चउत्थो गमओ निरवसेसो भाणियव्वो जाव कालादेसेणं जहन्नेणं साग- ॥८१०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संज्ञी-जीवानाम् उत्पत्ति:

प्रत सूत्रांक [६९४]

दीप अनुक्रम [८३९]

रोवमं अंतोमुहुत्तमब्भहियं उक्कोसेणं चत्तारि सागरोवमाइं चउहिं अंतोमुहुत्तेहिं अब्भहियाइं एवतियं जाव करेज्जा ६। उक्कोसकालट्ठितीयपज्जत्तसंखेज्जवासा जाव तिरिक्खजोणिए णं भंते ! जे भविए रयणप्पभापुढविनेरइएसु उववज्जित्तए से णं भंते ! केवतिकालट्ठितीएसु उववज्जेज्जा ?, गोयमा ! जहन्नेणं दसवाससहस्सट्ठितीएसु उक्कोसेणं सागरोवमट्ठितीएसु उववज्जेज्जा, ते णं भंते ! जीवा अवसेसो परमाणादीओ भवाएसपज्जवसाणो एएसि चेव पढमगमओ णेयव्वो नवरं ठिती जहन्नेणं पुव्वकोडी उक्कोसेणवि पुव्वकोडी, एवं अणुबंधोवि, सेसं तं चेव, कालादेसेणं जहन्नेणं पुव्वकोडी दसहिं वाससहस्सेहिं अब्भहिया उक्कोसेणं चत्तारि सागरोवमाइं चउहिं पुव्वकोडीहिं अब्भहियाइं एवतियं कालं जाव करेज्जा ७। सो चेव जहन्नकालट्ठितीएसु उववन्नो जहन्नेणं दसवाससहस्सट्ठितीएसु उक्कोसेणवि दसवाससहस्सट्ठितीएसु उववज्जेज्जा ते णं भंते ! जीवा सो चेव सत्तमो गमओ निरवसेसो भाणियव्वो जाव भवादेसोत्ति, कालादेसेणं जहन्नेणं पुव्वकोडी दसहिं वाससहस्सेहिं अब्भहिया उक्कोसेणं चत्तारि पुव्वकोडीओ चत्तालीसाए वाससहस्सेहिं अब्भहिआओ एवतियं जाव करेज्जा, उक्कोसकालट्ठितीयपज्जत्तजाव तिरिक्खजोणिए णं भंते ! जे भविए उक्कोसकालट्ठितीय जाव उववज्जित्तए से णं भंते ! केवतिकालट्ठितीएसु उववज्जेज्जा ?, गोयमा ! जहन्नेणं सागरोवमट्ठितीएसु उक्कोसेणवि सागरोवमट्ठितीएसु उववज्जेज्जा, ते णं भंते ! जीवा सो चेव सत्तमगमओ निरवसेसो भाणियव्वो जाव भवादेसोत्ति, कालादे-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संज्ञी-जीवानाम् उत्पत्तिः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [६९४]

दीप अनुक्रम [८३९]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥८११॥

२४ शतके उद्देशः १ सञ्ज्युत्पादः सू ६९४

सेणं जहन्नेणं सागरोवमं पुव्वकोडीए अब्भहियं उक्कोसेणं चत्तारि सागरोवमाइं चउहिं पुव्वकोडीहिं अब्भहियाइं एवइयं जाव करेज्जा ९। एवं एते णव गमका उक्खेवनिक्खेवओ नवसुवि जहेव असन्नीणं (सूत्रं ६९४) ॥

'जइ सन्नी'त्यादि, 'तिन्नि नाणा तिन्नि अन्नाणा भयणाए'त्ति तिरश्चां सञ्ज्ञिनां नरकगामिनां ज्ञानान्यज्ञानानि च त्रीणि भजनया भवन्तीति द्वे वा त्रीणि वा स्युरित्यर्थः, 'नवरं पंच समुग्घाया आइल्लग'त्ति असञ्ज्ञिनः पञ्चेन्द्रियतिरश्चस्त्रयः समुद्घाताः सञ्ज्ञिनस्तु नरकं यियासोः पञ्चाद्याः, अन्त्ययोर्द्वयोर्मनुष्याणामेव भावादिति। 'जहन्नेणं दो भवग्गहणाइं'ति सञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियतिर्यङ् उत्पद्य पुनर्नरकेषूत्पद्यते ततो मनुष्येषु एवमधिकृतकायसंवेधे भवद्वयं जघन्यतो भवति, एवं भवग्रहणाष्टकमपि भावनीयं, अनेन चेदमुक्तं–सञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियतिर्यक् ततो नारकः पुनः सञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियतिर्यङ् पुनर्नारकः पुनः सञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियतिर्यङ् पुनर्नारकस्ततः पुनः सञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियतिर्यङ् पुनस्तस्यामेव पृथिव्यां नारक इत्येवमष्टावेव वारानुत्पद्यते नवमे भवे तु मनुष्यः स्यादिति, एवमौघिक औघिकेषु नारकेषूत्पादितः, अयं चेह प्रथमो गमः १ 'पज्जत्ते'त्यादिस्तु द्वितीयः २ 'सो चेव उक्कोसकाले'इत्यादिस्तु तृतीयः ३ 'जहन्नकालट्ठितीये'त्यादिस्तु चतुर्थः ४, तत्र च 'नवरं इमाइं अट्ठ नाणत्ताइं'ति, तानि चैवं–तत्र शरीरावगाहनोत्कृष्टा योजनसहस्रमुक्तेह धनुःपृथक्त्वं, तथा तत्र लेश्याः षड् इह त्वाद्यास्तिस्रः, तथा तत्र दृष्टिस्त्रिधा इह तु मिथ्यादृष्टिरेव, तथा तत्राज्ञानानि त्रीणि भजनया इह तु द्वे एवाज्ञाने, तथा तत्र आद्याः पञ्च समुद्घाता इह तु त्रयः, 'आउअज्झवसाणा अणुबंधो य जहेव असन्नीणं'ति जघन्यस्थितिकासञ्ज्ञिगम इवेत्यर्थः, ततश्चायुरिहान्तर्मुहूर्त्तं, अध्यवसायस्थानान्यप्रशस्तान्येव, अनुबन्धोऽप्यन्तर्मुहूर्त्तमेवेति, 'अवसेस'-

॥८११॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संज्ञी-जीवानाम् उत्पत्तिः

प्रत सूत्रांक [६९४]

दीप अनुक्रम [८३९]

मित्यादि, अवशेषं यथा सञ्ज्ञिनः प्रथमगमे औधिक इत्यर्थः निगमनवाक्यं चेदं–'अवसेसो चेव गमओ'त्ति अनेनैवैतदर्थस्य गतत्वादिति, 'सो चेव जघन्नकाले'त्यादिस्तु सञ्ज्ञिविषये पञ्चमो गमः ५, इह च 'सो चेव'त्ति स एव सञ्ज्ञी जघन्यस्थितिकः, 'सो चेव उक्कोसे'त्यादिस्तु षष्ठः ६, 'उक्कोसकाले'त्यादिस्तु सप्तमः ७, तत्र च 'एएसिं चेव पढमगमो'त्ति एतेषामेव सञ्ज्ञिनां प्रथमगमो यत्रौधिक औधिकेषूत्पादितः, 'नवर'मित्यादि तत्र जघन्याऽप्यन्तर्मुहूर्त्तरूपा सञ्ज्ञिनः स्थितिरुक्ता सेह न वाच्येत्यर्थः, एवमनुबन्धोऽपि तद्रूपत्वात्तस्येति, 'सो चेवे'त्यादिरष्टमः ८, इह च 'सो चेव'त्ति स एवोत्कृष्टस्थितिकः सञ्ज्ञी ८, 'उक्कोसे'त्यादिर्नवमः ९, 'उक्खेवनिक्खेवओ'इत्यादि, तत्रोत्क्षेपः-[ग्रन्थाग्रम् १६०००] प्रस्तावना स च प्रतिगममौचित्येन स्वयमेव वाच्यः, निक्षेपस्तु-निगमनं सोऽप्येवमेवेति ॥ पर्याप्तकसङ्ख्यातवर्षायुष्कसञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकमाश्रित्य रत्नप्रभावक्तव्यतोक्ता, अथ तमेवाश्रित्य शर्कराप्रभावक्तव्यतोच्यते, तत्रौधिक औधिकेषु तावदुच्यते—

पज्जत्तसंखेज्जवासाउयसन्निपंचिंदियतिरिक्खजो० भंते ! जे भविए सक्करप्पभाए पुढवीए णेरइएसु उववज्जित्तए से णं भंते ! केवइकालट्ठितीएसु उवव० ?, गोयमा ! जह० सागरोवमट्ठितीएसु उक्को० तिसागरोवमट्ठितीएसु उववज्जेज्जा, ते णं भंते ! जीवा एगसमएणं एवं जहेव रयणप्पभाए उववज्जंतगमगस्स लद्धी सच्चेव निरवसेसा भा० जाव भवादेसोत्ति कालादेसेणं जहन्नेणं सागरोवमं अंतोमुहुत्तं अब्भहियं उक्कोसेणं बारससागरोवमाइं चउहिं पुव्वकोडीहिं अब्भहियाइं एवतियं जाव करेज्जा १, एवं रयणप्पभपुढविगमसरिसा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संज्ञी-जीवानाम् उत्पत्तिः

प्रत सूत्रांक [६९५] दीप अनुक्रम [८४०]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥८१२॥

२४ शतके उद्देशः १ शर्करप्रभादिषूत्पादः सू ६९५

णववि गमगा भाणियवा नवरं सवगमएसुवि नेरइयट्ठितीसंवेहेसु सागरोवमा भा० एवं जाव छट्ठीपुढवित्ति, णवरं नेरइयठिई जा जत्थ पुढवीए जहन्नुक्कोसिया सा तेणं चेव कमेण चउगुणा कायवा, वालुयप्पभाए पुढवीए अट्ठावीसं सागरोवमाइं चउगुणिया भवंति पंकप्प० चत्तालीसं धूमप्पभाए अट्ठसट्ठिं तमाए अट्ठासीइं संघयणाइं वालुयप्पभाए पंचविहसंघयणी तं०–वयरोसहनारायसंघयणी जाव खीलियासंघयणी पंकप्पभाए चउविहसंघयणी धूमप्पभाए तिविहसंघयणी तमाए दुविहसंघयणी तं०–वयरोसभनारायसंघयणी य १ उसभनारायसंघयणी २, सेसं तं चेव ॥ पज्जत्तसंखेज्जवासाउयजाव तिरिक्खजोणिए णं भंते ! जे भविए अहेसत्तमाए पुढवीए नेरइएसु उववज्जित्तए से णं भंते ! केवतिकालट्ठितीएसु उववजेज्जा ?, गोयमा ! जहन्नेणं बावीसंसागरोवमट्ठितीएसु उक्कोसेणं तेत्तीसंसागरोवमट्ठितीएसु उववज्जेज्जा, ते णं भंते ! जीवा एवं जहेव रयणप्पभाए णव गमका लद्धीवि सच्चेव णवरं वयरोसभणारायसंघयणी इत्थिवेयगा न उववज्जंति सेसं तं चेव जाव अणुबंधोत्ति, संवेहो भवादेसेणं जहन्नेणं तिन्नि भवग्गहणाइं उक्कोसेणं सत्त भवग्गहणाइं कालादेसेणं जह० बावीसं सागरोवमाइं दोहिं अंतोमुहुत्तेहिं अब्भहियाइं उक्कोसे० छावट्ठिं सागरोवमाइं चउहिं पुवकोडीहिं अब्भहियाइं एवतियं जाव करेज्जा १, सो चेव जहन्नकालट्ठितीएसु उववन्नो सच्चेव वत्तवया जाव भवादेसोत्ति, कालादेसेणं जहन्नेणं कालादेसोवि तहेव जाव चउहिं पुवकोडीहिं अब्भहियाइं एवतियं जाव करेज्जा २ सो चेव उक्कोसकालट्ठितीएसु उवव० सच्चेव लद्धी जाव अणुबंधोत्ति, भवादेसेणं जहन्नेणं तिन्नि ॥८१२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [६९५]

दीप अनुक्रम [८४०]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

भवग्गहणाइं उक्कोसेणं पंच भवग्गहणाइं कालादे० जह० तेत्तीसं सागरोवमाइं दोहिं अंतोमुहुत्तेहिं अब्भ-याइं उक्को० छावट्ठिं सागरोवमाइं तिहिं पुव्वकोडीहिं अब्भहियाइं एवतियं० सो चेव अप्पणा जहन्नकालट्ठि-तीओ जाओ सच्चेव रयणप्पभपुढविजहन्नकालट्ठितीयवत्तव्वया भाणियव्वा जाव भवादेसोत्ति नवरं पढमसंघ-यणं णो इत्थिवेयगा भवादेसेणं जहन्नेणं तिन्नि भवग्गहणाइं उक्कोसेणं सत्त भवग्गहणाइं कालादेसेणं जहन्नेणं बावीसं सागरोवमाइं दोहिं अंतोमुहुत्तेहिं अब्भहियाइं उक्कोसेणं छावट्ठिं सागरोवमाइं चउहिं अंतोमुहु-त्तेहिं अब्भहियाइं एवतियं जाव करेज्जा ४। सो चेव जहन्नकालट्ठितीएसु उववन्नो एवं सो चेव चउत्थो गमओ निरवसेसो भाणियव्वो जाव कालादेसोत्ति ५। सो चेव उक्कोसकालट्ठितीएसु उववन्नो सच्चेव लद्धी जाव अणुबंधोत्ति भवादेसेणं जहन्नेणं तिन्नि भवग्गहणाइं उक्कोसेणं पंच भवग्गहणाइं कालादेसेणं जहन्नेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं दोहिं अंतोमुहुत्तेहिं अब्भहियाइं उक्कोसेणं छावट्ठिं सागरोवमाइं तिहिं अंतोमुहुत्तेहिं अब्भहियाइं एवइयं कालं जाव करेज्जा ६। सो चेव अप्पणा उक्कोसकालट्ठितीओ जहन्नेणं बावीससागरोव-मट्ठिइएसु उक्कोसेणं तेत्तीससागरोवमट्ठितीएसु उववज्जेज्जा ते णं भंते ! अवसेसा सच्चेव सत्तमपुढविपढमगम-वत्तव्वया भाणियव्वा जाव भवादेसोत्ति नवरं ठिती अणुबंधो य जहन्नेणं पुव्वकोडी उक्कोसेणवि पुव्वकोडी सेसं तं चेव कालादेसेणं जहन्नेणं बावीसं सागरोवमाइं दोहिं पुव्वकोडीहिं अब्भहियाइं उक्कोसेणं छावट्ठिं सागरोवमाइं चउहिं पुव्वकोडीहिं अब्भहियाइं एवइयं जाव करेज्जा ७। सो चेव जहन्नकालट्ठितीएसु उववन्नो सच्चेव लद्धी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [६९५]

दीप अनुक्रम [८४०]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥८१३॥

संवेहोवि तहेव सत्तमगमगसरिसो ८। सो चेव उक्कोसकालट्ठितीएसु उववन्नो एस चेव लद्धी जाव अणुबंधोत्ति भवादेसेणं जहन्नेणं तिन्नि भवग्गहणाइं उक्कोसेणं पंच भवग्गहणाइं कालादेसेणं जहन्नेणं तेत्तीससागरोवमाइं दोहिं पुव्वकोडीहिं अब्भहियाइं उक्कोसेण छावट्ठिं सागरोवमाइं तिहिं पुव्वकोडीहिं अब्भहियाइं एवतियं कालं सेवेज्जा जाव करेज्जा (सूत्रं ६९५)॥

२४ शतके उद्देशः १ शर्करप्रभादिषूत्पादः सू ६९५

'पज्जत्ते'त्यादि, 'लद्धी सच्चेव निरवसेसा भाणियव्वा' परिमाणसंहननादीनां प्राप्तिर्यैव रत्नप्रभायामुत्पित्सोरुक्ता सैव निरवशेषा शर्कराप्रभायामपि भणितव्येति, 'सागरोवमं अंतोमुहुत्तमब्भहियं'ति द्वितीयायां जघन्या स्थितिः सागरोपममन्तर्मुहूर्त्तं च सञ्ज्ञिभवसत्कमिति, 'उक्कोसेणं बारसे'त्यादि द्वितीयायामुत्कृष्टतः सागरोपमत्रयं स्थितिः तस्याश्चतुर्गुणत्वे द्वादश, एवं पूर्वकोटयोऽपि चतुर्षु सञ्ज्ञितिर्यग्भवेषु चतस्र एवेति । 'नेरइयठिइसंवेहेसु सागरोवमा भाणियव्व'त्ति रत्नप्रभायामायुर्द्वारे संवेधद्वारे च दशवर्षसहस्राणि सागरोपमं चोक्तं द्वितीयादिषु पुनर्जघन्यत उत्कर्षतश्च सागरोपमाण्येव वाच्यानि, यतः–“सागरमेगं १ तिय २ सत्त ३ दस ४ य सत्तरस ५ तह य बावीसा ६। तेत्तीसा ७ जावठिई सत्तसुवि कमेण पुढवीसु ॥ १ ॥” तथा–“जा पढमाए जेट्ठा सा बीयाए कणिट्ठिया भणिया । तरतमजोगो एसो दसवाससहस्स रयणाए ॥ २ ॥” इति [एकं सागरं त्रीणि सप्त दश च सप्तदश तथैव द्वाविंशतिः । त्रयस्त्रिंशत् सप्तस्वपि पृथ्वीषु क्रमेण यावत्स्थितिः ॥ १ ॥ या प्रथमायां ज्येष्ठा सा द्वितीयायां कनीयसी भणिता । एष तरतमयोगो रत्नायां दशवर्षसहस्राणि ॥ २ ॥] रत्नप्रभागमतुल्या नवापि गमाः, कियद्दूरं यावत् ? इत्याह–'जाव छट्ठपुढवि'त्ति, 'चउगुणा कायव्व'त्ति उत्कृष्टे

॥८१३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [६९५]

दीप अनुक्रम [८४०]

कायसंवेधे इति, 'वालुयप्पभाए अट्ठावीसं,' तत्र सप्त सागरोपमाण्युत्कर्षतः स्थितिरुक्ता सा च चतुर्गुणा अष्टाविंशतिः स्यात्, एवमुत्तरत्रापीति, 'वालुयप्पभाए पंचविहसंघयणि'त्ति आद्ययोरेव हि पृथिव्योः सेवार्त्तेनोत्पद्यन्ते, एवं चतुर्थी ४ पञ्चमी ३ षष्ठी २ सप्तमीषु १ एकैकं संहननं हीयत इति ॥ अथ सप्तमपृथिवीमाश्रित्याह–'पज्जत्ते'त्यादि, 'इत्थिवेया न उववज्जंति'त्ति षष्ठ्यन्तास्वेव पृथिवीषु स्त्रीणामुत्पत्तेः 'जहन्नेणं तिन्नि भवग्गहणाइं' ति मत्स्यस्य सप्तमपृथिवीनारकत्वेनोत्पद्य पुनर्मत्स्येष्वेवोत्पत्तौ 'उक्कोसेणं सत्त भवग्गहणाइं'ति मत्स्यो मृत्वा १ सप्तम्यां गतः २ पुनर्मत्स्यो जातः ३ पुनः सप्तम्यां गतः ४ पुनरपि मत्स्यः ५ पुनरपि तथैव गतः ६ पुनर्मत्स्यः ७ इत्येवमिति । 'कालादेसेण'मित्यादि, इह द्वाविंशतिः सागरोपमाणि जघन्यस्थितिकसप्तमपृथ्वीनारकसम्बन्धीनि अन्तर्मुहूर्त्तद्वयं च प्रथमतृतीयमत्स्यभवसम्बन्धीति, 'छावट्ठिं सागरोवमाइं'ति वारत्रयं सप्तम्यां द्वाविंशतिसागरोपमायुष्कतयोत्पत्तेः चतस्रश्च पूर्वकोटयश्चतुर्षु नारकभवान्तरितेषु मत्स्यभवेष्विति, अतो वचनाच्चैतदवसीयते–सप्तम्यां जघन्यस्थितिषूत्कर्षतस्त्रीनेव वारानुत्पद्यत इति, कथमन्यथैवंविधं भवग्रहणकालपरिमाणं स्यात्, इह च काल उत्कृष्टो विवक्षितस्तेन जघन्यस्थितिषु त्रीन् वारानुत्पादितः, एवं हि चतुर्थी पूर्वकोटिर्लभ्यते, उत्कृष्टस्थितिषु पुनर्वारद्वयोत्पादनेन षट्षष्टिः सागरोपमाणां भवति पूर्वकोट्यः पुनस्तिस्र एवेति १ 'सो चेव जहन्नकालट्ठिइएसु' इत्यादिस्तु द्वितीयो गमः २ 'सो चेव उक्कोसकालट्ठिइसु उववज्जेज्जा'इत्यादिस्तु तृतीयः, तत्र च 'उक्कोसेणं पंच भवग्गहणाइं'ति त्रीणि मत्स्यभवग्रहणानि द्वे च नारकभवग्रहणे, अत एव वचनादुत्कृष्टस्थितिषु सप्तम्यां वारद्वयमेवोत्पद्यत इत्यवसीयते ३ 'सो चेव जहन्नकालट्ठि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [६९५]

दीप अनुक्रम [८४०]

ईओ' इत्यादिस्तु चतुर्थः ४ तत्र च 'सच्चेव रयणप्पभपुढविजहन्नकालट्ठिइवत्तव्वया भाणियव्व'त्ति सैव रत्नप्रभाचतुर्थगमवक्तव्यता भणितव्या नवरं–केवलमयं विशेषः, तत्र रत्नप्रभायां षट् संहननानि त्रयश्च वेदा उक्ताः इह तु सप्तमपृथिवीचतुर्थगमे प्रथममेव संहननं स्त्रीवेदनिषेधश्च वाच्य इति ४, शेषगमास्तु स्वयमेव ऊह्याः ॥ मनुष्याधिकारे—

जइ मणुस्सेहिंतो उववज्जंति किं सन्निमणुस्सेहिंतो उववज्जंति असन्निमणुस्सेहिंतो उववज्जंति ?, गोयमा ! सन्निमणुस्सेहिंतो उववज्जंति णो असन्नीमणुस्सेहिंतो उववज्जंति, जइ सन्निमणुस्सेहिंतो उववज्जन्ति किं संखेज्जवासाउयसन्निमणुस्सेहिंतो उवव० असंखेज्जवा० जाव उवव० ?, गोयमा ! संखेज्जवासाउयसन्निमणु० णो असंखेज्जवासाउयजाव उववज्जन्ति, जइ संखेज्जवासा जाव उववज्जन्ति किं पज्जत्तसंखेज्जवासाउय० अपज्जत्तसंखेज्जवासाउय० ?, गोयमा ! पज्जत्तसंखेज्जवासाउय० नो अपज्जत्तसंखेज्जवासाउय जाव उववज्जंति, पज्जत्तसंखेज्जवासाउय० सन्निमणुस्से णं भंते ! जे भविए नेरइएसु उववज्जित्तए से णं भंते ! कति पुढवीसु उववज्जेज्जा ?, गोयमा ! सत्तसु पुढवीसु उववज्जेज्जा तं०–रयणप्पभाए जाव अहेसत्तमाए, पज्जत्तसंखेज्जवासाउयसन्निमणुस्से णं भंते ! जे भविए रयणप्पभाए पुढवीए नेरइएसु उववज्जित्तए से णं भंते! केवतिकालट्ठिइएसु उववज्जेज्जा ?, गोयमा ! जह० दसवाससहस्सट्ठितीएसु उक्कोसेणं सागरोवमट्ठितीएसु उववज्जेज्जा, ते णं भंते ! जीवा एगसमएणं केवइया उववज्जंति ?, गोयमा ! जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा उववज्जंति संघयणा छ सरीरोगाहणा जहन्नेणं अंगुलपुहुत्तं उक्कोसेणं पंचधणुसयाइं एवं सेसं जहा सन्निपंचिंदियतिरिक्ख-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मनुष्याधिकारे उत्पाद-वर्णनं

प्रत सूत्रांक [६९६-६९७]

दीप अनुक्रम [८४१-८४२]

जोणियाणं जाव भवादेसोत्ति नवरं चत्तारि णाणा तिन्नि अन्नाणा भयणाए छ समुग्घाया केवलिवज्जा ठिती अणुबंधो य जहन्नेणं मासपुहुत्तं उक्कोसेणं पुव्वकोडी सेसं तं चेव कालादेसेणं जहन्नेणं दसवाससहस्साइं मासपुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणं चत्तारि सागरोवमाइं चउहिं पुव्वकोडीहिं अब्भहियाइं एवतियं जाव करेज्जा १, सो चेव जहन्नकालट्ठितीएसु उववन्नो सा चेव वत्तव्वया नवरं कालादेसेणं जहन्नेणं दसवाससहस्साइं मासपुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणं चत्तारि पुव्वकोडीओ चत्तालीसाए वाससहस्सेहिं अब्भहियाओ एवतियं २, सो चेव उक्कोसकालट्ठितीएसु उववन्नो एस चेव वत्तव्वया नवरं कालादेसेणं जहन्नेणं सागरोवमं मासपुहुत्तमब्भहियं उक्कोसेणं चत्तारि सागरोवमाइं चउहिं पुव्वकोडीहिं अब्भहियाइं एवतियं जाव करेज्जा ३, सो चेव अप्पणा जहन्नकालट्ठितीओ जाओ एस चेव वत्तव्वया नवरं इमाइं पंच नाणत्ताइं सरीरोगाहणा जहन्नेणं अंगुलपुहुत्तं उक्कोसेणवि अंगुलपुहत्तं तिन्नि नाणा तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए पंच समुग्घाया आदिल्ला ठिती अणुबंधो य जहन्नेणं मासपुहुत्तं उक्कोसेणवि मासपुहुत्तं सेसं तं चेव जाव भवादेसोत्ति, कालादेसेणं जहन्नेणं दसवाससहस्साइं मासपुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणं चत्तारि सागरोवमाइं चउहिं मासपुहत्तेहिं अब्भहियाइं एवतियं जाव करेज्जा ४। सो चेव जहन्नकालट्ठितीएसु उववन्नो एस चेव वत्तव्वया चउत्थगमगसरिसा णेयव्वा नवरं कालादेसेणं जहन्नेणं दसवाससहस्साइं मासपुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणं चत्तालीसं वाससहस्साइं चउहिं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मनुष्याधिकारे उत्पाद-वर्णनं

प्रत सूत्रांक [६९६-६९७]

दीप अनुक्रम [८४१-८४२]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥८१५॥

२४ शतके उद्देशः १ मनुष्येभ्य उत्पादः सू ६९६

मासपुहुत्तेहिं अब्भहियाइं एवतियं जाव करेज्जा ५। सो चेव उक्कोसकालट्ठितीएसु उववन्नो एस चेव गमगो नवरं कालादेसेणं जहन्नेणं सागरोवमं मासपुहुत्तमब्भहियं उक्कोसेणं चत्तारि सागरोवमाइं चउहिं मासपुहुत्तेहिं अब्भहियाइं एवइयं जाव करेज्जा ६। सो चेव अप्पणा उक्कोसकालट्ठितीओ जाओ सो चेव पढमगमओ णेयब्वो नवरं सरीरोगाहणा जहन्नेणं पंचधणुसयाइं उक्कोसेणवि पंचधणुसयाइं ठिती जहन्नेणं पुव्वकोडी उक्कोसेणवि पुव्वकोडी एवं अणुबंधोवि, कालादेसेणं जहन्नेणं पुव्वकोडी दसहिं वाससहस्सेहिं अब्भहिया उक्कोसेणं चत्तारि सागरोवमाइं चउहिं पुव्वकोडीहिं अब्भहियाइं एवतियं कालं जाव करेज्जा ७। सो चेव जहन्नकालट्ठितीएसु उववन्नो सच्चेव सत्तमगमगवत्तव्वया नवरं कालादेसेणं जहन्नेणं पुव्वकोडी दसहिं वाससहस्सेहिं अब्भहिया उक्कोसेणं चत्तारि पुव्वकोडीओ चत्तालीसाए वाससहस्सेहिं अब्भहियाओ एवतियं कालं जाव करेज्जा ८। सो चेव उक्कोसकालट्ठितीएसु उववन्नो सा चेव सत्तमगमगवत्तव्वया नवरं कालादेसेणं जहन्नेणं सागरोवमं पुव्वकोडीए अब्भहियं उक्कोसेणं चत्तारि सागरोवमाइं चउहिं पुव्वकोडीहिं अब्भहियाइं एवतियं कालं जाव करेज्जा ९॥ (सूत्रं ६९६)॥ पज्जत्तसंखेज्जवासाउयसन्निमणुस्से णं भंते! जे भविए सक्करप्पभाए पुढवीए नेरइएसु जाव उववज्जित्तए से णं भंते! केवति जाव उववज्जेज्जा?, गोयमा! जहन्नेणं सागरोवमट्ठितीएसु उक्कोसेणं तिसागरोवमट्ठितीएसु उववज्जेज्जा, ते णं भंते! सो चेव रयणप्पभपुढविगमओ णेयब्वो नवरं सरीरोगाहणा जहन्नेणं रयणिपुहुत्तं उक्कोसेणं पंचधणुसयाइं ठिती जहन्नेणं वासपुहुत्तं उक्कोसेणं पुव्वको- ॥८१५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मनुष्याधिकारे उत्पाद-वर्णनं

प्रत सूत्रांक [६९६- -६९७] दीप अनुक्रम [८४१- ८४२]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति: डी एवं अणुबंधोवि, सेसं तं चेव जाव भवादेसोत्ति, कालादेसेणं जहन्नेणं सागरोवमं वासपुहत्तंअब्भहियं उक्कोसेणं बारस सागरोवमाइं चउहिं पुव्वकोडीहिं अब्भहियाइं एवतियं जाव करेज्जा १, एवं एसा ओहिएसु तिसु गमएसु मणूसस्स लद्धी नाणत्तं नेरइयट्ठिती कालादेसेणं संवेहं च जाणेज्जा ३, से चेव अप्पणा जहन्न-कालट्ठितीओ जाओ तिसुवि गमएसु एस चेव लद्धी नवरं सरीरोगाहणा जहन्नेणं रयणिपुहुत्तं उक्कोसेणवि रयणिपुहुत्तं ठिती जहन्नेणं वासपुहुत्तं उक्कोसेणवि वासपुहुत्तं एवं अणुबंधोवि सेसं जहा ओहियाणं संवेहो सव्वो उवजुंजिऊण भाणियव्वो ४-५-६, सो चेव अप्पणा उक्कोसकालट्ठितीओ तस्सवि तिसुवि गमएसु इमं णाणत्तं–सरीरोगाहणा जहन्नेणं पंचधणुसयाइं उक्कोसेणवि पंचधणुसयाइं ठिती जहन्नेणं पुव्वकोडी उक्कोसेणवि पुव्व-कोडी एवं अणुबंधोवि सेसं जहा पढमगमए नवरं नेरइयठिई य कायसंवेहं च जाणेज्जा ९ एवं जाव छट्ठपुढवी नवरं तच्चाए आढवेत्ता एक्केक्कं संघयणं परिहायति जहेव तिरिक्खजोणियाणं कालादेसोवि तहेव नवरं मणुस्सट्ठिती भाणियव्वा ॥ पज्जत्तसंखेज्जवासाउयसन्निमणुस्से णं भंते ! जे भविए अहेसत्तमाए पुढविनेरइएसु उववज्जित्तए से णं भंते ! केवतिकालट्ठितीएसु उववज्जेज्जा ?, गोयमा ! जहन्नेणं बावीसं सागरोवमठितीएसु उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमट्ठितीएसु उववज्जेज्जा, ते णं भंते ! जीवा एगसमएणं अवसेसो सो चेव सक्करप्पभापुढवि-गमओ णेयव्वो नवरं पढमं संघयणं इत्थिवेयगा न उववज्जंति सेसं तं चेव जाव अणुबंधोत्ति भवादेसेणं दो Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org
	मनुष्याधिकारे उत्पाद-वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [६९६--६९७]

दीप अनुक्रम [८४१-८४२]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥८१६॥

२४ शतके उद्देशः १ मनुष्येभ्य उत्पादः सू ६९६

भवग्गहणाइं कालादेसेणं जहन्नेणं बावीसं सागरोवमाइं वासपुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं पुव्वकोडीए अब्भहियाइं एवतियं जाव करेज्जा १, सो चेव जहन्नकालट्ठितीएसु उववन्नो एस चेव वत्तव्वया नवरं नेरइयट्ठितिंसंवेहं च जाणेज्जा २, सो चेव उक्कोसकालट्ठितीएसु उववन्नो एस चेव वत्तव्वया नवरं संवेहं च जाणेज्जा ३, सो चेव अप्पणा जहन्नकालट्ठितीओ जाओ तस्सवि तिसुवि गमएसु एस चेव वत्तव्वया नवरं सरीरोगाहणा जहन्नेणं रयणिपुहुत्तं उक्कोसेणवि रयणिपुहुत्तं ठिती जहन्नेणं वासपुहुत्तं उक्कोसेणवि वासपुहुत्तं एवं अणुबंधोवि संवेहो उवजुंजिऊण भाणियव्वो ६। सो चेव अप्पणा उक्कोसकालट्ठितीओ जाओ तस्सवि तिसुवि गमएसु एस चेव वत्तव्वया नवरं सरीरोगाहणा जहन्नेणं पंचधणुसयाइं उक्कोसेणवि पंचधणुसयाइं ठिती जहन्नेणं पुव्वकोडी उक्कोसेणवि पुव्वकोडी एवं अणुबंधोवि णवसुवि एतेसु गमएसु नेरइयट्ठिती संवेहं च जाणेज्जा सव्वत्थ भवग्गहणाइं दोन्नि जाव णवमगमए कालादेसेणं जहन्नेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं पुव्वकोडीए अब्भहियाइं उक्कोसेणवि तेत्तीसं सागरोवमाइं पुव्वकोडीए अब्भहियाइं एवतियं कालं सेवेज्जा एवतियं कालं गतिरागतिं करेज्जा ९। सेवं भंतेत्ति जाव विहरति ॥ चउवीसतिमसए पढमो (सूत्रं ६९७) ॥ २४–१ ॥ ॥८१६॥

'उक्कोसेणं संखेज्जा उववज्जंति'त्ति गर्भजमनुष्याणां सदैव सङ्ख्यातानामेवास्तित्वादिति, 'नवरं चत्तारि नाणाइं'ति अवध्यादौ प्रतिपतिते सति केषाञ्चिन्नारकेषूत्पत्तेः, आह च चूर्णिकारः–'ओहिनाणमणपज्जवआहारयसरीराणि लद्धूणं परि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मनुष्याधिकारे उत्पाद-वर्णनं

प्रत सूत्रांक [६९६--६९७]

दीप अनुक्रम [८४१-८४२]

साडित्ता उववज्जंति'त्ति, 'जहन्नेणं मासपुहुत्तं'ति, इदमुक्तं भवति–मासद्वयान्तर्वर्त्यायुर्नरो नरकं न याति 'दसवाससहस्साइं'ति जघन्यं नारकायुः 'मासपुहुत्तमब्भहियाइं'ति इह मासपृथक्त्वं जघन्यं नरकयायिमनुष्यायुः 'चत्तारि सागरोवमाइं'ति उत्कृष्टं रत्नप्रभानारकभवचतुष्कायुः 'चउहिं पुव्वकोडीहिं अब्भहियाइं'ति, इह चतस्रः पूर्वकोटयो नरकयायिमनुष्यभवचतुष्कोत्कृष्टायुःसम्बन्धिन्यः, अनेन चेदमुक्तं–मनुष्यो भूत्वा चतुर एव वारानेकस्यां पृथिव्यां नारको जायते पुनश्च तिर्यगेव भवतीति, जघन्यकालस्थितिक औघिकेष्वित्यत्र चतुर्थे गमे 'इमाइं पंच णाणत्ताइं'इत्यादि शरीरावगाहनेह जघन्येतराभ्यामङ्गुलपृथक्त्वं, प्रथमगमे तु सा जघन्यतोऽङ्गुलपृथक्त्वमुत्कृष्टतस्तु पञ्च धनुःशतानीति १ तथेह त्रीणि ज्ञानानि त्रीण्यज्ञानानि भजनया जघन्यस्थितिकस्यैषामेव भावात्, पूर्वं च चत्वारि ज्ञानान्युक्तानीति २ तथेहाद्याः पञ्च समुद्घाताः जघन्यस्थितिकस्यैषामेव सम्भवात् प्राक् च षडुक्ताः अजघन्यस्थितिकस्याहारकसमुद्घातस्यापि सम्भवात् ३ तथेह स्थितिरनुबन्धश्च जघन्यत उत्कृष्टतश्च मासपृथक्त्वं प्राक् च स्थित्यनुबन्धो जघन्यतो मासपृथक्त्वमुत्कृष्टतस्तु पूर्वकोट्यभिहितेति, शेषगमास्तु स्वयमभ्यूह्याः ॥ शर्कराप्रभावक्तव्यतायाम्—'सरीरोगाहणा रयणिपुहुत्तं'ति अनेनेदमवसीयते–द्विहस्तप्रमाणेभ्यो हीनतरप्रमाणा द्वितीयायां नोत्पद्यन्ते, तथा 'जहण्णेणं वासपुहुत्तं'ति अनेनापि वर्षद्वयायुष्केभ्यो हीनतरायुष्का द्वितीयायां नोत्पद्यन्त इत्यवसीयते, 'एवं एसा ओहिएसु तिसु गमएसु मणूसस्स लद्धी'ति 'ओहिओ

१ यद्यपि सामान्येन गर्भस्थस्य नरकगतावुत्पाद उभयसाधारणस्तथापि नारकमनुष्यनारकसंवेधेऽन्तर्मुहूर्त्तमानान्तरकालोक्तेः जातु नारकभवचतुष्कसंवेधकारकमनुष्योऽत्रैवंविधः स्यात् इति समाधेयं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मनुष्याधिकारे उत्पाद-वर्णनं

प्रत सूत्रांक [६९६--६९७]

दीप अनुक्रम [८४१-८४२]

ओहिएसु १ ओहिओ जहन्नट्ठितीएसु २ ओहिओ उक्कोसट्ठिईएसु ३'त्ति एते औघिकास्त्रयो गमाः ३, एतेषु 'एषा' अनन्तरोक्ता मनुष्यस्य 'लब्धिः' परिमाणसंहननादिप्राप्तिः, नानात्वं त्विदम्–यदुत नारकस्थितिं कालादेशेन कायसंवेधं च जानीयाः, तत्र प्रथमगमे स्थित्यादिकं लिखितमेव द्वितीये त्वौघिको जघन्यस्थितिष्वित्यत्र नारकस्थितिर्जघन्येतराभ्यां सागरोपमं कालतस्तु संवेधो जघन्यतो वर्षपृथक्त्वाधिकं सागरोपममुत्कृष्टतस्तु सागरोपमचतुष्टयं चतुःपूर्वकोट्यधिकं, तृतीयेऽप्येवमेव नवरं सागरोपमस्थाने जघन्यतः सागरोपमत्रयं सागरोपमचतुष्टयस्थाने तूत्कर्षतः सागरोपमद्वादशकं वाच्यमिति, 'सो चेवे'त्यादि चतुर्थादिगमत्रयं, तत्र च 'संवेहो उवजुज्जिऊण भाणियव्वो'त्ति, स चैवं–जघन्यस्थितिक औघिकेष्वित्यत्र गमे संवेधः कालादेशेन जघन्यतः सागरोपमं वर्षपृथक्त्वाधिकं उत्कृष्टतस्तु द्वादश सागरोपमाणि वर्षपृथक्त्वचतुष्काधिकानि, जघन्यस्थितिको जघन्यस्थितिकेष्वित्यत्र जघन्येन कालतः कायसंवेधः सागरोपमं वर्षपृथक्त्वाधिकं उत्कृष्टतस्तु चत्वारि सागरोपमाणि वर्षपृथक्त्वचतुष्काधिकानि, एवं षष्ठगमोऽप्यूह्यः, 'सो चेवे'त्यादि सप्तमादिगमत्रयं, तत्र च 'इमं नाणत्त'मित्यादि, शरीरावगाहना पूर्वं हस्तपृथक्त्वं धनुःशतपञ्चकं चोक्ता इह तु धनुःशतपञ्चकमेव, एवमन्यदपि नानात्वमभ्यूह्यम् । 'मणुस्सठिई जाणियव्व'त्ति तिर्यक्स्थितिर्जघन्याऽन्तर्मुहूर्त्तमुक्ता मनुष्यगमेषु तु मनुष्यस्थितिर्ज्ञातव्या सा च जघन्या द्वितीयादिगामिनां वर्षपृथक्त्वमुत्कृष्टा तु पूर्वकोटीति ॥ सप्तमपृथिवीप्रथमगमे 'तेत्तीसं सागरोवमाइं पुव्वकोडीए अब्भहियाइं'ति इहोत्कृष्टः कायसंवेध एतावन्तमेव कालं भवति सप्तमपृथिवीनारकस्य तत उद्वृत्तस्य मनुष्येष्वनुत्पादेन भवद्वयभावेनैतावत एव कालस्य भावादिति ॥ चतुर्विंशतितमशते प्रथमः ॥ २४–१ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र चतुर्विंशतितमे शतके प्रथम-उद्देशक: परिसमाप्त:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [६९८]

दीप अनुक्रम [८४३]

व्याख्यातः प्रथमोद्देशकः अथ द्वितीयो व्याख्यायते, सम्बन्धस्तु जीवपदे इत्यादिपूर्वोक्तगाथानिदर्शित एव, एवं सर्वोद्देशकेष्वपि, अस्य चेदमादिसूत्रम्—

रायगिहे जाव एवं वयासी–असुरकुमारा णं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति किं नेरइएहिंतो उवव० तिरि० मणु० देवेहिंतो उववज्जंति ?, गोयमा ! णो णेरइएहिंतो उवव० तिरि० मणुस्सेहिंतो उवव० नो देवेहिंतो उवव० एवं जहेव नेरइयउद्देसए जाव पज्जत्तअसन्निपंचिंदितिरिक्खजोणिए णं भंते ! जे भविए असुरकुमारेसु उववज्जित्तए से णं भंते ! केवतिकालट्ठितीएसु उववज्जेज्जा ?, गोयमा ! जहन्नेणं दसवाससहस्सट्ठितीएसु उक्कोसेणं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागट्ठितीएसु उवव०, ते णं भंते ! जीवा एवं रयणप्पभागमगसरिसा णववि गमा भाणियव्वा नवरं जाहे अप्पणा जहन्नकालट्ठितीओ भवति ताहे अज्झवसाणा पसत्था णो अप्पसत्था तिसुवि गमएसु अवसेसं तं चेव ९ ॥ जइ सन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिएहिंतो उववज्जंति किं संखेज्जवासाउयसन्निपंचिंदियजाव उववज्जंति असंखेज्जवासा० उववज्जंति ?, गोयमा ! संखेज्जवासाउय जाव उववज्जंति असंखेज्जवासा० जाव उवव०, असंखेज्जवासाउ० सन्निपंचि० तिरि० जो० भंते ! जे भविए असुरकु० उवव० से णं भंते ! केवइकालट्ठितीएसु उववज्जेज्जा ?, गोयमा ! जहन्नेणं दसवाससहस्सट्ठितीएसु उववज्जिज्जा उक्कोसेणं तिपलिओवमट्ठितीएसु उवज्जेज्जा, ते णं भंते ! जीवा एगसमएणं पुच्छा, गोयमा ! जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा उवव० वयरोसभनारायसंघयणी ओगाहणा जह० धणुपुहुत्तं उक्कोसेणं छ गाउ-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ चतुर्विंशतितमे शतके द्वितीय-उद्देशक: आरभ्यते

प्रत सूत्रांक [६९८]

दीप अनुक्रम [८४३]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥८१८॥

२४ शतके उद्देशः २ असुराणामुत्पादः सू ६९८

याइं समचउरंससंठाणसंठिया प०, चत्तारि लेस्साओ आदिल्लाओ, णो सम्मदिट्ठी मिच्छादिट्ठी णो सम्मामिच्छादिट्ठी णो णाणी अन्नाणी नियमं दुअन्नाणी मतिअन्नाणी सुयअन्नाणी य जोगो तिविहोवि उवओगो दुविहोवि चत्तारि सन्नाओ चत्तारि कसाया पंच इंदिया तिन्नि समुग्घाया आदिल्लगा समोहयावि मरंति असमोहयावि मरंति वेदणा दुविहावि सायावेयगा असायावेयगा वेदो दुविहोवि इत्थिवेयगावि पुरिसवेयगावि णो नपुंसगवेदगा ठिती जहन्ने० साइरेगा पुव्वकोडी उक्कोसेणं तिन्नि पलिओवमाइं अज्झवसाणा पसत्थावि अप्पसत्थावि अणुबंधो जहेव ठिती कायसंवेहो भवादेसेणं दो भवग्गहणाइं कालादेसेणं जहन्नेणं सातिरेगा पुव्वकोडी दसहिं वाससहस्सेहिं अब्भहिया उक्कोसेणं छप्पलिओवमाइं एवतियं जावकरेज्जा १, सो चेव जहन्नकालट्ठितीयएसु उववन्नो एस चेव वत्तव्वया नवरं असुरकुमारट्ठिती संवेहं च जाणेज्जा २, सो चेव उक्कोसकालट्ठितीएसु उववन्नो जहन्नेणं तिपलिओवमट्ठितीएसु उक्कोसेणवि तिपलिओवमट्ठितीएसु उवव० एस चेव वत्तव्वया नवरं ठिती से जहन्नेणं तिन्नि पलिओवमाइं उक्कोसेणवि तिन्नि पलिओवमाइं एवं अणुबंधोवि, कालादे० जह० छप्पलिओवमाइं उक्कोसेणवि छप्पलिओवमाइं एवतियं सेसं तं चेव ३, सो चेव अप्पणा जहन्नकालट्ठितीओ जाओ जहन्नेणं दसवाससहस्सट्ठितीएसु उक्कोसेणं सातिरेगपुव्वकोडीआउ० अप्प० उवव०, ते णं भंते ! अवसेसं तं चेव जाव भवादेसोत्ति, नवरं ओगाहणा जहन्नेणं धणुहपुहुत्तं उक्कोसेणं सातिरेगं धणुसहस्सं ठिती जहन्नेणं सातिरेगा पुव्वकोडी उक्कोसेणवि सातिरेगा पुव्वकोडी एवं अणुबंधोवि, कालादेसेणं ॥८१८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [६९८]

दीप अनुक्रम [८४३]

जहन्नेणं सातिरेगा पुवकोडी दसहिं वाससहस्सेहिं अब्भहिया उक्कोसेणं सातिरेगाओ दो पुवकोडीओ एवतियं ४, सो चेव अप्पणा जहन्नकालट्ठितीएसु उववज्जेज्जा एस चेव वत्तवया नवरं असुरकुमारट्ठिइं संवेहं च जाणेज्जा ५, सो चेव उक्कोसकालट्ठितीएसु उवव० जह० सातिरेगपुवकोडिआउएसु उक्कोसेणवि सातिरेगपुवकोडीआउएसु उववज्जेज्जा सेसं तं चेव नवरं कालादे० जह० सातिरेगाओ दो पुवकोडीओ उक्कोसेणवि सातिरेगाओ दो पुवकोडीओ एवतियं कालं सेवेज्जा ६, सो चेव अप्पणा उक्कोसकालट्ठितीओ जाओ सो चेव पढमगमगो भाणियवो नवरं ठिती जहन्नेणं तिन्नि पलिओवमाइं उक्कोसेणवि तिन्नि पलिओवमाइं एवं अणुबंधोवि कालादे० जह० तिन्नि पलिओवमाइं दसहिं वाससहस्सेहिं अब्भहियाइं उक्कोसेणं छ पलिओवमाइं एवतियं ७, सो चेव जहन्नकालट्ठितीएसु उववन्नो एस चेव वत्तवया नवरं असुरकुमारट्ठितीं संवेहं च जाणिज्जा ८, सो चेव उक्कोसकालट्ठितीएसु उववन्नो जह० तिपलिओवमाइं उक्कोसे० तिपलिओव० एस चेव वत्तवया नवरं कालादेसेणं जह० छप्पलिंओवमाइं एवतियं ९ ॥ जइ संखेज्जवासाउयसन्निपंचिंदियजाव उववज्जंति किं जलचर० एवं जाव पज्जत्तसंखेज्जवासाउयसन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिए णं भंते ! जे भविए असुरकु० उव० से णं भंते ! केवइयकालट्ठितीएसु उवव० ?, गोयमा ! जह० दसवासट्ठितीएसु उक्कोसे० सातिरेगसागरोवमट्ठितीएसु उवव०, ते णं भंते ! जीवा एगसमएणं एवं एतेसिं रयणप्पभपुढविगमगसरिसा नव गमगा णेयवा, नवरं जाहे अप्पणा जहन्नकालट्ठिइओ भवइ ताहे तिसुवि गमएसु इमं णाणत्तं चत्तारि लेस्साओ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [६९८]

दीप अनुक्रम [८४३]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥८१९॥

२४ शतके उद्देशः २ असुराणा-मुत्पादः सू ६९८

अज्झवसाणा पसत्था नो अप्पसत्था सेसं तं चेव संवेहो सातिरेगेण सागरोवमेण कायव्वो ९ ॥ जइ मणुस्से-हिंतो उववज्जंति किं सन्निमणुस्सेहिंतो असन्निमणुस्सेहिंतो ?, गोयमा ! सन्निमणुस्सेहिंतो नो असन्निमणुस्से-हिंतो उववज्जंति, जइ सन्निमणुस्सेहिंतो उववज्जंति किं संखेज्जवासाउयसन्निमणुस्सेहिंतो उवव० असंखेज्जवा-साउयसन्निमणुस्सेहिंतो उवव० ?, गोयमा ! संखेज्जवासाउयजाव उववज्जंति असंखेज्जवासाउयजावउववज्जंति, असंखेज्जवासाउयसन्निमणुस्से णं भंते ! जे भविए असुरकुमारेसु उववज्जित्तए से णं भंते ! केवतिकालट्ठि-तीएसु उववज्जेज्जा ?, गोयमा ! जह० दसवाससहस्सट्ठितीएसु उक्को० तिपलिओवमट्ठितीएसु उव०, एवं असं-खेज्जवासाउयतिरिक्खजोणियसरिसा आदिल्ला तिन्नि गमगा नेयव्वा, नवरं सरीरोगाहणा पढमबितिएसु गमएसु जहन्नेणं सातिरेगाइं पंचधणुसयाइं उक्कोसेणं तिन्नि गाउयाइं सेसं तं चेव, तईयगमे ओगाहणा जह-न्नेणं तिन्नि गाउयाइं उक्कोसेणवि तिन्नि गाउयाइं सेसं जहेव तिरिक्खजोणियाणं ३, सो चेव अप्पणा जहन्नका-लट्ठितीओ जाओ तस्सवि जहन्नकालट्ठितियतिरिक्खजोणियसरिसा तिन्नि गमगा भाणियव्वा, नवरं सरीरो-गाहणा तिसुवि गमएसु जह० साइरेगाइं पंचधणुसयाइं उक्कोसेणवि सातिरेगाइं पंचधणुसयाइं सेसं तं चेव ६, सो चेव अप्पणा उक्कोसकालट्ठितीओ जाओ तस्सवि ते चेव पच्छिल्लगा तिन्नि गमगा भाणियव्वा नवरं सरीरोगाहणा तिसुवि गमएसु जहन्नेणं तिन्नि गाउयाइं उक्कोसेणवि तिन्नि गाउयाइं अवसेसं तं चेव ९ ॥ जइ संखे-ज्जवासाउयसन्निमणुस्सेहिंतो उववज्जइ किं पज्जत्तसंखेज्जवासाउय० अपज्जत्तसंखेज्जवासाउय० ?, गोयमा ! पज्ज-

॥८१९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [६९८]

दीप अनुक्रम [८४३]

त्तसंखेज्ज० णो अपज्जत्तसंखेज्ज० पज्जत्तसंखेज्जवासाउयसन्निमणुस्स णं भंते ! जे भविए असुरकुमारेसु उववज्जित्तए से णं भंते ! केवतिकालट्ठितीएसु उववज्जेज्जा ?, गोयमा ! जहन्नेणं दसवाससहस्सट्ठितीएसु उक्कोसेणं साइरेगसागरोवमट्ठितीएसु उववज्जेज्जा ते णं भंते ! जीवा एवं जहेव एतेसिं रयणप्पभाए उववज्जमाणाणं णव गमगा तहेव इहवि णव गमगा भाणियव्वा णवरं संवेहो सातिरेगेण सागरोवमेण कायव्वो सेसं तं चेव ९ सेवं भंते ! २ त्ति ॥ (सूत्रं ६९८) ॥ २४-२ ॥

‘रायगिहे’इत्यादि, ‘उक्कोसेणं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागट्ठिइएसु उववज्जेज्ज’त्ति, इह पल्योपमासङ्ख्येयभागग्रहणेन पूर्वकोटी ग्राह्या, यतः संमूर्च्छिमस्योत्कर्षतः पूर्वकोटीप्रमाणमायुर्भवति, स चोत्कर्षतः स्वायुष्कतुल्यमेव देवायुर्बध्नाति नातिरिक्तं, अत एवोक्तं चूर्णिकारेण–“उक्कोसेणं स तुल्लपुव्वकोडीआउयत्तं निव्वत्तेइ, न य संमुच्छिमो पुव्वकोडीआउयत्ताओ परो अत्थि”त्ति ॥ असङ्ख्यातवर्षायुःसञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियतिर्यग्गमेषु ‘उक्कोसेणं तिपलिओवमट्ठिइएसु उववज्जेज्ज’त्ति, इदं देवकुर्वादिमिथुनकतिरश्चोऽधिकृत्योक्तं, ते हि त्रिपल्योपमायुष्कत्वेनासङ्ख्यातवर्षायुषो भवन्ति, ते च स्वायुःसदृशं देवायुर्बध्नन्तीति । ‘संखेज्जा उववज्जंति’त्ति असङ्ख्यातवर्षायुस्तिरश्चामसङ्ख्यातानां कदाचिदप्यभावात्, ‘वयरोसहनारायसंघयणी’ति असङ्ख्यातवर्षायुषां यतस्तदेव भवतीति, ‘जहन्नेणं धणुहपुहुत्तं’ति इदं पक्षिणोऽधिकृत्योक्तं, पक्षिणामुत्कृष्टतो धनुःपृथक्त्वप्रमाणशरीरत्वात्, आह च–“धणुयपुहत्तं पक्खिसु”त्ति [पक्षिषु धनुष्पृथक्त्वम्] असङ्ख्यातवर्षायुषोऽपि ते स्युर्यदाह–‘पलियअसंखेज्जपक्खीसु’त्ति पल्योपमासङ्ख्येयभागः पक्षिणामायुरिति, ‘उक्कोसेणं छ गाउयाइं’ति, इदं च देवकुर्वादिहस्त्यादी-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [६९८] दीप अनुक्रम [८४३]	

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥८२०॥

२४ शतके उद्देशः २ असुराणा-मुत्पादः सू ६९८

नधिकृत्योक्तं, 'नो नपुंसगवेयग'त्ति असङ्ख्यातवर्षायुषो हि नपुंसकवेदा न संभवन्त्येवेति, 'उक्कोसेणं छप्पलिओवमाइं'ति त्रीण्यसङ्ख्यातवर्षायुस्तिर्यग्भवसम्बन्धीनि त्रीणि चासुरभवसम्बन्धीनीत्येवं षट्, न च देवभवादुद्धृत्तः पुनरप्यसङ्ख्यातवर्षायुष्केषूत्पद्यत इति 'सो चेव अप्पणा जहन्नकालट्ठितीओ'इत्यादिश्चतुर्थो गमः, इह च जघन्यकालस्थितिकः सातिरेकपूर्वकोट्यायुः स च पक्षिप्रभृतिकः प्रक्रान्तः 'उक्कोसेणं सातिरेगपुव्वकोडिआउए सो'त्ति असङ्ख्यातवर्षायुषां पक्ष्यादीनां सातिरेकं पूर्वकोटिरायुः ते च स्वायुस्तुल्यं देवायुः कुर्वन्तीतिकृत्वा सातिरेकेत्याद्युक्तमिति, 'उक्कोसेणं सातिरेगं धणुसहस्सं'ति यदुक्तं तत् सप्तमकुलकरप्राक्कालभाविनो हस्त्यादीनपेक्ष्येति संभाव्यते, तथाहि–इहासङ्ख्यातवर्षायुर्जघन्यस्थितिकः प्रक्रान्तः स च सातिरेकपूर्वकोट्यायुर्भवति तथैवागमे व्यवहृतत्वात्, एवंविधश्च हस्त्यादिः सप्तमकुलकरप्राक्काले लभ्यते, तथा सप्तमकुलकरस्य पञ्चविंशत्यधिकानि पञ्च धनुःशतानि उच्चैस्त्वं तत्प्राक्कालभाविनां च तानि समधिकतराणीति तत्कालीनहस्त्यादयश्चैतद्द्विगुणोच्छ्रायाः अतः सप्तमकुलकरप्राक्कालभाविनामसङ्ख्यातवर्षायुषां हस्त्यादीनां यथोक्तमवगाहनाप्रमाणं लभ्यत इति, 'सातिरेगाओ दो पुव्वकोडीओ' इति एका सातिरेका तिर्यग्भवसत्काऽन्या तु सातिरेकैवासुरभवसत्केति ४। 'असुरकुमारट्ठिइं संवेहं च जाणिज्ज'त्ति तत्र जघन्याऽसुरकुमारस्थितिर्दशवर्षसहस्राणि संवेधस्तु सातिरेका पूर्वकोटी दशवर्षसहस्राणि चेति ५, शेषगमास्तु स्वयमेवाभ्यूह्याः ९ ॥ एवमुत्पादितोऽसङ्ख्यातवर्षायुःसञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियतिर्यगसुरे, अथ सङ्ख्यातवर्षायुरसावुत्पाद्यते—'जइ संखेज्जे'त्यादि, 'उक्कोसेणं सातिरेगसागरोवमट्ठितीएसु'त्ति यदुक्तं तद्बलिनिकायमाश्रित्येति 'तिसुवि गमएसु'त्ति जघन्यकालस्थितिकसम्बन्धिषु औघिकादिषु 'चत्तारि लेसाओ'त्ति रत्नप्रभापृथिवी-

॥८२०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [६९८]

दीप अनुक्रम [८४३]

गामिनां जघन्यस्थितिकानां तिस्रस्ता उक्ताः एषु पुनस्ताश्चतस्रः असुरेषु तेजोलेश्यावानप्युत्पद्यत इति, तथा रत्नप्रभापृथिवीगामिनां जघन्यस्थितिकानामध्यवसायस्थानान्यप्रशस्तान्येवोक्तानि इह तु प्रशस्तान्येव, दीर्घस्थितिकत्वे हि द्विविधान्यपि संभवन्ति न त्वितरेषु कालस्याल्पत्वात्, 'संवेहो सातिरेगेण सागरोवमेण कायव्वो'त्ति रत्नप्रभागमेषु सागरोपमेण संवेध उक्तः असुरकुमारगमेषु तु सातिरेकसागरोपमेणासौ कार्यो बलिपक्षापेक्षया तस्यैव भावादिति ॥ अथ मनुष्येभ्योऽसुरानुत्पादयन्नाह—'जइ मणुस्सेहिंतो'इत्यादि, 'उक्कोसेणं तिपलिओवमट्ठिइएसु'त्ति देवकुर्वादिनरा हि उत्कर्षतः स्वायुःसमानस्यैव देवायुषो बन्धकाः अतः 'तिपलिओवमट्ठिइएसु' इत्युक्तं, 'नवरं सरीरोगाहणे'त्यादि तत्र प्रथम औघिक औघिकेषु द्वितीयस्त्वौघिको जघन्यस्थितिष्विति, तत्रौघिकोऽसङ्ख्यातवर्षायुर्नरो जघन्यतः सातिरेकपञ्चधनुःशतप्रमाणो भवति यथा सप्तमकुलकरप्राक्कालभावी मिथुनकनरः उत्कृष्टतस्तु त्रिगव्यूतमानो यथा देवकुर्वादिमिथुनकनरः, स च प्रथमगमे द्वितीये च द्विविधोऽपि संभवति, तृतीये तु त्रिगव्यूतावगाहन एव यस्मादसावेवोत्कृष्टस्थितिषु–पल्योपमत्रयायुष्केषूत्पद्यते उत्कर्षतः स्वायुःसमानायुर्बन्धकत्वात्तस्येति ॥ अथ सङ्ख्यातवर्षायुःसञ्ज्ञिमनुष्यमाश्रित्याह—'जइ संखेज्जे'त्यादि, एतच्च समस्तमपि पूर्वोक्तानुसारेणावगन्तव्यमिति ॥ चतुर्विंशतितमशते द्वितीयः ॥ २४–२ ॥

तृतीयस्तु—

रायगिहे जाव एवं वयासी–नागकुमारा णं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति किं नेरइएहिंतो उववज्जंति तिरि०

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र चतुर्विंशतितमे शतके द्वितीय-उद्देशकः परिसमाप्तः

अथ चतुर्विंशतितमे शतके तृतीयात् एकादशा पर्यन्ताः उद्देशकाः आरभ्यते

प्रत सूत्रांक [६९९-७००] दीप अनुक्रम [८४४-८४५]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥८२१॥

२४ शतके उद्देशः ३ नागानामुत्पादः सुवर्णादीनामुत्पादः सू ६९९-७००

मणु० देवेहिंतो उववज्जंति ?, गोयमा ! णो णेरइएहिंतो उववज्जंति तिरिक्खजोणिय०मणुस्सेहिंतो उववज्जंति नो देवेहिंतो उववज्जंति, जइ तिरिक्ख एवं जहा असुरकुमाराणं वत्तव्वया तहा एतेसिंपि जाव असन्नीति, जइ सन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिएहिंतो किं संखेज्जवासाउय० असंखेज्जवासाउय० ?, गोयमा ! संखेज्जवासाउय० असंखेज्जवासाउय० जाव उववज्जंति, असंखिज्जवासाउयसन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिए णं भंते ! जे भविए नागकुमारेसु उववज्जित्तए से णं भंते ! केवतिकालट्ठिती० ?, गोयमा ! जहन्नेणं दसवाससहस्सट्ठितिएसु उक्कोसेणं देसूणदुपलिओवमट्ठितीएसु उववज्जेज्जा, ते णं भंते ! जीवा अवसेसो सो चेव असुरकुमारेसु उववज्जमाणस्स गमगो भाणियव्वो जाव भवादेसोत्ति कालादेसेणं जहन्नेणं सातिरेगा पुव्वकोडी दसहिं वाससहस्सेहिं अब्भहिया उक्कोसेणं देसूणाइं पंच पलिओवमाइं एवतियं जाव करेज्जा १, सो चेव जहन्नकालट्ठितीएसु उववन्नो एस चेव वत्तव्वया नवरं णागकुमारट्ठितीं संवेहं च जाणेज्जा २, सो चेव उक्कोसकालट्ठितीएसु उववन्नो तस्सवि एस चेव वत्तव्वया नवरं ठिती जहन्नेणं देसूणाइं दो पलिओवमाइं उक्कोसेणं तिन्नि पलिओवमाइं सेसं तं चेव जाव भवादेसोत्ति कालादेसेणं जहन्नेणं देसूणाइं चत्तारि पलिओवमाइं उक्कोसेणं देसूणाइं पंच पलिओवमाइं एवतियं कालं ३, सो चेव अप्पणा जहन्नकालट्ठितीओ जाओ तस्सवि तिसुवि गमएसु जहेव असुरकुमारेसु उववज्जमाणस्स जहन्नकालट्ठितियस्स तहेव निरवसेसं ६ सो चेव अप्पणा उक्कोसकालट्ठितीओ जातो तस्सवि तहेव तिन्नि गमगा जहा असुरकुमारेसु उववज्जमाणस्स नवरं नागकुमारट्ठितीं संवेहं

॥८२१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [६९९--७००]

दीप अनुक्रम [८४४--८४५]

च जाणेज्जा सेसं तं चेव ९ ॥ जइ संखेज्जवासाउयसन्निपंचिंदियजाव किं पज्जत्तसंखेज्जवासाउय० अपज्जत्त-संखे० ?, गोयमा! पज्जत्तसंखेज्जवासाउय० णो अपज्जत्तसंखेज्जवासाउय० पज्जत्तसंखेज्जवासाउयजाव जे भविए णागकुमारेसु उववज्जित्तए से णं भंते! केवतिकालट्ठितीएसु उववज्जेज्जा, एवं जहेव असुरकुमारेसु उववज्जमाणस्स वत्तव्वया तहेव इहवि णवसुवि गमएसु, णवरं णागकुमारट्ठितिं संवेहं च जाणेज्जा, सेसं तं चेव ९ ॥ जइ मणुस्सेहिंतो उववज्जंति किं सन्निमणु० असन्नीमणु० ?, गोयमा! सन्निमणु० णो असन्निमणुस्से० जहा असुरकुमारेसु उववज्जमाणस्स जाव असंखेज्जवासाउयसन्निमणुस्से णं भंते! जे भविए णागकुमारेसु उववज्जित्तए से णं भंते! केवतिकालट्ठितीएसु उववज्जइ ?, गोयमा! जहन्नेणं दस वाससहस्सं उक्कोसेणं देसूणाइं दो पलिओवमाइं एवं जहेव असंखेज्जवासाउयाणं तिरिक्खजोणियाणं नागकुमारेसु आदिल्ला तिन्नि गमगा तहेव इमस्सवि, नवरं पढमबितिएसु गमएसु सरीरोगाहणा जहन्नेणं सातिरेगाइं पंचधणुसयाइं उक्को० तिन्नि गाउयाइं तइयगमे ओगाहणा जहन्नेणं देसूणाइं दो गाउयाइं उक्कोसेणं तिन्नि गा० सेसं तं चेव ३, सो चेव अप्पणा जहन्नकालट्ठितीओ जाओ तस्स तिसुवि गमएसु जहा तस्स चेव असुरकुमारेसु उववज्जमाणस्स तहेव निरवसेसं ६, सो चेव अप्पणा उक्कोसकालट्ठितीओ जाओ तस्स तिसुवि गमएसु जहा तस्स चेव उक्कोसकालट्ठितियस्स असुरकुमारेसु उववज्जमाणस्स नवरं णागकुमारट्ठितिं संवेहं च जाणेज्जा, सेसं तं चेव ९ ॥ जइ संखेज्जवासाउयसन्निमणु० किं पज्जत्तसंखेज्ज० अपज्जत्तसं० ?, गोयमा! पज्जत्तसंखे० णो अपज्जत्तसंखे०,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [६९९--७००]

दीप अनुक्रम [८४४--८४५]

पज्जत्तसंखेज्जवासाउयसन्निमणुस्से णं भंते! जे भविए णागकुमारेसु उववज्जित्तए से णं भंते! केवति० ?, गोयमा! जहन्नेणं दसवाससहस्सं उक्कोसेणं देसूणदोपलिओवमट्ठिती एवं जहेव असुरकुमारेसु उववज्जमाणस्स सच्चेव लद्धी निरवसेसा नवसु गमएसु णवरं णागकुमारट्ठितिं संवेहं च जाणेज्जा सेवं भंते! २ त्ति ॥ (सूत्रं ६९९) चउवीसतिमे सए ततिओ समत्तो ॥ २४-३ ॥ अवसेसा सुवन्नकुमाराई जाव थणियकुमारा एए अट्ठवि उद्देसगा जहेव नागकुमारा तहेव निरवसेसा भाणियव्वा, सेवं भंते! सेवं भंतेत्ति ॥ (सूत्रं ७००) ॥ चउवीसतिमे सते एक्कारसमो उद्देसो समत्तो ॥ २४-११ ॥

'रायगिहे'इत्यादि, 'उक्कोसेणं देसूणदुपलिओवमट्ठिईएसु'त्ति यदुक्तं तदौदीच्यनागकुमारनिकायापेक्षया, यतस्तत्र द्वे देशोने पल्योपमे उत्कर्षत आयुः स्यात्, आह च-"दाहिण दिवड्ढपलियं दो देसूणुत्तरिल्लाणं।" इति [दाक्षिणात्यानां सार्द्धं पल्यम् औत्तराहाणानां द्वे देशोने ॥] उत्कृष्टसंवेधपदे 'देसूणाइं पंच पलिओवमाइं'ति [देशोनानि पञ्च पल्योपमानि] पल्योपमत्रयं असङ्ख्यातवर्षायुस्तिर्यक्सम्बन्धि द्वे च देशोने ते नागकुमारसम्बन्धिनी इत्येवं यथोक्तं मानं भवतीति। द्वितीयगमे 'नागकुमारठिइं संवेहं च जाणेज्ज'त्ति तत्र जघन्या नागकुमारस्थितिर्दश वर्षसहस्राणि संवेधस्तु कालतो जघन्या सातिरेकपूर्वकोटी दशवर्षसहस्राधिका उत्कृष्टः पुनः पल्योपमत्रयं तैरेवाधिकमिति। तृतीयगमे 'उक्कोसकालट्ठिइएसु'त्ति देशोनद्विपल्योपमायुष्केष्वित्यर्थः, तथा 'ठिई जहन्नेणं दो देसूणाइं पलिओवमाइं'ति यदुक्तं तदवसर्पिण्यां सुषमाभिधानद्वितीयारकस्य कियत्यपि भागेऽतीतेऽसङ्ख्यातवर्षायुषस्तिरश्चोऽधिकृत्योक्तं, तेषामेवैतत्प्रमाणायुष्कत्वात्

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [६९९--७००]

दीप अनुक्रम [८४४--८४५]

एषामेव च स्वायुःसमानदेवायुर्बन्धकत्वेनोत्कृष्टस्थितिषु नागकुमारेषूत्पादात्, 'तिन्नि पलिओवमाइं'ति, एतच्च देवकुर्वाद्यसङ्ख्यातजीवितिरश्चोऽधिकृत्योक्तं, ते च त्रिपल्योपमायुषोऽपि देशोनद्विपल्योपममानमायुर्बध्नन्ति यतस्ते स्वायुषः समं हीनतरं वा तद्बध्नन्ति न तु महत्तरमिति ॥ अथ सङ्ख्यातजीविनं सञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चमाश्रित्याह—'जइ संखेज्जवासाउए' इत्यादि, एतच्च पूर्वोक्तानुसारेणावगन्तव्यमिति ॥ चतुर्विंशतितमशते तृतीयः ॥ २४-३ ॥ एवमन्येऽष्टावित्येवमेकादश ॥ २४-११ ॥

अथ पृथिवीकायिकोद्देशको द्वादशः—

पुढविकाइया णं भंते ! कओहिंतो उववः किं नेरइएहिंतो उववज्जंति तिरिक्ख० मणुस्स० देवेहिंतो उववज्जंति ?, गोयमा ! णो णेरइएहिंतो उवव० तिरिक्ख० मणुस्स० देवेहिंतोवि उववज्जंति, जइ तिरिक्खजोणिए किं एगिंदियतिरिक्खजोणिए एवं जहा वक्कंतीए उववाओ जाव जइ बायरपुढविकाइयएगिंदियतिरिक्खजोणिएहिंतो उववज्जंति किं पज्जत्तबादरजाव उववज्जंति अपज्जत्तबादरपुढवि ?, गोयमा ! पज्जत्तबादरपुढवि अपज्जत्तबादरपुढविकाइ० जाव उववज्जंति, पुढविकाइए णं भंते ! जे भविए पुढविकाइएसु उववज्जित्तए से णं भंते ! केवतिकालट्ठितीएसु उववज्जेज्जा ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तट्ठितीएसु उक्कोसेणं बावीसवाससहस्सट्ठितीएसु उववज्जेज्जा, ते णं भंते ! जीवा एगसमएणं पुच्छा, गोयमा ! अणुसमयं अविरहिया

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र चतुर्विंशतितमे शतके तृतीयात् एकादशा पर्यन्ताः उद्देशकाः परिसमाप्तः

अथ चतुर्विंशतितमे शतके द्वादशं उद्देशकः आरभ्यते

प्रत सूत्रांक [७०१]

दीप अनुक्रम [८४६]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥८२३॥

२४ शतके उद्देशः १२ पृथ्व्याउत्पादः सू ७०१

असंखेज्जा उववज्जंति छेवट्ठसंघयणी सरीरोगाहणा जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणवि अंगुलस्स असंखेज्जइभागं मसूरचंदसंठिया चत्तारि लेस्साओ णो सम्मदिट्ठी मिच्छादिट्ठी णो सम्मामिच्छादिट्ठी णो णाणी अन्नाणी दो अन्नाणा नियमं णो मणजोगी णो वइजोगी कायजोगी उवओगो दुविहोवि चत्तारि सन्नाओ चत्तारि कसाया एगे फासिंदिए पन्नत्ते तिन्नि समुग्घाया वेदणा दुविहा णो इत्थिवेदगा णो पुरिसवेदगा नपुंसगवेदगा ठितीए जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं बावीसं वाससहस्साइं अज्झवसाणा पसत्थावि अपसत्थावि अणुबंधो जहा ठिती १, से णं भंते ! पुढविकाइए पुणरवि पुढविकाइएत्ति केवतियं कालं सेवेज्जा ?, केवतियं कालं गतिरागतिं करेज्जा ?, गोयमा ! भवादेसेणं जह० दो भवग्गहणाइं उक्कोसे० असंखेज्जाइं भवग्गहणाइं कालादेसेणं जहन्नेणं दो अंतोमुहुत्ता उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं एवतियं जाव करेज्जा १, सो चेव जहन्नकालट्ठितीएसु उववन्नो जहन्नेणं अंतोमुहुत्तठितीएसु उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तट्ठितीएसु एवं चेव वत्तव्वया निरवसेसा २, सो चेव उक्कोसकालट्ठितीएसु उववन्नो जहन्नेणं बावीसवाससहस्सट्ठितीएसु उक्कोसेणवि बावीसवाससहस्सट्ठितीएसु सेसं तं चेव जाव अणुबंधोत्ति, णवरं जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा वा असंखेज्जा वा उवव० भवादे० जह० दो भवग्गह० उक्को० अट्ठ भवग्गह० कालादे० जह० बावीसं वाससह० अंतोमुहुत्तमब्भहि० उक्कोसेणं छावत्तरिं वाससहस्सुत्तरं सयसहस्सं एवतियं कालं जाव करेज्जा ३, सो चेव अप्पणा जहन्नकालट्ठितीओ जाओ सो चेव पढमिल्लओ गमओ

॥८२३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७०१]

दीप अनुक्रम [८४६]

भाणियव्वो नवरं लेस्साओ तिन्नि ठिती जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं अप्पसत्था अज्झवसाणा अणुबंधो जहा ठिती सेसं तं चेव ४, सो चेव जहन्नकालट्ठितीएसु उववन्नो एसो चेव चउत्थगमगवत्तव्वया भाणियव्वा ५, सो चेव उक्कोसकालट्ठितीएसु उववन्नो एस चेव वत्तव्वया नवरं जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसे० संखे० असंखेज्जा वा जाव भवादेसेणं जहन्नेणं दो भवग्गहणाइं उक्कोसेणं अट्ठ भवग्गहणाइं कालादेसेणं जहन्नेणं बावीसवाससहस्साइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणं अट्ठासीइं वाससहस्साइं चउहिं अंतोमुहुत्तेहिं अब्भहियाइं एवतियं० ६, सो चेव अप्पणा उक्कोसकालट्ठितीओ जाओ एवं तइयगमगसरिसो निरवसेसो भाणियव्वो नवरं अप्पणा से ठिई जहन्नेणं बावीसवाससहस्साइं उक्कोसेणवि बावीसं वाससहस्साइं ७, सो चेव जहन्नकालट्ठितीएसु उववन्नो जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, एवं जहा सत्तमगमगो जाव भवादेसो, कालादेसेणं जहन्नेणं बावीसं वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणं अट्ठासीइं वाससहस्साइं चउहिं अंतोमुहुत्तेहिं अब्भहियाइं एवतियं० ८, सो चेव उक्कोसकालट्ठितीएसु उववन्नो जहन्नेणं बावीसंवाससहस्सट्ठितीएसु उक्कोसेणवि बावीसवाससहस्सट्ठितीएसु एस चेव सत्तमगमगवत्तव्वया जाणियव्वा जाव भवादेसोत्ति कालादे० जह० चोयालीसं वाससहस्साइं उक्कोसेणं छावत्तरिवाससहस्सुत्तरं सयसहस्सं एवतियं ९ ॥ जइ आउक्काइयएगिंदियतिरिक्खजोणिएहिंतो उववज्जंति किं सुहुमआऊ० बादरआउ० एवं चउक्कओ भेदो भाणियव्वो जहा पुढविक्काइयाणं, आउक्काइयाणं भंते ! जे भविए पुढविक्काइएसु

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [७०१]

दीप अनुक्रम [८४६]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥८२४॥

२४ शतके उद्देशः१२ पृथ्व्याद्युत्पादः सू ७०१

उववज्जित्तए से णं भंते ! केवइकालट्ठितीएसु उववज्जिज्जा ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तट्ठिती० उक्कोसेणं बावीसंवाससहस्सट्ठि० उवव०, एवं पुढविक्काइयगमगसरिसा नव गमगा भाणियव्वा ९, नवरं थिबुगबिंदुसंठिए, ठिती जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं सत्त वाससहस्साइं, एवं अणुबंधोवि एवं तिसुवि गमएसु, ठिती संवेहो तइयछट्ठसत्तमट्ठमणवमगमेसु भवादेसेणं जह० दो भवग्गहणाइं उक्कोसेणं अट्ठ भवग्गहणाइं, सेसेसु चउसु गमएसु जहन्नेणं दो भवग्गहणाइं उक्कोसेणं असंखेज्जाइं भवग्गहणाइं, ततियगमए कालादेसेणं जहन्नेणं बावीसं वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणं सोलसुत्तरं वाससयसहस्सं एवतियं०, छट्ठे गमए कालादेसेणं जहन्नेणं बावीसं वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणं अट्ठासीतिं वाससहस्साइं चउहिं अंतोमुहुत्तेहिं अब्भहियाइं एवतियं०, सत्तमे गमए कालादेसेणं जहन्नेणं सत्त वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणं सोलसुत्तरवाससयसहस्सं एवतियं०, अट्ठमे गमए कालादेसेणं जहन्नेणं सत्त वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणं अट्ठावीसं वाससहस्साइं चउहिं अंतोमुहुत्तेहिं अब्भहियाइं एवतियं०, णवमे गमए भवादेसेणं जहन्नेणं दो भवग्गहणाइं उक्कोसेणं अट्ठ भवग्गहणाइं कालादेसेणं जहन्नेणं एकूणतीसाइं वाससहस्साइं उक्कोसेणं सोलसुत्तरं वाससयसहस्सं एवतियं०, एवं णवसुवि गमएसु आउक्काइयठिई जाणियव्वा ९ ॥ जइ तेउक्काइएहिंतो उवव० तेउक्काइयाणवि एस चेव वत्तव्वया नवरं नवसुवि गमएसु तिन्नि लेस्साओ तेउक्काइयाणं सुईकलावसंठिया ठिई जाणियव्वा तईयगमए कालादे० जह० बावीसं वाससह० अंतोमुहुत्तमब्भहि० उक्कोसेणं

॥८२४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७०१]

दीप अनुक्रम [८४६]

अट्ठासीतिं वाससहस्साइं बारसहिं राइंदिएहिं अब्भहियाइं एवतियं एवं संवेहो उवजुंजिऊण भाणियवो ९ ॥ जइ वाउक्काइएहिंतो वाउक्काइयाणवि एवं चेव णव गमगा जहेव तेउक्काइयाणं णवरं पडागासंठिया प० संवेहो वाससहस्सेहिं कायवो तइयगमए कालादे० जह० बावीसं वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणं एगं वाससयसहस्सं एवं संवेहो उवजुंजिऊण भाणियवो ॥ जइ वणस्सइकाइएहिंतो उवव० वणस्सइकाइयाणं आउकाइयगमगसरिसा णव गमगा भाणियवा नवरं णाणासंठिया सरीरोगाहणा प० पढमएसु पच्छिल्लएसु य तिसु गमएसु जह० अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणं सातिरेगं जोयणसहस्सं मज्झिल्लएसु तिसु तहेव जहा पुढविकाइयाणं संवेहो ठिती य जाणियवा तइयगमे कालादेसेणं जहन्नेणं बावीसं वाससह० अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणं अट्ठावीसुत्तरं वाससयसहस्सं एवतियं एवं संवेहो उवजुंजिऊण भाणियवो (सूत्रं ७०१) ॥

तत्र च 'जहा वक्कंतीए'त्ति इत्यादिना यत्सूचितं तदेवं दृश्यं—किं एगिंदियतिरिक्खजोणिएहिंतो उववज्जंति जाव पंचिंदियतिरिक्खजोणिएहिंतो उववज्जंति ?, गोयमा ! एगिंदियतिरिक्खजोणिएहिंतो जाव पंचिंदियतिरिक्खजोणिएहिंतोवि उववज्जंति'इत्यादि, तृतीये गमे 'नवरं जहन्नेणं एक्को वे'त्यादि प्राक्तनगमयोरुत्पित्सुबहुत्वेनासङ्ख्येया एवोत्पद्यन्त इत्युक्तम् इह तूत्कृष्टस्थितय एकादयोऽसङ्ख्येयान्ता उत्पद्यन्ते उत्कृष्टस्थितिषूत्पित्सूनामल्पत्वेनैकादीनामप्युत्पादसम्भवात्, 'उक्कोसेणं अट्ठ भवग्गहणाइं'ति, इहेदमवगन्तव्यं—यत्र संवेधे पक्षद्वयस्य मध्ये एकत्रापि पक्षे उत्कृष्टा स्थिति-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७०१] दीप अनुक्रम [८४६]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥८२५॥

२४ शतके उद्देशः१२ पृथ्व्याउत्पादः सू ७०१

भवति तत्रोत्कर्षतोऽष्टौ भवग्रहणानि तदन्यत्र त्वसङ्ख्येयानि, ततश्चेहोत्पत्तिविषयभूतजीवेषूत्कृष्टा स्थितिरित्युत्कर्षतोऽष्टौ भवग्रहणान्युक्तानि, एवमुत्तरत्रापि भावनीयमिति, 'छावत्तरिं वाससयसहस्सं'ति द्वाविंशतेर्वर्षसहस्राणामष्टाभिर्भवग्रहणैर्गुणने षट्सप्ततिवर्षसहस्राधिकं वर्षलक्षं भवतीति १७६०००, चतुर्थे गमे 'लेसाओ तिन्नि'त्ति जघन्यस्थितिकेषु देवो नोत्पद्यते इति तेजोलेश्या तेषु नास्तीति, षष्ठे गमे 'उक्कोसेणं अट्ठासीइं वाससहस्साइं'इत्यादि तत्र जघन्यस्थितिकस्योत्कृष्टस्थितिकस्य च चतुष्कृत्व उत्पन्नत्वाद् द्वाविंशतिर्वर्षसहस्राणि चतुर्गुणितान्यष्टाशीतिर्भवन्ति चत्वारि चान्तर्मुहूर्त्तानीति, नवमे गमे 'जहन्नेणं चोयालीसं'ति द्वाविंशतेर्वर्षसहस्राणां भवग्रहणद्वयेन गुणने चतुश्चत्वारिंशत्सहस्राणि भवन्तीति ॥ एवं पृथिवीकायिकः पृथिवीकायिकेभ्य उत्पादितः, अथासावेवाप्कायिकेभ्य उत्पाद्यते— 'जइ आउक्काइए'त्यादि, 'चउक्कओ भेदो'त्ति सूक्ष्मबादरयोः पर्याप्तकापर्याप्तकभेदात् 'संवेहो तइयछट्ठे'त्यादि तत्र भवादेशेन जघन्यतः संवेधः सर्वगमेषु भवग्रहणद्वयरूपः प्रतीतः उत्कृष्टे च तस्मिन् विशेषोऽस्तीति दर्श्यते, तत्र च तृतीयादिषु सूत्रोक्तेषु पञ्चसु गमेषूत्कर्षतः संवेधोऽष्टौ भवग्रहणानि, पूर्वप्रदर्शिताया अष्टभवग्रहणनिबन्धनभूतायास्तृतीयषष्ठसप्तमाष्टमेष्वेकपक्षे नवमे तु गमे उभयत्राप्युत्कृष्टस्थितेः सद्भावात्, 'सेसेसु चउसु गमएसु'त्ति शेषेषु चतुर्षु गमेषु— प्रथमद्वितीयचतुर्थपञ्चमलक्षणेषूत्कर्षतोऽसङ्ख्येयानि भवग्रहणानि, एकत्रापि पक्षे उत्कृष्टस्थितेरभावात् । 'तइयगमए कालाएसेणं जहन्नेणं बावीसं वाससहस्साइं'ति पृथिवीकायिकानामुत्पत्तिस्थानभूतानामुत्कृष्टस्थितिकत्वात्, 'अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं'ति अप्कायिकस्य तत्रोत्पित्सोरौघिकत्वेऽपि जघन्यकालस्य विवक्षितत्वेनान्तर्मुहूर्त्तस्थितिकत्वात्,

॥८२५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

‘उक्कोसेणं सोलसुत्तरं वाससयसहस्सं’ति, इहोत्कृष्टस्थितिकत्वात्पृथिवीकायिकानां तेषां च चतुर्णां भवानां भावात् तत्रोत्पित्सोश्चाप्कायिकस्यौधिकत्वेऽप्युत्कृष्टकालस्य विवक्षितत्वादुत्कृष्टस्थितयश्चत्वारस्तद्भवाः, एवं च द्वाविंशतेर्वर्षसहस्राणां सप्तानां च प्रत्येकं चतुर्गुणितत्वे ८८०००। २८०००। मीलने च षोडशसहस्राधिकं लक्षं भवति ११६०००, ‘छट्ठे गमए’इत्यादि, षष्ठे गमे हि जघन्यस्थितिक उत्कृष्टस्थितिषूत्पद्यत इत्यन्तर्मुहूर्त्तस्य वर्षसहस्रद्वाविंशतेश्च प्रत्येकं चतुर्भवग्रहणगुणितत्वे यथोक्तमुत्कृष्टं कालमानं स्यात् ८८००० अत एव सप्तमादिगमसंवेधा अप्यूह्याः नवरं नवमे गमे जघन्येनैकोनत्रिंशद्वर्षसहस्राणि अप्कायिकपृथिवीकायिकोत्कृष्टस्थितेर्मीलनादिति ॥ अथ तेजस्कायिकेभ्यः पृथिवीकायिकमुत्पादयन्नाह—‘जई’त्यादि, ‘तिन्नि लेसाओ’त्ति अप्कायिकेषु देवोत्पत्तेः तेजोलेश्यासद्भावाच्चतस्रस्ता उक्ताः इह तु तदभावात्तिस्र एवेति, ‘ठिई जाणियव’ति तत्र तेजसो जघन्या स्थितिरन्तर्मुहूर्त्तमितरा तु त्रीण्यहोरात्राणीति । ‘तईयगमे’इत्यादि, तृतीयगमे औघिकस्तेजस्कायिक उत्कृष्टस्थितिषु पृथिवीकायिकेषूत्पद्यते इत्यत्रैकस्य पक्षस्योत्कृष्टस्थितिकत्वमतोऽष्टौ भवग्रहणान्युत्कर्षतः, तत्र च चतुर्षु पृथिवीकायिकोत्कृष्टभवग्रहणेषु द्वाविंशतेर्वर्षसहस्राणां चतुर्गुणितत्वेऽष्टाशीतिस्तानि भवन्ति, तथा चतुर्ष्वेव तेजस्कायिकभवेषूत्कर्षतः प्रत्येकमहोरात्रत्रयपरिमाणेषु द्वादशाहोरात्राणीति, ‘एवं संवेहो उवजुंजिऊण भाणियव्वो’त्ति, स चैवं—षष्ठादिनवान्तेषु गमेष्वष्टौ भवग्रहणानि तेषु च कालमानं यथायोगमभ्यूह्यं, शेषगमेषु तूत्कृष्टतोऽसङ्ख्येया भवाः कालोऽप्यसङ्ख्येय एवेति ॥ अथ वायुकायिकेभ्यः पृथिवीकायिकमुत्पादयन्नाह—‘जई’त्यादि, ‘संवेहो वाससहस्सेहिं कायव्वो’त्ति तैजस्कायिकाधिकारेऽहोरात्रैः संवेधः कृतः इह तु वर्षसहस्रैः स कार्यो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७०१] दीप अनुक्रम [८४६]

वायूनामुत्कर्षतो वर्षसहस्रत्रयस्थितिकत्वादिति । 'तइयगमए'इत्यादि, 'उक्कोसेणं एगं वाससयसहस्सं'ति अत्राष्टौ भवग्रहणानि तेषु च चतुर्ष्वष्टाशीतिर्वर्षसहस्राणि पुनरन्येषु चतुर्षु वायुसत्केषु वर्षसहस्रत्रयस्य चतुर्गुणितत्वे द्वादश उभयमीलने च वर्षलक्षमिति, 'एवं संवेहो उवजुंजिऊण भाणियव्वो'त्ति स च यत्रोत्कृष्टस्थितिसम्भवस्तत्रोत्कर्षतोऽष्टौ भवग्रहणानि इतरत्र त्वसङ्ख्येयानि, एतदनुसारेण च कालोऽपि वाच्य इति ॥ अथ वनस्पतिभ्यस्तमुत्पादयन्नाह—'जइ वणस्सई'त्यादि, 'वणस्सइकाइयाणं आउक्काइयगमसरिसा नव गमा भाणियव्व'त्ति, यस्त्वत्र विशेषस्तमाह—'णाणासंठिए'त्यादि, अप्कायिकानां स्तिबुकाकारावगाहना एषां तु नानासंस्थिता । तथा 'पढमएसु'इत्यादि, प्रथमकेष्वौघिकेषु गमेषु पाश्चात्येषु चोत्कृष्टस्थितिकगमेष्ववगाहना वनस्पतिकायिकानां द्विधाऽपि मध्यमेषु जघन्यस्थितिकगमेषु त्रिषु यथा पृथिवीकायिकानां पृथिवीकायिकेषूत्पद्यमानानामुक्ता तथैव वाच्या, अङ्गुलासङ्ख्यातभागमात्रैवेत्यर्थः, 'संवेहो ठिई य जाणियव्व'त्ति तत्र स्थितिरुत्कर्षतो दशवर्षसहस्राणि जघन्या तु प्रतीतैव, एतदनुसारेण संवेधोऽपि ज्ञेयः, तमेवैकत्र गमे दर्शयति—'तइए'इत्यादि, 'उक्कोसेणं' अट्ठावीसुत्तरं वाससयसहस्सं'ति, इह गमे उत्कर्षतोऽष्टौ भवग्रहणानि तेषु च चत्वारि पृथिव्याश्चत्वारि च वनस्पतेः तत्र चतुर्षु पृथिवीभवेषूत्कृष्टेषु वर्षसहस्राणामष्टाशीतिः तथा वनस्पतेर्दशवर्षसहस्रायुष्कत्वाच्चतुर्षु भवेषु वर्षसहस्राणां चत्वारिंशत् उभयमीलने च यथोक्तं मानमिति ॥ अथ द्वीन्द्रियेभ्यस्तमुत्पादयन्नाह—

जइ बेइंदिएहिंतो उववज्जंति किं पज्जत्तबेइंदिएहिंतो उवव० अपज्जत्तबेइंदिएहिंतो ?, गोयमा ! पज्जत्तबेइंदिएहिंतो उवव० अपज्जत्तबेइंदिएहिंतोवि उवव०, बेइंदिए णं भंते ! जे भविए पुढविकाइएसु उववज्जित्तए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७०२] दीप अनुक्रम [८४७]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

से णं भंते ! केवतिकालं ?, गोयमा ! जह० अंतोमुहुत्तट्ठितीएसु उक्कोसेणं बावीसंवाससहस्सट्ठितीएसु, ते णं भंते ! जीवा एगसमएणं० ?, गोयमा ! जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसे० संखेज्जा वा असं० उवव० छेवट्ठसंघयणी ओगाहणा जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइ० उक्कोसेणं बारस जोयणाइं हुंडसंठिया तिन्नि लेसाओ सम्मदिट्ठीवि मिच्छादिट्ठीवि नो सम्मामिच्छादिट्ठी दो णाणा दो अन्नाणा नियमं णो मणजोगी वयजोगीवि कायजोगीवि उवओगो दुविहोवि चत्तारि सन्नाओ चत्तारि कसाया दो इंदिया प० तं०–जिब्भिंदिए य फासिंदिए य, तिन्नि समुग्घाया सेसं जहा पुढविकाइयाणं णवरं ठिती जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं बारस संवच्छराइं एवं अणुबंधोऽवि, सेसं तं चेव, भवादे० जह० दो भ० उक्को० संखेज्जाइं भवग्गहणाइं कालादे० जहन्ने०दो अंतोमु० उक्कोसे० संखेज्जं कालं एवतियं० १, सो चेव जहन्नकालट्ठितीएसु उववन्नो एस चेव वत्तव्वया सव्वा २, सो चेव उक्कोसकालट्ठितिएसु उववन्नो एसा चेव बेंदियस्स लद्धी नवरं भवादे० जह० दो भवग्ग० उक्कोसेणं अट्ठ भवग्गहणाइं कालादे० जह० बावीसं वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तमब्भ०उक्को०अट्ठासीतिं वाससहस्साइं अडयालीसाए संवच्छरेहिं अब्भहियाइं एवतियं० ३, सो चेव अप्पणा जहन्नकालट्ठितीओ जाओ तस्सवि एस चेव वत्तव्वया तिसुवि गमएसु नवरं इमाइं सत्त णाणत्ताइं सरीरोगाहणा जहा पुढविकाइयाणं णो सम्मदिट्ठी मिच्छदिट्ठी णो सम्मामिच्छादिट्ठी दो अन्नाणा णियमं णो मणजोगी णो वयजोगी कायजोगी ठिती जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं अज्झवसाणा अप-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [७०२]

दीप अनुक्रम [८४७]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥८२७॥

सत्था अणुबंधो जहा ठिती संवेहो तहेव आदिल्लेसु दोसु गमएसु तइयगमए भवादेसो तहेव अट्ठ भवग्गहणाइं कालादेसेणं जहन्नेणं बावीसं वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणं अट्ठासीतिं वाससहस्साइं चउहिं अंतोमुहुत्तेहिं अब्भहियाइं ६, सो चेव अप्पणा उक्कोसकालट्ठितीओ जाओ एयस्सवि ओहियगमगसरिसा तिन्नि गमगा भाणियव्वा नवरं तिसुवि गमएसु ठिती जहन्नेणं बारस संवच्छराइं उक्कोसेणवि बारस संवच्छराइं, एवं अणुबंधोवि, भवादे० जह० दो भवग्गहणाइं उक्कोसेणं अट्ठ भवग्गहणाइं, कालादे० उवजुज्जिऊण भाणियव्वं जाव णवमे गमए जहन्नेणं बावीसं वाससहस्साइं बारसहिं संवच्छरेहिं अब्भहि० उक्कोसे० अट्ठासीती वाससहस्साइं अडयालीसाए संवच्छरेहिं अब्भहियाइं एवतियं ९ ॥ जइ तेइंदिएहिंतो उववज्जइ एवं चेव नव गमगा भाणियव्वा नवरं आदिल्लेसु तिसुवि गमएसु सरीरोगाहणा जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणं तिन्नि गाउयाइं तिन्नि इंदियाइं ठिती जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं एगूणपन्नं राइंदियाइं, तइयगमए कालादेसेणं जहन्नेणं बावीसं वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणं अट्ठासीतिं वाससहस्साइं छन्नउइं राइंदियसयमब्भहियाइं एवतियं०, मज्झिमा तिन्नि गमगा तहेव पच्छिमावि तिन्नि गमगा तहेव नवरं ठिती जहन्नेणं एकूणपन्नं राइंदियाइं उक्कोसेणवि एगूणपन्नं राइंदियाइं संवेहो उवजुंजिऊण भाणियव्वो ९ ॥ जइ चउरिंदिएहिंतो उववज्जइ एवं चेव चउरिंदियाणवि नव गमगा भाणियव्वा नवरं एतेसु चेव ठाणेसु नाणत्ता भाणियव्वा सरीरोगाहणा जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसे० चत्तारि

२४ शतके उद्देशः १२ द्वीन्द्रियादिभ्यः पृथ्व्युत्पादः सू ७०२

॥८२७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७०२]

दीप अनुक्रम [८४७]

गाउयाइं ठिती जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेण य छम्मासा एवं अणुबंधोवि चत्तारि इंदियाइं सेसं तहेव जाव नवमगमए कालादेसेणं जह० बावीसं वाससहस्साइं छहिं मासेहिं अब्भहियाइं उक्कोसेणं अट्ठासीतिं वाससहस्साइं चउवीसाए मासेहिं अब्भहियाइं एवतियं ९ ॥ जइ पंचिंदियतिरिक्खजोणिएहिंतो उवव० किं सन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिएहिंतो उववज्जंति असन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिए० ?, गोयमा ! सन्निपंचिंदिय०, जइ असन्निपंचिंदिय० किं जलयरेहिंतो उ० जाव किं पज्जत्तएहिंतो उववज्जंति अपज्जत्तएहिंतो उव०?, गोयमा ! पज्जत्तएहिंतोवि उवव० अपज्जत्तएहिंतोवि उवव०, असन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिए णं भंते ! जे भविए पुढविक्काइएसु उववज्जित्तए से णं भंते ! केवति ?, गो० ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं बावीसं वाससह०, ते णं भंते ! जीवा एवं जहेव बेइंदियस्स ओहियगमए लद्धी तहेव नवरं सरीरोगाहणा जह० अंगुलस्स असंखे० भा० उक्को० जोयणसह० पंचिंदिया ठिती अणुबं० जह० अंतोमु० उक्को० पुव्वको० सेसं तं चेव भवादे० जह० दो भवग्गहणाइं उक्को० अट्ठ भवग्गहणाइं, कालादेसेणं जह० दो अंतोमु० उक्को० चत्तारि पुव्वकोडीओ अट्ठासीतीए वाससहस्सेहिं अब्भहियाओ एवतियं० णवसुवि गमएसु कायसंवेहो भवादे० जहन्नेणं दो भवग्गहणाइं उक्कोसे० अट्ठ भवग्गहणाइं कालादे० उवजुज्जिऊण भाणियव्वं, नवरं मज्झिमएसु तिसु गमएसु जहेव बेइंदियस्स पच्छिल्लएसु तिसु गमएसु जहा एतस्स चेव पढमगमएसु, नवरं ठिती अणुबंधो जहन्नेणं पुव्वकोडी उक्कोसेणवि पुव्वकोडी, सेसं तं चेव जाव नवमगमएसु जह० पुव्वकोडी० बावीसाए वाससहस्सेहिं अब्भहिया उक्कोसेणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७०२]

दीप अनुक्रम [८४७]

चत्तारि पुव्वकोडीओ अट्ठासीतीए वाससहस्सेहिं अब्भहियाओ एवतियं कालं सेविज्जा ९॥ जइ सन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिए किं संखेज्जवासाउय० असंखेज्जवासाउय० ?, गोयमा ! संखेज्जवासाउय० णो असंखेज्जवासाउय० ?, जइ संखेज्जवासाउय० किं जलयरेहिंतो सेसं जहा असन्नीणं जाव ते णं भंते ! जीवा एगसमएणं केवतिया उववज्जंति एवं जहा रयणप्पभाए उववज्जमाणस्स सन्निस्स तहेव इहवि, नवरं ओगाहणा जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणं जोयणसहस्सं सेसं तहेव जाव कालादेसेणं जहन्नेणं दो अंतोमुहुत्ता उक्कोसेणं चत्तारि पुव्वको० अट्ठासीतीए वाससहस्सेहिं अब्भहियाओ एवतियं०, एवं संवेहो णवसुवि गमएसु जहा असन्नीणं तहेव निरवसेसं लद्धी से आदिल्लएसु तिसुवि गमएसु एस चेव मज्झिल्लएसु तिसुवि गमएसु एस चेव नवरं इमाइं नव णाणत्ताइं ओगाहणा जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जति० उक्को० अंगु० असंखे० तिन्नि लेसाओ मिच्छादिट्ठी दो अन्नाणा कायजोगी तिन्नि समुग्घाया ठिती जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्को० अंतोमु० अप्पसत्था अज्झवसाणा अणुबंधो जहा ठिती सेसं तं चेव पच्छिल्लएसु तिसुवि गमएसु जहेव पढमगमए णवरं ठिती अणुबंधो जहन्नेणं पुव्वकोडी उक्कोसेणवि पुव्वकोडी सेसं तं चेव ९ (सूत्रं ७०२)॥

'जइ बेइंदिए'त्यादि, 'बारस जोयणाइं'ति यदुक्तं तच्छङ्खमाश्रित्य, यदाह—"संखो पुण बारस जोयणाइं"ति [शङ्खः पुनर्द्वादश योजनानि ।] 'सम्मदिट्ठीवि'त्ति एतच्चोच्यते सास्वादनसम्यक्त्वापेक्षयेति, इयं च वक्तव्यतौघिकद्वीन्द्रियस्यौघिकपृथिवीकायिकेषु, एवमेतस्य जघन्यस्थितिष्वपि तस्यैवोत्कृष्टस्थितिषूत्पत्तौ संवेधे विशेषोऽत एवाह— ॥८२८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७०२]

दीप अनुक्रम [८४७]

'नवर'मित्यादि, 'अट्ठ भवग्गहणाइं'ति एकपक्षस्योत्कृष्टस्थितिकत्वात् 'अडयालीसाए संवच्छरेहिं अब्भहियाइं'ति चतुर्षु द्वीन्द्रियभवेषु द्वादशाब्दमानेष्वष्टचत्वारिंशत्संवत्सरा भवन्ति तैरभ्यधिकान्यष्टाशीतिर्वर्षसहस्राणीति, द्वितीयस्यापि गमत्रयस्यैवैव वक्तव्यता विशेषं त्वाह—'नवर'मित्यादि, इह सप्तनानात्वानि शरीरावगाहना यथा पृथिवीकायिकानामङ्गुलासङ्ख्येयभागमानमित्यर्थः, प्राक्तनगमत्रये तु द्वादशयोजनमानाऽप्युक्तेति ?, तथा 'नो सम्मदिट्ठी' जघन्यस्थितिकतया सासादनसम्यग्दृष्टीनामनुत्पादात्, प्राक्तनगमेषु तु सम्यग्दृष्टिरप्युक्तोऽजघन्यस्थितिकस्यापि तेषु भावात् २, तथा द्वे अज्ञाने प्राक् च ज्ञाने अप्युक्ते ३, तथा योगद्वारे जघन्यस्थितिकत्वेनापर्याप्तकत्वान्न वाग्योगः प्राक् चासावप्युक्तः ४, तथा स्थितिरिहान्तर्मुहूर्त्तमेव प्राक् च संवत्सरद्वादशकमपि ५, तथाऽध्यवसानानीहाप्रशस्तान्येव प्राक् चोभयरूपाणि ६, सप्तमं नानात्वमनुबन्ध इति, संवेधस्तु द्वितीयत्रयस्याद्ययोर्द्वयोर्गमयोरुत्कर्षतो भवादेशेन सङ्ख्येयभवलक्षणः कालादेशेन च सङ्ख्येयकाललक्षणः ७, तृतीये तु विशेषमाह—'तइए गमए'इत्यादि, अन्त्यगमत्रये 'कालादेसेणं उवजुज्जिऊण भाणियव्वं'ति यत्तदेवं प्रथमे गमे कालत उत्कर्षतोऽष्टाशीतिवर्षसहस्राण्यष्टचत्वारिंशता वर्षैरधिकानि द्वितीये त्वष्टचत्वारिंशद् वर्षाण्यन्तर्मुहूर्त्तचतुष्टयाधिकानि तृतीये तु संवेधो लिखित एवास्ते ॥ अथ त्रीन्द्रियेभ्यस्तमुत्पादयन्नाह—'जइ तेइंदी'त्यादि, 'छन्नउयराइंदियसयअब्भहियाइं'ति इह तृतीयगमेऽष्टौ भवास्तत्र च चतुर्षु त्रीन्द्रियभवेषूत्कर्षत एकोनपञ्चाशद्रात्रिन्दिवप्रमाणेषु यथोक्तं कालमानं भवतीति, 'मज्झिमा तिन्नि गमा तहेव'त्ति यथा मध्यमा द्वीन्द्रियगमाः, 'संवेहो उवउज्जिऊण भाणियव्वो'त्ति स च पश्चिमगमत्रये भवादेशेनोत्कर्षतः प्रत्येकमष्टौ भवग्रहणानि, कालादेशेन तु पश्चिमगमत्रयस्य

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [७०२]

दीप अनुक्रम [८४७]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥८२९॥

२४ शतके उद्देशः १२ पञ्चेन्द्रिय-तिर्यगन्ते-भ्यः पृथ्व्या उत्पादः सू ७०२

प्रथमगमे तृतीयगमे चोत्कर्षतोऽष्टाशीतिर्वर्षसहस्राणि षण्णवत्यधिकरात्रिन्दिवशताधिकानि द्वितीये तु षण्णवत्युत्तरं दिनशतमन्तर्मुहूर्त्तचतुष्टयाभ्यधिकमिति॥ अथ चतुरिन्द्रियेभ्यस्तमुत्पादयन्नाह—'जई'त्यादि, नवरं 'एएसु चेव ठाणेसु'त्ति वक्ष्यमाणेष्ववगाहनादिषु नानात्वानि–द्वीन्द्रियत्रीन्द्रियप्रकरणापेक्षया चतुरिन्द्रियप्रकरणे विशेषभणितव्यानि भवन्ति, तान्येव दर्शयति—'सरीरे'त्यादि, 'सेसं तहेव'त्ति 'शेषम्' उपपातादिद्वारजातं तथैव–यथा त्रीन्द्रियस्य, यस्तु संवेधे विशेषो न दर्शितः स स्वयमभ्यूह्य इति॥ अथ पञ्चेन्द्रियतिर्यग्भ्यस्तमुत्पादयन्नाह—'जई'त्यादि, 'उक्कोसेणं अट्ठ भवग्गहणाइं'ति अनेनेदमवगम्यते–यथोत्कर्षतः पञ्चेन्द्रियतिरश्चो निरन्तरमष्टौ भवा भवन्ति एवं समानभवान्तरिता अपि भवान्तरैः सहाष्टैव भवन्तीति, 'कालादेसेणं उवउज्जिऊण भाणियव्वं'ति तत्र प्रथमे गमे कालतः संवेधः सूत्रे दर्शित एव, द्वितीये तूत्कृष्टोऽसौ चतस्रः पूर्वकोट्यश्चतुर्भिरन्तर्मुहूर्त्तैरधिकाः, तृतीये तु ता एवाष्टाशीत्या वर्षसहस्रैरधिकाः, उत्तरगमेषु त्वतिदेशद्वारेण सूत्रोक्त एवासाववसेय इति॥ अथ सञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियेभ्यस्तमुत्पादयन्नाह—'जइ सन्नी'त्यादि, 'एवं संवेहो नवसु गमएसु'इत्यादि, 'एवम्' उक्ताभिलापेन संवेधो नवस्वपि गमेषु यथाऽसञ्ज्ञिनां तथैव निरवशेष इह वाच्यः, असञ्ज्ञिनां सञ्ज्ञिनां च पृथिवीकायिकेषूत्पित्सूनां जघन्यतोऽन्तर्मुहूर्त्तायुष्कत्वात् उत्कर्षतश्च पूर्वकोट्यायुष्कत्वादिति। 'लद्धी से'इत्यादि, 'लब्धिः' परिमाणसंहननादिप्राप्तिः 'से' तस्य पृथिवीकायिकेषूत्पित्सोः सञ्ज्ञिन आद्ये गमत्रये 'एस चेव'त्ति या रत्नप्रभायामुत्पित्सोस्तस्यैव मध्यमेऽपि गमत्रये एषैव लब्धिः, विशेषस्त्वयं—'नवर'मित्यादि, नव च नानात्वानि

॥८२९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७०२]

दीप अनुक्रम [८४७]

जघन्यस्थितिकत्वाद्भवन्ति तानि चावगाहना १ लेश्या २ दृष्टि ३ अज्ञान ४ योग ५ समुद्घात ६ स्थित्य ७ ध्यवसाना-८ नुबन्धा ९ ख्यानि ॥ अथ मनुष्येभ्यस्तमुत्पादयन्नाह—

जइ मणुस्सेहिंतो उवव० किं सन्नीमणुस्सेहिंतो उवव० असन्नीमणुस्से० ?, गोयमा ! सन्नीमणुस्सेहिंतो असन्नीमणुस्सेहिंतोवि उवव०, असन्निमणुस्से णं भंते ! जे भविए पुढविकाइएसु० से णं भंते ! केवतिकालं एवं जहा असन्नीपंचिंदियतिरिक्खस्स जहन्नकालट्ठितीयस्स तिन्नि गमगा तहा एयस्सवि ओहिया तिन्नि गमगा भाणि० तहेव निरवसे० सेसा छ न भण्णंति १ ॥ जइ सन्निमणुस्सेहिंतो उवव० किं संखेज्जवासाउय० असंखेज्जवासाउय० ?, गोयमा ! संखेज्जवासाउय० णो असंखेज्जवासाउय०, जइ संखेज्जवासाउय० किं पज्जत्त० अपज्जत्त० ?, गोयमा ! पज्जत्तसंखे० अपज्जत्तसंखेज्जवासा०, सन्निमणुस्से णं भंते ! जे भविए पुढविकाइएसु उवव० से णं भंते ! केवतिकालं० ? गोयमा ! जह० अंतोमु० उक्को० बावीसं वाससहस्सठितीएसु, ते णं भंते ! जीवा एवं जहेव रयणप्पभाए उववज्जमाणस्स तहेव तिसुवि गमएसु लद्धी नवरं ओगाहणा जह० अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्को० पंचधणुसयाइं ठिती जह० अंतोमुहुत्तं उक्को० पुव्वकोडी एवं अणुबंधो संवेहो नवसु गमएसु जहेव सन्निपंचिंदियस्स मज्झिल्लएसु तिसु गमएसु लद्धी जहेव सन्निपंचिंदियस्स सेसं तं चेव निरवसेसं पच्छिल्ला तिन्नि गमगा जहा एयस्स चेव ओहिया गमगा नवरं ओगाहणा जह० पंचधणुस० उक्कोसे० पंच धणुसयाइं ठिती अणुबंधो जह० पुव्वकोडी उक्कोसेणवि पुव्वको० सेसं तहेव नवरं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [७०३]

दीप अनुक्रम [८४८]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥८३०॥

२४ शतके उद्देशः१२ मनुष्येभ्यः पृथ्व्याद्युत्पादः सू ७०३

पच्छिल्लएसु गमएसु संखेज्जा उववज्जंति नो असंखेज्जा उवव० ॥ जइ देवेहिंतो उववज्जंति किं भवणवासिदेवेहिंतो उववज्जंति वाणमंतर० जोइसियदेवेहिंतो उवव० वेमाणियदेवेहिंतो उववज्जंति ?, गोयमा ! भवणवासिदेवेहिंतोवि उव० जाव वेमाणियदेवेहिंतोवि उवव०, जइ भवणवासिदेवेहिंतो उवव० किं असुरकुमारभवणवासिदेवेहिंतो उववज्जंति जाव थणियकुमारभवणवासिदेवेहिंतो० ?, गोयमा ! असुरकुमारभवणवासिदेवेहिंतो उवव० जाव थणियकुमारभवणवासिदेवेहिंतो उववज्जंति, असुरकुमारे णं भंते ! जे भविए पुढविक्काइएसु उववज्जित्तए से णं भंते ! केवति० ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं बावीसं वाससहस्साइं ठिती, ते णं भंते ! जीवा पुच्छा, गोयमा ! जह० एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्को० संखेज्जा वा असंखेज्जा वा उवव०, तेसि णं भंते ! जीवाणं सरीरगा किंसंघयणी प० ?, गो० ! छण्हं संघयणाणं असंघयणी जाव परिणमंति, तेसि णं भंते ! जीवाणं केमहालिया सरीरोगाहणा ?, गो० ! दुविहा पं०, तं०–भवधारणिज्जा य उत्तरवेउव्विया य, तत्थ णं जा सा भवधारणिज्जा सा जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणं सत्त रयणीओ, तत्थ णं जा सा उत्तरवेउव्विया सा जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणं जोयणसयसहस्सं, तेसि णं भंते ! जीवाणं सरीरगा किंसंठिया प० ?, गोयमा ! दुविहा पं०, तं०–भवधारणिज्जा य उत्तरवेउव्विया य, तत्थ णं जे ते भवधारणिज्जा ते समचउरंससंठिया प०, तत्थ णं जे से उत्तरवेउव्विया ते णाणासंठाणसंठिया प०, लेस्साओ चत्तारि, दिट्ठी तिविहावि तिन्नि णाणा नियमं तिन्नि अन्नाणा भयणाए जोगो

॥८३०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७०३]

दीप अनुक्रम [८४८]

तिविहोवि उवओगो दुविहोवि चत्तारि सन्नाओ चत्तारि कसाया पंच समुग्घाया वेयणा दुविहावि इत्थिवेदगावि पुरिसवेयगावि णो णपुंसगवेयगा ठिती जहन्नेणं दसवाससहस्साइं उक्कोसेणं सातिरेगं सागरोवमं अज्झवसाणा असंखेज्ञा पसत्थावि अप्पसत्थावि अणुबंधो जहा ठिती भवादेसेणं दो भवग्गहणाइं कालादेसेणं जह० दसवाससह० अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणं सातिरेगं सागरोवमं बावीसाए वाससहस्सेहिं अब्भहियं एवतियं०, एवं णववि गमा णेयव्वा नवरं मज्झिल्लएसु पच्छिल्लएसु तिसु गमएसु असुरकुमाराणं ठिइविसेसो जाणियव्वो सेसा ओहिया चेव लद्धी कायसंवेहं च जाणेज्ञा सव्वत्थ दो भवग्गहणाइं जाव णवमगमए कालादेसेणं जह० सातिरेगं सागरोवमं बावीसाए वाससहस्सेहिमब्भहियं उक्कोसेणवि सातिरेगं सागरोवमं बावीसाए वाससहस्सेहिं अब्भहियं एवतियं ९। णागकुमारा णं भंते ! जे भविए पुढविक्काइए एस चेव वत्तव्वया जाव भवादेसोत्ति, णवरं ठिती जह० दसवाससहस्साइं उक्कोसेणं देसूणाइं दो पलिओवमाइं, एवं अणुबंधोवि, कालादे० जह० दसवाससह० अंतोमुहुत्तमब्भहि० उक्को० देसूणाइं दो पलिओवमाइं बावीसाए वाससस्सेहिं अब्भहियाइं एवं णववि गमगा असुरकुमारगमगसरिसा नवरं ठिती कालादेसं जाणेज्ञा, एवं जाव थणियकुमाराणं ॥ जइ वाणमंतरेहिंतो उववज्जंति किं पिसायवाणमंतरजावगंधव्ववाणमंतर० ?, गोयमा ! पिसायवाणमंतरजावगंधव्ववाणमंतर०, वाणमतरदेवे णं भंते ! जे भविए पुढविक्काइए एतेसिंपि असुरकुमारगमगसरिसा नव गमगा भाणि०, नवरं ठितीं कालादेसं च जाणेज्ञा, ठिती जहन्ने०

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७०३]

दीप अनुक्रम [८४८]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥८३१॥

२४ शतके उद्देशः१२ मनुष्येभ्यः पृथ्व्याउ-त्पादः सू ७०३

दसवाससह० उक्कोसेणं पलिओवमं सेसं तहेव ॥ जइ जोइसियदेवेहिंतो उवव० किं चंदविमाणजोतिसिय-देवेहिंतो उवव० जाव ताराविमाणजोइसिय० ?, गोयमा ! चंदविमाणजाव ताराविमाण०, जोइसियदेवे णं भंते ! जे भविए पुढविक्काइए लद्धी जहा असुरकुमाराणं णवरं एगा तेउलेस्सा प० तिन्नि णाणा तिन्नि अन्नाणा णियमं ठिती जहन्नेणं अट्ठभागपलिओवमं उक्कोसेण पलिओवमं वाससहस्सअब्भहियं एवं अणुबंधोवि कालादे० जह० अट्ठभागपलिओवमं अंतोमुहुत्तमब्भहियं उक्कोसेणं पलिओवमं वाससयसहस्सेणं बावीसाए वाससहस्सेहिं अब्भहियं एवतियं० एवं सेसावि अट्ठ गमगा भाणियव्वा नवरं ठितीं कालादे० जाणेज्जा ॥ जइ वेमाणियदेवेहिंतो उउव० किं कप्पोवगवेमाणिय० कप्पातीयवेमाणिय० ?, गो० ! कप्पोवगवेमाणिय० णो कप्पातीतवेमाणिय०, जइ कप्पोवगवेमाणिय० किं सोहम्मकप्पोवगवेमाणिय जाव अच्चुयकप्पोवगवेमा० ?, गोयमा ! सोहम्मकप्पोवगवेमाणिय० ईसाणकप्पोवगवेमाणिय० णो सणंकुमारजाव णो अच्चुयकप्पोवगवेमाणिय०, सोहम्मदेवे णं भंते ! जे भविए पुढविकाइएसु उवव० ते णं भंते ! केवतिया एवं जहा जोइसियस्स गमगो णवरं ठिती अणुबंधो य जहन्नेणं पलिओवमं उक्कोसे० दो सागरोवमाइं कालादे० जह० पलिओवमं अंतोमुहुत्तमब्भहियं उक्कोसेणं दो सागरोवमाइं बावीसाए वाससहस्सेहिं अब्भहियाइं एवतियं कालं०, एवं सेसावि अट्ठ गमगा भाणियव्वा, णवरं ठितिं कालादेसं च जाणेज्जा । ईसाणदेवे णं भंते ! जे भविए एवं ईसाणदेवेणवि णव गमगा भाणि० नवरं ठिती अणुबंधो जहन्नेणं सातिरेगं पलिओवमं

॥८३१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत
सूत्रांक
[७०३]

दीप
अनुक्रम
[८४८]

उक्कोसेणं सातिरेगाइं दो सागरोवमाइं सेसं तं चेव । सेवं भंते २ जाव विहरति (सूत्रं ७०३) ॥ २४-१२ ॥

'जई'त्यादि, तत्र च 'एवं जहे'त्यादि, यथा हि असञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियतिरश्चो जघन्यस्थितिकस्य त्रयो गमास्तथैव तस्यापि त्रय औघिका गमा भवन्ति, अजघन्योत्कृष्टस्थितिकत्वात्, संमूर्च्छिममनुष्याणां न शेषगमषट्कसम्भव इति ॥ अथ सञ्ज्ञिमनुष्यमधिकृत्याह—'जइ सन्नी'त्यादि, 'जहेव रयणप्पभाए उववज्जमाणस्स'त्ति सञ्ज्ञिमनुष्यस्यैवेति प्रक्रमः, 'नवर'मित्यादि, रत्नप्रभायामुत्पित्सोर्हि मनुष्यस्यावगाहना जघन्येनाङ्गुलपृथक्त्वमुक्तमिह त्वङ्गुलासङ्ख्येयभागः, स्थितिश्च जघन्येन मासपृथक्त्वं प्रागुक्तमिह त्वन्तर्मुहूर्त्तमिति, संवेधस्तु नवस्वपि गमेषु यथैव पृथिवीकायिकेषूत्पद्यमानस्य सञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियतिरश्च उक्तस्तथैवेह वाच्यः, सञ्ज्ञिनो मनुष्यस्य तिरश्चश्च पृथिवीकायिकेषु समुत्पित्सोर्जघन्यायाः स्थितेरन्तर्मुहूर्त्तप्रमाणत्वादुत्कृष्टायास्तु पूर्वकोटीप्रमाणत्वादिति, 'मज्झिल्ले'त्यादि जघन्यस्थितिकसम्बन्धिनि गमत्रये लब्धिस्तथेह वाच्या यथा तत्रैव गमत्रये सञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियतिरश्च उक्ता सा च तत्सूत्रादेवेहावसेया, 'पच्छिल्ले'त्यादि, औघिकगमेषु हि अङ्गुलासङ्ख्येयभागरूपाऽप्यवगाहनाऽन्तर्मुहूर्त्तरूपाऽपि स्थितिरुक्ता सा चेह न वाच्या अत एवाह—'नवरं ओगाहणे'त्यादि ॥ अथ देवेभ्यस्तमुत्पादयन्नाह—'जई'त्यादि, 'छण्हं संघयणाणं असंघयणि'त्ति, इह यावत्करणादिदं दृश्यं—'णेवट्ठी णेव छिरा नेव ण्हारू नेव संघयणमत्थि जे पोग्गला इट्ठा कंता पिया मणुन्ना मणामा ते तेसिं सरीरसंघायत्ताए'त्ति, 'तत्थ णं जा सा भवधारणिज्जा सा जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं'ति उत्पादकालेऽनाभोगतः कर्म्मपारतन्त्र्यादङ्गुलासङ्ख्येयभाग-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७०३]

दीप अनुक्रम [८४८]

मात्रावगाहना भवति, उत्तरवैक्रिया तु जघन्याङ्गुलस्य सङ्ख्येयभागमाना भवति आभोगजनितत्वात्तस्या न तथाविधा सूक्ष्मता भवति यादृशी भवधारणीयाया इति, 'तत्थ णं जे ते उत्तरवेउव्विया ते णाणासंठिय'त्ति इच्छावशेन संस्थाननिष्पादनादिति, 'तिन्नि अन्नाणा भयणाए'त्ति येऽसुरकुमारा असञ्ज्ञिभ्य आगत्योत्पद्यन्ते तेषामपर्याप्तकावस्थायां विभंगस्याभावात् शेषाणां तु तद्भावादज्ञानेषु भजनोक्ता, 'जहन्नेणं दसवाससहस्साइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं'ति तत्र दशवर्षसहस्राण्यसुरेषु अन्तर्मुहूर्त्तं पृथिवीकायिकेष्विति, इत्थमेव 'उक्कोसेणं साइरेगं सागरोवमं' इत्याद्यपि भावनीयम्, एतावानेव चोत्कर्षतोऽप्यत्र संवेधकालः, पृथिवीत उद्वृत्तस्यासुरकुमारेषूत्पादाभावादिति, 'मज्झिल्लएसु पच्छिल्लएसु'इत्यादि, अयं चेह स्थितिविशेषो मध्यमगमेषु जघन्यासुरकुमाराणां दशवर्षसहस्राणि स्थितिः अन्त्यगमेषु च साधिकं सागरोपममिति ॥ ज्योतिष्कदण्डके 'तिन्नि नाणा तिन्नि अन्नाणा नियमं'ति इहासञ्ज्ञी नोत्पद्यते सञ्ज्ञिनस्तूत्पत्तिसमय एव सम्यग्दृष्टेस्त्रीणि ज्ञानानि मत्यादीनि इतरस्य त्वज्ञानानि मत्यज्ञानादीनि भवन्तीति, 'अट्ठभागपलिओवमं'ति अष्टमो भागोऽष्टभागः स एवावयवे समुदायोपचारादष्टभागपल्योपमं, इदं च तारकदेवदेवीराश्रित्योक्तम्, 'उक्कोसेणं पलिओवमं वाससयसहस्समब्भहियं'ति इदं च चन्द्रविमानदेवानाश्रित्योक्तमिति ॥ अथ वैमानिकेभ्यस्तमुत्पादयन्नाह—'जई'त्यादि, एतच्च समस्तमपि पूर्वोक्तानुसारेणावसेयमिति ॥ चतुर्विंशतमशते द्वादशः ॥ २४–१२ ॥

२४ शतके उद्देशः१२ मनुष्येभ्यः पृथ्व्याउत्पादः सू ७०३

॥८३२॥

आउक्काइया णं भंते ! कओहिंतो उवव० एवं जहेव पुढविक्काइयउद्देसए जाव पुढविक्काइया णं भंते ! जे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र चतुर्विंशतितमे शतके द्वादश-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ चतुर्विंशतितमे शतके त्रयोदशात् षोडश: पर्यन्ता: उद्देशका: आरभ्यते

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [७०४--७०७]

दीप अनुक्रम [८४९--८५२]

भविए आउक्काइएसु उववज्जित्तए से णं भंते ! केवति० ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमु० उक्कोसे० सत्तवाससहस्सट्ठिइएसु उववज्जेज्जा एवं पुढविक्काइयउद्देसगसरिसो भाणियव्वो णवरं ठितीं संवेहं च जाणेज्जा, सेसं तहेव सेवं भंते २ त्ति (सूत्रं ७०४) ॥ २४–१३ ॥

तेउक्काइया णं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति एवं जहेव पुढविक्काइयउद्देसगसरिसो उद्देसो भाणियव्वो नवरं ठितिं संवेहं च जाणेज्जा देवेहिंतो ण उवव०, सेसं तं चेव । सेवं भंते ! २ जाव विहरति (सूत्रं ७०५) ॥२४–१४॥

वाउक्काइया णं भंते ! कओहिंतो उवव० एवं जहेव तेउक्काइयउद्देसओ तहेव नवरं ठितिं संवेहं च जाणेज्जा । सेवं भंते २ त्ति (सूत्रं ७०६) ॥ २४–१५ ॥ वणस्सइकाइया णं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति एवं पुढविक्काइयसरिसो उद्देसो नवरं जाहे वणस्सइकाइओ वणस्सइकाइएसु उववज्जति ताहे पढमबितियचउत्थपंचमेसु गमएसु परिमाणं अणुसमयं अविरहियं अणंता उवव० भवादे० जह० दो भवग्गह० उक्को० अणंताइं भवग्गहणाइं कालादे० जह० दो अंतोमु० उक्कोसेणं अणंतं कालं एवतियं०, सेसा पंच गमा अट्ठभवग्गहणिया तहेव नवरं ठितीं संवेहं च जाणेज्जा । सेवं भंते २ त्ति (सूत्रं ७०७) ॥ २४–१६ ॥

त्रयोदशे नास्ति लेख्यं, चतुर्दशे तु लिख्यते–‘देवेसु न उववज्जंति’त्ति देवेभ्य उद्वृत्तास्तेजस्कायिकेषु नोत्पद्यन्त इत्यर्थः । एवं पञ्चदशेऽपि । षोडशे लिख्यते–‘जाहे’ वणस्सइकाइए’इत्यादि, अनेन वनस्पतेरेवानन्तानामुद्वृत्तिरस्ति नान्यत इत्यावेदितं, शेषाणां हि समस्तानामप्यसङ्ख्यातत्वात्, तथाऽनन्तानामुत्पादो वनस्पतिष्वेव कायान्तरस्यानन्तानामभाजनत्वादि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥८३३॥

त्यप्यावेदितं, इह च प्रथमद्वितीयचतुर्थपञ्चमगमेष्वनुत्कृष्टस्थितिभावादनन्ता उत्पद्यन्त इत्यभिधीयते, शेषेषु तु पञ्चसु गमेषूत्कृष्टस्थितिभावादेको वा द्वौ वेत्याद्यभिधीयत इति, तथा तेष्वेव प्रथमद्वितीयचतुर्थपञ्चमेष्वनुत्कृष्टस्थितित्वादेवोत्कर्षतो भवादेशेनानन्तानि भवग्रहणानि वाच्यानि कालादेशेन चानन्तः कालः, शेषेषु तु पञ्चसु तृतीयषष्ठसप्तमादिषु गमेष्वष्टौ भवग्रहणानि उत्कृष्टस्थितिभावात्, 'ठितिं संवेहं च जाणेज्ज'त्ति तत्र स्थितिर्जघन्योत्कृष्टा च सर्वेष्वपि गमेषु प्रतीतैव, संवेधस्तु तृतीयसप्तमयोर्जघन्येन दशवर्षसहस्राण्यन्तर्मुहूर्त्ताधिकानि उत्कर्षतस्त्वष्टासु भवग्रहणेषु दशसाहस्र्याः प्रत्येकं भावादशीतिर्वर्षसहस्राणि, षष्ठाष्टमयोस्तु जघन्येन दशवर्षसहस्राण्यन्तर्मुहूर्त्ताधिकानि, उत्कृष्टतस्तु चत्वारिंशद्वर्षसहस्राण्यन्तर्मुहूर्त्तचतुष्टयाभ्यधिकानि, नवमे तु जघन्यतो विंशतिर्वर्षसहस्राणि उत्कर्षतस्त्वशीतिरिति ॥ चतुर्विंशतितमशते षोडशः॥२४-१६॥

२४ शतके उद्देशः १३ १४-१५-१६ अप्तेजोवायुवनानामुत्पादः सू ७०४-७०७

अथ सप्तदशो लिख्यते—

बेंदिया णं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति जाव पुढविकाइए णं भंते ! जे भविए बेंदिएसु उववज्जित्तए से णं भंते ! केवति० सच्चेव पुढविकाइयस्स लद्धी जाव कालादेसेणं जहन्नेणं दो अंतोमुहुत्ताइं उक्कोसेणं संखेज्जाइं भवग्गहणाइं एवतियं०, एवं तेसु चेव चउसु गमएसु संवेहो सेसेसु पंचसु तहेव अट्ठ भवा। एवं जाव चउरिंदिए णं समं चउसु संखेज्जा भवा पंचसु अट्ठ भवा, पंचिंदियतिरिक्खजोणियमणुस्सेसु समं तहेव अट्ठ भवा, देवे न चेव उववज्जंति, ठितीं संवेहं च जाणेज्जा । सेवं भंते ! २ (सूत्रं ७०८) ॥ २४-१७ ॥ ॥८३३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र चतुर्विंशतितमे शतके त्रयोदशात् षोडश: पर्यन्ता: उद्देशका: परिसमाप्त:

अथ चतुर्विंशतितमे शतके सप्तदशात् एकोनविंशति: पर्यन्ता: उद्देशका: आरभ्यते

प्रत सूत्रांक [७०८-७१०]

दीप अनुक्रम [८५३-८५५]

तेइंदिया णं भंते ! कओहिंतो उवव० ?, एवं तेइंदियाणं जहेव बेइंदिउद्देसो नवरं ठितिं संवेहं च जाणेज्जा, तेउक्काइएसु समं ततियगमो उक्को० अट्ठुत्तराइं बे राइंदियसयाइं बेइंदिएहिं समं ततियगमे उक्कोसेणं अडयालीसं संवच्छराइं छन्नउयराइंदियसतमब्भहियाइं तेइंदिएहिं समं ततियगमे उक्को० बाणउयाइं तिन्नि राइंदियसयाइं एवं सवत्थ जाणेज्जा जाव सन्निमणुस्सत्ति । सेवं भंते ! २ त्ति (सूत्रं ७०९) ॥ २४-१८ ॥ चउरिंदिया णं भंते ! कओहिंतो उवव० जहा तेइंदियाणं उद्देसओ तहेव चउरिंदियाणवि नवरं ठितिं संवेहं च जाणेज्जा । सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति (सूत्रं ७१०) ॥ २४-१९ ॥

'सच्चेव पुढविक्काइयस्स लद्धी'ति या पृथिवीकायिकस्य पृथिवीकायिकेषूत्पित्सोर्लब्धिः प्रागुक्ता द्वीन्द्रियेष्वपि सैवेत्यर्थः, 'तेसु चेव चउसु गमएसु'त्ति तेष्वेव चतुर्षु गमेषु प्रथमद्वितीयचतुर्थपञ्चमलक्षणेषु 'सेसेसु पंचसु'त्ति शेषेषु पञ्चसु गमेषु–तृतीयषष्ठसप्तमाष्टमनवमलक्षणेषु 'एवं'ति यथा पृथिवीकायिकेन सह द्वीन्द्रियस्य संवेध उक्तः एवमप्तेजोवायुवनस्पतिद्वित्रिचतुरिन्द्रियैः सह संवेधो वाच्यः, तदेवाह—चतुर्षु पूर्वोक्तेषु गमेषूत्कर्षतो भवादेशेन सङ्ख्येया भवाः पञ्चसु–तृतीयादिष्वष्टौ भवाः कालादेशेन च या यस्य स्थितिस्तत्संयोजनेन संवेधो वाच्यः, पञ्चेन्द्रियतिर्यग्भिर्मनुष्यैश्च सह द्वीन्द्रियस्य तथैव सर्वगमेष्वष्टावष्टौ च भवा वाच्या इति ॥ चतुर्विंशतितमशते सप्तदशः ॥ २४-१७ ॥ अथाष्टादशे लिख्यते—'ठिइं संवेहं च जाणेज्ज'त्ति 'स्थितिं' त्रीन्द्रियेषूत्पित्सूनां पृथिव्यादीनामायुः 'संवेधं च' त्रीन्द्रियोत्पित्सुपृथिव्यादीनां त्रीन्द्रियाणां च स्थितेः संयोगं जानीयात्, तदेव क्वचिद्दर्शयति—'तेउक्काइएसु'इत्यादि, तेजस्कायिकैः

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७०८-७१०]
दीप अनुक्रम [८५३-८५५]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २
॥८३४॥

२४ शतके उद्देशः १७ १८-१९ विकलोत्पादः सू ७०८-७१०

सार्द्धं त्रीन्द्रियाणां स्थितिसंवेधस्तृतीयगमे प्रतीते उत्कर्षेणाष्टोत्तरे द्वे रात्रिन्दिवशते, कथम् ?, औघिकस्य तेजस्कायिकस्य चतुर्षु भवेषूत्कर्षेण त्र्यहोरात्रमानत्वाद्भवस्य द्वादशाहोरात्राणि उत्कृष्टस्थितेश्च त्रीन्द्रियस्योत्कर्षतश्चतुर्षु भवेष्वेकोनपञ्चाशन्मानत्वेन भवस्य शतं षण्णवत्यधिकं भवति राशिद्वयमीलने चाष्टोत्तरे द्वे रात्रिन्दिवशते स्यातामिति । 'बेइंदिएहीं'त्यादि, 'अडयालीसं संवच्छराइं'ति द्वीन्द्रियस्योत्कर्षतो द्वादशवर्षप्रमाणेषु चतुर्षु भवेष्वष्टचत्वारिंशत्संवत्सराश्चतुर्ष्वेव त्रीन्द्रियभवग्रहणेषूत्कर्षेणैकोनपञ्चाशदहोरात्रमानेषु षण्णवत्यधिकं दिनशतं भवतीति । 'तेइंदिएहीं'त्यादि, 'बाणउयाइं तिन्नि राइंदियसयाइं'ति अष्टासु त्रीन्द्रियभवेषूत्कर्षेणैकोनपञ्चाशदहोरात्रमानेषु त्रीणि शतानि द्विनवत्यधिकानि भवन्तीति, 'एवं सव्वत्थ जाणेज्ज'त्ति अनेन चतुरिन्द्रियसञ्ज्ञ्यसञ्ज्ञितिर्यग्मनुष्यैः सह त्रीन्द्रियाणां तृतीयगमसंवेधः कार्य इति सूचितं, अनेन च तृतीयगमसंवेधदर्शनेन षष्ठादिगमसंवेधा अपि सूचिता द्रष्टव्याः, तेषामप्यष्टभविकत्वात्, प्रथमादिगमचतुष्कसंवेधस्तु भवादेशेनोत्कर्षतः सङ्ख्यातभवग्रहणरूपः कालादेशेन तु सङ्ख्यातकालरूप इति ॥ चतुर्विंशतितमशतेऽष्टादश ॥ २४–१८ ॥ एकोनविंशे न लेख्यमस्ति । विंशतितमे तु लिख्यते—

पंचिंदियतिरिक्खजोणिया णं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति ? किं नेरइय० तिरिक्ख० मणुस्स० देवेहिंतो उवव० ?, गो० ! नेरइएहिंतो उवव० तिरिक्ख० मणुस्सेहिंतोवि देवेहिंतोवि उव०, जइ नेरइएहिंतो उव० किं रयणप्पभपुढविनेरइएहिंतो उव० जाव अहेसत्तमपुढविनेरइएहिंतो उवव० ?, गो० ! रयणप्पभपुढविनेरइएहिंतो उवव० जाव अहेसत्तमपुढविनेरइएहिंतो०, रयणप्पभपुढविनेरइए णं भंते ! जे भविए पंचिंदियति- ॥८३४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र चतुर्विंशतितमे शतके सप्तदशात् एकोनविंशति: पर्यन्ता: उद्देशका: परिसमाप्त:

अथ चतुर्विंशतितमे शतके विंशति: पर्यन्ता: उद्देशका: आरभ्यते

रिक्खजोणिएसु उवव० से णं भंते ! केवइकालट्ठितिएसु उवव० ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तट्ठितीएसु उक्कोसेणं पुव्वकोडिआउएसु उवव०, ते णं भंते ! जीवा एगसमएणं केवइया उवव० ?, एवं जहा असुरकुमाराणं वत्तव्वया नवरं संघयणे पोग्गला अणिट्ठा अकंता जाव परिणमंति, ओगाहणा दुविहा प०, तं०–भवधारणिज्जा उत्तरवेउव्विया, तत्थ णं जा सा भवधारणिज्जा सा जह० अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणं सत्त धणूइं तिन्नि रयणीओ छच्चंगुलाइं, तत्थ णं जा सा उत्तरवेउव्विया सा जहन्नेणं अंगुलस्स संखेज्जइभागं उक्को० पन्नरस धणूइं अड्ढाइज्जाओ रयणीओ, तेसि णं भंते ! जीवाणं सरीरगा किंसंठिया प० ?, गोयमा ! दुविहा पं०, तं०–भवधारणि० उत्तरवेउव्विया य तत्थ णं जे ते भव० ते हुंडसंठिया प०, तत्थ णं जे ते उत्तरवेउव्विया तेवि हुंडसंठिता प०, एगा काउले० प०, समुग्घाया चत्तारि णो इत्थि० णो पुरिसवेदगा णपुंसगवेदगा, ठिती जहन्नेणं दसवाससहस्साइं उक्कोसेणं सागरोपमं एवं अणुबंधोवि, सेसं तहेव, भवादेसेणं जह० दो भवग्गहणाइं उक्कोसेणं अट्ठ भवग्गहणाइं कालादे० जहन्नेणं दसवाससहस्साइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणं चत्तारि सागरोवमाइं चउहिं पुव्वकोडीहिं अब्भहियाइं एवतियं०, सो चेव जहन्नकालट्ठितीएसु उववन्नो जहन्नेणं अंतोमुहुत्तट्ठितीएसु उववन्नो उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तट्ठितीएसु अवसेसं तहेव, नवरं कालादेसेणं जहन्नेणं तहेव उक्कोसेणं चत्तारि सागरोवमाइं चउहिं अंतोमुहुत्तेहिं अब्भहियाइं एवतियं कालं २, एवं सेसावि सत्त गमगा भाणियव्वा जहेव नेरइयउद्देसए सन्निपंचिंदिएहिं समं णेरइयाणं मज्झिमएसु य

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७११]

दीप अनुक्रम [८५६]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥८३५॥

तिसुवि गमएसु पच्छिमएसु तिसुवि गमएसु ठितिणाणत्तं भवति, सेसं तं चेव सव्वत्थ ठितिं संवेहं च जाणेज्जा ९ ॥ सक्करप्पभापुढविनेरइए णं भंते ! जे भविए एवं जहा रयणप्पभाए णव गमका तहेव सक्करप्पभाएवि, नवरं सरीरोगाहणा जहा ओगाहणासंठाणे तिन्नि णाणा तिन्नि अन्नाणा नियमं ठिती अणुबंधा पुव्वभणिया, एवं णववि गमगा उवजुंजिऊण भाणियव्वा, एवं जाव छट्ठपुढवी, नवरं ओगाहणा लेस्सा ठिति अणुबंधो संवेहो य जाणियव्वा, अहेसत्तमपुढवीनेरइए णं भंते ! जे भविए एवं चेव णव गमगा णवरं ओगाहणा लेस्सा ठितिअणुबंधा जाणियव्वा, संवेहो भवादेसेणं दो भवग्गहणाइं उक्कोसेणं छब्भवग्गहणाइं कालादेसेणं जह० बावीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणं छावट्ठिं सागरोवमाइं तिहिं पुव्वकोडीहिं अब्भहियाइं एवतियं०, आदिल्लएसु छसुवि गमएसु जहन्नेणं दो भवग्गहणाइं उक्कोसेणं छ भवग्गहणाइं पच्छिल्लएसु तिसु गमएसु जहन्नेणं दो भवग्गहणाइं उक्कोसेणं चत्तारि भवग्गहणाइं, लद्धी नवसुवि गमएसु जहा पढमगमए नवरं ठितीविसेसो कालादेसो य बितियगमएसु जहन्नेणं बावीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणं छावट्ठिं सागरोवमाइं तिहिं अंतोमुहुत्तेहिमब्भहियाइं एवतियं कालं तइयगमए जहन्नेणं बावीसं सागरोवमाइं पुव्वकोडीए अब्भहियाइं उक्कोसेणं छावट्ठिं सागरोवमाइं तिहिं पुव्वकोडीहिं अब्भहियाइं चउत्थगमे जहन्नेणं बावीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणं छावट्ठिं सागरोवमाइं तिहिं पुव्वकोडीहिं अब्भहियाइं पंचमगमए जहन्नेणं बावीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणं छाव-

२४ शतके उद्देशः १७ १८-१९ विकलोत्पादः सू ७०८-७१० ॥८३५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र मूल संपादने सूत्र-क्रमांकने एका स्खलना दृश्यते - उद्देश: २० स्थाने उद्देश: १७-१८-१९ मुद्रितं

प्रत सूत्रांक [७११]

दीप अनुक्रम [८५६]

ट्ठिं सागरोवमाइं तिहिं अंतोमुहुत्तेहिं अब्भहियाइं छट्ठगमए जहन्नेणं बावीसं सागरोवमाइं पुव्वकोडीहिं अब्भहियाइं उक्कोसेणं छावट्ठिं सागरोवमाइं तिहिं पुव्वकोडीहिं अब्भहियाइं सत्तमगमए जहन्नेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणं छावट्ठिं सागरोवमाइं दोहिं पुव्वकोडीहिं अब्भहियाइं अट्ठमगमए जह० तेत्तीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणं छावट्ठिं सागरोवमाइं दोहिं अंतोमुहुत्तेहिं अब्भहियाइं णवमगमए जहन्नेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं पुव्वकोडीहिं अब्भहियाइं उक्कोसेणं छावट्ठिं सागरोवमाइं दोहिं पुव्वकोडीहिं अब्भहियाइं एवतियं ९ ॥ जइ तिरिक्खजोणिएहिंतो उवव० किं एगिंदियतिरिक्खजोणिएहिंतो एवं उववाओ जहा पुढविकाइयउद्देसए जाव पुढविकाइए णं भंते ! जे भविए पंचिंदियतिरिक्खजो० उवव० से णं भंते ! केवति० ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तट्ठितिएसु उक्कोसेणं पुव्वकोडीआउएसु उवव०, ते णं भंते ! जीवा एवं परिमाणादीया अणुबंधपज्जवसाणा जच्चेव अप्पणो सट्ठाणे वत्तव्वया सच्चेव पंचिंदियतिरिक्खजोणिएसुवि उववज्जमाणस्स भाणियव्वा णवरं णवसुवि गमएसु परिमाणे जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखे० असंखे० वा उववज्जंति भवादेसेणवि णवसुवि गमएसु जहन्नेणं दो भवग्गहणाइं उक्कोसेणं अट्ठ भवग्गहणाइं, सेसं तं चेव कालादेसेणं उभओ ठितीए करेज्जा । जइ आउक्काइएहिंतो उववज्जइ एवं आउक्काइयाणवि एवं जाव चउरिंदिया उववाएयव्वा, नवरं सव्वत्थ अप्पणो लद्धी भाणियव्वा, णवसुवि गमएसु भवादेसेणं जहन्नेणं दो भवग्गहणाइं उक्कोसेणं अट्ठ भवग्गहणाइं कालादेसेणं उभओ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७११]

दीप अनुक्रम [८५६]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

||८३६||

ठितीं करेज्जा सव्वेसिं सव्वगमएसु, जहेव पुढविकाइएसु उववज्जमाणाणं लद्धी तहेव सव्वत्थ ठितिं संवेहं च जाणेज्जा ॥ जइ पंचिंदियतिरिक्खजोणिएहिंतो उववज्जंति किं सन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणि० उवव० असन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणि० उवव० ?, गोयमा ! सन्निपंचिंदिय असन्निपंचिंदियभेओ जहेव पुढविकाइएसु उववज्जमाणस्स जाव असन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिए णं भंते ! जे भविए पंचिंदियतिरिक्खजोणिएसु उवव० से णं भंते ! केवतिकाल० ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागट्ठितीएसु उववज्जमाण०, ते णं भंते ! अवसेसं जहेव पुढविकाइएसु उववज्जमाणस्स असन्निस्स तहेव निरवसेसं जाव भवादेसोत्ति, कालादेसेणं जहन्नेणं दो अंतोमुहुत्ताइं उक्कोसेणं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागं पुव्वकोडिपुहुत्तमब्भहियं एवतियं० १, बितियगमए एस चेव लद्धी नवरं कालादेसेणं जहन्नेणं दो अंतोमुहुत्ता उक्कोसेणं चत्तारि पुव्वकोडीओ चउहिं अंतोमुहुत्तेहिं अब्भहियाओ एवतियं० २, सो चेव उक्कोसकालट्ठितीएसु उववन्नो जहन्नेणं पलिओवमस्स असंखेज्जतिभागट्ठिइएसु उक्को० पलिओवमस्स असंखेज्जइभागट्ठितिएसु उवव० ते णं भंते ! जीवा एवं जहा रयणप्पभाए उववज्जमाणस्स असन्निस्स तहेव निरवसेसं जाव कालादेसोत्ति, नवरं परिमाणे जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्को० संखे० उवव०, सेसं तं चेव ३, सो चेव अप्पणो जहन्नकालट्ठितिओ जहन्नेणं अंतोमुहुत्तट्ठितीएसु उक्कोसेणं पुव्वकोडिआउएसु उवव०, ते णं भंते ! अवसेसं जहा एयस्स पुढविक्काइएसु उववज्जमाणस्स मज्झिमेसु तिसु गमएसु तहा इहवि मज्झिमेसु तिसु गमएसु जाव

२४ शतके उद्देशः १७ १८-१९ निकलोत्पादः सू ७०८-७१०

||८३६||

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र मूल संपादने सूत्र-क्रमांकने एका स्खलना दृश्यते - उद्देश: २० स्थाने उद्देश: १७-१८-१९ मुद्रितं

प्रत सूत्रांक [७११] दीप अनुक्रम [८५६]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

अणुबं०, भवादे० जहन्नेणं दो भवग्गह० उक्को० अट्ठ भवग्गहणाइं, कालादेसेणं जह० दो अंतोमुहु० उक्कोसेणं चत्तारि पुव्वकोडीओ चउहिं अंतोमुहुत्तेहिं अब्भहियाओ ४, सो चेव जहन्नकालट्ठितिएसु उववन्नो एस चेव वत्तव्वया नवरं कालादेसेणं जह० दो अंतोमुहुत्ता उक्कोसे० अट्ठ अंतोमु० एवतियं ५, सो चेव उक्कोसकालट्ठितिएसु उवव० जह० पुव्वकोडीआउएसु उक्कोसेणवि पुव्वकोडीआउएसु उवव० एस चेव वत्तव्वया नवरं कालादे० जाणेज्जा ६, सो चेव अप्पणा उक्कोसकालट्ठितिओ जाओ सच्चेव पढमगमगवत्तव्वया नवरं ठिती जह० पुव्वकोडी उक्कोसे० पुव्वकोडी सेसं तं चेव कालादेसेणं जह० पुव्वकोडी अंतोमुहुत्तमब्भहिया उक्कोसेणं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागं पुव्वकोडिपुहुत्तमब्भहियं एवतियं ७, सो चेव जहन्नकालट्ठितीएसु उववन्नो एस चेव वत्तव्वया जहा सत्तमगमे नवरं कालादेसेणं जहन्नेणं पुव्वकोडी अंतोमुहुत्तमब्भहिया उक्को० चत्तारि पुव्वकोडीओ चउहिं अंतोमुहुत्तेहिं अब्भहियाओ एवतियं० ८, सो चेव उक्कोसकालट्ठिइएसु उववन्नो जहन्नेणं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणवि पलिओवमस्स असंखेज्जइभागं एवं जहा रयणप्पभाए उववज्जमाणस्स असन्निस्स नवमगमए तहेव निरवसेसं जाव कालादेसोत्ति, नवरं परिमाणं जहा एयस्सेव ततियगमे सेसं तं चेव ९ ॥ जइ सन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिएहिंतो उवव० किं संखेज्जवासा० असं० ?, गोयमा ! संखेज्ज० णो असंखेज्ज०, जइ संखेज्जजाव किं पज्जत्तसंखेज्ज० अपज्जत्तासंखेज्ज० ?, दोसुवि, संखेज्जवासाउयसन्निपंचिंदियतिरिक्खजो० जे भविए पंचिंदियतिरिक्खजोणिएसु उवव० से णं भंते ! केवति० ?, गोयमा !

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [७११]

दीप अनुक्रम [८५६]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥८३७॥

जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तिपलिओवमट्ठितीएसु उवव०, ते णं भंते ! अवसेसं जहा एयस्स चेव सन्निस्स रयणप्पभाए उववज्जमाणस्स पढमगमए नवरं ओगाहणा जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणं जोयणसहस्सं, सेसं तं चेव जाव भवादेसोत्ति, कालादेसेणं जहन्नेणं दो अंतोमुहुत्ता उक्कोसेणं तिन्नि पलिओवमाइं पुव्वकोडीपुहुत्तमब्भहियाइं एवतियं० १, सो चेव जहन्नकालट्ठितीएसु उववन्नो एस चेव वत्तव्वया नवरं कालादेसेणं जहन्नेणं दो अंतोमु० उक्को० चत्तारि पुव्वकोडीओ चउहि अंतोमुहुत्तेहिं अब्भहियाओ २, सो चेव उक्कोसकालट्ठितीएसु जह० तिपलिओवमट्ठितीएसु उववन्नो उक्कोसेणवि तिपलिओवमट्ठितीएसु उवव०, एस चेव वत्तव्वया नवरं परिमाणं जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा उवव०, ओगाहणा जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणं जोयणसहस्सं सेसं तं चेव जाव अणुबंधोत्ति, भवादेसेणं दो भवग्गहणाइं कालादेसेणं जहन्नेणं तिन्नि पलिओवमाइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणं तिन्नि पलिओवमाइं पुव्वकोडीए अब्भहियाइं ३, सो चेव अप्पणा जहन्नकालट्ठितीओ जातो जह० अंतोमुहु० उक्कोसेणं पुव्वकोडीआउएसु उवव० लद्धी से जहा एयस्स चेव सन्निपंचिंदियस्स पुढविक्काइएसु उववज्जमाणस्स मज्झिल्लएसु तिसु गमएसु सचेव इहवि मज्झिमेसु तिसु गमएसु कायव्वा, संवेहो जहेव एत्थ चेव असन्निस्स मज्झिमेसु तिसु गमएसु सो चेव अप्पणा उक्कोसकालट्ठितीओ जाओ जहा पढमगमओ णवरं ठिती अणुबंधो जहन्नेणं पुव्वकोडी उक्कोसेणवि पुव्वकोडी कालादेसेणं जहन्नेणं पुव्वको० अंतोमुहुत्तमब्भहिया उक्कोसेणं तिन्नि पलिओव-

२४ शतके उद्देशः१७ १८-१९ विकलोत्पादः सू ७०८-७१०

॥८३७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र मूल संपादने सूत्र-क्रमांकने एका स्खलना दृश्यते - उद्देशः २० स्थाने उद्देशः १७-१८-१९ मुद्रितं

माइं पुव्वकोडीपुहुत्तमब्भहियाइं ७, सो चेव जहन्नकालट्ठितिएसु उवव० एस चेव वत्तवया नवरं कालादेसेणं जहन्नेणं पुव्वकोडी अंतोमुहुत्तमब्भहिया उक्कोसेणं चत्तारि पुव्वकोडीओ चउहिं अंतोमुहुत्तेहिं अब्भहियाओ ८, सो चेव उक्कोसकालट्ठितिएसु उववन्नो जहन्नेणं तिपलिओवमट्ठिती उक्कोसे० तिपलिओवमट्ठि० अवसेसं तं चेव नवरं परिमाणं ओगाहणा य जहा एयस्सेव तइयगमए, भवादेसेणं दो भवग्गहणाइं कालादे० जह० तिन्नि पलिओवमाइं पुव्वकोडीए अब्भहियाइं उक्कोसे० तिन्नि पलिओवमाइं पुव्वकोडीए अब्भहियाइं एवतियं ९ ॥ जइ मणुस्सेहिंतो उववज्जंति किं सन्निमणु० असन्निमणु० ?, गोयमा ! सन्निमणु० असन्निमणु०, असन्निमणुस्से णं भंते ! जे भविए पंचिंदियतिरिक्ख० उवव० से णं भंते ! केवतिकाल० ?, गोयमा ! जह० अंतोमु० उक्को० पुव्वको०आउएसु उववज्जंति लद्धी से तिसुवि गमएसु जहा पुढविकाइएसु उववज्जमाणस्स संवेहो जहा एत्थ चेव असन्निपंचिंदियस्स मज्झिमेसु तिसु गमएसु तहेव निरवसेसो भाणियव्वो, जइ सन्निमणुस्स० किं संखेज्जवासाउयसन्निमणुस्स० असंखेज्जवासाउय० ?, गोयमा ! संखेज्जवासा० नो असंखे०, जइ संखेज्ज० किं पज्जत्त० अपज्जत्त० ?, गोयमा ! पज्जत्त० अपज्जत्तसंखेज्जवासाउय०, सन्निमणुस्से णं भंते ! जे भविए पंचिंदि० तिरिक्ख० उवव० से णं भंते ! केवति० ?, गोयमा ! जह० अंतोमु० उक्को० तिपलिओवमट्ठितिएसु उव०, ते णं भंते ! लद्धी से जहा एयस्सेव सन्निमणुस्सस्स पुढविकाइएसु उववज्जमाणस्स पढमगमए जाव भवादेसोत्ति कालादे० जह० दो अंतोमु० उक्को० तिन्नि पलि० पुव्वकोडिपुहुत्तमब्भहियाइं १, सो चेव जहन्नकालट्ठितीएसु उववन्नो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत
सूत्रांक
[७११]

दीप
अनुक्रम
[८५६]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥८३८॥

२४ शतके उद्देशः१७ १८-१९ विकलोत्पादः सू ७०८-७१०

एस चेव वत्तव्वया णवरं कालादे० जह० दो अंतोमु० उक्कोसेणं चत्तारि पुव्वकोडीओ चउहिं अंतोमुहुत्तेहिं अब्भहियाओ २, सो चेव उक्कोसकालट्ठितीएसु उवव० जहन्नेणं तिपलिओवमट्ठिइएसु उक्कोसेणवि तिपलिओवमट्ठिइएसु सच्चेव वत्तव्वया नवरं ओगाहणा जहन्नेणं अंगुलपुहुत्तं उक्कोसेणं पंच धणुसयाइं, ठिती जहन्नेणं मासपुहुत्तं उक्कोसेणं पुव्वकोडी एवं अणुबंधोवि, भवादेसेणं दो भवग्गहणाइं कालादे० जह० तिन्नि पलिओवमाइं मासपुहुत्तमब्भहि० उक्कोसेणं तिन्नि पलिओवमाइं पुव्वकोडीए अब्भहियाइं एवतियं० ३, सो चेव अप्पणा जहन्नकालट्ठिइओ जाओ जहा सन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणियस्स पंचिंदियतिरिक्खजोणिएसु उववज्जमाणस्स मज्झिमेसु तिसु गमएसु वत्तव्वया भणिया एस चेव एयस्सवि मज्झिमेसु तिसु गमएसु निरवसेसा भाणियव्वा, नवरं परिमाणं उक्को० संखेज्जा उवव० सेसं तं चेव ६, सो चेव अप्पणा उक्कोसकालट्ठितीओ जातो सच्चेव पढमगमगवत्तव्वया नवरं ओगाहणा जह० पंच धणुसयाइं उक्को० पंच धणुसयाइं, ठिती अणुबंधो जह० पुव्वको० उक्को० पुव्वकोडी सेसं तहेव जाव भवादेसोत्ति, कालादे० जह० पुव्वको० अंतोमुहुत्तमब्भ० उक्को० तिन्नि पलिओवमाइं पुव्वकोडिपुहुत्तमब्भहियाइं एवतियं ७, सो चेव जहन्नकालट्ठितीएसु उववन्नो एस चेव वत्तव्वया नवरं कालादे० जह० पुव्वकोडी अंतोमुहुत्तमब्भहिया उक्कोसेणं चत्तारि पुव्वकोडीओ चउहिं अंतोमुहुत्तमब्भहियाओ ८, सो चेव उक्कोसकालट्ठितिएसु उववन्नो जह० तिन्नि पलिओवमाइं उक्कोसेणवि तिन्नि पलिओवमाइं एस चेव लद्धी

॥८३८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र मूल संपादने सूत्र-क्रमांकने एका स्खलना दृश्यते - उद्देश: २० स्थाने उद्देश: १७-१८-१९ मुद्रितं

प्रत सूत्रांक [७११]

दीप अनुक्रम [८५६]

जहेव सत्तमगमे भवादे० दो भवग्गहणाइं कालादेसेणं जहन्नेo तिन्निपलिओवमाइं पुव्वकोडीए अब्भहियाइं उक्कोसेणवि तिन्नि पलि० पुव्वकोडीए अब्भहियाइं एवतियं ९ ॥ जइ देवेहिंतो उवव० किं भवणवासिदेवेहिंतो उवव० वाणमंतर० जोइसिय० वेमाणियदेवे० ?, गोयमा ! भवणवासिदेवे जाव वेमाणियदेवे०, जइ भवणवासि० किं असुरकुमारभवणजावथणियकुमारभव० ?, गोयमा ! असुरकुमारजाव थणियकुमारभवण०, असुरकुमारे णं भंते ! जे भविए पंचिंदियतिरिक्खजोणिएसु उववज्जित्तए से णं भंते ! केवति० ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तट्ठितीएसु उक्कोसेणं पुव्वकोडिआउएसु उवव०, असुरकुमारा णं लद्धी णवसुवि गमएसु जहा पुढविक्काइएसु उववज्जमाणस्स एवं जाव ईसाणदेवस्स तहेव लद्धी भवादेसेणं सव्वत्थ अट्ठ भवग्गहणाइं उक्को० जह० दोन्नि भवट्ठितीं संवेहं च सव्वत्थ जाणेज्जा ९ ॥ नागकुमारा णं भंते ! जे भविए एस चेव वत्तव्वया नवरं ठितिं संवेधं च जाणेज्जा एवं जाव थणियकुमारे ९। जइ वाणमंतरे किं पिसाय तहेव जाव वाणमंतरे णं भंते ! जे भविए पंचिंदियतिरिक्ख० एवं चेव नवरं ठितिं संवेहं च जाणेज्जा ९ जइ जोतिसिय उववाओ तहेव जाव जोतिसिए णं भंते ! जे भविए पंचिंदियतिरिक्ख० एस चेव वत्तव्वया जहा पुढविक्काइयउद्देसए भवग्गहणाइं णवसुवि गमएसु अट्ठ जाव कालादे० जहन्ने० अट्ठभागपलिओवमं अंतोमुहुत्तमब्भहियं उक्कोसेणं चत्तारि पलिओवमाइं चउहिं पुव्वकोडीहिं चउहि य वाससयसहस्सेहिं अब्भहियाइं एवतियं०, एवं नवसुवि गमएसु नवरं ठितिं संवेहं च जाणेज्जा ९ ॥ जइ वेमाणियदेवे० किं. कप्पोवग०

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७११]

दीप अनुक्रम [८५६]

॥८३९॥

कप्पातीतवेमाणिय ?, गोयमा ! कप्पोवगवेमाणिय० नो कप्पातीतवेमा० जइ कप्पोवग जाव सहस्सारकप्पोवगवेमाणियदेवेहिंतोवि उवव० नो आणय जाव [ग्रन्थाग्रम् १३०००] णो अच्चुयकप्पोवगवेमा०, सोहम्मदेवे णं भंते ! जे भविए पंचिंदियतिरिक्खजोणिएसु उववज्जित्तए से णं भंते ! केवति० ?, गोयमा ! जह० अंतोमु० उक्को० पुव्वकोडीआउएसु सेसं जहेव पुढविक्काइयउद्देसए नवसुवि गमएसु नवरं नवसुवि गमएसु जहन्नेणं दो भवग्गहणाइं उक्कोसे० अट्ठ भवग्गहणाइं ठितिं कालादेसं च जाणिज्जा, एवं ईसाणदेवेवि, एवं एएणं कमेणं अवसेसावि जाव सहस्सारदेवेसु उववाएयव्वा नवरं ओगाहणा जहा ओगाहणासंठाणे, लेस्सा सणंकुमारमाहिंदबंभलोएसु एगा पम्हलेस्सा सेसाणं एगा सुक्कलेस्सा, वेदे नो इत्थिवेदगा पुरिसवेदगा णो नपुंसगवेदगा, आउअणुबंधा जहा ठितिपदे सेसं जहेव ईसाणगाणं कायसंवेहं च जाणेज्जा । सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति ॥ (सूत्रं ७११) ॥ २४ शते वीसतिमो २० ॥

'उक्कोसेणं पुव्वकोडिआउएसु'त्ति नारकाणामसङ्ख्यातवर्षायुष्केष्वनुत्पादादिति, 'असुरकुमाराणं वत्तव्वयं'ति पृथिवीकायिकेषूत्पद्यमानानामसुरकुमाराणां या वक्तव्यता परिमाणादिका प्रागुक्ता सेह नारकाणां पञ्चेन्द्रियतिर्यक्षूत्पद्यमानानां वाच्या, विशेषस्त्वयं–'नवर'मित्यादि, 'जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं'ति उत्पत्तिसमयापेक्षमिदम्, 'उक्कोसेणं सत्तधणूइं'इत्यादि, इदं च त्रयोदशप्रस्तटापेक्षं, प्रथमप्रस्तटादिषु पुनरेवम्–"रयणाइ पढमपयरे हत्थतियं देहउस्सयं भणियं । छप्पन्नंगुलसड्ढा पयरे पयरे य वुड्ढीओ ॥१॥ [रत्नायाः प्रथमप्रस्तटे हस्तत्रयं देहोच्छ्रयो भणितः । सार्द्धषट्पञ्चाशदङ्गुलवृद्धिः ॥८३९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र मूल संपादने सूत्र-क्रमांकने एका स्खलना दृश्यते - उद्देश: २० स्थाने उद्देश: १७-१८-१९ मुद्रितं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [७११]

दीप अनुक्रम [८५६]

प्रस्तटे प्रस्तटे ॥१॥] 'उक्कोसेणं पन्नरसे'त्यादि, इयं च भवधारणीयाऽवगाहनाया द्विगुणेति, 'समुग्घाया चत्तारि'त्ति वैक्रियान्ताः, 'सेसं तहेव'त्ति शेषं–दृष्ट्यादिकं तथैव यथाऽसुरकुमाराणां, 'सो चेवे'त्यादिर्द्वितीयो गमः, 'अवसेसं तहेव'त्ति यथौघिकगमे प्रथमे 'एवं सेसावि सत्त गमगा भाणियव्व'त्ति एवं–इत्यनन्तरोक्तगमद्वयक्रमेण शेषा अपि सप्त गमा भणितव्याः, नन्वत्रैवंकरणाद् यादृशी स्थितिर्जघन्योत्कृष्टभेदादाद्ययोर्गमयोर्नारकाणामुक्ता तादृश्येव मध्यमेऽन्तिमे च गमत्रये प्राप्नोति ? इति, अत्रोच्यते–'जहेव नेरइयउद्देसए'इत्यादि, यथैव नैरयिकोद्देशकेऽधिकृतशतस्य प्रथमे सञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियतिर्यग्भिः सह नारकाणां मध्यमेषु त्रिषु गमेषु पश्चिमेषु च त्रिषु गमेषु स्थितिनानात्वं भवति तथैवेहापीतिवाक्यशेषः ॥ 'सरीरोगाहणा जहा ओगाहणसंठाणे'त्ति शरीरावगाहना यथा प्रज्ञापनाया एकविंशतितमे पदे, सा च सामान्यत एवं–"सत्त धणु तिन्नि रयणी छच्चेव य अंगुलाइं उच्चत्तं । पढमाए पुढवीए बिउणा बिउणं च सेसासु ॥ १ ॥" इति [त्रिरत्न्यधिकसप्तधनूंषि षट् चाङ्गुलानि प्रथमायां पृथ्व्यामुच्चत्वं शेषासु द्विगुणं द्विगुणम् ॥ १ ॥] 'तिन्नि णाणा तिन्नि अन्नाणा नियमं'ति द्वितीयादिषु सञ्ज्ञिभ्य एवोत्पद्यन्ते ते च त्रिज्ञानास्त्र्यज्ञाना वा नियमाद्भवन्ति, 'उक्कोसेणं छावट्ठिं सागरोवमाइं'इत्यादि, इह भवानां कालस्य च बहुत्वं विवक्षितं, तच्च जघन्यस्थितिकत्वे नारकस्य लभ्यत इति, द्वाविंशतिसागरोपमायुर्नारको भूत्वा पञ्चेन्द्रियतिर्यक्षु पूर्वकोट्यायुर्जातः एवं वारत्रये षट्षष्टिः सागरोपमाणि पूर्वकोटीत्रयं च स्यात्, यदि चोत्कृष्टस्थितिस्त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमायुर्नारको भूत्वा पूर्वकोट्यायुः पञ्चेन्द्रियतिर्यक्षूत्पद्यते तदा वारद्वयमेवैवमुत्पत्तिः स्यात् ततश्च षट्षष्टिः सागरोपमाणि पूर्वकोटीद्वयं च स्यात् तृतीया तिर्यग्भवसम्बन्धिपूर्वकोटी न लभ्यत इति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [७११]

दीप अनुक्रम [८५६]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥८४०॥

२४ शतके उद्देशः १७ १८-१९ विकलोत्पादः सू ७०८-७११

नोत्कृष्टता भवानां कालस्य च स्यादिति ॥ उत्पादितो नारकेभ्यः पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकः, अथ तिर्यग्योनिकेभ्यस्तमुत्पादयन्नाह—'जइ तिरिक्खे'त्यादि, 'जच्चेव अप्पणो सट्ठाणे वत्तव्वय'त्ति यैवात्मनः–पृथिवीकायिकस्य स्वस्थाने–पृथिवीकायिकलक्षणे उत्पाद्यमानस्य वक्तव्यता भणिता सैवात्रापि वाच्या, केवलं तत्र परिमाणद्वारे प्रतिसमयमसङ्ख्येया उत्पद्यन्त इत्युक्तं इह त्वेकादिरिति, एतदेवाह–'नवर'मित्यादि । तथा पृथिवीकायिकेभ्यः पृथिवीकायिकस्योत्पद्यमानस्य संवेधद्वारे प्रथमद्वितीयचतुर्थपञ्चमगमेषूत्कर्षतोऽसङ्ख्यातानि भवग्रहणान्युक्तानि शेषेषु त्वष्टौ भवग्रहणानि इह पुनरष्टावेव नवस्वपीति । तथा 'कालादेसेणं उभयओ ठिईए करेज्ज'त्ति कालादेशेन संवेधं पृथिवीकायिकस्य सञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियतिरश्चश्च स्थित्या कुर्यात्, तथाहि–प्रथमे गमे 'कालादेसेणं जहन्नेणं दो अंतोमुहुत्ताइं'ति पृथिवीसत्कं पञ्चेन्द्रियसत्कं चेति, उत्कर्षतोऽष्टाशीतिर्वर्षसहस्राणि पृथिवीसत्कानि चतस्रश्च पूर्वकोट्यः पञ्चेन्द्रियतिर्यक्सत्काः, एवं शेषगमेष्वप्यूह्यः संवेध इति, 'सव्वत्थ अप्पणो लद्धी भाणियव्व'त्ति सर्वत्राप्कायिकादिभ्यश्चतुरिन्द्रियान्तेभ्य उद्वृत्तानां पञ्चेन्द्रियतिर्यक्षूत्पादे 'अप्पणो'त्ति अप्कायादेः सत्का लब्धिः परिमाणादिका भणितव्या, सा च प्राक्तनसूत्रेभ्योऽवगन्तव्या, अथानन्तरोक्तमेवार्थं स्फुटतरमाह–'जहेव पुढविकाइएसु उववज्जमाणाण'मित्यादि, यथा पृथिवीकायिकेभ्यः पञ्चेन्द्रियतिर्यक्षूत्पद्यमानानां जीवानां लब्धिरुक्ता तथैवाप्कायादिभ्यश्चतुरिन्द्रियान्तेभ्य उत्पद्यमानानां सा वाच्येति ॥ असञ्ज्ञिभ्यः पञ्चेन्द्रियतिर्यगुत्पादाधिकारे–'उक्कोसेणं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागठिईए'त्ति, अनेनासञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियाणामसङ्ख्यातवर्षायुष्केषु पञ्चेन्द्रियतिर्यक्षूत्पत्तिरुक्ता, 'अवसेसं जहेवे'त्यादि, अवशेषं–परिमाणादिद्वारजातं यथा पृथिवीकायिकेषूत्पद्यमानस्यासञ्ज्ञिनः

॥८४०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र मूल संपादने सूत्र-क्रमांकने एका स्खलना दृश्यते - उद्देश: २० स्थाने उद्देश: १७-१८-१९ मुद्रितं

प्रत सूत्रांक [७११]

दीप अनुक्रम [८५६]

पृथिवीकायिकोद्देशकेऽभिहितं तथैवासञ्ज्ञिनः पञ्चेन्द्रियतिर्यक्षूत्पद्यमानस्य वाच्यमिति । 'उक्कोसेणं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागं पुव्वकोडिपुहुत्तमब्भहियं'ति, कथम् ?, असञ्ज्ञी–पूर्वकोट्यायुष्कः पूर्वकोट्यायुष्केष्वेव पञ्चेन्द्रियतिर्यक्षूत्पन्न इत्येवं सप्तसु भवग्रहणेषु सप्त पूर्वकोट्यः अष्टमभवग्रहणे तु मिथुनकतिर्यक्षु पल्योपमासङ्ख्येयभागप्रमाणायुष्केषूत्पन्न इति, तृतीयगमे 'उक्कोसेणं संखेज्जा उववज्जंति'त्ति असङ्ख्यातवर्षायुषां पञ्चेन्द्रियतिरश्चामसङ्ख्यातानामभावादिति, चतुर्थगमे 'उक्कोसेणं पुव्वकोडिआउएसु उववज्जेज्ज'त्ति जघन्यायुरसञ्ज्ञी सङ्ख्यातायुष्केष्वेव पञ्चेन्द्रियतिर्यक्षूत्पद्यत इतिकृत्वा पूर्वकोट्यायुष्केष्वित्युक्तम्, 'अवसेसं जहा एयस्से'त्यादि, इहावशेषं–परिमाणादि एतस्य–असञ्ज्ञितिर्यक्पञ्चेन्द्रियस्य, 'मज्झिमेसु'त्ति जघन्यस्थितिकगमेषु 'एवं जहा रयणप्पभाए पुढवीएं' इत्यादि तच्च संहननोच्चत्वादि अनुबन्धसंवेधान्तं, 'नवरं परिमाण'मित्यादि, तच्चेदम्–'उक्कोसेणं असंखेज्जा उववज्जंति'त्ति ॥ अथ सञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियेभ्यः सञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चमुत्पादयन्नाह—'जइ सन्नी'त्यादि, 'अवसेसं जहा चेव सन्निस्स'त्ति अवशेषं–परिमाणादि यथैतस्यैव–सञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियतिरश्च इत्यर्थः, केवलं तत्रावगाहना सप्तधनुरित्यादिकोक्ता इह तूत्कर्षतो योजनसहस्रमाना, सा च मत्स्यादीनाश्रित्यावसेयेति, एतदेवाह–'नवर'मित्यादि, 'उक्कोसेणं तिन्नि पलिओवमाइं पुव्वकोडीपुहुत्तमब्भहियाइं'ति, अस्य च भावना प्रागिवेति, 'लद्धी से जहा एयस्स चेवे'त्यादि, एतच्चैतरसूत्रानुसारेणावगन्तव्यं 'संवेहो जहेवे'त्यादि 'एत्थ चेव'त्ति अत्रैव पञ्चेन्द्रियतिर्यगुद्देशके, स चैवं–भवादेशेन जघन्यतो द्वौ भवौ उत्कृष्टतस्त्वष्ट भवाः, कालादेशेन जघन्येन द्वे अन्तर्मुहूर्ते उत्कर्षतश्चतस्रः पूर्वकोट्योऽन्तर्मुहूर्त्तचतुष्काधिकाः, एष जघन्यस्थितिक औघिकेष्वित्यत्र संवेधः, जघन्य-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७११] दीप अनुक्रम [८५६]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥८४१॥

'२४ शतके उद्देशः १७ १८-१९ विकलोत्पादः सू ७०८-७११

स्थितिको जघन्यस्थितिकेष्वित्यत्र चान्तर्मुहूर्त्तैः संवेधः, जघन्यस्थितिक उत्कृष्टस्थितिकेष्वित्यत्र पुनरन्तर्मुहूर्त्तैः पूर्वकोटीभिश्च संवेध इति, नवमगमे 'नवरं परिमाण'मित्यादि, तत्र परिमाणमुत्कर्षतः सङ्ख्याता उत्पद्यन्ते, अवगाहना चोत्कर्षतो योजनसहस्रमिति । अथ मनुष्येभ्यस्तमुत्पादयन्नाह—'जइ मणुस्सेहिंतो'इत्यादि, 'लद्धी से तिसुवि गमएसु'त्ति लब्धिः—परिमाणादिका 'से' तस्यासञ्ज्ञिमनुष्यस्य त्रिष्वपि गमेष्वाद्येषु यतो नवानां गमानां मध्ये आद्या एवेह त्रयो गमाः संभवन्ति, जघन्यतोऽप्युत्कर्षतोऽपि चान्तर्मुहूर्त्तस्थितिकत्वेनैकस्थितिकत्वात्तस्येति, 'एत्थ चेव'त्ति अत्रैव पञ्चेन्द्रियतिर्यगुद्देशकेऽसञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियतिर्यग्भ्यः पञ्चेन्द्रियतिर्यगुत्पादाधिकारे, 'नो असंखेज्जवासाउएहिंतो'त्ति असङ्ख्यातवर्षायुषो मनुष्या देवेष्वेवोत्पद्यन्ते न तिर्यक्ष्विति । 'लद्धी से'इत्यादि, लब्धिः—परिमाणादिप्राप्तिः 'से' तस्य सञ्ज्ञिमनुष्यस्य यथैतस्यैव—सञ्ज्ञिमनुष्यस्य पृथिवीकायिकेषूत्पद्यमानस्य प्रथमगमेऽभिहिता, सा चैवं—परिमाणतो जघन्येनैको द्वौ वा उत्कर्षेण तु सङ्ख्याता एवोत्पद्यन्ते स्वभावतोऽपि सङ्ख्यातत्वात् सञ्ज्ञिमनुष्याणां, तथा षड्विधसंहननिन उत्कर्षतः पञ्चधनुःशतावगाहनाः षड्विधसंस्थानिनः षड्लेश्यास्त्रिविधदृष्टयो भजनया चतुर्ज्ञानास्त्र्यज्ञानाश्च त्रियोगा द्विविधोपयोगाश्चतुःसञ्ज्ञाश्चतुष्कषायाः पञ्चेन्द्रियाः षट्समुद्घाताः सातासातवेदनास्त्रिविधवेदा जघन्येनान्तर्मुहूर्त्तस्थितय उत्कर्षेण तु पूर्वकोट्यायुषः प्रशस्तेतराध्यवसानाः स्थितिसमानानुबन्धाः, कायसंवेधस्तु भवादेशेन जघन्यतो द्वौ भवौ उत्कर्षतोऽष्टौ भवाः कालादेशेन तु लिखित एवास्ते १ । द्वितीयगमे 'सच्चेव वत्तव्वय'त्ति प्रथमगमोक्ता केवलमिह संवेधः कालादेशेन तु जघन्यतो द्वे अन्तर्मुहूर्त्ते उत्कर्षतश्चतस्रः पूर्वकोटयश्चतुरन्तर्मुहूर्त्ताधिकाः, तृतीयेऽप्येवं—'नवरं ओगाहणा जहन्नेणं अंगुलपुहुत्तं'त्ति, अनेनेदमव-

॥८४१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र मूल संपादने सूत्र-क्रमांकने एका स्खलना दृश्यते - उद्देश: २० स्थाने उद्देश: १७-१८-१९ मुद्रितं

प्रत सूत्रांक [७११]

दीप अनुक्रम [८५६]

सितम्–अङ्गुलपृथक्त्वाद्धीनतरशरीरो मनुष्यो नोत्कृष्टायुष्केषु तिर्यक्षूत्पद्यते, तथा 'मासपुहुत्तं'ति अनेनापि मासपृथक्त्वाद्धीनतरायुष्को मनुष्यो नोत्कृष्टस्थितिषु तिर्यक्षूत्पद्यत इत्युक्तं, 'जहा सन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणियस्स पंचिंदियतिरिक्खजोणिएसु उववज्जमाणस्से'त्यादि, सर्वथेह समतापरिहारार्थमाह—'नवरं परिमाण'मित्यादि तत्र परिमाणद्वारे उत्कर्षतोऽसङ्ख्येयास्ते उत्पद्यन्ते इत्युक्तं इह तु सञ्ज्ञिमनुष्याणां सङ्ख्येयत्वेन सङ्ख्येया उत्पद्यन्त इति वाच्यं, संहननादिद्वाराणि तु यथा तत्रोक्तानि तथेहावगन्तव्यानि, तानि चैवं–तेषां षट् संहननानि जघन्योत्कर्षाभ्यामङ्गुलासङ्ख्येयभागमात्राऽवगाहना षट् संस्थानानि तिस्रो लेश्या मिथ्या दृष्टिः द्वे अज्ञाने कायरूपो योगो द्वौ उपयोगौ चतस्रः सञ्ज्ञाश्चत्वारः कषायाः पञ्चेन्द्रियाणि त्रयः समुद्घाता द्वे वेदने त्रयो वेदा जघन्योत्कर्षाभ्यामन्तर्मुहूर्त्तप्रमाणमायुरप्रशस्तान्यध्यवसायस्थानानि आयुःसमानोऽनुबन्धः, कायसंवेधस्तु भवादेशेन जघन्येन द्वे भवग्रहणे उत्कर्षतस्त्वष्टौ भवग्रहणानि कालादेशेन तु सञ्ज्ञिमनुष्यपञ्चेन्द्रियतिर्यक्स्थित्यनुसारतोऽवसेय इति ॥ अथ देवेभ्यः पञ्चेन्द्रियतिर्यक्षूत्पादयन्नाह—'जइ देवेही'त्यादि, 'असुरकुमाराणं लद्धी'ति असुरकुमाराणां 'लब्धिः' परिमाणादिका 'एवं जाव ईसाणदेवस्स'त्ति यथा पृथिवीकायिकेषु देवस्योत्पत्तिरुक्ता असुरकुमारमादावीशानकदेवं चान्ते कृत्वा एवं तस्य पञ्चेन्द्रियतिर्यक्षु सा वाच्या, ईशानकान्त एव च देवः पृथिवीकायिकेषूत्पद्यत इतिकृत्वा यावदीशानकदेवस्येत्युक्तं, असुरकुमाराणां चैवं लब्धिः–एकाद्यसङ्ख्येयान्तानां तेषां पञ्चेन्द्रियतिर्यक्षु समयेनोत्पादः, तथा संहननाभावः जघन्यतोऽङ्गुलासङ्ख्येयभागमाना उत्कर्षतः सप्तहस्तमाना भवधारणीयावगाहना इतरा तु जघन्यतोऽङ्गुलसङ्ख्येयभागमाना उत्कर्षतस्तु योजनलक्षमाना संस्थानं समचतुरस्रं उत्तरवैक्रियापेक्षया तु

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७११]

दीप अनुक्रम [८५६]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥८४२॥

२४ शतके उद्देशः १७ १८-१९ विकलोत्पादः सू १०८-७११

नानाविधं चतस्रो लेश्यास्त्रिविधा दृष्टिः त्रीणि ज्ञानान्यवश्यं अज्ञानानि च भजनया योगादीनि पञ्च पदानि प्रतीतानि समुद्घाता आद्याः पञ्च वेदना द्विविधा वेदो नपुंसकवर्जः स्थितिर्दश वर्षसहस्राणि जघन्या इतरा तु सातिरेकं सागरोपमं शेषद्वारद्वयं तु प्रतीतं संवेधं तु सामान्यत आह–'भवादेसेणं सव्वत्थे'त्यादि ॥ नागकुमारादिवक्तव्यता तु सूत्रानुसारेणोपयुज्य वाच्या, 'ओगाहणा जहा ओगाहणासंठाणे'त्ति अवगाहना यथाऽवगाहनासंस्थाने प्रज्ञापनाया एकविंशतितमे पदे, तत्र चैवं देवानामवगाहना–"भवणवणजोइसोहम्मीसाणे सत्त हुंति रयणीओ। एक्केक्कहाणि सेसे दुदुगे य दुगे चउक्के य ॥१॥" इत्यादि [भवनपतिवानमन्तरज्योतिष्कसौधर्मेशानेषु सप्त भवन्ति रत्नयः। एकैकरत्निहानिः शेषेषु द्वयोर्द्वयोश्च द्वयोश्चतुष्के च ॥१॥] 'जहा ठितिपए'त्ति प्रज्ञापनायाश्चतुर्थपदे स्थितिश्च प्रतीतैवेति ॥ चतुर्विंशतितमशते विंशतितमः ॥ २४–२० ॥

अथैकविंशतितमे किञ्चिल्लिख्यते—

मणुस्सा णं भंते ! कओहिंतो उवव० किं नेरइएहिंतो उवव० जाव देवेहिंतो उवव० ?, गोयमा ! णेरइएहिंतोवि उवव० जाव देवेहिंतोवि उव०, एवं उववाओ जहा पंचिंदियतिरिक्खजोणिउद्देसए जाव तमापुढविनेरइएहिंतोवि उववज्जंति णो अहेसत्तमपुढविनेरइएहिंतो उवव०, रयणप्पभपुढविनेरइए णं भंते ! जे भविए मणुस्सेसु उवव० से णं भंते ! केवतिकाल० ?, गोयमा ! जह० मासपुहत्तट्ठितीएसु उक्कोसेणं पुव्वकोडी आउएसु अवसेसा वत्तव्वया जहा पंचिंदियतिरिक्खजो० उववज्जंतस्स तहेव नवरं परिमाणे जह० एक्को वा दो वा ॥८४२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र मूल संपादने सूत्र-क्रमांकने एका स्खलना दृश्यते - उद्देश: २० स्थाने उद्देश: १७-१८-१९ मुद्रितं

अत्र चतुर्विंशतितमे शतके विंशतितम: उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ चतुर्विंशतितमे शतके एकविंशति: उद्देशक: आरभ्यते

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [७१२]

दीप अनुक्रम [८५७]

तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा उववज्जंति, जहा तहिं अंतोमुहुत्तेहिं तहा इहं मासपुहुत्तेहिं संवेहं करेज्जा सेसं तं चेव ९ ॥ जहा रयणप्पभाए वत्तव्वया तहा सक्करप्पभाएवि वत्तव्वया नवरं जहन्नेणं वासपुहुत्तट्ठिइएसु उक्कोसेणं पुव्वकोडि, ओगाहणा लेस्साणाणट्ठितिअणुबंधसंवेहं णाणत्तं च जाणेज्जा जहेव तिरिक्खजोणियउद्देसए एवं जाव तमापुढविनेरइए ९ ॥ जइ तिरिक्खजोणिएहिंतो उववज्जंति किं एगिंदियतिरिक्खजोणिएहिंतो उवव० जाव पंचिंदियतिरिक्खजोणिएहिं उवव० ?, गोयमा ! एगिंदियतिरिक्खजोणिए भेदो जहा पंचिंदियतिरिक्खजोणिउद्देसए नवरं तेउवाऊ पडिसेहेयव्वा, सेसं तं चेव जाव पुढविक्काइए णं भंते ! जे भविए मणुस्सेसु उववज्जित्तए से णं भंते ! केवति० ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तट्ठितिएसु उक्कोसेणं पुव्वकोडीआउएसु उवव०, ते णं भंते ! जीवा एवं जच्चेव पंचिंदियतिरिक्खजोणिएसु उववज्जमाणस्स पुढविक्काइयस्स वत्तव्वया सा चेव इहवि उववज्जमाणस्स भाणियव्वा णवसुवि गमएसु, नवरं ततियछट्ठणवमेसु गमएसु परिमाणं जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा उवव०, जाहे अप्पणा जहन्नकालट्ठितिओ भवति ताहे पढमगमए अज्झवसाणा पसत्थावि अप्पसत्थावि बितियगमए अप्पसत्था ततियगमए पसत्था भवंति सेसं तं चेव निरवसेसं ९॥ जइ आउक्काइए एवं आउक्काइयाणवि, एवं वणस्सइकाइयाणवि, एवं जाव चउरिंदियाणवि, असन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणियसन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणियअसन्निमणुस्ससन्निमणुस्साण य एते सव्वेवि जहा पंचिंदियतिरिक्खजोणियउद्देसए तहेव भाणियव्वा, नवरं एयाणि चेव परिमाणअज्झवसाणणा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७१२]

दीप अनुक्रम [८५७]

णत्ताणि जाणिज्ञा पुढविकाइयस्स एत्थ चेव उद्देसए भणियाणि सेसं तहेव निरवसेसं ॥ जइ देवेहिंतो उवव० किं भवणवासिदेवेहिंतो उवव० वाणमंतर० जोइसिय० वेमाणियदेवेहिंतो उवव० ?, गोयमा ! भवणवासी जाव वेमाणिय०, जइ भवण० किं असुरजाव थणिय० ?, गोयमा ! असुर जाव थणिय०, असुर-कुमारे णं भंते ! जे भविए मणुस्सेसु उवव० से णं भंते ! केवति० ?, गोयमा ! जह० मासपुहत्तट्ठितिएसु उक्कोसेणं पुव्वकोडिआउएसु उवव०, एवं जच्चेव पंचिंदियतिरिक्खजोणिउद्देसए वत्तव्वया सच्चेव एत्थवि भाणियव्वा, नवरं जहा तहिं जहन्नगं अंतोमुहुत्तट्ठितीएसु तहा इहं मासपुहुत्तट्ठिईएसु, परिमाणं जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्ञा उववज्ञंति, सेसं तं चेव, एवं जाव ईसाणदेवोत्ति, एयाणि चेव णाणत्ताणि सणंकुमारादीया जाव सहस्सारोत्ति जहेव पंचिंदियतिरिक्खजोणिउद्देसए, नवरं परिमाणं जह० एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्ञा उववज्ञंति, उववाओ जहन्नेणं वासपुहत्तट्ठितिएसु उक्कोसेणं पुव्वकोडीआउएसु उवव०, सेसं तं चेव संवेहं वासपुहुत्तं पुव्वकोडीसु करेज्ञा ॥ सणंकुमारे ठिती चउगुणिया अट्ठावीसं सागरोवमा भवंति, माहिंदे ताणि चेव सातिरेगाणि, बम्हलोए चत्तालीसं लंतए छप्पन्नं महासुक्के अट्ठसाट्ठिं सहस्सारे बावत्तरिं सागरोवमाइं एसा उक्कोसा ठिती भणियव्वा जहन्नट्ठितिंपि चउ गुणेज्ञा ९ ॥ आणयदेवे णं भंते ! जे भविए मणुस्सेसु उववज्जित्तए से णं भंते ! केवति० ?, गोयमा ! जहन्नेणं वासपुहुत्तट्ठितिएसु उवव० उक्कोसेणं पुव्वकोडीठितीएसु, ते णं भंते ! एवं जहेव सहस्सारदेवाणं वत्तव्वया नवरं ओगाहणा ठिई अणुबंधो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७१२]

दीप अनुक्रम [८५७]

य जाणेज्ञा, सेसं तं चेव, भवादेसेणं जहन्नेणं दो भवग्गहणाइं उक्कोसेणं छ भवग्गहणाइं, कालादेसेणं जहन्नेणं अट्ठारस सागरोवमाइं वासपुहुत्तमब्भहियाइं उक्को० सत्तावन्नं सागरोवमाइं तिहिं पुव्वकोडीहिं अब्भहियाइं एवतियं कालं०, एवं णववि गमा, नवरं ठितिं अणुबंधं संवेहं च जाणेज्ञा, एवं जाव अच्चुयदेवो, नवरं ठितिं अणुबंधं संवेहं च जाणेज्ञा, पाणयदेवस्स ठिती तिगुणिया सट्ठिं सागरोवमाइं, आरणगस्स तेवट्ठिं सागरोवमाइं, अच्चुयदेवस्स छावट्ठिं सागरोवमाइं ॥ जइ कप्पातीतवेमाणियदेवेहिंतो उववo किं गेवेज्जकप्पातीत० अणुत्तरोववातियकप्पातीत० ?, गोयमा ! गेवेज्ज० अणुत्तरोववा०, जइ गेवेज्ज० किं हिट्ठिम२गेविज्जगकप्पातीतजाव उवरिम२गेवेज्ज० ?, गोयमा ! हिट्ठिम२गेवेज्जजाव उवरिम २, गेवेज्जदेवे णं भंते ! जे भविए मणुस्सेसु उववज्जित्तए से णं भंते ! केवतिका० ?, गोयमा ! जह० वासपुहुत्तठितीएसु उक्कोसेणं पुव्वकोडी अवसेसं जहा आणयदेवस्स वत्तव्वया नवरं ओगाहणा० गो० ! एगे भवधारणिज्जे सरीरए से जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणं दो रयणीओ, संठाणं, गो० ! एगे भवधारणिज्जे सरीरे समचउरंससंठिए प०, पंच समुग्घाया पं० तं–वेदणासमु० जाव तेयगसमु०, णो चेव णं वेउव्वियतेयगसमुग्घाएहिंतो समोहणिंसु वा समोहणंति वा समोहणिस्संति वा, ठिती अणुबंधो जहन्नेणं बावीसं सागरोवमाइं उक्को० एक्कतीसं सागरोवमाइं, सेसं तं०, कालादे० जह० बावीसं सा० वासपुहुत्तमब्भ० उक्को० तेणउतिं सागरोवमाइं तिहिं पुव्वकोडीहिं अब्भहियाइं एवतियं०, एवं सेसेसुवि अट्ठगमएसु नवरं ठितिं संवेहं च जाणे० ९ ॥ जइ अणुत्त-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७१२]

दीप अनुक्रम [८५७]

रोववाइयकप्पातीतवेमाणि० किं विजयअणुत्तरोववाइय० वेजयंतअणुत्तरोववातिय० जाव सवट्ठसिद्ध० ?, गोयमा ! विजयअणुत्तरोववातियजाव सवट्ठसिद्धअणुत्तरोववातिय०, विजयवेजयंतजयंतअपराजियदेवे णं भंते ! जे भविए मणुस्सेसु उवव० से णं भंते ! केवति० एवं जहेव गेवेज्जदेवाणं नवरं ओगाहणा जह० अंगुलस्स असं० भागं उक्कोसेणं एगा रयणी, सम्मदिट्ठी णो मिच्छदिट्ठी णो सम्मामिच्छदिट्ठी, णाणी णो अन्नाणी नियमं तिन्नाणी तं०–आभिणिबोहिय० सुय० ओहिणाणी, ठिती जहन्नेणं एक्कतीसं सागरोवमाइं उक्को० तेत्तीसं सागरोवमाइं, सेसं तहेव, भवादे० जह० दो भवग्गहणाइं उक्को० चत्तारि भवग्गहणाइं, कालादे० जह० एक्कतीसं सागरोवमाइं वासपुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणं छावट्ठिं सागरोवमाइं दोहिं पुवकोडीहिं अब्भहियाइं एवतियं, एवं सेसावि अट्ठ गमगा भाणियवा नवरं ठितिं अणुबंधं संवेधं च जाणेज्जा सेसं एवं चेव ॥ सवट्ठसिद्धगदेवे णं भंते ! जे भविए मणुस्सेसु उववज्जित्तए सा चेव विजयादिदेववत्तवया भाणियवा णवरं ठिती अजहन्नमणुक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं एवं अणुबंधोवि, सेसं तं चेव, भवादेसेणं दो भवग्गहणाइं, कालादेसेणं जहन्नेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं वासपुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं पुवकोडीए अब्भहियाइं एवतियं० १। सो चेव जहन्नकालट्ठितीएसु उववन्नो एस चेव वत्तवया नवरं कालादेसेणं जहन्नेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं वासपुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणवि तेत्तीसं सागरोवमाइं वासपुहुत्तमब्भहियाइं एवतियं० २। सो चेव उक्कोसकालट्ठितीएसु उववन्नो एस चेव वत्तवया, नवरं कालादेसेणं जहन्नेणं तेत्तीसं सागरोव-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७१२]

दीप अनुक्रम [८५७]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

माइं पुव्वकोडीए अब्भहियाइं, उक्कोसेणवि तेत्तीसं सागरोवमाइं पुव्वकोडीए अब्भहियाइं, एवतियं० ३, एते चेव तिन्नि गमगा सेसा न भण्णंति। सेवं भंते! २ त्ति॥ (सूत्रं ७१२)॥ २४-२१॥

'जहन्नेणं मासपुहुत्तठिइएसु'त्ति अनेनेदमुक्तं-रत्नप्रभानारका जघन्यं मनुष्यायुर्बध्नन्तो मासपृथक्त्वाद्धीनतरं न बध्नंति तथाविधपरिणामाभावादिति, एवमन्यत्रापि कारणं वाच्यं, तथा परिमाणद्वारे 'उक्कोसेणं संखेज्जा उववज्जंति'त्ति नारकाणां संमूर्च्छिमेषु मनुष्येषूत्पादाभावाद् गर्भजानां च सङ्ख्यातत्वात्सङ्ख्याता एव ते उत्पद्यन्त इति, 'जहा तहिं अंतोमुहुत्तेहिं तहा इहं मासपुहुत्तेहिं संवेहं करेज्ज'त्ति यथा तत्र-पञ्चेन्द्रियतिर्यगुद्देशके रत्नप्रभानारकेभ्य उत्पद्यमानानां पञ्चेन्द्रियतिरश्चां जघन्यतोऽन्तर्मुहूर्त्तस्थितिकत्वादन्तर्मुहूर्त्तैः संवेधः कृतस्तथेह मनुष्योद्देशके मनुष्याणां जघन्यस्थितिमाश्रित्य मासपृथक्त्वैः संवेधः कार्य इति भावः, तथाहि-'कालादेसेणं जहन्नेणं दस वाससहस्साइं मासपुहुत्तमब्भहियाइं' इत्यादि॥ शर्कराप्रभादिवक्तव्यता तु पञ्चेन्द्रियतिर्यगुद्देशकानुसारेणावसेयेति॥ अथ तिर्यग्भ्यो मनुष्यमुत्पादयन्नाह—'जइ तिरिक्खे'त्यादि, इह पृथिवीकायादुत्पद्यमानस्य पञ्चेन्द्रियतिरश्चो या वक्तव्यतोक्ता सैव तत उत्पद्यमानस्य मनुष्यस्यापि, एतदेवाह-'एवं जहेवे'त्यादि, विशेषं पुनराह—'नवरं तईए'इत्यादि तत्र तृतीये औघिकेभ्यः पृथिवीकायिकेभ्य उत्कृष्टस्थितिषु मनुष्येषु ये उत्पद्यन्ते ते उत्कृष्टतः सङ्ख्याता एव भवन्ति, यद्यपि मनुष्याः संमूर्च्छिमसङ्ग्रहादसङ्ख्याता भवन्ति तथाऽप्युत्कृष्टस्थितयः पूर्वकोट्यायुषः सङ्ख्याता एव पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चस्त्वसङ्ख्याता अपि भवन्तीति, एवं षष्ठे नवमे चेति। 'जाहे अप्पणे'त्यादि, अयमर्थः—मध्यमगमानां प्रथमगमे औघिकेषूत्पद्यमानतायामित्यर्थः अध्यवसानानि प्रश-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७१२]

दीप अनुक्रम [८५७]

स्तानि उत्कृष्टस्थितिकत्वेनोत्पत्तौ अप्रशस्तानि च जघन्यस्थितिकत्वेनोत्पत्तौ, 'बीयगमए'त्ति जघन्यस्थितिकस्य जघन्यस्थितिषूत्पत्तावप्रशस्तानि, प्रशस्ताध्यवसानेभ्यो जघन्यस्थितिकत्वेनानुत्पत्तेरिति, एवं तृतीयोऽपि वाच्यः । अप्कायादिभ्यश्च तदुत्पादमतिदेशेनाह—'एवं आउक्काइयाणवी'त्यादि ॥ देवाधिकारे—'एवं जाव ईसाणो देवो'त्ति यथाऽसुरकुमारा मनुष्येषु पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकोद्देशकवक्तव्यताऽतिदेशेनोत्पादिता एवं नागकुमारादय ईशानान्ता उत्पादनीयाः, समानवक्तव्यत्वात्, यथा च तत्र जघन्यस्थितेः परिमाणस्य च नानात्वमुक्तं तथैतेष्वप्यत एवाह—'एयाणि चेव नाणत्ताणि'त्ति सनत्कुमारादीनां तु वक्तव्यतायां विशेषोऽस्तीति तान् भेदेन दर्शयति—'सणंकुमारे'त्यादि, 'एसा उक्कोसा ठिई भणियव्व'त्ति यदा औघिकेभ्य उत्कृष्टस्थितिकेभ्यश्च देवेभ्य औघिकादिमनुष्येषूत्पद्यते तदोत्कृष्टा स्थितिर्भवति सा चोत्कृष्टसंवेधविवक्षायां चतुर्भिर्मनुष्यभवैः क्रमेणान्तरिता क्रियते, ततश्च सनत्कुमारदेवानामष्टाविंशत्यादिसागरोपममाना भवति सप्तादिसागरोपमप्रमाणत्वात्तस्या इति, यदा पुनर्जघन्यस्थितिकदेवेभ्य औघिकादिमनुष्येषूत्पद्यते तदा जघन्यस्थितिर्भवति, सा च तथैव चतुर्गुणिता सनत्कुमारादिसागरोपममाना भवति द्व्यादिसागरोपममानत्वात्तस्या इति ॥ 'आणयदेवे णं'मित्यादि, 'उक्कोसेणं छब्भवग्गहणाइं'ति त्रीणि दैविकानि त्रीण्येव क्रमेण मनुष्यसत्कानीत्येवं षट्, 'कालादेसेणं जहन्नेणं अट्ठारस सागरोवमाइं'ति आनतदेवलोके जघन्यस्थितेरेवंभूतत्वात्, 'उक्कोसेणं सत्तावन्नं सागरोवमाइं'ति आनते उत्कृष्टस्थितेरेकोनविंशतिसागरोपमप्रमाणाया भवत्रयगुणनेन सप्तपञ्चाशत्सागरोपमाणि भवन्तीति ॥ ग्रैवेयकाधिकारे 'एगे भवधारणिज्जे सरीरे'त्ति कल्पातीतदेवानामुत्तरवैक्रियं नास्तीत्यर्थः, 'नो चेव णं वेउव्विए'त्यादि, ग्रैवेयक-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [७१२]

दीप अनुक्रम [८५७]

देवानामाद्याः पञ्च समुद्घाताः लब्ध्यपेक्षया संभवन्ति, केवलं वैक्रियतैजसाभ्यां न ते समुद्घातं कृतवन्तः कुर्वन्ति करिष्यन्ति वा, प्रयोजनाभावादित्यर्थः, 'जहन्नेणं बावीसं सागरोवमाइं'ति प्रथमग्रैवेयके जघन्येन द्वाविंशतिस्तेषां भवति 'उक्कोसेणं एक्कतीसं'ति नवमग्रैवेयके उत्कर्षत एकत्रिंशत्तानीति, 'उक्कोसेणं तेणउइं सागरोवमाइं तिहिं पुव्वकोडीहिं अब्भहियाइं'ति इहोत्कर्षतः षड् भवग्रहणानि ततश्च त्रिषु देवभवग्रहणेषूत्कृष्टस्थितिषु तिसृभिः सागरोपमाणामेकत्रिंशद्भिस्त्रिनवतिस्तेषां स्यात् त्रिभिश्चोत्कृष्टमनुष्यजन्मभिस्तिस्रः पूर्वकोट्यो भवन्तीति ॥ सर्वार्थसिद्धिकदेवाधिकारे आद्या एव त्रयो गमा भवन्ति सर्वार्थसिद्धिकदेवानां जघन्यस्थितेरभावान्मध्यमं गमत्रयं न भवति उत्कृष्टस्थितेरभावाच्चान्तिममिति ॥ चतुर्विंशतितमशते एकविंशतितमः ॥ २४-२१ ॥

वाणमन्तरा णं कओहिंतो उवव० किं नेरइएहिंतो उवव० तिरिक्ख० एवं जहेव णागकुमारउद्देसए असन्नी निरवसेसं । जइ सन्निपंचिंदियजाव असंखेज्जवासाउयसन्निपंचिंदिय० जे भविए वाणमंतर०से णं भंते! केवति० ?, गोयमा ! जहन्नेणं दसवाससहस्सठितीएसु उक्कोसेणं पलिओवमठितिएसु सेसं तं चेव जहा नागकुमारउद्देसए जाव कालादेसेणं जह० सातिरेगा पुव्वकोडी दसहिं वाससहस्सेहिं अब्भहिया उक्कोसेणं चत्तारि पलिओवमाइं एवतियं १, सो चेव जहन्नकालट्ठितिएसु उववन्नो जहेव णागकुमाराणं बितियगमे वत्तव्वया २, सो चेव उक्कोसकालट्ठितिएसु उवव० जह० पलिओवमट्ठितीएसु उक्कोसेणवि पलिओवमट्ठितिएसु एस चेव वत्त-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र चतुर्विंशतितमे शतके एकविंशतितम: उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ चतुर्विंशतितमे शतके द्वाविंशतितमं उद्देशक: आरभ्यते

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [७१३]

दीप अनुक्रम [८५८]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥८४६॥

२४ शतके उद्देशः २२ व्यन्तरोत्पादः सू ७१३

वया नवरं ठिती से जह० पलिओवमं उक्कोसे० तिन्नि पलिओवमाइं संवेहो जह० दो पलिओवमाइं उक्को० चत्तारि पलिओवमाइं एवतियं ३, मज्झिमगमगा तिन्निवि जहेव नागकुमारेसु पच्छिमेसु तिसु गमएसु तं चेव जहा नागकुमारुद्देसए नवरं ठितिं संवेहं च जाणेज्जा, संखेज्जवासाउय तहेव नवरं ठिती अणुबंधो संवेहं च उभओ ठितीएसु जाणेज्जा, जइ मणुस्स० असंखेज्जवासाउयाणं जहेव नागकुमाराणं उद्देसे तहेव वत्तव्वया नवरं तइयगमए ठिती जहन्नेणं पलिओवमं उक्कोसेणं तिन्नि पलिओवमाइं ओगाहणा जहन्नेणं गाउयं उक्कोसेणं तिन्नि गाउयाइं सेसं तहेव संवेहो से जहा एत्थ चेव उद्देसए असंखेज्जवासाउयसन्निपंचिंदियाणं, संखेज्जवासाउयसन्निमणुस्से जहेव नागकुमारुद्देसए नवरं वाणमंतरे ठितिं संवेहं च जाणेज्जा। सेवं भंते! २ त्ति ॥ (सूत्रं ७१३) ॥ २४-२२ ॥

द्वाविंशतितमे किञ्चिल्लिख्यते–तत्रासङ्ख्यातवर्षायुःसञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियाधिकारे– 'उक्कोसेणं चत्तारि पलिओवमाइं'ति त्रिपल्योपमायुःसञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियतिर्यक् पल्योपमायुर्व्यन्तरो जात इत्येवं चत्वारि पल्योपमानि, द्वितीयगमे 'जहेव नागकुमाराणं बीयगमे वत्तव्वय'त्ति सा च प्रथमगमसमानैव नवरं जघन्यत उत्कर्षतश्च स्थितिर्दशवर्षसहस्राणि, संवेधस्तु 'कालादेसेणं जहन्नेणं सातिरेगा पुव्वकोडी दसवाससहस्सेहिं अब्भहिया उक्कोसेणं तिन्नि पलिओवमाइं दसहिं वाससहस्सेहिं अब्भहियाइं'त्ति, तृतीये गमे 'ठिई से जहन्नेणं पलिओवमं'ति यद्यपि सातिरेका पूर्वकोटी जघन्यतोऽसङ्ख्यातवर्षायुषां तिरश्चामायुरस्ति तथाऽपीह पल्योपमायुष्कं पल्योपमायुष्कव्यन्तरेषूत्पादयिष्यमाणत्वाद्

॥८४६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत
सूत्रांक
[७१३]

दीप
अनुक्रम
[८५८]

यतोऽसङ्ख्यातवर्षायुः स्वायुषो बृहत्तरायुष्केषु देवेषु नोत्पद्यते एतच्च प्रागुक्तमेवेति । 'ओगाहणा जहन्नेणं गाउयं'ति येषां पल्योपममानायुस्तेषामवगाहना गव्यूतं ते च सुषमदुष्षमायामिति ॥ चतुर्विंशतितमशते द्वाविंशतितमः ॥ २४–२२ ॥

त्रयोविंशतितमोद्देशके किञ्चिल्लिख्यते—

जोइसिया णं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति किं नेरइए० भेदो जाव सन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिएहिंतो उवव० नो असन्निपंचिंदियतिरिक्ख०, जइ सन्नि० किं संखेज्ज० असंखेज्ज० ?, गोयमा ! संखेज्जवासाउय० असंखेज्जवासाउय०, सन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिए णं भंते ! जे भविए जोतिसिएसु उवव० से णं भंते ! केवति० ?, गोयमा ! जहन्नेणं अट्ठभागपलिओवमट्ठितिएसु उक्कोसेणं पलिओवमवाससयसहस्सट्ठितिएसु उवव०, अवसेसं जहा असुरकुमारुद्देसए नवरं ठिती जहन्नेणं अट्ठभागपलिओवमाइं उक्को० तिन्नि पलिओवमाइं, एवं अणुबंधोवि सेसं तहेव, नवरं कालादे० जह० दो अट्ठभागपलिओवमाइं उक्को० चत्तारि पलिओवमाइं वाससयसहस्समब्भहियाइं एवतियं १, सो चेव जहन्नकालट्ठितीएसु उववन्नो जह० अट्ठभागपलिओवमट्ठितिएसु उक्को० अट्ठभागपलिओवमट्ठितिएसु एस चेव वत्तव्वया नवरं कालादेसं जाणे० २, सो चेव उक्कोसकालट्ठिइएसु उवव० एस चेव वत्तव्वया णवरं ठिती जह० पलिओवमं वाससयसहस्समब्भहियं उक्को० तिन्नि पलिओवमाइं, एवं अणुबंधोवि, कालादे० जह० दो पलिओवमाइं दोहिं वाससयसहस्सेहिमब्भहि० उक्को०

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र चतुर्विंशतितमे शतके द्वाविंशतितम: उद्देशक: परिसमाप्त:
अथ चतुर्विंशतितमे शतके त्रयोविंशतितमं उद्देशक: आरभ्यते

प्रत सूत्रांक [७१४]

दीप अनुक्रम [८५९]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥८४७॥

24 शतके उद्देशः २३ ज्योतिष्कोत्पादः सू ७१४

चत्ता० पलि० वाससयसहस्सम० ३, सो चेव अप्पणा जहन्नकालट्ठितीओ जाओ जहन्नेणं अट्ठभागपलिओवमट्ठितीएसु उववन्नो उक्कोसेणवि अट्ठभागपलिओवमट्ठितीएसु उववन्नो, ते णं भंते ! जीवा एस चेव वत्तव्वया नवरं ओगाहणा जहन्नेणं धणुहपुहुत्तं उक्को० सातिरेगाइं अट्ठारसधणुसयाइं ठिती जहन्ने० अट्ठभागपलिओवमं उक्को० अट्ठभागपलिओवमं, एवं अणुबंधोऽवि सेसं तहेव, कालादे० जह० दो अट्ठभागपलिओवमाइं उक्को० दो अट्ठभागपलिओवमाइं एवतियं जहन्नकालट्ठितियस्स एस चेव एक्को गमो ६, सो चेव अप्पणा उक्कोसकालट्ठितिओ जाओ सा चेव ओहिया वत्तव्वया नवरं ठिती जहन्नेणं तिन्नि पलि० उक्को० तिन्नि पलिओवमाइं एवं अणुबंधोवि, सेसं तं चेव, एवं पच्छिमा तिन्नि गमगा णेयव्वा नवरं ठितिं संवेहं च जाणेज्जा, एते सत्त गमगा । जइ संखेज्जवासाउयसन्निपंचिंदिय० संखेज्जवासाउयाणं जहेव असुरकुमारेसु उववज्जमाणाणं तहेव नववि गमा भाणियव्वा नवरं जोतिसियठितिं संवेहं च जाणेज्जा सेसं तहेव निरवसेसं भाणियव्वं, जइ मणुस्सेहिंतो उवव० भेदो तहेव जाव असंखेज्जवासाउयसन्निमणुस्से णं भंते ! जे भविए जोइसिएसु उववज्जित्तए से णं भंते ! एवं जहा असंखेज्जवासाउयसन्निपंचिंदियस्स जोइसिएसु चेव उववज्जमाणस्स सत्त गमगा तहेव मणुस्साणवि नवरं ओगाहणाविसेसो पढमेसु तिसु गमएसु ओगाहणा जहन्नेणं सातिरेगाइं नव धणुसयाइं उक्को० तिन्नि गाउयाइं मज्झिमगमए जह० सातिरेगाइं नव धणुसयाइं उक्कोसेणवि सातिरेगाइं नव धणुसयाइं, पच्छिमेसु तिसु गमएसु जह० तिन्नि गाउयाइं उक्कोसे० तिन्नि गाउयाइं सेसं तहेव निरवसेसं ॥८४७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [७१४]

दीप अनुक्रम [८५९]

जाव संवेहोत्ति, जइ संखेज्जवासाउयसन्निमणुस्से० संखेज्जवासाउयाणं जहेव असुरकुमारेसु उववज्जमाणाणं तहेव नव गमगा भाणियव्वा, नवरं जोतिसियठितिं संवेहं च जाणेज्जा, सेसं तं चेव निरवसेसं। सेवं भंते ! २ त्ति ॥ (सूत्रं ७१४) ॥ २४-२३ ॥

'जहन्नेणं दो अट्ठभागपलिओवमाइं'ति द्वौ पल्योपमाष्टभागावित्यर्थः तत्रैकोऽसङ्ख्यातायुष्कसम्बन्धी द्वितीयस्तु तारकज्योतिष्कसम्बन्धीति, 'उक्कोसेणं चत्तारि पलिओवमाइं वाससयसहस्समब्भहियाइं'ति त्रीण्यसङ्ख्यातायुःसत्कानि एकं च सातिरेकं चन्द्रविमानज्योतिष्कसत्कमिति, तृतीयगमे 'ठिई जहन्नेणं पलिओवमं वाससयसहस्समब्भहियं'ति यद्यप्यसङ्ख्यातवर्षायुषां सातिरेका पूर्वकोटी जघन्यतः स्थितिर्भवति तथाऽपीह पल्योपमं वर्षलक्षाभ्यधिकमुक्तं, एतत्प्रमाणायुष्केषु ज्योतिष्केषूत्पत्स्यमानत्वाद्, यतोऽसङ्ख्यातवर्षायुः स्वायुषो बृहत्तरायुष्केषु देवेषु नोत्पद्यते, एतच्च प्रागुपदर्शितमेव, चतुर्थे गमे जघन्यकालस्थितिकोऽसङ्ख्यातवर्षायुरौघिकेषु ज्योतिष्केषूत्पन्नः, तत्र चासङ्ख्यातायुषो यद्यपि पल्योपमाष्टभागाद्धीनतरमपि जघन्यत आयुष्कं भवति तथाऽपि ज्योतिषां ततो हीनतरं नास्ति, स्वायुस्तुल्यायुर्बन्धकाश्चोत्कर्षतोऽसङ्ख्यातवर्षायुष इतीह जघन्यस्थितिकास्ते पल्योपमाष्टभागायुषो भवन्ति, ते च विमलवाहनादिकुलकरकालात्पूर्वतरकालभुवो हस्त्यादयः औघिकज्योतिष्का अप्येवंविधा एव तदुत्पत्तिस्थानं भवन्तीति 'जहन्नेणं अट्ठभागपलिओवमट्ठिइएसु' इत्याद्युक्तम्, 'ओगाहणा जहन्नेणं धणुहपुहुत्तं'ति यदुक्तं तत्पल्योपमाष्टभागमानायुषो विमलवाहनादिकुलकरकालात्पूर्वतरकालभाविनो हस्त्यादिव्यतिरिक्तक्षुद्रकायचतुष्पदानपेक्ष्यावगन्तव्यं, 'उक्कोसेणं सातिरेगाइं अट्ठारसधणुसयाइं'ति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७१४]

दीप अनुक्रम [८५९]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥८४८॥

२४ शतके उद्देशः २३ ज्योतिष्कोत्पादः सू ७१४

एतच्च विमलवाहनकुलकरपूर्वतरकालभाविहस्त्यादीनपेक्ष्योक्तं, यतो विमलवाहनो नवधनुःशतमानावगाहनः तत्कालहस्त्यादयश्च तद्द्विगुणाः, तत्पूर्वतरकालभाविनश्च ते सातिरेकतत्प्रमाणा भवन्तीति, 'जहन्नकालट्ठिइयस्स एस चेव एक्को गमो'त्ति पञ्चमषष्ठगमयोरत्रैवान्तर्भावाद्, यतः पल्योपमाष्टभागमानायुषो मिथुनकतिरश्चः पञ्चमगमे षष्ठगमे च पल्योपमाष्टभागमानमेवायुर्भवतीति, प्राग् भावितं चैतदिति, सप्तमादिगमेषूत्कृष्टैव त्रिपल्योपमलक्षणा तिरश्चः स्थितिः, ज्योतिष्कस्य तु सप्तमे द्विविधा प्रतीतैव, अष्टमे पल्योपमाष्टभागरूपा, नवमे सातिरेकपल्योपमरूपा, संवेधश्चैतदनुसारेण कार्यः 'एते सत्त गम'त्ति प्रथमास्त्रयः मध्यमत्रयस्थाने एकः पश्चिमास्तु त्रय एवेत्येवं सप्त । असङ्ख्यातवर्षायुष्कमनुष्याधिकारे–'ओगाहणा सातिरेगाइं नवधणुसयाइं'ति विमलवाहनकुलकरपूर्वकालीनमनुष्यापेक्षया, 'तिन्नि गाउयाइं'ति एतच्चैकान्तसुषमादिभाविमनुष्यापेक्षया, 'मज्झिमगमए'त्ति पूर्वोक्तनीतेस्त्रिभिरप्येक एवायमिति ॥ चतुर्विंशतितमशते त्रयोविंशतितमः ॥ २४–२३ ॥

अथ चतुर्विंशतितमोद्देशके किञ्चिल्लिख्यते—

सोहम्मदेवा णं भंते ! कओहिंतो उवव० किं नेरइएहिंतो उवव० ? भेदो जहा जोइसियउद्देसए, असंखेज्जवासाउयसन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिए णं भंते ! जे भविए सोहम्मगदेवेसु उवव० से णं भंते ! केवतिकाल० ?, गोयमा ! जह० पलिओवमट्ठितीएसु उक्कोसे० तिपलिओवमट्ठितीएसु उवव०, ते णं भंते ! अवसेसं ॥८४८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र चतुर्विंशतितमे शतके त्रयोविंशतितम: उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ चतुर्विंशतितमे शतके चतुर्विंशतितमं उद्देशक: आरभ्यते

प्रत सूत्रांक [७१५]

दीप अनुक्रम [८६०]

जहा जोइसिएसु उववज्जमाणस्स नवरं सम्मदिट्ठीवि मिच्छादि० णो सम्मामिच्छादिट्ठी णाणीवि अन्नाणीवि दो णाणा दो अन्नाणा नियमं ठिती जह० दो पलिओवमाइं उक्कोसेणं छप्पलिओवमाइं एवतियं १, सो चेव जहन्नकालट्ठितिएसु उववन्नो एस चेव वत्तव्वया नवरं कालादेसेणं जहन्नेणं दो पलिओवमा उक्कोसेणं चत्तारि पलिओवमाइं एवतियं २, सो चेव उक्कोसकालट्ठितिएसु उववन्नो जहन्नेणं तिपलिओवमं उक्कोसेणवि तिपलिओवमं एस चेव वत्तव्वया नवरं ठिती जहन्नेणं तिन्नि पलिओवमाइं उक्कोसेणवि तिन्नि पलिओवमाइं सेसं तहेव कालादे० जह० छप्पलिओवमाइं उक्कोसेणवि छप्पलिओवमाइंति एवतियं ३, सो चेव अप्पणा जहन्नकालट्ठितिओ जाओ जह० पलिओवमट्ठितिएसु उक्कोसे० पलिओवमट्ठितिएसु एस चेव वत्तव्वया नवरं ओगाहणा जह० धणुहपुहुत्तं उक्कोसेणं दो गाउयाइं, ठिती जहन्नेणं पलिओवमं उक्कोसेणवि पलिओवमं सेसं तहेव, कालादे० जह० दो पलिओवमाइं उक्कोसेणंपि दो पलिओवमाइं एवतियं ६, सो चेव अप्पणा उक्कोसकालट्ठितीओ जाओ आदिल्लगमगसरिसा तिन्नि गमगा णेयव्वा नवरं ठितिं कालादेसं च जाणेज्जा ९ ॥ जइ संखेज्जवासाउयसन्निपंचिंदिय०संखेज्जवासाउयस्स जहेव असुरकुमारेसु उववज्जमाणस्स तहेव नववि गमा, नवरं ठितिं संवेहं च जाणे०, जाहे य अप्पणा जहन्नकालट्ठितिओ भवति ताहे तिसुवि गमएसु सम्मदिट्ठीवि मिच्छादि० णो सम्मामिच्छादिट्ठी दो नाणा दो अन्नाणा नियमं सेसं तं चेव ॥ जइ मणुस्सेहिंतो उववज्जंति भेदो जहेव जोतिसिएसु उववज्जमाणस्स जाव असंखेज्जवासाउयसन्निमणुस्से णं भंते! जे भविए सोहम्मे कप्पे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [७१५]

दीप अनुक्रम [८६०]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥८४९॥

२४ शतके उद्देशः२४ वैमानिकोत्पादः सू ७१५

देवत्ताए उववज्जित्तए एवं जहेव असंखेज्जवासाउयस्स सन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणियस्स सोहम्मे कप्पे उववज्जमाणस्स तहेव सत्त गमगा नवरं आदिल्लएसु दोसु गमएसु ओगाहणा जहन्ने० गाउयं उक्कोसेणं तिन्नि गाउयाइं, ततियगमे जहन्ने० तिन्नि गाउयाइं उक्कोसेणवि तिन्नि गाउयाइं, चउत्थगमए जहन्नेणं गाउयं उक्कोसेणवि गाउयं, पच्छिमएसु गमएसु जह० तिन्नि गाउयाइं उक्को० तिन्नि गाउयाइं सेसं तहेव निरवसे० ९॥ जइ संखेज्जवासाउयसन्निमणुस्सेहिंतो एवं संखे० सन्निमणु० जहेव असुरकुमारेसु उववज्जमाणाणं तहेव णव गमगा भा० नवरं सोहम्मदेवट्ठितिं संवेहं च जाणे०, सेसं तं चेव ९॥ ईसाणदेवा णं भंते! कओहिंतो उवव० ?, ईसाणदेवाणं एस चेव सोहम्मगदेवसरिसा वत्तव्वया नवरं असंखेज्जवासाउयसन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणियस्स जेसु ठाणेसु सोहम्मे उववज्जमाणस्स पलिओवमठितीसु ठाणेसु इहं सातिरेगं पलिओवमं कायव्वं, चउत्थगमे ओगाहणा जहन्नेणं धणुहपुहुत्तं उक्कोसेणं सातिरेगाइं दो गाउयाइं सेसं तहेव ९। असंखेज्जवासाउयसन्निमणुस्सस्सवि तहेव ठिती जहा पंचिंदियतिरिक्खजोणियस्स असंखेज्जवासाउयस्स ओगाहणावि जेसु ठाणेसु गाउयं तेसु ठाणेसु इहं सातिरेगं गाउयं सेसं तहेव ९। संखेज्जवासाउयाणं तिरिक्खजोणियाणं मणुस्साण य जहेव सोहम्मेसु उववज्जमाणाणं तहेव निरवसेसं णववि गमगा नवरं ईसाणठितिं संवेहं च जाणेज्जा ९॥ सणंकुमारदेवा णं भंते! कओहिंतो उवव० उववाओ जहा सक्करप्पभापुढविनेरइयाणं जाव पज्जत्तसंखेज्जवासाउयसन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिए णं भंते! जे भविए सणंकुमारदेवेसु उवव० अवसेसा परिमाण- ॥८४९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत
सूत्रांक
[७१५]

दीप
अनुक्रम
[८६०]

दीया भवादेसपज्जवसाणा सच्चेव वत्तव्वया भाणियव्वा जहा सोहम्मे उववज्जमाणस्स नवरं सणंकुमारट्ठितिं संवेहं च जाणेज्जा, जाहे य अप्पणा जहन्नकालट्ठितीओ भवति ताहे तिसुवि गमएसु पंच लेस्साओ आदिल्लाओ कायव्वाओ सेसं तं चेव ९ ॥ जइ मणुस्सेहिंतो उवव० मणुस्साणं जहेव सक्करप्पभाए उववज्जमाणाणं तहेव णववि गमा भाणियव्वा नवरं सणंकुमारट्ठितिं संवेहं च जाणेज्जा ९ ॥ माहिंदगदेवा णं भंते ! कओहिंतो उवव० जहा सणंकुमारगदेवाणं वत्तव्वया तहा माहिंदगदे० भाणि० नवरं माहिंदगदेवाणं ठिती सातिरेगा जाणियव्वा सा चेव, एवं बंभलोगदेवाणवि वत्तव्वया नवरं बंभलोगट्ठितिं संवेहं च जाणेज्जा एवं जाव सहस्सारो, णवरं ठितिं संवेहं च जाणेज्जा, लंतगादीणं जहन्नकालट्ठितियस्स तिरिक्खजोणियस्स तिसुवि गमएसु छप्पि लेस्साओ कायव्वाओ, संघयणाइं बंभलोगलंतएसु पंच आदिल्लगाणि महासुक्कसहस्सारेसु चत्तारि, तिरिक्खजोणियाणवि मणुस्साणवि, सेसं तं चेव ९ ॥ आणयदेवा णं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति ? उववाओ जहा सहस्सारे देवाणं णवरं तिरिक्खजोणिया खोडेयव्वा जाव पज्जत्तसंखेज्जवासाउयसन्निमणुस्से णं भंते ! जे भविए आणयदेवेसु उववज्जित्तए मणुस्साण य वत्तव्वया जहेव सहस्सारेसु उववज्जमाणाणं णवरं तिन्नि संघयणाणि सेसं तहेव जाव अणुबंधो भवादेसेणं जहन्नेणं तिन्नि भवग्गहणाइं उक्कोसेणं सत्त भवग्गहणाइं, कालादेसेणं जहन्नेणं अट्ठारस सागरोवमाइं दोहिं वासपुहुत्तेहिं अब्भहियाइं उक्कोसेणं सत्तावन्नं सागरोवमाइं चउहिं पुव्वकोडीहिं अब्भहियाइं एवतियं०, एवं सेसावि अट्ठ गमगा भाणियव्वा नवरं ठितिं संवेहं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७१५]

दीप अनुक्रम [८६०]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥८५०॥

२४ शतके उद्देशः २४ वैमानिकोत्पादः सू ७१५

च जाणेज्जा, सेसं तं चेव ९। एवं जाव अच्चुयदेवा, नवरं ठितिं संवेहं च जाणेज्जा ९। चउसुवि संघयणा तिन्नि आणयादीसु। गेवेज्जगदेवा णं भंते! कओ उववज्जंति? एस चेव वत्तव्वया नवरं संघयणा दोवि, ठितिं संवेहं च जाणेज्जा। विजयवेजयंतजयंतअपराजितदेवा णं भंते! कतोहिंतो उववज्जंति?, एस चेव वत्तव्वया निरवसेसा जाव अणुबंधोत्ति, नवरं पढमं संघयणं, सेसं तहेव, भवादेसेणं जहन्नेणं तिन्नि भवग्गहणाइं उक्कोसेणं पंच भवग्गहणाइं, कालादेसेणं जहन्नेणं एक्कतीसं सागरोवमाइं दोहिं वासपुहुत्तेहिं अब्भहियाइं उक्कोसेणं छावट्ठिं सागरोवमाइं तिहिं पुव्वकोडीहिं अब्भहियाइं एवतियं, एवं सेसावि अट्ठ गमगा भाणियव्वा, नवरं ठितिं संवेहं च जाणेज्जा, मणूसे लद्धी णवसुवि गमएसु जहा गेवेज्जेसु उववज्जमाणस्स नवरं पढमसंघयणं। सव्वट्ठगसिद्धगदेवा णं भंते! कओहिंतो उवव०?, उववाओ जहेव विजयादीणं जाव से णं भंते! केवतिकालट्ठितिएसु उववज्जेज्जा?, गोयमा! जहन्नेणं तेत्तीसं सागरोवमट्ठिति० उक्कोसेणवि तेत्तीससागरोवमट्ठितीएसु उववज्जे, अवसेसा जहा विजयाइसु उववज्जंताणं नवरं भवादेसेणं तिन्नि भवग्गहणाइं कालादे० जहन्नेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं दोहिं वासपुहुत्तेहिं अब्भहियाइं उक्कोसेणवि तेत्तीसं सागरोवमाइं दोहिं पुव्वकोडीहिं अब्भहियाइं एवतियं ९। सो चेव अप्पणा जहन्नकालट्ठितीओ जाओ एस चेव वत्तव्वया नवरं ओगाहणाठितिओ रयणिपुहुत्तवासपुहुत्ताणि सेसं तहेव संवेहं च जाणेज्जा ९। सो चेव अप्पणा उक्कोसकालट्ठितीओ जाओ एस चेव वत्तव्वया नवरं ओगाहणा जह० पंच धणुसयाइं उक्को० पंचधणु सयाइं, ठिती जह०

॥८५०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७१५]

दीप अनुक्रम [८६०]

पुवकोडी उक्को० पुवकोडी, सेसं तहेव जाव भवादेसोत्ति, कालादे० जह० तेत्तीसं सागरोवमाइं दोहिं पुवकोडीहिं अब्भहियाइं उक्को० तेत्तीसं साग० दोहिवि पुवकोडीहिं अब्भहियाइं एवतियं कालं सेवेज्जा एवतियं कालं गतिरागतिं करेज्जा, एते तिन्नि गमगा सवट्ठसिद्धगदेवाणं। सेवं भंते! २ त्ति भगवं गोयमे जाव विहरइ ॥ (सूत्रं ७१५) ॥ २४–२४ ॥ समत्तं च चउवीसतिमं सयं ॥ २४ ॥

'जहन्नेणं पलिओवमट्ठिइएसु'त्ति सौधर्मे जघन्येनान्यस्यायुषोऽसत्त्वात्, 'उक्कोसेणं तिपलिओवमठिइएसु'त्ति यद्यपि सौधर्मे बहुतरमायुष्कमस्ति तथाऽप्युत्कर्षतस्त्रिपल्योपमायुष एव तिर्यञ्चो भवन्ति तदनतिरिक्तं च देवायुर्बध्नन्तीति, 'दो पलिओवमाइं'ति एकं तिर्यग्भवसत्कमपरं च देवभवसत्कं, 'छ पलिओवमाइं'ति त्रीणि पल्योपमानि तिर्यग्भवसत्कानि त्रीण्येव देवभवसत्कानीति, 'सो चेव अप्पणा जहन्नकालठिईओ जाओ'इत्यादिगमत्रयेऽप्येको गमः, भावना तु प्रदर्शितैव, 'जहन्नेणं धणुहपुहुत्तं'त्ति क्षुद्रकायचतुष्पदापेक्षं 'उक्कोसेणं दो गाउयाइं'ति यत्र क्षेत्रे काले वा गव्यूतमाना मनुष्या भवन्ति तत्सम्बन्धिनो हस्त्यादीनपेक्ष्योक्तमिति ॥ सङ्ख्यातायुःपञ्चेन्द्रियतिर्यगधिकारे—'जाहे य अप्पणा जहन्नकालट्ठिइओ भवइ'त्यादौ 'नो सम्मामिच्छादिट्ठी'त्ति मिश्रदृष्टिर्निषेध्यो जघन्यस्थितिकस्य तदसम्भवादजघन्यस्थितिकेषु दृष्टित्रयस्यापि भावादिति, तथा ज्ञानादिद्वारेऽपि द्वे ज्ञाने वा अज्ञाने वा स्यातां, जघन्यस्थितेरन्ययोरभावादिति ॥ अथ मनुष्याधिकारे—'नवरं आदिल्लएसु दोसु गमएसु'इत्यादि, आद्यगमयोर्हि सर्वत्र धनुष्पृथक्त्वं जघन्यावगाहना उत्कृष्टा तु गव्यूतषट्कमुक्ता इह तु 'जहन्नेणं गाउय'मित्यादि, तृतीयगमे तु जघन्यत उत्कर्षतश्च षड् गव्यूता-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७१५]

दीप अनुक्रम [८६०]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥८५१॥

२४ शतके उद्देशः २४ वैमानिकोत्पादः सू ७१५

न्युक्तानि इह तु त्रीणि, चतुर्थे गमे तु प्राग् जघन्यतो धनुष्पृथक्त्वमुत्कर्षतस्तु द्वे गव्यूते उक्ते इह तु जघन्यत उत्कर्षतश्च गव्यूतम्, एवमन्यदप्यूह्यम् ॥ ईशानकदेवाधिकारे—'सातिरेगं पलिओवमं कायव्वं'ति ईशाने सातिरेकपल्योपमस्य जघन्यस्थितिकत्वात्, तथा 'चउत्थगमए ओगाहणा जहन्नेणं धणुहपुहुत्तं'ति ये सातिरेकपल्योपमायुषस्तिर्यञ्चः सुषमांशोद्भवाः क्षुद्रतरकायास्तानपेक्ष्योक्तम्, 'उक्कोसेणं साइरेगाइं दो गाउयाइं'ति एतच्च यत्र काले सातिरेकगव्यूतमाना मनुष्या भवन्ति तत्कालभवान् हस्त्यादीनपेक्ष्योक्तं, तथा 'जेसु ठाणेसु गाउयं'ति सौधर्म्मदेवाधिकारे येषु स्थानेष्वसङ्ख्यातवर्षायुर्मनुष्याणां गव्यूतमुक्तं 'तेसु ठाणेसु इहं साइरेगं गाउयं'ति जघन्यतः सातिरेकपल्योपमस्थितिकत्वादीशानकदेवस्य प्राप्तव्यदेवस्थित्यनुसारेण चासङ्ख्यातवर्षायुर्मनुष्याणां स्थितिसद्भावात् तदनुसारेणैव च तेषामवगाहनाभावादिति ॥ सनत्कुमारदेवाधिकारे—'जाहे य अप्पणा जहन्ने'त्यादौ 'पंच लेस्साओ आदिल्लाओ कायव्वाओ'त्ति जघन्यस्थितिकस्तिर्यक् सनत्कुमारे समुत्पित्सुर्जघन्यस्थितिसामर्थ्यात्कृष्णादीनां चतसृणां लेश्यानामन्यतरस्यां परिणतो भूत्वा मरणकाले पद्मलेश्यामासाद्य म्रियते ततस्तत्रोत्पद्यते, यतोऽग्रेतनभवलेश्यापरिणामे सति जीवः परभवं गच्छतीत्यागमः, तदेवमस्य पञ्च लेश्या भवन्ति । 'लंतगाईणं जहण्णे'त्यादि, एतद्भावना चानन्तरोक्तन्यायेन कार्या, 'संघयणाइं बंभलोए लंतएसु पंच आइल्लगाणि'त्ति छेदवर्त्तिसंहननस्य चतुर्णामेव देवलोकानां गमने निबन्धनत्वात्, यदाह—"छेवट्ठेण उ गम्मइ चत्तारि उ जाव आइमा कप्पा। वड्ढेज्ज कप्पजुयलं संघयणे कीलियाईए ॥१॥" इति [सेवार्त्तेन तु गच्छति चतुर आद्यान् कल्पान् यावत् कीलिकादिषु संहननेषु कल्पयुग्मं वर्धयेत् ॥ १ ॥] इति ॥ "जहन्नेणं तिन्नि भवग्गहणाइं'ति आनतादिदेवो मनुष्येभ्य

॥८५१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७१५] दीप अनुक्रम [८६०]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

एवोत्पद्यते तेष्वेव च प्रत्यागच्छतीति जघन्यतो भवत्रयं भवतीति, एवं भवसप्तकमप्युत्कर्षतो भावनीयमिति, 'उक्कोसेणं सत्तावन्न'मित्यादि, आनतदेवानामुत्कर्षत एकोनविंशतिसागरोपमाण्यायुः, तस्य च भवत्रयभावेन सप्तपञ्चाशत्सागरोपमाणि मनुष्यभवचतुष्टयसम्बन्धिपूर्वकोटिचतुष्काभ्यधिकानि भवन्तीति ॥ चतुर्विंशतितमशते चतुर्विंशतितमः ॥ २४ ॥
॥ समाप्तं च विवरणतश्चतुर्विंशतितमं शतम् ॥ २४ ॥

चरमजिनवरेन्द्रप्रोदितार्थे परार्थे, निपुणगणधरेण स्थापितानिन्द्यसूत्रे ।
विवृतिमिह शते नो कर्तुमिष्टे बुधोऽपि, प्रचुरगमगभीरे किं पुनर्मादृशोऽज्ञः ? ॥ १ ॥

व्याख्यातं चतुर्विंशतितमशतम्, अथ पञ्चविंशतितममारभ्यते, तस्य चैवमभिसम्बन्धः—प्राक्तनशते जीवा उत्पादादिद्वारैश्चिन्तिता इह तु तेषामेव लेश्यादयो भावाश्चिन्त्यन्ते इत्येवंसम्बन्धस्यास्योद्देशकसङ्ग्रहगाथेयम्—

लेसा य १ दव २ संठाण ३ जुम्म ४ पज्जव ५ नियंठ ६ समणा य ७। ओहे ८ भविया ९ भविए १० सम्मा ११ मिच्छे य १२ उद्देसा ॥ १ ॥ तेणं कालेणं २ रायगिहे जाव एवं वयासी—कति णं भंते ! लेस्साओ प० ?, गोयमा ! छल्लेसाओ प० तं०—कण्हलेसा जहा पढमसए बितिए उद्देसए तहेव लेस्साविभागो अप्पाबहुगं च जाव चउविहाणं देवाणं मीसगं अप्पाबहुगंति ॥ (सूत्रं ७१६) ॥

'लेसे'त्यादि, तत्र 'लेसा य'त्ति प्रथमोद्देशके लेश्यादयोऽर्था वाच्या इति लेश्योद्देशक एवायमुच्यते इत्येवं सर्वत्र १

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र चतुर्विंशतितमे शतके चतुर्विंशतितम: उद्देशक: परिसमाप्त:
अथ पञ्चविंशतितमे शतके प्रथम-उद्देशक: आरभ्यते

प्रत सूत्रांक [७१६] + गाथा

दीप अनुक्रम [८६१-८६२]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥८५२॥

२५ शतके उद्देशः १ लेश्याविभागः सू ७१६

'दव'त्ति द्वितीये द्रव्याणि वाच्यानि २ 'संठाण'त्ति तृतीये संस्थानादयोऽर्थाः ३ 'जुम्म'त्ति चतुर्थे कृतयुग्मादयोऽर्थाः ४ 'पज्जव'त्ति पञ्चमे पर्यवाः ५ 'नियंठ'त्ति षष्ठे पुलाकादिका निर्ग्रन्थाः ६ 'समणा य'त्ति सप्तमे सामायिकादिसंयतादयोऽर्थाः ७ 'ओहे'त्ति अष्टमे नारकादयो यथोत्पद्यन्ते तथा वाच्यं, कथम् ?, ओघे–सामान्ये वर्त्तमाना भव्याभव्यादिविशेषणैरविशेषिता इत्यर्थः ८ 'भविए'त्ति नवमे भव्यविशेषणा नारकादयो यथोत्पद्यन्ते तथा वाच्यम् ९ 'अभविए'त्ति दशमेऽभव्यत्वे वर्त्तमाना अभव्यविशेषणा इत्यर्थः १० 'सम्म'त्ति एकादशे सम्यग्दृष्टिविशेषणाः ११ 'मिच्छे य'त्ति द्वादशे मिथ्यात्वे वर्त्तमाना मिथ्यादृष्टिविशेषणा इत्यर्थः १२ 'उद्देस'त्ति एवमिह शते द्वादशोद्देशका भवन्तीति । तत्र प्रथमोद्देशको व्याख्यायते, तस्य चेदमादिसूत्रम्—'तेणं कालेण'मित्यादि, 'जहा पढमसए बितिए उद्देसए तहेव लेसाविभागो'त्ति स च–'नेरइयाणं भंते ! कति लेस्साओ पन्नत्ताओ ?' इत्यादि, 'अप्पाबहुयं च'त्ति तच्चैवम्–'एएसि णं भंते ! जीवाणं सलेस्साणं कण्हलेस्साण'मित्यादि, अथ कियद्दूरं तद्वाच्यमित्याह–'जाव चउव्विहाणं देवाण'मित्यादि, तच्चैवम्–'एएसि णं भंते ! भवणवासीणं वाणमंतराणं जोइसियाणं वेमाणियाणं देवाण य देवीण य कण्हलेसाणं जाव सुक्कलेसाण य कयरे२हिंतो ?' इत्यादि । अथ प्रथमशते उक्तमप्यासां स्वरूपं कस्मात्पुनरप्युच्यते ?, उच्यते, प्रस्तावान्तरायातत्वात्, तथाहि–इह संसारसमापन्नजीवानां योगाल्पबहुत्वं वक्तव्यमिति तत्प्रस्तावाल्लेश्याल्पबहुत्वप्रकरणमुक्तं, तत एव लेश्याऽल्पबहुत्वप्रकरणानन्तरं संसारसमापन्नजीवांस्तद्योगाल्पबहुत्वं च प्रज्ञापयन्नाह—

कतिविहा णं भंते ! संसारसमावन्नगा जीवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! चोद्दसविहा संसारसमावन्नगा जीवा

॥८५२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७१७]

दीप अनुक्रम [८६३]

य, तं०– सुहुमअप्पज्जत्तगा १ सुहुमपज्जत्तगा २ बादरअपज्जत्तगा ३ बादरपज्जत्तगा ४ बेइंदिया अप्पज्जत्ता ५ बेइंदिया पज्जत्ता ६ एवं तेइंदिया ८ एवं चउरिंदिया १० असन्निपंचिंदिया अप्पज्जत्तगा ११ असन्निपंचिंदिया पज्जत्तगा १२ सन्निपंचिंदिया अपज्जत्तगा १३ सन्निपंचिंदिया पज्जत्तगा १४। एतेसि णं भंते! चोदसविहाणं संसारसमावन्नगाणं जीवाणं जहन्नुक्कोसगस्स जोगस्स कयरे २ जाव विसेसाहिया ?, गोयमा! सव्वत्थोवे सुहुमस्स अपज्जत्तगस्स जहन्नए जोए १ बादरस्स अपज्जत्तगस्स जहन्नए जोए असंखेज्जगुणे २ बेंदियस्स अपज्जत्तगस्स जहन्नए जोए असंखेज्जगुणे ३ एवं तेइंदियस्स ४ एवं चउरिंदियस्स ५ असन्निस्स पंचिंदियस्स अपज्जत्तगस्स जहन्नए जोए असंखेज्जगुणे ६ सन्निस्स पंचिंदियस्स अपज्जत्तगस्स जहन्नए जोए असंखेज्जगुणे ७ सुहुमस्स पज्जत्तगस्स जहन्नए जोए असंखेज्जगुणे ८ बादरस्स पज्जत्तगस्स जहन्नए जोए असंखेज्जगुणे ९ सुहुमस्स अपज्जत्तगस्स उक्कोसए जोए असंखेज्जगुणे १० बादरस्स अपज्जत्तगस्स उक्कोसए जोए असंखेज्जगुणे ११ सुहुमस्स पज्जत्तगस्स उक्कोसए जोए असंखेज्जगुणे १२ बादरस्स पज्जत्तगस्स उक्कोसए जोए असंखेज्जगुणे १३ बेंदियस्स पज्जत्तगस्स जहन्नए जोए असंखेज्जगुणे १४ एवं तेंदिय एवं जाव सन्निपंचिंदियस्स पज्जत्तगस्स जहन्नए जोए असंखेज्जगुणे १८ बेंदियस्स अपज्जत्तगस्स उक्कोसए जोए असंखेज्जगुणे १९ एवं तेंदियस्सवि २० एवं चउरिंदियस्सवि २१ एवं जाव सन्निपंचिंदियस्स अपज्जत्तगस्स उक्कोसए जोए असंखे० २३ बेंदियस्स पज्जत्तगस्स उक्कोसए जोए असंखे० २४ एवं तेइंदियस्सवि पज्जत्तगस्स उक्कोसए जोए असंखेज्जगुणे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चतुर्दशविधः जीवाः, तेषाम् अल्प-बहुत्व

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [७१७]

दीप अनुक्रम [८६३]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥८५३॥

२५ शतके उद्देशः १ योगाल्प-बहुत्वं सू ७१७

२५ चउरिंदियस्स पज्जत्तगस्स उक्कोसए असंखे० २६ असन्निपंचिंदियपज्जत्त० उक्कोसए जोए असंखेज्जगुणे २७ एवं सन्निपंचिंदियस्स पज्जत्तगस्स उक्कोसए जोए असंखेज्जगुणे २८ (सूत्रं ७१७) ॥

'कइविहे'त्यादि, 'सुहुम'त्ति सूक्ष्मनामकर्मोदयात् 'अपज्जत्तग'त्ति अपर्याप्तका अपर्याप्तकनामकर्मोदयात्, एवमितरे तद्विपरीतत्वात्, 'बायर'त्ति बादरनामकर्मोदयात्, एते च चत्वारोऽपि जीवभेदाः पृथिव्याद्येकेन्द्रियाणां, 'जघन्नुक्कोसगस्स जोगस्स'त्ति जघन्यो–निकृष्टः काञ्चिद्व्यक्तिमाश्रित्य स एव च व्यक्त्यन्तरापेक्षयोत्कर्षः–उत्कृष्टो जघन्योत्कर्षः तस्य योगस्य–वीर्यान्तरायक्षयोपशमादिसमुत्थकायादिपरिस्पन्दस्य एतस्य च योगस्य चतुर्दशजीवस्थानसम्बन्धाज्जघन्योत्कर्षभेदाच्चाष्टाविंशतिविधस्याल्पबहुत्वादि जीवस्थानकविशेषाद्भवति, तत्र 'सव्वत्थोवे' इत्यादि सूक्ष्मस्य पृथिव्यादेः सूक्ष्मत्वात् शरीरस्य तस्याप्यपर्याप्तकत्वेनासम्पूर्णत्वात् तत्रापि जघन्यस्य विवक्षितत्वात् सर्वेभ्यो वक्ष्यमाणेभ्यो योगेभ्यः सकाशात्स्तोकः–सर्वस्तोको भवति जघन्यो योगः, स पुनर्वैग्रहिककार्म्मणऔदारिकपुद्गलग्रहणप्रथमसमयवर्त्ती, तदनन्तरं च समयवृद्ध्याऽजघन्योत्कृष्टो यावत्सर्वोत्कृष्टो न भवति, 'बायरस्से'त्यादि बादरजीवस्य पृथिव्यादेरपर्याप्तकजीवस्य जघन्यो योगः पूर्वोक्तापेक्षयाऽसङ्ख्यातगुणः–असङ्ख्यातगुणवृद्धो बादरत्वादेवेति, एवमुत्तरत्राप्यसङ्ख्यातगुणत्वं दृश्यम्, इह च यद्यपि पर्याप्तकत्रीन्द्रियोत्कृष्टकायापेक्षया पर्याप्तकानां द्वीन्द्रियाणां सञ्ज्ञिनामसञ्ज्ञिनां च पञ्चेन्द्रियाणामुत्कृष्टः कायः सङ्ख्यातगुणो भवति सङ्ख्यातयोजनप्रमाणत्वात् तथाऽपीह योगस्य परिस्पन्दस्य विवक्षितत्वात् तस्य च क्षयो-

॥८५३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चतुर्दशविधः जीवाः, तेषाम् अल्प-बहुत्वम्

प्रत सूत्रांक [७१७]

दीप अनुक्रम [८६३]

पशमविशेषसामर्थ्याद् यथोक्तमसङ्ख्यातगुणत्वं न विरुध्यते, न ह्यल्पकायस्याल्प एव स्पन्दो भवति महाकायस्य वा महानेव, व्यत्ययेनापि तस्य दर्शनादिति, इह चेयं स्थापना—

सुहुम	सुहुम	बादर	बादर	बेइंद्री	बेरिंद्री	तेरिंद्री	तेरिंद्री	चउरिंद्री	चउरिंद्री	असन्नी	असन्नी	सन्नी	सन्नीप·
अपज्जत्त	पज्जत्त	अपज्जत्त	पज्जत्त	अपज्जत्त	पज्जत्त	अप.	पज्जत्त	अपज्जत्त	पज्जत्त	अपज्जत्त	पज्जत्त	अपज्जत्त	र्या.
जघन्य	जघन्य	जघन्य	जघन्य	जघन्य	जघन्य	जघन्य	जघन्य	जघन्य	जघन्य	जघन्य	जघन्य	जघन्य	जघन्य
१	८	असं. २	९	३	१४	४	१५	५	१६	६	१७	७	१८
उत्कृष्ट	उत्कृष्ट	उत्कृष्ट	उत्कृष्ट	उत्कृष्ट	उत्कृष्ट	उत्कृष्ट	उत्कृष्ट	उत्कृष्ट	उत्कृष्ट	उत्कृष्ट	उत्कृष्ट	उत्कृष्ट	उत्कृष्ट
१०	१२	११	१३	१९	२४	२०	२५	२१	२६	२२	२७	२३	२८

योगाधिकारादेवेदमाह—

दो भंते ! नेरतिया पढमसमयोववन्नगा किं समजोगी किं विसमजोगी ?, गोयमा ! सिय समजोगी सिय विसमजोगी, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचति सिय समजोगी सिय विसमजोगी ?, गोयमा ! आहारयाओ वा से अणाहारए अणाहारयाओ वा से आहारए सिय हीणे सिय तुल्ले सिय अब्भहिए जइ हीणे असंखेज्जइभागहीणे वा संखेज्जइभागहीणे वा संखेज्जगुणहीणे वा असंखेज्जगुणहीणे वा अह अब्भहिए असंखेज्जइभागमब्भहिए वा संखेज्जइभागमब्भहिए वा संखेज्जगुणमब्भहिए वा असंखेज्जगुणमब्भहिए वा से तेणट्ठेणं जाव सिय विसमजोगी एवं जाव वेमाणियाणं (सूत्रं ७१८) ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चतुर्दशविधः जीवाः, तेषाम् अल्प-बहुत्व

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [७१८]

दीप अनुक्रम [८६४]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥८५४॥

२५ शतके उद्देशः १ समविषमयोगिता पञ्चदशयोगजघन्यादि सू ७१८-७१९

'दो भंते' इत्यादि, प्रथमः समय उपपन्नयोर्ययोस्तौ प्रथमसमयोपपन्नौ, उपपत्तिश्चेह नरकक्षेत्रप्राप्तिः सा च द्वयोरपि विग्रहेण ऋजुगत्या वा एकस्य वा विग्रहेणान्यस्य ऋजुगत्येति, 'समजोगि'त्ति समो योगो विद्यते ययोस्तौ समयोगिनौ एवं विषमयोगिनौ, 'आहारयाओ वा' इत्यादि, आहारकाद्वा–आहारकं नारकमाश्रित्य 'से'त्ति स नारकोऽनाहारकः अनाहारकाद्वा–अनाहारकं नारकमाश्रित्याहारकः, किम् ? इत्याह–'सिय हीणे'त्ति यो नारको विग्रहाभावेनागत्याहारक एवोत्पन्नोऽसौ निरन्तराहारकत्वादुपचित एव, तदपेक्षया च यो विग्रहगत्याऽनाहारको भूत्वोत्पन्नोऽसौ हीनः पूर्वमनाहारकत्वेनानुपचितत्वाद्धीनयोगत्वेन च विषमयोगी स्यादिति भावः, 'सिय तुल्ले'त्ति यौ समानसमयया विग्रहगत्याऽनाहारकौ भूत्वोत्पन्नौ ऋजुगत्या वाऽऽगत्योत्पन्नौ तयोरेक इतरापेक्षया तुल्यः समयोगी भवतीति भावः, 'अब्भहिए'त्ति यो विग्रहाभावेनाहारक एवागतोऽसौ विग्रहगत्यनाहारकापेक्षयोपचिततरत्वेनाभ्यधिको विषमयोगीति भावः, इह च 'आहारयाओ वा से अणाहारए' इत्यनेन हीनतायाः 'अणाहारयाओ वा आहारए' इत्यनेन चाभ्यधिकताया निबन्धनमुक्तं, तुल्यतानिबन्धनं तु समानधर्मतालक्षणं प्रसिद्धत्वान्नोक्तमिति ॥ योगाधिकारादेवेदमपरमाह—

कतिविहे णं भंते ! जोए प० ?, गोयमा ! पन्नरसविहे जोए पं०, तं०–सच्चमणजोए मोसमणजोए सच्चामोसमणजोए असच्चामोसमणजोए सच्चवइजोए मोसवइजोए सच्चामोसवइजोए असच्चामोसवइजोए ओरालियसरीरकायजोए ओरालियमीसासरीरकायजोए वेउव्वियसरीरकायजोए वेउव्वियमीसासरीरकायजोगे आहारगसरीरकायजोगे आहारगमीसास० का० कम्मास०का० १५ ॥ एयस्स णं भंते ! पन्नरसविहस्स जहन्नुक्को- ॥८५४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

योगः, तस्य भेदाः एवं अल्प-बहुत्वं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [७१९]

दीप अनुक्रम [८६५]

सगस्स कयरे २ जाव विसेसा० ?, गोयमा ! सव्वत्थोवे कम्मगसरीरजहन्नजोए १ ओरालियमीसगस्स जहन्नजोए असंखे० २ वेउवियमीसगस्स जहन्नए असं० ३ ओरालियसरीरस्स जहन्नए जोए असं० ४ वेउब्वियसरीरस्स जहन्नए जोए असं० ५ कम्मगसरीरस्स उक्कोसए जोए असंखे० ६ आहारगमीसगस्स जहन्नए जोए असं० ७ तस्स चेव उक्कोसए जोए असं० ८ ओरालियमीसगस्स ९ वेउवियमीसगस्स १०, एएसि णं उक्कोसए जोए दोण्हवि तुल्ले असंखे०, असच्चामोसमणजोगस्स जहन्नए जोए असं० ११ आहारसरीरस्स जहन्नए जोए असंखे० १२ तिविहस्स मणजोगस्स १५ चउव्विहस्स वयजोगस्स १९ एएसि णं सत्तण्हवि तुल्ले जहन्नए जोए असं०, आहारगसरीरस्स उक्कोसए जोए असं० २० ओरालियसरीरस्स वेउवियस्स चउव्विहस्स य मणजोगस्स चउव्विहस्स य वइजोगस्स एएसि णं दसण्हवि तुल्ले उक्कोसए जोए असंखेज्जगुणे ३० सेवं भंते ! २ त्ति (सूत्रं ७१९) ॥ पणवीसइमे सए पढमो उद्देसो २५-१ ॥

'कइविहे ण' मित्यादि, व्याख्या चास्य प्राग्वत् ॥ योगस्यैवाल्पबहुत्वं प्रकारान्तरेणाह—'एयस्स ण' मित्यादि, इहापि योगः परिस्पन्द एव, इह चेयं स्थापना—

१	२	३	४	१	२	३	४	१	२	३	४ मिश्र	५	६	७
सत्यमनो	असत्यमन	मिश्रमन	असत्यामृ.	सत्यवाक्	असत्यवाक्	मिश्रवाक्	असत्यामृ.	औदारिक	औदारिकमिश्र	वैक्रिय	वैक्रिय	आहारक	आहारकमिश्र	कार्मण
जघन्य १२	जघन्य १२	जघन्य १२	जघन्य १०	जघन्य १२	जघन्य १२	जघन्य १२	जघन्य १२	जघन्य ४	जघन्य २	जघन्य ५	जघन्य ३	जघन्य ११	जघन्य ७	जघन्य १
उत्कृष्ट १४	उत्कृष्ट १४	उत्कृष्ट १४	उत्कृष्ट १४	उत्कृष्ट १४	उत्कृष्ट १४	उत्कृष्ट १४	उत्कृष्ट १४	उत्कृष्ट १४	उत्कृष्ट ९	उत्कृष्ट १४	उत्कृष्ट ९	उत्कृष्ट १३	उत्कृष्ट ८	उत्कृष्ट ६

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

योग:, तस्य भेदा: एवं अल्प-बहुत्वं

प्रत सूत्रांक [७२०]

दीप अनुक्रम [८६६]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥८५५॥

२५ शतके उद्देशः २ जीवानन्त्यं सू ७२०

॥ पञ्चविंशतितमशते प्रथमः ॥ २५।१ ॥

प्रथमोद्देशके जीवद्रव्याणां लेश्यादीनां परिमाणमुक्तं, द्वितीये तु द्रव्यप्रकाराणां तदुच्यते इत्येवंसम्बद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

कतिविहा णं भंते ! दव्वा पन्नत्ता ?, गोयमा ! दुविहा दव्वा पं० तं०–जीवदव्वा य अजीवदव्वा य, अजीवदव्वा णं भंते ! कतिविहा प० ?, गोयमा ! दुविहा प०, तंजहा–रूविअजीवदव्वा य अरूविअजीवदव्वा य एवं एएणं अभिलावेणं जहा अजीवपज्जवा जाव से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ ते णं नो संखेज्जा नो असंखेज्जा अणंता। जीवदव्वा णं भंते ! किं संखेज्जा असंखेज्जा अणंता ?, गोयमा ! नो संखेज्जा नो असंखेज्जा अणंता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ जीवदव्वा णं नो संखेज्जा नो असंखेज्जा अणंता ?, गोयमा ! असंखेज्जा नेरइया जाव असंखेज्जा वाउकाइया वणस्सइकाइया अणंता असंखिज्जा बेंदिया एवं जाव वेमाणिया अणंता सिद्धा से तेणट्ठेणं जाव अणंता (सूत्रं ७२०) ॥

'कइविहा ण' मित्यादि, 'जहा अजीवपज्जव'त्ति यथा प्रज्ञापनाया विशेषाभिधाने पञ्चमे पदे जीवपर्यवाः पठितास्तथेहाजीवद्रव्यसूत्राण्यध्येयानि, तानि चैवम्–'अरूविअजीवदव्वा णं भंते ! कतिविहा पन्नत्ता ?, गोयमा ! दसविहा प०, तं०–धम्मत्थिकाए' इत्यादि, तथा 'रूविअजीवदव्वा णं भंते ! कतिविहा पन्नत्ता ?, गोयमा ! ॥८५५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र पञ्चविंशतितमे शतके प्रथम उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ पञ्चविंशतितमे शतके द्वितीय-उद्देशक: आरभ्यते

जीव-अजीव द्रव्यस्य भेदा: एवं तेषां संख्या-वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [७२०]

दीप अनुक्रम [८६६]

दसविहा प०, तं०-खंधा इत्यादि, तथा 'ते णं भंते ! किं संखेज्ञा असंखेज्ञा अणंता ?, गोयमा ! नो संखेज्ञा नो असंखेज्ञा अणंता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ?, गोयमा ! अणंता परमाणू अणंता दुपएसिया खंधा अणंता तिपएसिया खंधा जाव अणंता अणंतपएसिया खंध'त्ति ॥ द्रव्याधिकारादेवेदमाह---

जीवदव्वाणं भंते ! अजीवदव्वा परिभोगत्ताए हव्वमागच्छंति अजीवदव्वाणं जीवदव्वा परिभोगत्ताए हव्वमागच्छंति ?, गोयमा ! जीवदव्वाणं अजीवदव्वा परिभोगत्ताए हव्वमागच्छंति नो अजीवदव्वाणं जीवदव्वा परिभोगत्ताए हव्वमागच्छंति, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ जाव हव्वमागच्छंति ?, गोयमा ! जीवदव्वाणं अजीवदव्वे परियादियंति अजीव० २ ओरालियं वेउव्वियं आहारगं तेयगं कम्मगं सोइंदियं जाव फासिंदियं मणजोगं वइजोगं कायजोगं आणापाणत्तं च निव्वत्तियंति से तेणट्ठेणं जाव हव्वमागच्छंति, नेरतिया णं भंते ! अजीवदव्वा परिभोगत्ताए हव्वमागच्छंति अजीवदव्वाणं नेरतिया परिभोगत्ताए० ?, गोयमा ! नेरतियाणं अजीवदव्वा जाव हव्वमागच्छंति नो अजीवदव्वाणं नेरतिया हव्वमागच्छंति, से केणट्ठेणं ?, गोयमा ! नेरतिया अजीवदव्वे परियादियंति अ० २ वेउव्वियतेयगकम्मगसोइंदियजाव फासिंदियं आणापाणुत्तं च निव्वत्तियंति, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ जाव वेमाणिया नवरं सरीरइंदियजोगा भाणियव्वा जस्स जे अत्थि (सूत्रं ७२१) ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [७२२]

दीप अनुक्रम [८६८]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥८५६॥

'जीवदव्वाणं भंते ! अजीवदव्वे' त्यादि, इह जीवद्रव्याणि परिभोजकानि सचेतनत्वेन ग्राहकत्वात् इतराणि तु परिभोग्यान्यचेतनतया ग्राह्यत्वादिति ॥ द्रव्याधिकारादेवेदमाह—

से नूणं भंते ! असंखेज्जे लोए अणंताइं दव्वाइं आगासे भइयव्वाइं ?, हंता गोयमा ! असंखेज्जे लोए जाव भवियव्वाइं ॥ लोगस्स णं भंते ! एगंमि आगासपएसे कतिदिसिं पोग्गला चिज्जंति ?, गोयमा ! निव्वाघाएणं छद्दिसिं वाघायं पडुच्च सिय तिदिसिं सिय चउदिसिं सिय पंचदिसिं, लोगस्स णं भंते ! एगंमि आगासपएसे कतिदिसिं पोग्गला छिज्जंति एवं चेव, एवं उवचिज्जंति एवं अवचिज्जंति (सूत्रं ७२२) ॥

'से नूण' मित्यादि, 'असंखेज्ज'त्ति असङ्ख्यातप्रदेशात्मके इत्यर्थः 'अणंताइं दव्वाइं'ति जीवपरमाण्वादीनि 'आगासे भइयव्वाइं'ति काकाऽस्य पाठः सप्तम्याश्च षष्ठ्यर्थत्वादाकाशस्य 'भक्तव्यानि' भर्त्तव्यानि धारणीयानीत्यर्थः, पृच्छतोऽयमभिप्रायः–कथमसङ्ख्यातप्रदेशात्मके लोकाकाशेऽनन्तानां द्रव्याणामवस्थानं ?, 'हंता' इत्यादिना तत्र तेषामनन्तानामप्यवस्थानमावेदितम्, आवेदयतश्चायमभिप्रायः–यथा प्रतिनियतेऽपवरकाकाशे प्रदीपप्रभापुद्गलपरिपूर्णेऽप्यरापरप्रदीपप्रभापुद्गला अवतिष्ठन्ते तथाविधपुद्गलपरिणामसामर्थ्यात् एवमसङ्ख्यातेऽपि लोके तेष्वेव २ प्रदेशेषु द्रव्याणां तथाविधपरिणामवशेनावस्थानादनन्तानामपि तेषामवस्थानमविरुद्धमिति ॥ असङ्ख्यातलोकेऽनन्तद्रव्याणामवस्थानमुक्तं, तच्चैकैकस्मिन् प्रदेशे तेषां चयापचयादिमद्भवतीत्यत आह—'लोगस्से'त्यादि ॥ 'कतिदिसिं पोग्गला चिज्जंति'त्ति कतिभ्यो दिग्भ्य आगत्यैकत्राकाशप्रदेशे 'चीयन्ते' लीयन्ते 'छिज्जंति'त्ति व्यतिरिक्ता भवन्ति 'उवचिज्जंति'

२५ शतके उद्देशः २ अजीवभोग्यताऽनन्तपुद्गलावगाहः सू ७२१-७२२

॥८५६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७२२]

दीप अनुक्रम [८६८]

त्ति स्कन्धरूपाः पुद्गलाः पुद्गलान्तरसम्पर्कादुपचिता भवन्ति 'अवचिज्जंति'त्ति स्कन्धरूपा एव प्रदेशविचटनेनापचीयन्ते । द्रव्याधिकारादेवेदमाह–

जीवे णं भंते ! जाइं दवाइं ओरालियसरीरत्ताए गेण्हइ ताइं किं ठियाइं गेण्हइ अठियाइं गेण्हइ ?, गोयमा ! ठियाइंपि गेण्हइ अठियाइंपि गेण्हइ, ताइं भंते ! किं दवओ गेण्हइ खेत्तओ गेण्हइ कालओ गेण्हइ भावओ गेण्हइ ?, गोयमा ! दवओवि गेण्हइ खेत्तओवि गेण्हइ कालओवि गेण्हइ भावओवि गेण्हइ ताइं दवओ अणंतपएसियाइं दवाइं खेत्तओ असंखेज्जपएसोगाढाइं एवं जहा पन्नवणाए पढमे आहारुद्देसए जाव निवाघाएणं छद्दिसिं वाघायं पडुच्च सिय तिदिसिं सिय चउदिसिं सिय पंचदिसिं ॥ जीवे णं भंते ! जाइं दवाइं वेउवियसरीरत्ताए गेण्हइ ताइं किं ठियाइं गे० अठियाइं गे० ?, एवं चेव नवरं नियमं छद्दिसिं एवं आहारगसरीरत्ताएवि ॥ जीवे णं भंते ! जाइं दवाइं तेयगसरीरत्ताए गिण्हइ पुच्छा, गोयमा ! ठियाइं गेण्हइ नो अठियाइं गेण्हइ सेसं जहा ओरालियसरीरस्स कम्मगसरीरे एवं चेव एवं जाव भावओवि गिण्हइ, जाइं दवाइं दवओ गे० ताइं किं एगपएसियाइं गेण्हइ दुपएसियाइं गेण्हइ ? एवं जहा भासापदे जाव अणुपुविं गे० नो अणाणुपुविं गेण्हइ, ताइं भंते ! कतिदिसिं गेण्हइ ?, गोयमा ! निवाघाएणं जहा ओरालियस्स ॥ जीवे णं भंते ! जाइं दवाइं सोइंदियत्ताए गे० जहा वेउवियसरीरं एवं जाव जिब्भिदियत्ताए फासिंदियत्ताए जहा ओरालियसरीरं मणजोगत्ताए जहा कम्मगसरीरं नवरं नियमं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [७२३]

दीप अनुक्रम [८६९]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥८५७॥

छद्दिसिं एवं वइजोगत्ताएवि कायजोगत्ताएवि जहा ओरालियसरीरस्स । जीवे णं भंते ! जाइं दवाइं आणापाणत्ताए गे० जहेव ओरालियसरीरत्ताए जाव सिय पंचदिसिं । सेवं भंते २ त्ति । केइ चउवीसदंडएणं एयाणि पदाणि भन्नंति जस्स जं अत्थि (सूत्रं ७२३) ॥ २५–२ ॥

‘जीवे ण’मित्यादि, ‘ठियाइं’ति स्थितानि–किं जीवप्रदेशावगाढक्षेत्रस्याभ्यन्तरवर्तीनि अस्थितानि च–तदनन्तरवर्तीनि, तानि पुनरौदारिकशरीरपरिणामविशेषादाकृष्य गृह्णाति, अन्ये त्वाहुः–स्थितानि तानि यानि नैजन्ते तद्विपरीतानि त्वस्थितानि, ‘किं दवओ गेण्हंति’ किं द्रव्यमाश्रित्य गृह्णाति ? द्रव्यतः किंस्वरूपाणि गृह्णातीत्यर्थः, एवं क्षेत्रतः–क्षेत्रमाश्रित्य कतिप्रदेशावगाढानीत्यर्थः ॥ वैक्रियशरीराधिकारे–‘नियमं छद्दिसिं’ति यदुक्तं तत्रायमभिप्रायः–वैक्रियशरीरी पञ्चेन्द्रिय एव प्रायो भवति स च त्रसनाड्या मध्ये एव तत्र च षण्णामपि दिशामनावृतत्वमलोकेन विवक्षितलोकदेशस्येत्यत उच्यते–‘नियमं छद्दिसिं’ति, यच्च वायुकायिकानां त्रसनाड्या बहिरपि वैक्रियशरीरं भवति तदिह न विवक्षितं अप्रधानत्वात्तस्य, तथाविधलोकान्तनिष्कुटे वा वैक्रियशरीरी वायुर्न संभवतीति ॥ तैजससूत्रे—‘ठियाइं गेण्हइ’त्ति जीवावगाहक्षेत्राभ्यन्तरीभूतान्येव गृह्णाति ‘नो अठियाइं गिण्हइ’त्ति न तदनन्तरवर्तीनि गृह्णाति, तस्याकर्षपरिणामाभावात्, अथवा स्थितानि–स्थिराणि गृह्णाति नो अस्थितानि–अस्थिराणि तथाविधस्वभावत्वात् ‘जहा भासापदे’त्ति यथा प्रज्ञापनाया एकादशे पदे तथा वाच्यं, तच्च ‘तिपएसियाइं गिण्हाति जाव अणंतपएसियाइं गिण्हइ’ इत्यादि, श्रोत्रेन्द्रियसूत्रे–‘जहा वेउवियसरीरं’ति यथा वैक्रियशरीरद्रव्यग्रहणं स्थितास्थितद्रव्यविषयं षड्दिक्कं च एवमिदमपि,

२५ शतके उद्देशः २ द्रव्यग्रहे स्थितादि सू ७२३

॥८५८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७२३]

दीप अनुक्रम [८६९]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

श्रोत्रेन्द्रियद्रव्यग्रहणं हि नाडीमध्य एव तत्र च 'सिय तिदिसि'मित्यादि नास्ति व्याघाताभावादिति। 'फासिंदियत्ताए जहा ओरालियसरीरं'ति, अयमर्थः–स्पर्शनेन्द्रियतया तथा द्रव्याणि गृह्णाति यथौदारिकशरीरं स्थितास्थितानि षड्दिगागतप्रभृतीनि चेति भावः,'मणजोगत्ताए जहा कम्मगसरीरं नवरं नियमं छद्दिसिं'ति मनोयोगतया तथा द्रव्याणि गृह्णाति यथा कार्म्मणं, स्थितान्येव गृह्णातीति भावः, केवलं तत्र व्याघातेनेत्याद्युक्तं इह तु नियमात् षड्दिशीत्येवं वाच्यं, नाडीमध्य एव मनोद्रव्यग्रहणभावात्, अत्रसानां हि तन्नास्तीति, 'एवं वइजोगत्ताएवि'त्ति मनोद्रव्यवद्वाग्द्रव्याणि गृह्णातीत्यर्थः, 'कायजोगत्ताए जहा ओरालियसरीरस्स'त्ति काययोगद्रव्याणि स्थितास्थितानि षड्दिगागतप्रभृतीनि चेत्यर्थः। 'केइ' इत्यादि तत्र पञ्च शरीराणि पञ्चेन्द्रियाणि त्रयो मनोयोगादयः आनप्राणं चेति सर्वाणि चतुर्दश पदानि तत एतदाश्रिताश्चतुर्दशैव दण्डका भवन्तीति ॥ पञ्चविंशतितमशते द्वितीयः ॥ २५।२ ॥

द्वितीयोद्देशके द्रव्याण्युक्तानि, तेषु च पुद्गला उक्तास्ते च प्रायः संस्थानवन्तो भवन्तीत्यतस्तृतीये संस्थानान्युच्यन्ते, इत्येवंसम्बद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

कति णं भंते ! संठाणा प० ?, गोयमा ! छ संठाणा प०, तं०–परिमंडले वट्टे तंसे चउरंसे आयते अणित्थंथे, परिमंडला णं भंते ! संठाणा दव्वट्ठयाए किं संखेज्जा असंखेज्जा अणंता ?, गोयमा ! नो संखे० नो असंखे० अणंता, वट्टा णं भंते ! संठाणा एवं चेव एवं जाव अणित्थंथा एवं पएसट्ठयाएवि, एएसि णं भंते !

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र पञ्चविंशतितमे शतके द्वितीय उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ पञ्चविंशतितमे शतके तृतीय-उद्देशक: आरभ्यते

संस्थानं, तस्य भेदा:,

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [७२४]

दीप अनुक्रम [८७०]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥८५८॥

२५ शतके उद्देशः ३ संस्थानानि सू ७२४

परिमंडलवट्टतंसचउरंसआयतअणित्थंथाणं संठाणाणं दव्वट्ठयाए पएसट्ठयाए दव्वट्ठपएसट्ठयाए कयरे२हिंतो जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा परिमंडलसंठाणा दव्वट्ठयाए वट्टा संठाणा दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा चउरंसा संठाणा दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा तंसा संठाणा दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा आयतसंठाणा दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा अणित्थंथा संठाणा दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा, पएसट्ठयाए सव्वत्थोवा परिमंडला संठाणा पएसट्ठयाए वट्टा संठाणा संखेज्जगुणा जहा दव्वट्ठयाए तहा पएसट्ठयाएवि जाव अणित्थंथा संठाणा पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा, दव्वट्ठपएसट्ठयाए सव्वत्थोवा परिमंडला संठाणा दव्वट्ठयाए सो चेव गमओ भाणियव्वो जाव अणित्थंथा संठाणा दव्व० असंखे० अणित्थंथेहिंतो संठाणेहिंतो दव्वट्ठयाए परिमंडला संठाणा पएसट्ठ० असंखे० वट्टा संठाणा पएसट्ठ० संखे० सो चेव पएसट्ठयाए गमओ भाणि० जाव अणित्थंथा संठाणा पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा (सूत्रं ७२४) ॥

'कइ णं भंते !' इत्यादि, संस्थानानि–स्कन्धाकाराः 'अणित्थंथे'त्ति इत्थम्–अनेन प्रकारेण परिमण्डलादिना तिष्ठतीति इत्थंस्थं न इत्थंस्थमनित्थंस्थं परिमण्डलादिव्यतिरिक्तमित्यर्थः, 'परिमंडला णं भंते ! संठाण'त्ति परिमण्डलसंस्थानवन्ति भदन्त ! द्रव्याणीत्यर्थः 'दव्वट्ठयाए'त्ति द्रव्यरूपमर्थमाश्रित्येत्यर्थः 'पएसट्ठयाए'त्ति प्रदेशरूपमर्थमाश्रित्येत्यर्थः 'दव्वट्ठपएसट्ठयाए'त्ति तदुभयमाश्रित्येत्यर्थः 'सव्वत्थोवा परिमंडलसंठाणे'ति इह यानि संस्थानानि यत्संस्थानापेक्षया बहुतरप्रदेशावगाहीनि तानि तेदपेक्षया स्तोकानि तथाविधस्वभावत्वात्, तत्र च परिमण्डलसंस्थानं जघन्यतोऽपि विंशतिप्रदेशा-

॥८५८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संस्थानं, तस्य भेदा:,

प्रत सूत्रांक [७२४]

दीप अनुक्रम [८७०]

वगाहाद्बहुतरप्रदेशावगाहि वृत्तचतुरस्त्रत्र्यस्रायतानि तु क्रमेण जघन्यतः पञ्चचतुस्त्रिद्विप्रदेशावगाहित्वादल्पप्रदेशावगाहीन्यतः सर्वेभ्यो बहुतरप्रदेशावगाहित्वात्परिमण्डलस्य परिमण्डलसंस्थानानि सर्वेभ्यः सकाशात्स्तोकानि, तेभ्यश्च क्रमेणान्येषामल्पाल्पतरप्रदेशावगाहित्वात्क्रमेण बहुतरत्वमिति सङ्ख्येयगुणानि तान्युक्तानि, 'अणित्थंथा संठाणा दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुण'त्ति अनित्थंस्थसंस्थानवन्ति हि परिमण्डलादीनां द्व्यादिसंयोगनिष्पन्नत्वेन तेभ्योऽतिबहूनीतिकृत्वाऽसङ्ख्यातगुणानि पूर्वेभ्य उक्तानि, प्रदेशार्थचिन्तायां तु द्रव्यानुसारित्वात्प्रदेशानां पूर्ववदल्पबहुत्वे वाच्ये, एवं द्रव्यार्थप्रदेशार्थचिन्तायामपि, विशेषस्त्वयं–द्रव्यतोऽनित्थंस्थेभ्यः परिमण्डलानि प्रदेशतोऽसङ्ख्येयगुणानीत्यादि वाच्यमिति ॥ कृता सामान्यतः संस्थानप्ररूपणा, अथ रत्नप्रभाद्यपेक्षया तां चिकीर्षुः पूर्वोक्तमेवार्थं प्रस्तावनार्थमाह—

कति णं भंते ! संठाणा पन्नत्ता ?, गोयमा ! पंच संठाणा पं०–परिमंडले जाव आयते। परिमंडला णं भंते ! संठाणा किं संखेज्जा असंखेज्जा अणंता ?, गोयमा ! नो संखे० नो असं० अणंता, वट्टा णं भंते ! संठाणा किं संखेज्जा० ?, एवं चेव एवं जाव आयता । इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए परिमंडला संठाणा किं संखेज्जा असंखे० अणंता ?, गोयमा ! नो संखे० नो असंखे० अणंता, वट्टा णं भंते ! संठाणा किं संखे० असं० एवं चेव, एवं जाव आयया । सक्करप्पभाए णं भंते ! पुढवीए परिमंडला संठाणा एवं चेव एवं जाव आयया एवं जाव अहेसत्तमाए । सोहम्मे णं भंते ! कप्पे परिमंडला संठाणा एवं चेव एवं जाव अच्चुए, गेविज्जविमाणा णं भंते ! परिमंडलसंठाणा एवं चेव, एवं अणुत्तरविमाणेसुवि, एवं ईसिपब्भाराएवि ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संस्थानं, तस्य भेदाः,

प्रत सूत्रांक [७२५]

दीप अनुक्रम [८७१]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥८५९॥

जत्थ णं भंते ! एगे परिमंडले संठाणे जवमज्झे तत्थ परिमंडला संठाणा किं संखेज्जा असंखेज्जा अणंता ?, गोयमा ! नो संखे० नो असं० अणंता । वट्टा णं भंते ! संठाणा किं संखेज्जा असं० चेव एवं जाव आयता । जत्थ णं भंते ! एगे वट्टे संठाणे जवमज्झे तत्थ परिमंडला संठाणा एवं चेव वट्टा संठाणा एवं चेव एवं जाव आयता, एवं एक्केक्केणं संठाणेणं पंचवि चारेयव्वा, जत्थ णं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए एगे परिमंडले संठाणे जवमज्झे तत्थ णं परिमंडलासंठाणा किं संखेज्जा पुच्छा, गोयमा ! नो संखेज्जा नो असंखेज्जा अणंता, वट्टा णं भंते ! संठाणा किं संखे० पुच्छा, गोयमा ! नो संखे० नो असंखेज्जा अणंता एवं चेव जाव आयता, जत्थ णं भंते ! इमीसे रयण० पुढवीए एगे वट्टे संठाणे जवमज्झे तत्थ णं परिमंडला संठाणा किं संखेज्जा० ? पुच्छा, गोयमा ! नो संखे० नो असं० अणंता, वट्टा संठाणा एवं चेव जाव आयता, एवं पुणरवि एक्केक्केणं संठाणेणं पंचवि चारेयव्वा जहेव हेट्ठिल्ला जाव आयताणं एवं जाव अहेसत्तमाए एवं कप्पेसुवि जाव ईसीपब्भाराए पुढवीए (सूत्रं ७२५) ॥

२५ शतके उद्देशः ३ रत्नप्रभादिषु संस्थानानि सू ७२५

'कइ ण' मित्यादि, इह षष्ठसंस्थानस्य तदन्यसंयोगनिष्पन्नत्वेनाविवक्षणात् पञ्चेत्युक्तम् ॥ अथ प्रकारान्तरेण तान्याह— 'जत्थ ण' मित्यादि, किल सर्वोऽप्ययं लोकः परिमण्डलसंस्थानद्रव्यैर्निरन्तरं व्याप्तस्तत्र च कल्पनया यानि २ तुल्यप्रदेशावगाहीनि तुल्यप्रदेशानि तुल्यवर्णादिपर्यवाणि च परिमण्डलसंस्थानवन्ति द्रव्याणि तानि तान्येकपङ्क्त्यां स्थाप्यन्ते, एकमेकैकजातीयेष्वेकैकपङ्क्त्यामौत्तराधर्येण निक्षिप्यमाणेष्वल्पबहुत्वभावाद् यवाकारः परिमण्डलसंस्थानसमुदायो भवति, ॥८५९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संस्थानं, तस्य भेदा:,

प्रत सूत्रांक [७२५]

दीप अनुक्रम [८७१]

तत्र किल जघन्यप्रदेशिकद्रव्याणां वस्तुस्वभावेन स्तोकत्वादाद्या पङ्क्तिर्ह्रस्वा ततः शेषाणां क्रमेण बहुबहुतरत्वाद्दीर्घदीर्घतरा ततः परेषां क्रमेणाल्पतरत्वात् ह्रस्वह्रस्वतरैव यावदुत्कृष्टप्रदेशानामल्पतमत्वेन ह्रस्वतमेत्येवं तुल्यैस्तदन्यैश्च परिमण्डलद्रव्यैर्यवाकारं क्षेत्रं निष्पाद्यत इति, इदमेवाश्रित्योच्यते–'जत्थ'त्ति यत्र देशे 'एगे'त्ति एकं 'परिमंडले'त्ति परिमण्डलं संस्थानं वर्त्तत इति गम्यते, 'जवमज्झे'त्ति यवस्येव मध्यं–मध्यभागो यस्य विपुलत्वसाधर्म्यात्तद् यवमध्यं यवाकारमित्यर्थः, तत्र यवमध्ये परिमण्डलसंस्थानानि–यवाकारनिर्वर्त्तकपरिमण्डलसंस्थानव्यतिरिक्तानि किं सङ्ख्यातानि ? इत्यादिप्रश्नः, उत्तरं त्वनन्तानि यवाकारनिर्वर्त्तकेभ्यस्तेषामनन्तगुणत्वात् तदपेक्षया च यवाकारनिष्पादकानामनन्तगुणहीनत्वादिति ॥ पूर्वोक्तामेव संस्थानप्ररूपणां रत्नप्रभादिभेदेनाह—'जत्थे'त्यादि सूत्रसिद्धम् ॥ अथ संस्थानान्येव प्रदेशतोऽवगाहतश्च निरूपयन्नाह—

वट्टे णं भंते ! संठाणे कतिपदेसिए कतिपदेसोगाढे प० ?, गोयमा ! वट्टे संठाणे दुविहे प०–घणवट्टे य पयरवट्टे य, तत्थ णं जे से पयरवट्टे से दुविहे प० तं०–ओयपएसे य जुम्मपएसे य, तत्थ णं जे से ओयपएसिए से जहन्नेणं पंचपएसिए पंचपएसोगाढे उक्कोसेणं अणंतपएसिए असंखेज्जपएसोगाढे, तत्थ णं जे से जुम्मपएसिए से जहन्नेणं बारसपएसिए बारसपएसोगाढे उक्कोसेणं अणंतपएसिए असंखेज्जपएसोगाढे, तत्थ णं जे से घणवट्टे से दुविहे प०, तं०–ओयपएसिए य जुम्मपएसिए य, तत्थ णं जे से ओयपएसिए से जह० सत्तपएसिए सत्तपएसोगाढे प० उक्कोसेणं अणंतपएसिए असंखेज्जपएसोगाढे प०, तत्थ णं जे से जुम्मपएसिए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७२६] दीप अनुक्रम [८७२]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥८६०॥

से जहन्नेणं बत्तीसपएसिए बत्तीसपएसोगाढे प०, उक्कोसेणं अणंतपएसिए असंखेज्जपएसोगाढे ॥ तंसे णं भंते ! संठाणे कतिपदेसिए कतिपदेसोगाढे प० ?, गोयमा ! तंसे णं संठाणे दुविहे पं० तं० घणतंसे य पयरतंसे य, तत्थ णं जे से पयरतंसे से दुविहे पं०, तं०–ओयपएसिए य जुम्मपएसिए य, तत्थ णं जे से ओयपएसिए से जह० तिपएसिए तिपएसोगाढे प० उक्कोसेणं अणंतपएसिए असंखेज्जपएसोगाढे, तत्थ णं जे से जुम्मपएसिए से जहन्नेणं छप्पएसिए छप्पएसोगाढे प० उक्कोसेणं अणंतपएसिए असंखेज्जपएसोगाढे प०, तत्थ णं जे से घणतंसे से दुविहे प०, तं०–ओयपएसिए जुम्मपएसिए य, तत्थ णं जे से ओयपएसिए से जहन्नेणं पणतीसपएसिए पणतीसपएसोगाढे उक्कोसेणं अणंतपएसिए तं चेव, तत्थ णं जे से जुम्मपएसिए से जहन्नेणं चउप्पएसिए चउप्पएसोगाढे प० उक्को० अणंतपएसिए तं चेव ॥ चउरंसे णं भंते ! संठाणे कतिपदेसिए ? पुच्छा, गोयमा ! चउरंसे संठाणे दुविहे प० भेदो जहेव वट्टस्स जाव तत्थ णं जे से ओयपएसिए से जहन्नेणं नवपएसिए नवपएसोगाढे प०, उक्कोसेणं अणंतपएसिए असंखेज्जपएसोगाढे प०, तत्थ णं जे से जुम्मपदेसिए से जहन्नेणं चउपएसिए चउपएसोगाढे प० उक्कोसेणं अणंतपएसिए तं चेव तत्थ णं जे से घणचउरंसे से दुविहे प०, तंजहा–ओयपएसिए जुम्मपएसिए, तत्थ णं जे से ओयपएसिए से जहन्नेणं सत्तावीसइपएसिए सत्तावीसतिपएसोगाढे उक्को० अणंतपएसिए तहेव तत्थ जे से जुम्मपएसिए से जहन्नेणं अट्ठपएसिए अट्ठपएसोगाढे प० उक्को० अणंतपएसिए तहेव ॥ आयए णं भंते ! संठाणे कतिपदेसिए कतिपएसोगाढे प० ?

२५ शतके उद्देशः ३ वृत्तादीनां प्रदेशाऽवगाहौ सू ७२६

॥८६०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोयमा ! आयए णं संठाणे तिविहे प० तं०–सेढिआयते पयरायते घणायते, तत्थ णं जे से सेढिआयते से दुविहे प०, तं०–ओयपएसिए य जुम्मपएसिए य, तत्थ णं जे ओयप० से जह० तिपएसिए तिपएसोगाढे उक्को० अणंतपए तं चेव, तत्थ णं जे से जुम्मपएसे जह० दुपएसिए दुपएसोगाढे उक्कोसेणं अणंता तहेव तत्थ णं जे से पयरायते से दुविहे पं०, तं०–ओयपएसिए य जुम्मपएसिए य, तत्थ णं जे से ओयपएसिए से जहन्नेणं पन्नरसपएसिए पन्नरसपएसोगाढे उक्कोसेणं अणंत तहेव, तत्थ णं जे से जुम्मपएसिए से जहन्नेणं छप्पएसिए छप्पएसोगाढे उक्कोसेणं अणंत तहेव, तत्थ णं जे से घणायते से दुविहे पं० तं०–ओयपएसिए जुम्मपएसिए, तत्थ णं जे से ओयपएसिए से जहन्नेणं पणयालीसपएसिए पणयालीसपएसोगाढे उक्कोसेणं अणंत० तहेव, तत्थ णं जे से जुम्मपएसिए से जह० बारसपएसिए बारसपएसोगाढे उक्कोसेणं अणंत० तहेव ॥ परिमंडले णं भंते ! संठाणे कतिपदेसिए ? पुच्छा, गोयमा ! परिमंडले णं संठाणे दुविहे पं०, तं०–घणपरिमंडले य पयरपरिमंडले य, तत्थ णं जे से पयरपरिमंडले से जहन्नेणं वीसतिपदेसिए वीसइपएसोगाढे उक्कोसेणं अणंतपदे० तहेव, तत्थ णं जे से घणपरिमंडले से जहन्नेणं चत्तालीसतिपदेसिए चत्तालीसपएसोगाढे प०, उक्कोसेणं अणंतपएसिए असंखेज्जपएसोगाढे पन्नत्ता (सूत्रं ७२६) ॥

'वट्टे ण' मित्यादि, अथ परिमण्डलं पूर्वमादावुक्तं इह तु कस्मात्तत्त्यागेन वृत्तादिना क्रमेण तानि निरूप्यन्ते?, उच्यते, वृत्तादीनि चत्वार्यपि प्रत्येकं समसङ्ख्यविषमसङ्ख्यप्रदेशान्यतस्तत्साधर्म्यात्तेषां पूर्वमुपन्यासः परिमण्डलस्य पुनरेतदभावात्प-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [७२६]

दीप अनुक्रम [८७२]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥८६१॥

२५ शतके उद्देशः ३ वृत्तादीनां प्रदेशावगाहौ सू ७२६

श्याद् विचित्रत्वाद्वा सूत्रगतेरिति, 'घणवट्टे'त्ति सर्वतः समं घनवृत्तं मोदकवत् 'पयरवट्टे'त्ति बाहल्यतो हीनं तदेव प्रतरवृत्तं मण्डकवत्, 'ओयपएसिए'त्ति विषमसङ्ख्यप्रदेशनिष्पन्नं 'जुम्मपएसिए'त्ति समसङ्ख्यप्रदेशनिष्पन्नं, 'तत्थ णं जे से ओयपएसिए पयरवट्टे से जहन्नेणं पंचपएसिए' इत्यादि, इत्थं पञ्चप्रदेशावगाढं पञ्चाणुकात्मकमित्यर्थः, उत्कर्षेणानन्तप्रदेशिकमसङ्ख्येयप्रदेशावगाढं लोकस्याप्यसङ्ख्येयप्रदेशात्मकत्वात्, 'जे से जुम्मपएसिए से जहन्नेणं बारसपएसिए' इति, एतस्य स्थापना– 'जे से ओयपएसिए घणवट्टे से जहन्नेणं सत्तपएसिए सत्तपएसोगाढे'त्ति, एतस्य स्थापना– अस्य मध्यपरमाणोरुपर्येकः स्थापितोऽधश्चैक इत्येवं सप्तप्रदेशिकं घनवृत्तं भवतीति, 'जे से जुम्मपएसिए से जहन्नेणं बत्तीसइपएसिए' इत्यादि, एतस्य स्थापना– अस्य चोपरीदृश एव प्रतरः स्थाप्यस्ततः सर्वे चतुर्विंशतिस्ततः प्रतरद्वयस्य मध्याणूनां चतुर्णामुपर्यन्ये चत्वारोऽधश्चेत्येवं द्वात्रिंशदिति ॥ त्र्यस्रसूत्रे—'जे से ओयपएसिए से जहन्नेणं तिपएसिए'त्ति, अस्य स्थापना– 'जे से जुम्मपएसिए से जहन्नेणं छप्पएसिए'त्ति अस्य स्थापना– 'जे से ओयपएसिए से जहन्नेणं पणतीसपएसिए'त्ति, अस्य स्थापना– 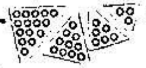 अस्य पञ्चदशप्रदेशिकस्य प्रतरस्योपरि दशप्रदेशिकः एतस्याप्युपरि षट्प्रदेशिकः एतस्याप्युपरि त्रिप्रदेशिकः प्रतरः एतस्याप्युपर्येकः प्रदेशो दीयते इत्येवं पञ्चत्रिंशत्प्रदेशा इति । 'जे से जुम्मपएसिए से जहन्नेणं चउप्पएसिए' इति, अस्य स्थापना– अत्रैकस्योपरि प्रदेशो दीयत इत्येवं चत्वार इति ॥ चतुरस्रसूत्रे—'जे से ओयपएसिए से जहन्नेणं नवपएसिए'त्ति एवं 'जे से जुम्मपएसिए से जहन्नेणं चउप्पएसिए'त्ति, एवं 'जे से ओयपएसिए से जहन्नेणं सत्तावीसपएसिए' त्ति, एवमेतस्य नवप्रदेशिक-

॥८६१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७२६]

दीप अनुक्रम [८७२]

प्रतरस्योपर्यन्यदपि प्रतरद्वयं स्थाप्यत इत्येवं सप्तविंशतिप्रदेशिकं चतुरस्रं भवतीति, 'जे से जुम्मपएसिए से जहन्नेणं अट्ठपएसिए' त्त्येवं अस्योपर्यन्यश्चतुष्प्रदेशिकप्रतरो दीयत इत्येवमष्टप्रदेशिकं स्यादिति ॥ आयतसूत्रे—'सेढिआयए' त्ति श्रेण्यायतं–प्रदेशश्रेणीरूपं 'प्रतरायतं' कृतविष्कम्भश्रेणीद्वयादिरूपं 'घनायतं' बाहल्यविष्कम्भोपेतमनेकश्रेणीरूपं, तत्र श्रेण्यायतमोजःप्रदेशिकं जघन्यं त्रिप्रदेशिकं, तच्चैवं– १ तदेव युग्मप्रदेशिकं द्विप्रदेशिकं तच्चैवं– 'जे से ओयपएसिए से जहन्नेणं पन्नरसपएसिए' त्ति एवं– तदेव युग्मप्रदेशिकं जघन्यं षट्प्रदेशिकं तच्चैवं– एवं घनायतमोजःप्रदेशिकं जघन्यं पञ्चचत्वारिंशत्प्रदेशिकं तच्चैवम्– अस्योपर्यन्यत् प्रतरद्वयं स्थाप्यत इत्येवं पञ्चचत्वारिंशत्प्रदेशिकं जघन्यमोजःप्रदेशिकं घनायतं भवति, तदेव युग्मप्रदेशिकं द्वादशप्रदेशिकं, तच्चैवम्– एतस्य षड्प्रदेशिकस्योपरि षट्प्रदेशिक एवान्यः प्रतरः स्थाप्यते ततो द्वादशप्रदेशिकं भवतीति ॥ 'परिमंडले ण' मित्यादि, इह ओजोयुग्मभेदौ न स्तः, युग्मरूपत्वेनैकरूपत्वात्परिमण्डलस्येति, तत्र प्रतरपरिमण्डलं जघन्यतो विंशतिप्रदेशिकं भवति, तदेवं स्थापना– एतस्यैवोपरि विंशतिप्रदेशिकेऽन्यस्मिन् प्रतरे दत्ते चत्वारिंशत्प्रदेशिकं घनपरिमण्डलं भवतीति ॥ अनन्तरं परिमण्डलं प्ररूपितम्, अथ परिमण्डलमेवादौ कृत्वा संस्थानानि प्रकारान्तरेण प्ररूपयन्नाह—

परिमंडले णं भंते ! संठाणे दव्वट्ठयाए किं कडजुम्मे तेओए दावरजुम्मे कलियोए ?, गोयमा ! नो कडजुम्मे णो तेयोए णो दावरजुम्मे कलियोए, वट्टे णं भंते ! संठाणे दव्वट्ठयाए एवं चेव एवं जाव आयते ॥ परिमंडला णं भंते ! संठाणा दव्वट्ठयाए किं कडजुम्मा तेयोया दावरजुम्मा कलियोगा पुच्छा, गोयमा ! ओघादेसेणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७२७]

दीप अनुक्रम [८७३]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥८६२॥

सिय कडजुम्मा सिय तेओगा सिय दावरजुम्मा सिय कलियोगा, विहाणादेसेणं नो कडजुम्मा नो तेओगा नो दावरजुम्मा कलिओगा एवं जाव आयता॥ परिमंडले णं भंते ! संठाणे पएसट्ठयाए किं कडजुम्मे ? पुच्छा, गोयमा ! सिय कडजुम्मे सिय तेयोगे सिय दावरजुम्मे सिय कलियोए एवं जाव आयते, परिमंडला णं भंते ! संठाणा पएसट्ठयाए किं कडजुम्मा ? पुच्छा, गोयमा ! ओघादेसेणं सिय कडजुम्मा जाव सिय कलियोगा विहाणादेसेणं कडजुम्मावि तेओगावि दावरजुम्मावि कलियोगावि ४ एवं जाव आयता ॥ परिमंडले णं भंते ! संठाणे किं कडजुम्मपएसोगाढे जाव कलियोगपएसोगाढे ?, गोयमा ! कडजुम्मपएसोगाढे णो तेयोगपएसोगाढे नो दावरजुम्मपएसोगाढे नो कलियोगपएसोगाढे ॥ वट्टे णं भंते ! संठाणे किं कडजुम्मे? पुच्छा, गोयमा ! सिय कडजुम्मपदेसोगाढे सिय तेयोगपएसोगाढे नो दावरजुम्मपएसोगाढे सिय कलियोगपएसोगाढे ॥ तंसे णं भंते ! संठाणे पुच्छा, गोयमा ! सिय कडजुम्मपएसोगाढे सिय तेयोगपएसोगाढे सिय दावरजुम्मपदेसोगाढे नो कलिओगपएसोगाढे। चउरंसे णं भंते ! संठाणे जहा वट्टे तहा चउरंसेवि। आयए णं भंते ! पुच्छा, गोयमा ! सिय कडजुम्मपएसोगाढे जाव सिय कलिओगपएसोगाढे। परिमंडला णं भंते ! संठाणा किं कडजुम्मपएसोगाढा तेयोगपएसोगाढा ? पुच्छा, गोयमा ! ओघादेसेणवि विहाणादेसेणवि कडजुम्मपएसोगाढा णो तेयोगपएसोगाढा नो दावरजुम्मपएसोगाढा नो कलियोगपएसोगाढा। वट्टा णं भंते ! संठाणा किं कडजुम्मपएसोगाढा पुच्छा, गोयमा ! ओघादेसेणं कडजुम्मपएसोगाढा नो तेयोगपएसोगाढा नो दावर-

२५ शतके उद्देशः ३ संस्थानप्रदेशादिकृतयुग्मादि सू ७२७

॥८६२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७२७]

दीप अनुक्रम [८७३]

जुम्मपएसोगाढा नो कलियोगपएसोगाढावि, तंसा णं भंते ! संठाणा किं कडजुम्मा पुच्छा, गोयमा ! ओघादे० कडजुम्मपएसोगाढा नो तेयोगपएसोगाढा नो दावरजुम्म० नो कलियोगपएसोगाढावि विहाणादे० कडजुम्मपएसोगा० तेयोगप० नो दावरजुम्मपएसोगा० नो कलियोगपएसोगाढा । चउरंसा जहा वट्टा । आयया णं भंते ! संठाणा पुच्छा, गोयमा ! ओघादेसेणं कडजुम्मपएसोगाढा नो तेयोगपएसोगाढा नो दावरजुम्मपएसोगाढा नो कलिओगपएसोगाढा विहाणादेसेणं कडजुम्मपएसोगाढावि जाव कलिओगपएसोगाढावि ॥ परिमंडले णं भंते ! संठाणे किं कडजुम्मसमयठितीए तेयोगसमयठितीए दावरजुम्मसमयट्ठितीए कलिओगसमयठितीए ?, गोयमा ! सिय कडजुम्मसमयठितीए जाव सिय कलिओगसमयठितीए एवं जाव आयते । परिमंडला णं भंते ! संठाणा किं कडजुम्मसमयठितीया पुच्छा, गोयमा ! ओघादेसेणं सिय कडजुम्मसमयट्ठितीया जाव सिय कलियोगसमयट्ठितीया, विहाणादेसेणं कडजुम्मसमयठितीयावि जाव कलियोगसमयठितीयावि, एवं जाव आयता ॥ परिमंडले णं भंते ! संठाणे कालवन्नपज्जवेहिं किं कडजुम्मे जाव सिय कलियोगे ?, गोयमा ! सिय कडजुम्मे एवं एएणं अभिलावेणं जहेव ठितीए एवं नीलवन्नपज्जवेहिं एवं पंचहिं वन्नेहिं दोहिं गंधेहिं पंचहिं रसेहिं अट्ठहिं फासेहिं जाव लुक्खफासपज्जवेहिं ॥ (सूत्रं ७२७)

'परिमंडले'त्यादि, परिमण्डलं द्रव्यार्थतयैकमेव द्रव्यं, न हि परिमण्डलस्यैकस्य चतुष्कापहारोऽस्तीत्येकत्वचिन्तायां न कृतयुग्मादिव्यपदेशः किन्तु कल्योजव्यपदेश एव, यदा तु पृथक्त्वचिन्ता तदा कदाचिदेतावन्ति तानि परिमण्डलानि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७२७] दीप अनुक्रम [८७३]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥८६३॥

भवन्ति यावतां चतुष्कापहारेण निच्छेदता भवति कदाचित्पुनस्त्रीण्यधिकानि भवन्ति कदाचिद्वे कदाचिदेकमधिकमित्यत एवाह—‘परिमंडला णं भंते’ इत्यादि, ‘ओघादेसेणं’ति सामान्यतः ‘विहाणादेसेणं’ति विधानादेशो यत्समुदितानामप्येकैकस्यादेशनं तेन च कल्योजतैवेति ॥ अथ प्रदेशार्थचिन्तां कुर्वन्नाह—‘परिमंडले ण’मित्यादि, तत्र परिमण्डलं संस्थानं प्रदेशार्थतया विंशत्यादिषु क्षेत्रप्रदेशेषु ये प्रदेशाः परिमण्डलसंस्थाननिष्पादका व्यवस्थितास्तदपेक्षयेत्यर्थः, ‘सिय कडजुम्मे’त्ति तत्प्रदेशानां चतुष्कापहारेणापह्रियमाणानां चतुष्पर्यवसितत्वे कृतयुग्मं तत्स्यात्, यदा त्रिपर्यवसानं तत्तदा त्र्योजः, एवं द्वापरं कल्योजश्चेति, यस्मादेकत्रापि प्रदेशे बहवोऽणवोऽवगाहन्त इति ॥ अथावगाहप्रदेशनिरूपणायाह—‘परिमंडले’त्यादि, ‘कडजुम्मपएसोगाढे’त्ति यस्मात्परिमण्डलं जघन्यतो विंशतिप्रदेशावगाढमुक्तं विंशतेश्च चतुष्कापहारे चतुष्पर्यवसितत्वं भवति एवं परिमण्डलान्तरेऽपीति ॥ ‘वट्टे ण’ मित्यादि, ‘सिय कडजुम्मपएसोगाढे’त्ति यत्प्रतरवृत्तं द्वादशप्रदेशिकं यच्च घनवृत्तं द्वात्रिंशत्प्रदेशिकमुक्तं तच्चतुष्कापहारे चतुरग्रत्वात्कृतयुग्मप्रदेशावगाढं ‘सिय तेओयपएसोगाढे’त्ति यच्च घनवृत्तं सप्तप्रदेशिकमुक्तं तत्त्र्यग्रत्वात्त्र्योजःप्रदेशावगाढं ‘सिय कलिओयपएसोगाढे’त्ति यत्प्रतरवृत्तं पञ्चप्रदेशिकमुक्तं तदेकाग्रत्वात्कल्योजप्रदेशावगाढमिति ॥ ‘तंसे ण’ मित्यादि, ‘सिय कडजुम्मपएसोगाढे’त्ति यद् घनत्र्यस्रं चतुष्प्रदेशिकं तत्कृतयुग्मप्रदेशावगाढं ‘सिय तेओगपएसोगाढे’त्ति यत् प्रतरत्र्यस्रं त्रिप्रदेशावगाढं घनत्र्यस्रं च पञ्चत्रिंशत्प्रदेशावगाढं तत्त्र्यग्रत्वात्त्र्योजःप्रदेशावगाढं, ‘सिय दावरजुम्मपएसोगाढे’त्ति यत्प्रतरत्र्यस्रं षट्प्रदेशिकमुक्तं तद् द्व्यग्रत्वाद् द्वापरप्रदेशावगाढमिति ॥ ‘चउरंसे ण’मित्यादि, ‘जहा वट्टे’त्ति ‘सिय कडजुम्मपएसोगाढे सिय-

२५ शतके उद्देशः ३ संस्थानप्रदेशादिकृतयुग्मादि सू ७२७

॥८६३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७२७]

दीप अनुक्रम [८७३]

तेओयपएसोगाढे सिय कलिओयपएसोगाढे' इत्यर्थः तत्र यत् प्रतरचतुरस्रं चतुष्प्रदेशिकं घनचतुरस्रं चाष्टप्रदेशिकमुक्तं तच्चतुरग्रत्वात्कृतयुग्मप्रदेशावगाढं, तथा यद् घनचतुरस्रं सप्तविंशतिप्रदेशिकमुक्तं तत्र्यग्रत्वात्त्र्योजःप्रदेशावगाढं, तथा यत्प्रतरचतुरस्रं नवप्रदेशिकमुक्तं तदेकाग्रत्वात् कल्योजःप्रदेशावगाढमिति॥ 'आयए ण' मित्यादि 'सिय कडजुम्मपएसोगाढे'त्ति यद् घनायतं द्वादशप्रदेशिकमुक्तं तत्कृतयुग्मप्रदेशावगाढं यावत्करणात् 'सिय तेओयपएसोगाढे सिय दावरजुम्मपएसोगाढे'त्ति दृश्यं, तत्र च यत् श्रेण्यायतं त्रिप्रदेशावगाढं यच्च प्रतरायतं पञ्चदशप्रदेशिकमुक्तं तत्त्र्यग्रत्वात्त्र्योजःप्रदेशावगाढं, यत्पुनः श्रेण्यायतं द्विप्रदेशिकं यच्च प्रतरायतं षट्प्रदेशिकं तद् द्व्यग्रत्वाद् द्वापरयुग्मप्रदेशावगाढं, 'सिय कलिओयपएसोगाढे'त्ति यद् घनायतं पञ्चचत्वारिंशत्प्रदेशिकं तदेकाग्रत्वात्कल्योजःप्रदेशावगाढमिति ॥ एवमेकत्वेन प्रदेशावगाढमाश्रित्य संस्थानानि चिन्तितानि अथ पृथक्त्वेन तानि तथैव चिन्तयन्नाह—'परिमंडला ण'-मित्यादि, 'ओघादेसेणवि'त्ति सामान्यतः समस्तान्यपि परिमण्डलानीत्यर्थः 'विहाणादेसेणवि'त्ति भेदतः एकैकं परिमण्डलमित्यर्थः कृतयुग्मप्रदेशावगाढान्येव विंशतिचत्वारिंशत्प्रभृतिप्रदेशावगाहित्वेनोक्तत्वात्तेषामिति ॥ 'वट्टा ण'मित्यादि, 'ओघादेसेणं कडजुम्मपएसोगाढे'त्ति वृत्तसंस्थानाः स्कन्धाः सामान्येन चिन्त्यमानाः कृतयुग्मप्रदेशावगाढाः सर्वेषां तत्प्रदेशानां मीलने चतुष्कापहारे तत्स्वभावत्वेन चतुष्पर्यवसितत्वात्, विधानादेशेन पुनर्द्वापरप्रदेशावगाढवर्जाः शेषावगाढा भवन्ति, यथा पूर्वोक्तेषु पञ्चसप्तादिषु जघन्यवृत्तभेदेषु चतुष्कापहारे द्व्यावशिष्टता नास्ति एवं सर्वेष्वपि तेषु वस्तुस्वभावत्वाद्, अत एवाह–'विहाणादेसेण'मित्यादि । एवं त्र्यस्रादिसंस्थानसूत्राण्यपि भावनीयानि ॥ एवं तावत्क्षेत्रत एक-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [७२७]

दीप अनुक्रम [८७३]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥८६४॥

२५ शतके उद्देशः ३ संस्थानप्रदेशादिकृतयुग्मादि सू ७२७

त्वपृथक्त्वाभ्यां संस्थानानि चिन्तितानि, अथ ताभ्यामेव कालतो भावतश्च तानि चिन्तयन्नाह—'परिमंडले ण'मित्यादि, अयमर्थः—परिमंडलेन संस्थानेन परिणताः स्कन्धाः कियन्तं कालं तिष्ठन्ति? किं चतुष्कापहारेण तत्कालस्य समयाश्चतुरग्रा भवन्ति त्रिद्व्येकाग्रा वा ?, उच्यते, सर्वे संभवन्तीति, इह चैता वृद्धोक्ताः सङ्ग्रहगाथाः—"परिमंडले य १ वट्टे २ तंसे ३ चउरंस ४ आयए ५ चेव। घणपयरपढमवज्जं ओयपएसे य जुम्मे य ॥ १ ॥ पंच य बारसयं खलु सत्त य बत्तीसयं च वट्टंमि। तियछक्कयपणतीसा चउरो य हवंति तंसंमि ॥ २ ॥ नव चेव तहा चउरो सत्तावीसा य अट्ठ चउरंसे। तिगदुगपन्नरसे चेव छच्चेव य आयए होंति ॥ ३ ॥ पणयालीसा बारस छब्भेया आययम्मि संठाणे। परिमंडलम्मि वीसा चत्ता य भवे पएसग्गं ॥ ४ ॥ सव्वेवि आययम्मि गेण्हसु परिमंडलंमि कडजुम्मं। वज्जेज्ज कलिं तंसे दावरजुम्मं च सेसेसु ॥ ५ ॥" इति ॥ [परिमण्डलं च वृत्तं त्र्यस्रं चतुरस्रमायतं चैव प्रथमवर्ज्यानि घनप्रतरभेदानि ओजःप्रदेशानि युग्मानि च ॥ १ ॥ पञ्च च द्वादश खलु सप्त च द्वात्रिंशच्च वृत्ते त्रयः षट् पञ्चत्रिंशच्चत्वारश्च भवन्ति त्र्यस्रे ॥ २ ॥ नव चैव तथा चत्वारः सप्तविंशतिश्चाष्टौ चतुरस्रे त्रयो द्वौ पञ्चदश चैव षट् चैव चायते भवन्ति ॥ ३ ॥ पञ्चचत्वारिंशद्द्वादशषट्प्रदेशा आयते भवन्ति संस्थाने परिमण्डले विंशतिश्चत्वारश्च भवेत् प्रदेशपरिमाणम् ॥ ४ ॥ आयते सर्वे राशय इति गृहाण परिमण्डले कृतयुग्मं त्र्यस्रे कलिं वर्जयेत् शेषेषु द्वापरयुग्मं च ॥ ५ ॥] द्रव्याद्यपेक्षया संस्थानपरिमाणस्याधिकृतत्वात्संस्थानविशेषितस्य लोकस्य तथैव परिमाणनिरूपणायाह—

सेढीओ णं भंते! दव्वट्ठयाए किं संखेज्जाओ असंखेज्जाओ अणंताओ ?, गोयमा ! नो संखेज्जाओ ॥८६४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७२८]

दीप अनुक्रम [८७४]

नो असंखे० अणंताओ, पाईणपडीणायताओ णं भंते ! सेढीओ दव्वट्ठयाए किं संखेज्जाओ एवं चेव ३, एवं दाहिणुत्तरायताओवि एवं उड्ढमहायताओवि । लोगागाससेढीओ णं भंते ! दव्वट्ठयाए किं संखेज्जाओ असंखेज्जाओ अणंताओ ?, गोयमा ! नो संखेज्जाओ असंखेज्जाओ नो अणंताओ, पाईणपडीणायताओ णं भंते ! लोगागाससेढीओ दव्वट्ठयाए किं संखेज्जाओ एवं चेव, एवं दाहिणुत्तराययाओवि, एवं उड्ढमहायताओवि । अलोयागाससेढीओ णं भंते ! दव्वट्ठयाए किं संखेज्जाओ असंखेज्जाओ अणंताओ ?, गोयमा! नो संखेज्जाओ नो असंखेज्जाओ अणंताओ, एवं पाईणपडीणाययाओवि एवं दाहिणुत्तराययाओवि एवं उड्ढमहायताओवि । सेढीओ णं भंते ! पएसट्ठयाए किं संखेज्जाओ जहा दव्वट्ठयाए तहा पएसट्ठयाएवि जाव उड्ढमहाययाओवि सव्वाओ अणंत० । लोयागाससेढीओ णं भंते ! पएस० किं संखेज्जाओ पुच्छा, गोयमा ! सिय संखे० सिय असं० नो अणंताओ एवं पाईणपडीणायताओ दाहिणुत्तरायताओवि एवं चेव उड्ढमहायताओवि नो संखेज्जाओ असंखे० नो अणंताओ ॥ अलोगागाससेढीओ णं भंते! पएसट्ठयाए पुच्छा, गोयमा! सिय संखे० सिय असं० सिय अणंताओ पाईणपडीणाययाओ णं भंते ! अलोया० पुच्छा, गोयमा ! नो संखेज्जाओ नो असंखेज्जाओ अणंताओ, एवं दाहिणुत्तरायताओवि, उड्ढमहायताओ पुच्छा, गोयमा ! सिय संखेज्जाओ सिय असं० सिय अणंताओ (सूत्रं ७२८) ॥

'सेढी'त्यादि, श्रेणीशब्देन च यद्यपि पङ्क्तिमात्रमुच्यते तथाऽपीहाकाशप्रदेशपङ्क्तयः श्रेणयो ग्राह्याः, तत्र श्रेणयोऽविवक्षितलोकालोकभेदत्वेन सामान्याः १ तथा ता एव पूर्वापरायताः २ दक्षिणोत्तरायताः ३ ऊर्द्ध्वाधआयताः ४, एवं लो-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [७२८]

दीप अनुक्रम [८७४]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥८६५॥

कसम्बन्धिन्योऽलोकसम्बन्धिन्यश्चेति, तत्र सामान्ये श्रेणीप्रश्ने 'अणंताओ'त्ति सामान्याकाशास्तिकायस्य श्रेणीनां विवक्षि-तत्वादनन्तास्ताः, लोकाकाशश्रेणीप्रश्ने त्वसङ्ख्याता एव ताः, असङ्ख्यातप्रदेशात्मकत्वाल्लोकाकाशस्य, अलोकाकाशश्रेणीप्रश्ने पुनरनन्तास्ताः, अनन्तप्रदेशात्मकत्वादलोकाकाशस्य । तथा 'लोगागाससेढीओ णं भंते ! पएसट्ठयाए' इत्यादौ 'सिय संखेज्जाओ सिय असंखेज्जाओ'त्ति अस्येयं चूर्णिकारव्याख्या–लोकवृत्तान्निष्क्रान्तस्यालोके प्रविष्टस्य दन्तकस्य याः श्रेणयस्ता द्वित्रादिप्रदेशा अपि संभवन्ति तेन ताः सङ्ख्यातप्रदेशा लभ्यन्ते शेषा असङ्ख्यातप्रदेशा लभ्यन्त इति, टीका-कारस्तु साक्षेपपरिहारं चेह प्राह—"परिमंडलं जहन्नं भणियं कडजुम्मवट्टियं लोए। तिरियाययसेढीणं संखेज्जपएसिया किह णु ? ॥ १ ॥ दो दो दिसासु एक्केक्कओ य विदिसासु एस कडजुम्मे । पढमपरिमंडलाओ वुड्ढी किर जाव लोगंतो ॥ २॥" इत्याक्षेपः, परिहारस्तु–"अट्ठंसया पसज्जइ एवं लोगस्स न परिमंडलया । वट्टालेहेण तओ वुड्ढी कडजुम्मिया जुत्ता ॥३॥" [लोके कृतयुग्मवर्त्तितं जघन्यं परिमण्डलं भणितं तिर्यगायतश्रेणीनां सङ्ख्येयप्रदेशता कथं नु? ॥१॥ द्वौ द्वौ दिक्षु एकैकश्च विदिक्षु एष कृतयुग्मः प्रथमपरिमण्डलाद् वृद्धिस्तस्य यावल्लोकान्तः ॥ २ ॥ एवं लोकस्याष्टांशता प्रसज्यते न परिमण्डलता ततो वृत्तालेखेन कृतयुग्मिका वृद्धिर्युक्ता ॥३॥]

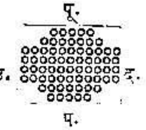

एवं च लोकवृत्तपर्यन्तश्रेणयः सङ्ख्यातप्रदेशिका भवन्तीति
'नो अणंताओ'त्ति लोकप्रदेशानामनन्तत्वा-
भावात्, 'उड्डमहाययाओ' 'नो संखेज्जाओ असंखे-
ज्जाओ'त्ति यतस्तासामुच्छ्रितानामूर्ध्वलोकान्ता
दधोलोकान्तेऽधोलोकान्तादूर्द्धलोकान्ते प्रतिघातोऽतस्ता
असङ्ख्यातप्रदेशा एवेति, या अप्यधोलोककोण-
तो ब्रह्मलोकतिर्यग्मध्यप्रान्ताद्वोत्तिष्ठन्ते ता अपि न सङ्ख्यात-
प्रदेशा लभ्यन्ते, अत एव सूत्रवचनादिति ॥

२५ शतके उद्देशः ३ संस्थानप्रदेशादिकृतयुग्मादि सू ७२८

॥८६५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७२८]

दीप अनुक्रम [८७४]

'अलोगागाससेढीओ णं भंते ! पएसट्ठयाए' इत्यादि, 'सिय संखेज्जाओ सिय असंखेज्जाओ'त्ति यदुक्तं तत्सर्वं क्षुल्लकप्रतरप्रत्यासन्ना ऊर्द्धाधआयता अधोलोकश्रेणीराश्रित्येत्यवसेयं, ता हि आदिमाः सङ्ख्यातप्रदेशास्ततोऽसङ्ख्यातप्रदेशास्ततः परं त्वनन्तप्रदेशाः, तिर्यगायतास्त्वलोकश्रेणयः प्रदेशतोऽनन्ता एवेति ॥

सेढीओ णं भंते ! किं साइयाओ सपज्जवसियाओ १ साईयाओ अपज्जवसि० २ अणादीयाओ सपज्जवसियाओ ३ अणादीयाओ अप० ४ ?, गोयमा ! नो सादीयाओ सप० नो सादीयाओ अप० णो अणादीयाओ सप० अणादीयाओ अप० एवं जाव उड्ढमहायताओ, लोयागाससेढीओ णं भंते ! किं सादीयाओ सप० पुच्छा, गो० ! सादीयाओ सपज्जवसियाओ नो सादीयाओ अपज्जवसियाओ नो अणादीयाओ सपज्जव० नो अणादीयाओ अपज्ज० एवं जाव उड्ढमहायताओ। अलोयागाससेढीओ णं भंते ! किं सादीयाओ सप० पुच्छा, गोयमा ! सिय साइयाओ सपज्जवसियाओ १ सिय साईयाओ अपज्जवसियाओ २ सिय अणादीयाओ सपज्जवसियाओ ३ सिय अणाइयाओ अपज्जवसियाओ ४, पाईणपडीणाययाओ दाहिणुत्तरायताओ य एवं चेव, नवरं नो सादीयाओ सपज्जवसियाओ सिय साईयाओ अपज्जवसियाओ सेसं तं चेव, उड्ढमहायताओ जाव ओहियाओ तहेव चउभंगो । सेढीओ णं भंते ! दव्वट्ठयाए किं कडजुम्माओ तेओयाओ ? पुच्छा, गोयमा ! कडजुम्माओ नो तेओयाओ नो दावरजुम्माओ नो कलियोगाओ एवं जाव उड्ढमहायताओ, लोगागाससेढीओ एवं चेव, एवं अलोगागासेढीओवि । सेढीओ णं भंते ! पएसट्ठयाए किं कडजुम्माओ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [७२८]

दीप अनुक्रम [८७४]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥८६६॥

पुच्छा, एवं चेव एवं जाव उड्डमहायताओ। लोयागाससेढीओ णं भंते! पएसट्ठयाए पुच्छा, गोयमा! सिय कडजुम्माओ नो तेओयाओ सिय दावरजुम्माओ नो कलिओगाओ, एवं पाईणपडीणायताओवि दाहिणुत्तरायताओवि, उड्डमहाययाओ णं पुच्छा, गोयमा! कडजुम्माओ नो तेओगाओ नो दावरजुम्माओ नो कलियोगाओ। अलोगागाससेढीओ णं भंते! पएसट्ठयाए पुच्छा, गोयमा! सिय कडजुम्माओ जाव सिय कलिओगाओ, एवं पाईणपडीणायताओवि एवं दाहिणुत्तरायताओवि, उड्डमहायताओवि एवं चेव, नवरं नो कलिओगाओ सेसं तं चेव (सूत्रं ७२९) ॥ कति णं भंते! सेढीओ प०?, गोयमा! सत्त सेढीओ पन्नत्ताओ, तंजहा–उज्जुआयता एगओवंका दुहओवंका एगओखहा दुहओखहा चक्कवाला अद्धचक्कवाला ॥ परमाणुपोग्गलाणं भंते! किं अणुसेढीं गती पवत्तति विसेढिं गती पवत्तति?, गोयमा! अणुसेढीं गति पवत्तति नो विसेढीं गती पवत्तति। दुपएसियाणं भंते! खंधाणं अणुसेढीं गती पवत्तति विसेढीं गती पवत्तति एवं चेव, एवं जाव अणंतपएसियाणं खंधाणं। नेरइयाणं भंते! किं अणुसेढीं गती पवत्तति विसेढीं गती पवत्तति एवं चेव, एवं जाव वेमाणियाणं ॥ (सूत्रं ७३०) इमीसे णं भंते! रयणप्पभाए पुढवि० केवतिया निरयावाससयसहस्सा पन्नत्ता?, गोयमा! तीसं निरयावाससयसहस्सा प०, एवं जहा पढमसते पंचमुद्देसगे जाव अणुत्तरविमाणत्ति ॥ (सूत्रं ७३१) कइविहे णं भंते! गणिपिडए प०?, गोयमा! दुवालसंगे गणिपिडए पं० तं०–आयारो जाव दिट्ठिवाओ, से किं तं आयारो?, आयारे णं समणाणं निग्गंथाणं आयारगो० एवं अंगपरूवणा भाणियव्वा जहा नंदीए, जाव

२५ शतके उद्देशः ३ आकाश-श्रेणिगति-श्रेणिगणि-पिटकाल्प-बहुत्वानि सू ७२९–७३३

॥८६६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७२९--७३३]

दीप अनुक्रम [८७५--८८०]

सुत्तत्थो खलु पढमो बीओ निजुत्तिमीसिओ भणिओ। तइओ य निरवसेसो एस विही होइ अणुओगे ॥१॥ (सूत्रं७३२) ॥एएसि णं भंते! नेरतियाणं जाव देवाणं सिद्धाण य पंचगतिसमासेणं कयरे २? पुच्छा, गोयमा ! अप्पाबहुयं जहा बहुवत्तव्वयाए अट्ठगइसमासअप्पाबहुगं च । एएसि णं भंते ! सइंदियाणं एगिंदियाणं जाव अणिंदियाण य कयरे २ ?, एयंपि जहा बहुवत्तव्वयाए तहेव ओहियं पयं भाणियव्वं, सकाइयअप्पाबहुगं तहेव ओहियं भाणियव्वं ॥ एएसि णं भंते ! जीवाणं पोग्गलाणं जाव सव्वपज्जवाण य कयरे २ जाव बहुवत्तव्वयाए, एएसि णं भंते ! जीवाणं आउयस्स कम्मस्स बंधगाणं अबंधगाणं जहा बहुवत्तव्वयाए जाव आउयस्स कम्मस्स अबंधगा विसेसाहिया । सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति ॥ (सूत्रं ७३३) ॥ २५–३ ॥

'सेढीओ णं भंते ! किं साईयाओ' इत्यादिप्रश्नः, इह च श्रेण्योऽविशेषितत्वाद्या लोके चालोके च तासां सर्वासां ग्रहणं, सर्वग्रहणाच्च ता अनादिका अपर्यवसिताश्चेत्येक एव भङ्गकोऽनुमन्यते शेषभङ्गकत्रयस्य तु प्रतिषेधः । 'लोगागाससेढीओ ण' मित्यादौ तु 'साइयाओ सपज्जवसियाओ' इत्येको भङ्गकः सर्वश्रेणीभेदेष्वनुमन्यते, शेषाणां तु निषेधः, लोकाकाशस्य परिमितत्वादिति । 'अलोगागाससेढी' त्यादौ 'सिय साईयाओ सपज्जवसियाओ'त्ति प्रथमो भङ्गकः क्षुल्लकप्रतरप्रत्यासत्तौ ऊर्द्धायतश्रेणीराश्रित्यावसेयः, 'सिय साइयाओ अपज्जवसियाओ'त्ति द्वितीयः, स च लोकान्तादवधेरारभ्य सर्वतोऽवसेयः, 'सिय अणाईयाओ सपज्जवसियाओ'त्ति तृतीयः, स च लोकान्तसन्निधौ श्रेणीनामन्तस्य विवक्षणात्, 'सिय अणाईयाओ अपज्जवसियाओ'त्ति चतुर्थः, स च लोकं परिहृत्य याः श्रेणयस्तदपेक्षयेति । 'पाईणप-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७२९-७३३] दीप अनुक्रम [८७५-८८०]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥८६७॥

डीणाययाओ' इत्यादौ 'नो साईयाओ सपज्जवसियाओ'त्ति अलोके तिर्यक्श्रेणीनां सादित्वेऽपि सपर्यवसितत्वस्याभावाच्च प्रथमो भङ्गः, शेषास्तु त्रयः संभवन्त्यत एवाह–'सिय साइयाओ' इत्यादि। 'सेढीओ णं भंते! दव्वट्ठयाए किं कडजुम्माओ?' इत्यादि प्रश्नः, उत्तरं तु 'कडजुम्माओ'त्ति, कथं?, वस्तुस्वभावात्, एवं सर्वा अपि, यः पुनर्लोकालोकश्रेणीषु प्रदेशार्थतया विशेषोऽसावुच्यते–तत्र 'लोगागाससेढीओ णं भंते! पएसट्ठयाए' इत्यादौ स्यात् कृतयुग्मा अपि स्यात् द्वापरयुग्मा इत्येतदेवं भावनीयं–रुचकार्द्धादारभ्य यत्पूर्वं दक्षिणं वा लोकार्द्धं तदितरेण तुल्यमतः पूर्वापरश्रेणयो दक्षिणोत्तरश्रेणयश्च समसङ्ख्यप्रदेशाः, ताश्च काश्चित् कृतयुग्माः काश्चिद् द्वापरयुग्माश्च भवन्ति न पुनस्त्र्योजप्रदेशाः कल्योजप्रदेशा वा, तथाहि–असद्भावस्थापनया दक्षिणपूर्वाद् रुचकप्रदेशात्पूर्वतो यल्लोकश्रेण्यर्द्धं तत्प्रदेशशतमानं भवति, यच्चापरदक्षिणाद्रुचकप्रदेशादपरतो लोकश्रेण्यर्द्धं तदपि प्रदेशशतमानं, ततश्च शतद्वयस्य चतुष्कापहारे पूर्वापरायतलोकश्रेण्याः कृतयुग्मता भवति, तथा दक्षिणपूर्वाद्रुचकप्रदेशाद्दक्षिणो योऽन्त्यः प्रदेशस्तत आरभ्य पूर्वतो यल्लोकश्रेण्यर्द्धं तन्नवनवतिप्रदेशमानं, यच्चापरदक्षिणायताद्रुचकप्रदेशाद्दक्षिणो योऽन्त्यः प्रदेशस्तत आरभ्यापरतो लोकश्रेण्यर्द्धं तदपि च नवनवतिप्रदेशमानं, ततश्च द्वयोर्नवनवत्योर्मीलने चतुष्कापहारे च पूर्वापरायतलोकश्रेण्या द्वापरयुग्मता भवति, एवमन्यास्वपि लोकश्रेणीषु भावना कार्या, इह चेयं सङ्ग्रहगाथा—"तिरियाययाउ कडबायराओ लोगस्स संखसंखा वा। सेढीओ कडजुम्मा उड्ढमहेआययमसंखा॥ १॥" इति [तिर्यगायताः कृतयुग्माः लोकस्य संख्याता असंख्याता वा। श्रेणयः कृतयुग्माः ऊर्ध्वाधआयताः असंख्याताः॥ १] तथा 'अलोगागाससेढीओ णं भंते! पएसे'त्यादौ 'सिय कडजुम्माओ'त्ति याः क्षुल्लकप्रतर-

२५ शतके उद्देशः ३ आकाश-श्रेणिगति-श्रेणिगणिपिटकाल्पबहुत्वानि सू ७२९-७३३

॥८६७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७२९--७३३] दीप अनुक्रम [८७५--८८०]

द्वयसामीप्यात्तिरश्चीनतयोत्थिता याश्च लोकमस्पृशन्त्यः स्थितास्ता वस्तुस्वभावात्कृतयुग्माः, यावत्करणात् 'सिय तेओयाओ सिय दावरजुम्माओ'त्ति दृश्यं, तत्र च याः क्षुल्लकप्रतरद्वयस्याधस्तनादुपरितनाद्वा प्रतरादुत्थितास्तास्त्र्योजाः, यतः क्षुल्लकप्रतरद्वयस्याध उपरि च प्रदेशतो लोकस्य वृद्धिभावेनालोकस्य प्रदेशत एव हानिभावादेकैकस्य प्रदेशस्यालोकश्रेणीभ्योऽपगमो भवतीति, एवं तदनन्तराभ्यामुत्थिता द्वापरयुग्माः, 'सिय कलिओगाओ'त्ति तदनन्तराभ्यामेवोत्थिताः कल्योजाः, एवं पुनः पुनस्ता एव यथासम्भवं वाच्या इति । 'उड्ढायययाण'मित्यादि, इह क्षुल्लकप्रतरद्वयमानेन या उत्थिता ऊर्द्धायतास्ता द्वापरयुग्माः तत ऊर्द्धमधश्चैकैकप्रदेशवृद्ध्या कृतयुग्माः क्वचिच्चैकप्रदेशवृद्ध्याऽन्यत्र वृद्ध्यभावेन त्र्योजाः, कल्योजास्त्विह न संभवन्ति वस्तुस्वभावात्, एतच्च भूमौ लोकमालिख्य केदाराकारप्रदेशवृद्धिमन्तं ततः सर्वं भावनीयमिति ॥ अथ प्रकारान्तरेण श्रेणीप्ररूपणायाह—'कइ ण'मित्यादि, 'श्रेणयः'प्रदेशपङ्क्तयो जीवपुद्गलसञ्चरणविशेषिताः तत्र'उज्जुयायत'त्ति ऋजुश्चासावायता चेति ऋज्वायता यया जीवादय ऊर्द्धलोकादेरधोलोकादौ ऋजुतया यान्तीति, 'एगओ वंक'त्ति 'एकत' एकस्यां दिशि 'वङ्का' वक्रा यया जीवपुद्गला ऋजु गत्वा वक्रं कुर्वन्ति–श्रेण्यन्तरेण यान्तीति, स्थापना चेवम्–⌐ 'दुहओवंक'त्ति यस्यां वारद्वयं वक्रं कुर्वन्ति सा द्विधावक्रा, इयं चोर्ध्वक्षेत्रादाग्नेयदिशोऽधःक्षेत्रे वायव्यदिशि गत्वा य उत्पद्यते तस्य भवति, तथाहि—प्रथमसमये आग्नेय्यास्तिर्यग् नैर्ऋत्यां याति ततस्तिर्यगेव वायव्यां ततोऽधो वायव्यामेवेति, त्रिसमयेयं त्रसनाड्या मध्ये बहिर्वा भवतीति, 'एगओखह'त्ति यया जीवः पुद्गलो वा नाड्या वामपार्श्वादेस्तां प्रविष्टस्तयैव गत्वा पुनस्तद्वामपार्श्वादावुत्पद्यते सा एकतःखा, एकस्यां दिशि वामादिपार्श्वलक्षणायां खस्य–आकाशस्य लोकनाडी-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७२९-७३३]

दीप अनुक्रम [८७५-८८०]

व्यतिरिक्तलक्षणस्य भावादिति, इयं च द्वित्रिचतुर्वक्रोपेताऽपि क्षेत्रविशेषाश्रितेति भेदेनोक्ता, स्थापना चेयम् ⊡ 'दुहओखह'त्ति नाड्या वामपार्श्वादेर्नाडीं प्रविश्य तयैव गत्वाऽस्या एव दक्षिणपार्श्वादौ ययोत्पद्यते सा द्विधाखा, नाडीबहिर्भूतयोर्वामदक्षिणपार्श्वलक्षणयोर्द्वयोराकाशयोस्तया स्पृष्टत्वादिति, स्थापना चेयम् ⊡ 'चक्कवाल'त्ति चक्रवालं-मण्डलं, ततश्च यया मण्डलेन परिभ्रम्य परमाण्वादिरुत्पद्यते सा चक्रवाला, सा चैवम्—० 'अद्धचक्कवाल'त्ति चक्रवालार्द्धरूपा, सा चैवम् ⊡ ॥ अनन्तरं श्रेणय उक्ताः, अथ ता एवाधिकृत्य परमाण्वादिगतिप्रज्ञापनायाह— 'परमाणुपोग्गलाणं भंते ! इत्यादि, 'अणुसेढि'न्ति अनुकूला-पूर्वादिदिगभिमुखा श्रेणिर्यत्र तदनुश्रेणि, तद्यथा भवत्येवं गतिः प्रवर्तते, 'विसेढिं'ति विरुद्धा विदिगाश्रिता श्रेणी यत्र तद्विश्रेणि, इदमपि क्रियाविशेषणम् ॥ अनुश्रेणिविश्रेणिगमनं नारकादिजीवानां प्रागुक्तं, तच्च नरकावासादिषु स्थानेषु भवतीतिसम्बन्धात्पूर्वोक्तमपि नरकावासादिकं प्ररूपयन्नाह—'इमीसे ण'मित्यादि, इदं च नरकावासादिकं छद्मस्थैरपि द्वादशाङ्गप्रभावादवसीयत इति तत्प्ररूपणायाह— 'कइविहे ण' मित्यादि, 'से किं तं आयारो'त्ति प्राकृतत्वात्, अथ कोऽसावाचारः ?, अथवा किं तद्वस्तु यदाचार इत्येवं व्याख्येयम्, 'आयारेणं'ति आचारेण शास्त्रेण करणभूतेन अथवा आचारे अधिकरणभूते णमित्यलङ्कारे 'आयारगो' इत्यनेनेदं सूचितम्-'आयारगोयरविणयवेणइयसिक्खाभासाअभासाचरणकरणजायामायावित्तीओ आघवेज्जंति'त्ति, तत्राचारो-ज्ञानाद्यनेकभेदभिन्नः गोचरो-भिक्षाग्रहणविधिलक्षणः विनयो-ज्ञानादिविनयः वैनयिकं-विनयफलं कर्म्मक्षयादि शिक्षा-ग्रहणासेवनाभेदभिन्ना अथवा 'वेणइय'त्ति वैनयिको विनयो वा-शिष्यस्तस्य शिक्षा वैनयिकशिक्षा विने-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७२९- -७३३] दीप अनुक्रम [८७५- -८८०]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

यशिक्षा वा भाषा–सत्याऽसत्यामृषा च अभाषा–मृषा सत्यामृषा च चरणं–व्रतादि करणं–पिण्डविशुद्ध्यादि यात्रा–संयमयात्रा मात्रा–तदर्थमाहारमात्रा वृत्तिः-विविधैरभिग्रहविशेषैर्वर्त्तनं आचारश्च गोचरश्चेत्यादिर्द्वन्द्वस्ततश्च ता आख्यायन्ते–अभिधीयन्ते, इह च यत्र क्वचिदन्यतरोपादानेऽन्यतरगतार्थाभिधानं तत्सर्वं तत्प्राधान्यख्यापनार्थमेवावसेयमिति। 'एवं अंगपरूवणा भाणियव्वा जहा नंदीए'त्ति एवमिति–पूर्वप्रदर्शितप्रकारवता सूत्रेणाचाराद्यङ्गप्ररूपणा भणितव्या यथा नन्द्यां सा च तत एवावधार्या, अथ कियद्दूरमियमङ्गप्ररूपणा नन्द्युक्ता वक्तव्या इत्याह—'जाव सुत्तत्थो'गाहा, सूत्रार्थमात्रप्रतिपादनपरः सूत्रार्थोऽनुयोग इति गम्यते, खलुशब्दस्त्वेवकारार्थः स चावधारणे इति, एतदुक्तं भवति–गुरुणा सूत्रार्थमात्राभिधानलक्षण एव प्रथमोऽनुयोगः कार्यो, मा भूत् प्राथमिकविनेयानां मतिमोह इति, द्वितीयोऽनुयोगः सूत्रस्पर्शकनिर्युक्तिमिश्रः कार्य इत्येवंभूतो भणितो जिनादिभिः, 'तृतीयश्च'तृतीयः पुनरनुयोगो निरवशेषो निरवशेषस्य प्रसक्तानुप्रसक्तस्यार्थस्य कथनात्, 'एषः' अनन्तरोक्तः प्रकारत्रयलक्षणो 'भवति' स्यात् 'विधिः' विधानम् 'अनुयोगे' सूत्रस्यार्थेनानुरूपतया योजनलक्षणे विषयभूते इति गाथार्थः ॥ १ ॥ अनन्तरमङ्गप्ररूपणोक्ता, अङ्गेषु च नारकादयः प्ररूप्यन्त इति तेषामेवाल्पबहुत्वप्रतिपादनायाह—'एएसि ण'मित्यादि, 'पंचगइसमासेणं'ति पञ्चगत्यन्तर्भावेन, एषां चाल्पबहुत्वं तथा वाच्यं यथा बहुवक्तव्यतायां–प्रज्ञापनायास्तृतीयपदे इत्यर्थः, तच्चैवमर्थतः–"नरनेरइया देवा सिद्धा तिरिया कमेण इह होंति। थोवमसंखअसंखा अणंतगुणिया अणंतगुणा ॥१॥" [नरा नैरयिका देवाः सिद्धास्तिर्यञ्चः क्रमेणेह भवन्ति। स्तोका असङ्ख्या असङ्ख्याः अनन्तगुणिता अनन्तगुणाः ॥२॥] 'अट्ठगइसमासप्पाबहुयं च'त्ति अष्टगतिसमासेन यदल्पबहुत्वं तदपि यथा बहुवक्तव्यतायां तथा वाच्यम्,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७२९--७३३]

दीप अनुक्रम [८७५--८८०]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥८६९॥

२५ शतके उद्देशः ३ आकाश-श्रेणिगति-श्रेणिगणि-पिटकाल्प-बहुत्वानि सू ७२९-७३३

अष्टगतयश्चैवं–नरकगतिस्तथा तिर्यग्नरामरगतयः स्त्रीपुरुषभेदाद्द्वेधा सिद्धिगतिश्चेत्यष्टौ, अल्पबहुत्वं चैवमर्थतः—"नारी १ नर २ नेरइया ३ तिरित्थि ४ सुर ५ देवि ६ सिद्ध ७ तिरिया य ८। थोव असंखगुणा चउ संखगुणा णंतगुण दोन्नि ॥१॥" [नार्यो नरा नैरयिकास्तिर्यक्स्त्रियः सुरा देव्यः सिद्धास्तिर्यञ्चश्च स्तोका असङ्ख्यगुणाश्चत्वारः सङ्ख्यगुणा अनन्तगुणौ द्वौ ॥१॥] 'सइंदियाणं एगिंदियाण'मित्यादौ यावत्करणाद् द्वीन्द्रियादीनि चत्वारि पदानि वाच्यानि 'एयंपि जहा बहुवत्तव्वयाए तहेव'त्ति एतदप्यल्पबहुत्वं यथा बहुवक्तव्यतायामुक्तं तथा वाच्यं, तच्च पर्याप्तकापर्याप्तकभेदेनापि तत्रोक्तं इह तु यत्सामान्यतस्तदेव वाच्यमिति दर्शयितुमाह—'ओहियं पदं भाणियव्वं'ति तच्चैवमर्थतः–"पण १ चउ २ ति ३ दुय ४ अणिंदिय ५ एगिंदि ६ सइंदिया ७ कमा हुंति। थोवा १ तिन्नि य अहिया ४ दोणंतगुणा ६ विसेसहिया ७ ॥ [पञ्चचतुस्त्रिद्वीन्द्रिया अनिन्द्रियाः एकेन्द्रियाः सेन्द्रियाः क्रमाद् भवन्ति स्तोकास्त्रयोऽधिका द्वौ अनन्तगुणौ विशेषाधिकाश्च ॥१॥] 'सकाइयअप्पाबहुगं तहेव ओहियं भाणियव्वं'ति सकायिकपृथिव्यप्तेजोवायुवनस्पतित्रसकायिकाकायिकनां यथाऽल्पबहुत्वं सामान्यतस्तत्रोक्तं तथैवेहापि भणितव्यं, तच्चैवमर्थतः–"तस १ तेउ २ पुढवि ३ जल ४ वाउकाय ५ अकाय ६ वणस्सइ ७ सकाया ८। थोव १ असंखगुणा २ हिय तिन्नि उ ५ दोणंतगुण ७ अहिया ८ ॥" [त्रसास्तैजसाः पृथ्वी जलं वायुकाया अकाया वनस्पतयः सकायाः स्तोका असङ्ख्यातगुणास्त्रयोऽधिका द्वावनन्तगुणावधिकाश्च ॥१॥] अल्पबहुत्वाधिकारादेवेदमाह—'एएसि णं'मित्यादि, 'जीवाणं पोग्गलाणं' इह यावत्करणादिदं दृश्यं—'समयाणं दव्वाणं पएसाणं'ति 'जहा बहुवत्तव्वयाए'त्ति, तदेवमर्थतः—"जीवा १ पोग्गल २ समया ३ दव्व ४ पएसा य ५ पज्जवा ६ चेव। थोवा १ णंता २ णंता

॥८६९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७२९--७३३]

दीप अनुक्रम [८७५--८८०]

३ विसेसअहिया ४ दुवेऽणंता ६ ॥ १ ॥” [जीवाः पुद्गलाः समया द्रव्याणि प्रदेशाः पर्यवाश्चैव स्तोका अनन्ता अनन्ता विशेषाधिका द्वावनन्तौ ॥ १ ॥] इह भावना—यतो जीवाः प्रत्येकमनन्तानन्तैः पुद्गलैर्बद्धाः प्रायो भवन्ति, पुद्गलास्तु जीवैः संबद्धा असंबद्धाश्च भवन्तीत्यतः स्तोकाः पुद्गलेभ्यो जीवाः, यदाह—“जं पोग्गलावबद्धा जीवा पाएण होंति तो थोवा । जीवेहिं विरहिया अविरहिया व पुण पोग्गला संति ॥ २ ॥” [यत्पुद्गलावबद्धाः प्रायेण जीवास्ततः स्तोका भवन्ति जीवैर्विरहिता अविरहिताश्च पुनः पुद्गलाः सन्ति ॥ १ ॥] जीवेभ्योऽनन्तगुणाः पुद्गलाः, कथं ?, यत्तैजसादिशरीरं येन जीवेन परिगृहीतं तत्ततो जीवात्पुद्गलपरिमाणमाश्रित्यानन्तगुणं भवति, तथा तैजसशरीरात्प्रदेशतोऽनन्तगुणं कार्म्मणं, एवं चैते जीवप्रतिबद्धे अनन्तगुणे, जीवविमुक्ते च ते ताभ्यामनन्तगुणे भवतः, शेषशरीरचिन्ता त्विह न कृता, यस्मात्तानि मुक्तान्यपि स्वस्वस्थाने तयोरनन्तभागे वर्त्तन्ते, तदेवमिह तैजसशरीरपुद्गला अपि जीवेभ्योऽनन्तगुणाः किं पुनः कार्म्मणादिपुद्गलराशिसहिताः, तथा पञ्चदशविधप्रयोगपरिणताः पुद्गलाः स्तोकास्तेभ्यो मिश्रपरिणताः अनन्तगुणास्तेभ्योऽपि विस्रसापरिणता अनन्तगुणास्त्रिविधा एव च पुद्गलाः सर्व एव भवन्ति, जीवाश्च सर्वेऽपि प्रयोगपरिणतपुद्गलानां प्रतनुकेऽनन्तभागे वर्तन्ते, यस्मादेवं तस्माज्जीवेभ्यः सकाशात्पुद्गला बहुभिरनन्तानन्तकैर्गुणिताः सिद्धा इति, आह च— “जं जेण परिग्गहियं तेयादि जिएण देहमेक्केक्कं । तत्तो तमणंतगुणं पोग्गलपरिणामओ होइ ॥ १ ॥ तेयाओ पुण कम्मगमणंतगुणियं जओ विणिद्दिट्ठं । एवं ता अवबद्धाइं तेयगकम्माइं जीवेहिं ॥ २ ॥ इत्तोऽणंतगुणाइं तेसिं चिय जाणि होंति मुक्काइं । इह पुण थोवत्ताओ अग्गहणं सेसदेहाणं ॥ ३ ॥ जं तेसिं मुक्काइंपि होंति सट्ठाणऽणंतभागंमि । तेणं तदग्गहणमिहं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७२९--७३३] दीप अनुक्रम [८७५--८८०]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः२ ॥८७०॥

बद्धाबद्धाण दोण्हंपि ॥४॥ इह पुण तेयसरीरगबद्धच्चिय पोग्गला अणंतगुणा। जीवेहिंतो किं पुण सहिता अवसेसरासीहिं ? ॥ ५ ॥ थोवा भणिया सुत्ते पन्नरसविहप्पओगपाओग्गा। तत्तो मीसपरिणया णंतगुणा पोग्गला भणिया ॥ ६ ॥ तो वीससापरिणया तत्तो भणिया अणंतसंगुणिया। एवं तिविहपरिणया सव्वेवि य पोग्गला लोए ॥ ७ ॥ जं जीवा सव्वेवि य एक्कंमि पओगपरिणयाणंपि। वट्टंति पोग्गलाणं अणंतभागंमि तणुयम्मि ॥८॥ बहुएहिं अणन्ताणंतएहिं तेण गुणिया जिएहिंतो। सिद्धा हवंति सव्वेवि पोग्गला सव्वलोगंमि ॥९॥" [जीवेन येन यत्तैजसादिशरीरमेकैकं परिगृहीतं तदनन्तगुणं ततो भवति पुद्गलपरिणामात् ॥१॥ तैजसात्पुनः कार्मणमनन्तगुणितं यतो विनिर्दिष्टम्। एवं तावज्जीवैर्बद्धानि तैजसकार्मणानि ॥२॥ इतोऽनन्तगुणानि तेभ्यश्चैव यानि मुक्तानि भवन्ति। शेषदेहानां पुनरिहाग्रहणं स्तोकत्वात् ॥३॥ यत्तानि मुक्तान्यपि स्वस्थानानन्तभागे भवन्ति। तेन तदग्रहणमिह द्वयोरपि बद्धाबद्धयोः॥४॥ इह पुनस्तैजसशरीरबद्धा एव पुद्गला अनन्तगुणाः। जीवेभ्योऽवशेषराशिभिः सहिताः किं पुनः ?॥ ५ ॥ सूत्रे पञ्चदशविधप्रयोगप्रायोग्याः स्तोका भणिताः। ततो मिश्रपरिणताः पुद्गला अनन्तगुणा भणिताः ॥ ६ ॥ ततो विश्रसापरिणतास्ततोऽनन्तगुणिता भणिताः। एवं त्रिविधपरिणताः सर्वेऽपि च लोके पुद्गलाः॥ ७ ॥ सर्वेऽपि न जीवाः प्रयोगपरिणतानां पुद्गलानामेकस्मिन् यत् तनुकेऽनन्तभागे वर्त्तन्ते॥ ८॥ ततः तेन जीवेभ्यो बहुभिर्यदनन्तानन्तैर्गुणिताः पुद्गलाः सर्वलोके सिद्धा भवन्ति सर्वेऽपि ॥९॥] ननु पुद्गलेभ्योऽनन्तगुणाः समया इति यदुक्तं तन्न संगतं, तेभ्यस्तेषां स्तोकत्वात्, स्तोकत्वं च मनुष्यक्षेत्रमात्रवर्त्तित्वात् समयानां पुद्गलानां च सकललोकवर्त्तित्वादिति, अत्रोच्यते, समयक्षेत्रे ये केचन द्रव्यपर्यायाः सन्ति तेषामेकैकस्मिन् साम्प्रतसमयो वर्त्तते, एवं च साम्प्रतः

२५ शतके उद्देशः ३ आकाशश्रेणिगति-श्रेणिगणि-पिटकाल्पबहुत्वानि सू ७२९–७३३

॥८७०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७२९--७३३] दीप अनुक्रम [८७५--८८०]

समयो यस्मात्समयक्षेत्रद्रव्यपर्यवगुणो भवति तस्मादनन्ताः समया एकैकस्मिन् समये भवन्तीति, आह च—“होंति य अणंतगुणिया अद्धासमया उ पोग्गलेहिंतो । नणु थोवा ते नरखेत्तमेत्तत्तवत्तणाओत्ति ॥१॥ भन्नइ समयक्खेत्तंमि सन्ति जे केइ दव्वपज्जाया । वट्टइ संपयसमओ तेसिं पत्तेयमेक्केक्के ॥ २ ॥ एवं संपयसमओ जं समयक्खेत्तपज्जवब्भत्थो । तेणाणंता समया भवंति एक्केक्कसमयंमि ॥ ३ ॥” [पुद्गलेभ्योऽनन्तगुणा अद्धासमया भवन्ति । ननु ते स्तोकाः स्युर्नरक्षेत्रमात्रे वर्त्तमानत्वात् ॥ १ ॥ भण्यते समयक्षेत्रे ये केचिद् द्रव्यपर्यायाः सन्ति तेषां प्रत्येकमेकैकस्मिन् साम्प्रतसमयो वर्त्तते ॥ २ ॥ एवं साम्प्रतसमयो यत्समयक्षेत्रपर्यवाभ्यस्तस्तेनानन्ताः समया एकैकस्मिन् समये भवन्ति ॥ ३ ॥] एवं च वर्त्तमानोऽपि समयः पुद्गलेभ्योऽनन्तगुणो भवति, एकद्रव्यस्यापि पर्यवाणामनन्तानन्तत्वात्, किञ्च–न केवलमित्थं पुद्गलेभ्योऽनन्तगुणाः समयाः सर्वलोकद्रव्यप्रदेशपर्यायेभ्योऽप्यनन्तगुणास्ते संभवन्ति, तथाहि—यत् समस्तलोकद्रव्यप्रदेशपर्यवराशेः समयक्षेत्रद्रव्यप्रदेशपर्यवराशिना भक्ताल्लभ्यते तावत्सु समयेषु तात्त्विकेषु गतेषु लोकद्रव्यप्रदेशपर्यवसङ्ख्यासमाना औपचारिकसमयसङ्ख्या लभ्यते, एतद्भावना चैवं–किलासद्भावकल्पनया लक्षं लोकद्रव्यप्रदेशपर्यवाणां तस्य समयक्षेत्रद्रव्यप्रदेशपर्यवराशिना कल्पनया सहस्रमानेन भागे हृते शतं लब्धं, ततश्च किल तात्त्विकसमयशते गते लोकद्रव्यप्रदेशपर्यवसङ्ख्यातुल्या समयक्षेत्रद्रव्यप्रदेशपर्यवरूपसमयसङ्ख्या लभ्यते, समयक्षेत्रापेक्षयाऽसङ्ख्यातगुणलोकस्य कल्पनया शतगुणत्वात्, तथाऽन्येष्वपि तावत्सु तात्त्विकसमयेषु गतेषु तावन्त एवौपचारिकसमया भवन्तीति, एवमसङ्ख्यातेषु कल्पनया शतमानेषु तात्त्विकसमयेषु पौनःपुन्येन गतेष्वनन्ततमायां कल्पनया सहस्रतमायां वेलायां गता भवन्ति तात्त्विकसमयालोकद्रव्यप्रदेशपर्यव-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [७२९-७३३]

दीप अनुक्रम [८७५-८८०]

व्याख्या प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥८७१॥

२५ शतके उद्देशः ३ आकाशश्रेणिगति श्रेणिगणिपिटकाल्पबहुत्वानि सू ७२९-७३३

मात्राः कल्पनया लक्षप्रमाणाः, एवं चैकैकस्मिंस्तात्त्विकसमयेऽनन्तानामौपचारिकसमयानां भावात्सर्वलोकद्रव्यप्रदेशपर्यवरा शेरपि समया अनन्तगुणाः प्राप्नुवन्ति किं पुनः पुद्गलेभ्य इति, यदाह—"जं सव्वलोगदव्वप्पएसपज्जवगणस्स भइयस्स । लब्भइ समयक्खेत्तप्पएसपज्जायपिंडेण ॥ १ ॥ एवइसमएहिं गएहिं लोगपज्जवसमा समयसंखा । लब्भइ अन्नेहिंपि य तत्तियमेत्तेहिं तावइया ॥ २ ॥ एवमसंखेज्जेहिं समएहिं गएहिं तो गया होंति । समयाओ लोगदव्वप्पएसपज्जायमेत्ताओ ॥ ३ ॥ इय सव्वलोगपज्जवरासीओवि समया अणंतगुणा । पावंति गणेहंता किं पुण ता पोग्गलेहिंतो ?॥ ४ ॥" [यत्समयक्षेत्रप्रदेशपर्यायपिण्डेन भक्तस्य सर्वलोकद्रव्यप्रदेशपर्यवगणस्य लभ्यते ॥१॥ एतावत्सु समयेषु गतेषु लोकपर्यायसमा समयसङ्ख्या लभ्यते अन्यैरपि तावन्मात्रैस्तावती ॥२॥ एवमसङ्ख्येयेषु समयेषु गतेषु ते लोकद्रव्यप्रदेशपर्यायप्रमाणाः समया गता भवंति ॥ ३ ॥ एवं सर्वलोकपर्यवराशेरपि समया अनन्तगुणा गण्यमाना भवन्ति किं पुनस्ते पुद्गलेभ्यः ? ॥ ४ ॥] अन्यस्तु प्रेरयति–उत्कृष्टतोऽपि षण्मासमात्रमेव सिद्धिगतेरन्तरं भवति तेन च सेत्स्यद्भ्यः सिद्धेभ्योऽपि च जीवेभ्योऽसङ्ख्यातगुणा एव समया भवन्ति कथं पुनः सर्वजीवेभ्योऽनन्तगुणा भविष्यन्तीति, इहाप्यौपचारिकसमयापेक्षया समयानामनन्तगुणत्वं वाच्यमिति, अथ समयेभ्यो द्रव्याणि विशेषाधिकानीति, कथम् ?, अत्रोच्यते, यस्मात्सर्वे समयाः प्रत्येकं द्रव्याणि शेषाणि च जीवपुद्गलधर्मास्तिकायादीनि तेष्वेव क्षिप्तानीत्यतः केवलेभ्यः समयेभ्यः सकाशात् समस्तद्रव्याणि विशेषाधिकानि भवन्ति न सङ्ख्यातगुणादीनि, समयद्रव्यापेक्षया जीवादिद्रव्याणामल्पतरत्वादिति, उक्तञ्च—"एत्तो समएहिंतो होंति विसेसाहियाइं दव्वाइं । जं भेया सव्वेच्चिय समया दव्वाइं पत्तेयं ॥ १ ॥ सेसाइं जीवपोग्गलधम्माधम्मंबराइं छूढाइं । दव्वट्ठाए समएसु

॥८७१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७२९--७३३]

दीप अनुक्रम [८७५--८८०]

तेण दवा विसेसहिया ॥२॥" [भेदा यत्सर्वेऽपि समयाः प्रत्येकं द्रव्याणीतः समयेभ्यो द्रव्याणि विशेषाधिकानि भवन्ति ॥१॥ शेषाणि जीवपुद्गलधर्माधर्माकाशानि प्रक्षिप्तानि द्रव्यार्थतया समयेषु तेन द्रव्याणि विशेषाधिकानि ॥२॥] नन्वद्धासमयानां कस्माद्द्रव्यत्वमेवेष्यते ? समयस्कन्धापेक्षया प्रदेशार्थत्वस्यापि तेषां युज्यमानत्वात्, तथाहि–यथा स्कन्धो द्रव्यं सिद्धं स्कन्धावयवा अपि यथा प्रदेशाः सिद्धाः एवं समयस्कन्धवर्त्तिनः समया भवन्ति प्रदेशाश्च द्रव्यं चेति, अत्रोच्यते, परमाणूनामन्योऽन्यसव्यपेक्षत्वेन स्कन्धत्वं युक्तं, अद्धासमयानां पुनरन्योऽन्यापेक्षिता नास्ति, यतः कालसमयाः प्रत्येकत्वे च काल्पनिकस्कन्धाभावे च वर्त्तमानाः प्रत्येकवृत्तय एव तत्स्वभावत्वात् तस्मात्तेऽन्योऽन्यनिरपेक्षाः अन्योऽन्यनिरपेक्षत्वाच्च न ते वास्तवस्कन्धनिष्पादकास्ततश्च नैषां प्रदेशार्थतेति, उक्तश्चात्र—"आहऽद्धासमयाणं किं पुण दवट्ठए व नियमेणं। तेसिं पएसट्ठाविहु जुज्जइ खंधं समासज्ज ॥ १ ॥ [ग्रन्थाग्रम् १७०००] सिद्धं खंधो दवं तदवयवावि य जहा पएसत्ति । इय तवत्ती समया होंति पएसा य दवं च ॥ २ ॥ भन्नइ परमाणूणं अन्नोन्नमवेक्ख खंधया सिद्धा । अद्धासमयाणं पुण अन्नोन्नावेक्खया नत्थि ॥ ३ ॥ अद्धासमया जम्हा पत्तेयत्ते य खंधभावे य । पत्तेयवत्तिणो च्चिय ते तेणऽन्नोन्ननिरवेक्खा ॥४॥" [आहाद्धासमयानां किं पुनर्नियमेन द्रव्यार्थतैव तेषां स्कन्धं समाश्रित्य प्रदेशार्थताऽपि युज्यते ॥१॥ स्कन्धो द्रव्यं सिद्धं तदवयवा अपि च यथा प्रदेशा इति । एवं तद्वर्त्तिनः समयाः प्रदेशा भवन्ति द्रव्यं च ॥ २ ॥ भण्यते परमाणूनामन्योऽन्यापेक्षया स्कन्धता सिद्धा । अद्धासमयानां पुनरन्योऽन्यापेक्षता नास्ति ॥ ३ ॥ अद्धासमया यस्मात्प्रत्येकत्वे स्कन्धभावे च । प्रत्येकवर्त्तिनश्चैव ते तेनान्योऽन्यनिरपेक्षाः ॥ ४ ॥] अथ द्रव्येभ्यः प्रदेशा अनन्तगुणा इत्येतत्कथम् ?, उच्यते,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७२९--७३३] दीप अनुक्रम [८७५--८८०]	

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥८७२॥

२५ शतके उद्देशः ३ आकाश-श्रेणिगति-श्रेणिगणि-पिटकाल्प-बहुत्वानि सू ७२९-७३३ ॥८७२॥

अद्धासमयद्रव्येभ्य आकाशप्रदेशानामनन्तगुणत्वात्, ननु क्षेत्रप्रदेशानां कालसमयानां च समानेऽप्यनन्तत्वे किं कारण-माश्रित्याकाशप्रदेशा अनन्तगुणाः कालसमयाश्च तदनन्तभागवर्त्तिनः ? इति, उच्यते, एकस्यामनाद्यपर्यवसितायामाकाश-प्रदेशश्रेण्यामेकैकप्रदेशानुसारतस्तिर्यगायतश्रेणीनां कल्पनेन ताभ्योऽपि चैकैकप्रदेशानुसारेणैवोर्द्ध्वाधआयतश्रेणीविरचने-नाकाशप्रदेशघनो निष्पाद्यते, कालसमयश्रेण्यां तु सैव श्रेणी भवति न पुनर्धनस्ततः कालसमयाः स्तोका भवन्तीति, इह गाथाः—"एत्तो सबपएसाणंतगुणा खप्पएसणंतत्ता । सबागासमणंतं जेण जिणिंदेहिं पन्नत्तं ॥ १ ॥" आह समेऽणंतत्तंमि खेत्तकालाण किं पुण निमित्तं। भणियं खमणंतगुणं कालो य सिमणंतभागंमि ?॥ २ ॥ भन्नइ नभसेढीए अणाइयाए अप-ज्जवसियाए। निप्फज्जइ खंमि घणो न उ कालो तेण सो थोवो ॥ ३ ॥" [इतः सर्वप्रदेशाः खप्रदेशानन्तत्वादनन्त-गुणाः सर्वाकाशमनन्तं येन जिनेन्द्रैः प्रज्ञप्तम् ॥ १ ॥ आहानन्तत्वे समे क्षेत्रकालयोः किं पुनः कारणं खमनन्तगुणं भणितं कालश्चानन्तभागे तस्य ॥ २ ॥ भण्यते नभःश्रेणौ अनाद्यपर्यवसितायां निष्पद्यते खे घनो न तु काले तेन स स्तोकः ॥३॥] प्रदेशेभ्योऽनन्तगुणाः पर्याया इति, एतद्भावनार्थं गाथा—"एत्तो य अणंतगुणा पज्जाया जेण नहपएसम्मि । एक्केक्कंमि अणंता अगुरुलहू पज्जवा भणिया ॥ १ ॥" [इतश्चानन्तगुणाः पर्याया येन नभःप्रदेशे एकैकस्मिन्ननन्ता अगुरुलघुप-र्यवा भणिताः ॥ १ ॥] ॥ इति पञ्चविंशतितमशते तृतीयः ॥ २५—३ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र पञ्चविंशतितमे शतके तृतीय उद्देशक: परिसमाप्त:

प्रत सूत्रांक [७३४]

दीप अनुक्रम [८८१]

तृतीयोद्देशके संस्थानादीनां परिमाणमुक्तं, चतुर्थे तु परिमाणस्यैव भेदा उच्यन्ते, इत्येवंसम्बन्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

कति णं भंते ! जुम्मा पन्नत्ता ?, गोयमा ! चत्तारि जुम्मा पं०, तं०–कडजुम्मे जाव कलिओगे, से केण० एवं वु० चत्तारि जुम्मा पं० कडजुम्मे जहा अट्ठारसमसते चउत्थे उद्देसए तहेव जाव से तेण० गोयमा ! एवं वु० । नेरइयाणं भंते ! कति जुम्मा प० ?, गोयमा ! चत्तारि जुम्मा पं०, तंजहा–कडजुम्मे जाव कलियोए, से केण० एवं वु० नेरइयाणं चत्तारि जुम्मा पं०, तं०–कडजुम्मे अट्ठो तहेव एवं जाव वाउकाइयाणं, वणस्सइकाइयाणं भंते ! पुच्छा, गोयमा ! वणस्सइकाइया सिय कडजुम्मा सिय तेयोया सिय दावरजुम्मा सिय कलियोगा, से केणट्ठे० एवं वुचइ वणस्सइकाइया जाव कलियोगा ?, गोयमा ! उववायं पडुच, से तेणट्ठेणं तं चेव, बेंदियाणं जहा नेरइयाणं एवं जाव वेमाणि०, सिद्धाणं जहा वणस्सइकाइयाणं ॥ कतिविहा णं भंते ! सवदव्वा प० ?, गोयमा ! छविहा सवदव्वा प० तंजहा–धम्मत्थिकाए अधम्मत्थिकाए जाव अद्धासमए । धम्मत्थिकाए णं भंते ! दवट्ठयाए किं कडजुम्मे जाव कलिओगे ?, गोयमा ! नो कडजुम्मे नो तेयोए नो दावरजुम्मे कलिओए, एवं अहम्मत्थिकाएवि, एवं आगासत्थिकाएवि, जीवत्थिकाए णं भंते ! पुच्छा, गोयमा ! कडजुम्मे नो तेयोये नो दावरजुम्मे नो कलियोये, पोग्गलत्थिकाए णं भंते ! पुच्छा, गोयमा ! सिय कडजुम्मे जाव सिय कलियोगे, अद्धासमये जहा जीवत्थिकाए ॥ धम्मत्थिकाए णं भंते ! पएसट्ठयाए किं कडजुम्मे ? पुच्छा, गोयमा ! कडजुम्मे नो तेयोए नो दावरजुम्मे नो कलियोगे एवं जाव अद्धासमए ॥ एएसि णं भंते ! धम्म-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ पञ्चविंशतितमे शतके चतुर्थ-उद्देशकः आरभ्यते

प्रत सूत्रांक [७३४]

दीप अनुक्रम [८८१]

त्थिकायअधम्मत्थिकाय जाव अद्धासमयाणं दवट्ठयाए० एएसि णं अप्पाबहुगं जहा बहुवत्तव्वयाए तहेव निरवसेसं ॥ धम्मत्थिकाए णं भंते ! किं ओगाढे अणोगाढे ?, गोयमा ! ओगाढे नो अणोगाढे, जइ ओगाढे किं संखेज्जपएसोगाढे असंखेज्जपएसोगाढे अणंतपएसोगाढे ?, गोयमा ! नो संखेज्जपएसोगाढे असंखेज्जपएसोगाढे नो अणंतपएसोगाढे, जइ असंखेज्जपएसोगाढे किं कडजुम्मपएसोगाढे ? पुच्छा, गोयमा ! कडजुम्मपएसोगाढे नो तेओगे नो दावरजुम्मे नो कलियोगपएसोगाढे, एवं अधम्मत्थिकायेवि, एवं आगासत्थिकायेवि, जीवत्थिकाये पुग्गलत्थिकाये अद्धासमए एवं चेव ॥ इमा णं भंते ! रयणप्पभा पुढवी किं ओगाढा अणोगाढा जहेव धम्मत्थिकाए एवं जाव अहेसत्तमा, सोहम्मे एवं चेव, एवं जाव ईसिपब्भारा पुढवी ॥ (सूत्रं ७३४)

'कति ण'मित्यादि, 'जुम्म'त्ति सञ्ज्ञाशब्दत्वाद्राशिविशेषाः । 'नेरइयाणं भंते ! कइ जुम्मा ?' इत्यादौ 'अट्ठो तहेव'त्ति स चार्थः—'जेणं नेरइया चउक्कएणं अवहारेणं २ अवहीरमाणा २ चउपज्जवसिया ते णं नेरइया कडजुम्मे'त्यादि इति । वनस्पतिकायिकसूत्रे 'उववायं पडुच्च'त्ति, यद्यपि वनस्पतिकायिका अनन्तत्वेन स्वभावात् कृतयुग्मा एव प्राप्नुवन्ति तथाऽपि गत्यन्तरेभ्य एकादिजीवानां तत्रोत्पादमङ्गीकृत्य तेषां चतूरूपत्वमयौगपद्येन भवतीत्युच्यते, उद्वर्त्तनामप्यङ्गीकृत्य स्यादेतत् केवलं सेह न विवक्षितेति ॥ अथ कृतयुग्मादिभिरेव राशिभिर्द्रव्याणां प्ररूपणायेदमाह—'कतिविहा णं भंते ! सव्वदव्वा' इत्यादि, तत्र 'कतिविधानि' कतिस्वभावानि कतीत्यर्थः, 'धम्मत्थिकाए ण'मित्यादि 'कलियोगे'त्ति एकत्वाद्धर्मास्तिकायस्य चतुष्कापहाराभावेनैकस्यैवावस्थानात्कल्योज एवासाविति, 'जीवत्थी'त्यादि, जीवद्रव्याणामवस्थिता-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [७३४]

दीप अनुक्रम [८८१]

नन्तत्वात्कृतयुग्मतैव, 'पोग्गलत्थिकाए' इत्यादि, पुद्गलास्तिकायस्यानन्तभेदत्वेऽपि सङ्घातभेदभाजनत्वाच्चातुर्विध्यमध्येयं, अद्धासमयानां त्वतीतानागतानामवस्थितानन्तत्वात्कृतयुग्मत्वमत एवाह–'अद्धासमए जहा जीवत्थिकाए'त्ति ॥ उक्ता द्रव्यार्थता, अथ प्रदेशार्थता तेषामेवोच्यते–'धम्मत्थी'त्यादि, सर्वाण्यपि द्रव्याणि कृतयुग्मानि प्रदेशार्थतया। अवस्थितासङ्ख्यातप्रदेशत्वादवस्थितानन्तप्रदेशत्वाच्चेति ॥ अथैतेषामेवाल्पबहुत्वमुच्यते–'एएसि णं' मित्यादि, 'जहा बहुवत्तव्वयाए'त्ति यथा प्रज्ञापनायास्तृतीयपदे, तच्चैवमर्थतः–धर्मास्तिकायादयस्त्रयो द्रव्यार्थतया तुल्या एकैकद्रव्यरूपत्वात्, तदन्यापेक्षया चाल्पे, जीवास्तिकायस्ततोऽनन्तगुणो जीवद्रव्याणामनन्तत्वात्, एवं पुद्गलास्तिकायाद्धासमयाः, प्रदेशार्थचिन्तायां त्वाद्यौ प्रत्येकमसङ्ख्येयप्रदेशत्वेन तुल्यौ तदन्येभ्यः स्तोकौ च, जीवपुद्गलाद्धासमयाकाशास्तिकायास्तु क्रमेणानन्तगुणा इत्यादि ॥ अथ द्रव्याण्येव क्षेत्रापेक्षया कृतयुग्मादिभिः प्ररूपयन्नाह—'धम्मत्थिकाए' इत्यादि, 'असंखेज्जपएसोगाढे'त्ति असङ्ख्यातेषु लोकाकाशप्रदेशेष्ववगाढोऽसौ लोकाकाशप्रमाणत्वात्तस्येति, 'कडजुम्मपएसोगाढे'त्ति लोकस्यावस्थितासङ्ख्येयप्रदेशत्वेन कृतयुग्मप्रदेशता, लोकप्रमाणत्वेन च धर्मास्तिकायस्यापि कृतयुग्मतैव, एवं सर्वास्तिकायानां लोकावगाहित्वात्तेषां नवरमाकाशास्तिकायस्यावस्थितानन्तप्रदेशत्वादात्मावगाहित्वाच्च कृतयुग्मप्रदेशावगाढताऽद्धासमयस्य चावस्थितासङ्ख्येयप्रदेशात्मकमनुष्यक्षेत्रावगाहित्वादिति। अथावगाहप्रस्तावादिदमाह–'इमा णं'मित्यादि ॥ अथ कृतयुग्मादिभिरेव जीवादीनि षड्विंशतिपदान्येकत्वपृथक्त्वाभ्यां निरूपयन्नाह—

जीवे णं भंते ! दव्वट्ठयाए किं कडजुम्मे पुच्छा, गोयमा ! नो कडजुम्मे नो तेयोगे नो दावरजुम्मे कलिओए,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७३५] दीप अनुक्रम [८८२]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥८७४॥

२५ शतके उद्देशः ४ द्रव्यप्रदेशार्थ तया कृतयुग्मादि सू ७३५

एवं नेरइएवि एवं जाव सिद्धे। जीवा णं भंते! दव्वट्ठयाए किं कडजुम्मा? पुच्छा, गोयमा! ओघादेसेणं कडजुम्मा नो तेयोगा नो दावर० नो कलिओगा, विहाणादेसेणं नो कडजुम्मा नो तेयोगा नो दावरजुम्मा कलियोगा, नेरइया णं भंते! दव्वट्ठयाए पुच्छा, गोयमा! ओघादेसेणं सिय कडजुम्मा जाव सिय कलियोगा, विहाणादेसेणं णो कडजुम्मा णो तेयोगा णो दावरजुम्मा कलिओगा एवं जाव सिद्धा॥ जीवे णं भंते! पएसट्ठयाए किं कड० पुच्छा, गोयमा! जीवपएसे पडुच्च कडजुम्मे नो तेयोगे नो दावर० नो कलियोगे, सरीरपएसे पडुच्च० सिय कडजुम्मे जाव सिय कलियोगे, एवं जाव वेमाणिए। सिद्धे णं भंते! पएस० किं कडजुम्मे? पुच्छा, गोयमा! कडजुम्मे नो तेयोगे नो दावरजुम्मे नो कलिओए। जीवा णं भंते! पएसट्ठयाए किं कडजुम्मे? पुच्छा, गोयमा! जीवपएसे पडुच्च ओघादेसेणवि विहाणादेसेणवि कडजुम्मा नो तेयोगा नो दावर० नो कलिओगा, सरीरपएसे पडुच्च ओघादेसेणं सिय कडजुम्मा जाव सिय कलियोगा, विहाणादेसेणं कडजुम्मावि जाव कलियोगावि, एवं नेरइयावि, एवं जाव वेमाणिया। सिद्धा णं भंते! पुच्छा, गोयमा! ओघादेसेणवि विहाणादेसेणवि कडजुम्मा नो तेयोगा नो दावरजुम्मा नो कलिओगा॥ (सूत्रं ७३५)

'जीवे ण'मित्यादि, द्रव्यार्थतयैको जीवः एकमेव द्रव्यं तस्मात्कल्योजो न शेषाः। 'जीवा ण'मित्यादि, जीवा अवस्थितानन्तत्वादोघादेशेन–सामान्यतः कृतयुग्माः, 'विहाणादेसेणं'ति भेदप्रकारेणैकैकश इत्यर्थः कल्योजा एकत्वात्तत्स्वरूपस्य। 'नेरइया ण'मित्यादौ 'ओघादेसेणं'ति सर्वे एव परिगण्यमानाः 'सिय कडजुम्म'त्ति कदाचिच्चतुष्कापहारेण ॥८७४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७३५]

दीप अनुक्रम [८८२]

चतुरस्रा भवन्ति, एवं 'सिय तेओयाओ' इत्याद्यप्यवगन्तव्यमिति ॥ उक्ता द्रव्यार्थतया जीवादयः, अथ तथैव प्रदेशार्थतयोच्यन्ते—'जीवे ण'मित्यादि, 'जीवपएसे पडुच्च कडजुम्म'त्ति असङ्ख्यातत्वादवस्थितत्वाच्च जीवप्रदेशानां चतुरस्र एव जीवः प्रदेशतः, 'सरीरपएसे पडुच्चे'त्यादि, औदारिकादिशरीरप्रदेशानामनन्तत्वेऽपि संयोगवियोगधर्म्मत्वादयुगपच्चतुर्विधता स्यात् । 'जीवा ण'मित्यादि, 'ओघादेसेणवि विहाणादेसेणवि कडजुम्म'त्ति समस्तजीवानां प्रदेशा अनन्तत्वादवस्थितत्वाच्च एकैकस्य जीवस्य प्रदेशा असङ्ख्यातत्वादवस्थितत्वाच्च चतुरस्रा एव, शरीरप्रदेशापेक्षया त्वोघादेशेन सर्वजीवशरीरप्रदेशानामयुगपच्चातुर्विध्यमनन्तत्वेऽपि तेषां सङ्घातभेदभावेनानवस्थितत्वात्, 'विहाणादेसेणं कडजुम्मावी'त्यादि, विधानादेशेनैकैकजीवशरीरस्य प्रदेशगणनायां युगपच्चातुर्विध्यं भवति, यतः कस्यापि जीवशरीरस्य कृतयुग्मप्रदेशता कस्यापि त्र्योजप्रदेशतेत्येवमादीति ॥ अथ क्षेत्रतो जीवादि तथैवाह—

जीवे णं भंते ! किं कडजुम्मपएसोगाढे पुच्छा, गोयमा ! सिय कडजुम्मपएसोगाढे जाव सिय कलिओगपएसोगाढे, एवं जाव सिद्धे । जीवा णं भंते ! किं कडजुम्मपएसोगाढा पुच्छा, गोयमा ! ओघादेसेणं कडजुम्मपएसोगाढा नो तेयोग० नो दावर० नो कलियोग०, विहाणादेसेणं कडजुम्मपएसोगाढावि जाव कलियोगपएसोगाढावि, नेरइयाणं पुच्छा, गोयमा ! ओघादेसेणं सिय कडजुम्मपएसोगाढा जाव सिय कलियोगपएसोगाढा, विहाणादेसेणं कडजुम्मपएसोगाढावि जाव कलियोगपएसोगाढावि, एवं एगिंदियसिद्धवज्जा सव्वेवि, सिद्धा एगिंदिया य जहा जीवा । जीवे णं भंते ! किं कडजुम्मसमयट्ठितीए जाव सिय क० पुच्छा, गोयमा ! कड-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [७३६]

दीप अनुक्रम [८८३]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥८७५॥

२५ शतके उद्देशः ४ अवगाह-स्थिति-कृत० सू ७३६

जुम्मसमयट्ठितीए नो तेयोग० नो दावर० नो कलियोगसमयट्ठितीए। नेरइए णं भंते ! पुच्छा, गोयमा ! सिय कडजुम्मसमयट्ठितीए जाव सिय कलियोगसमयट्ठितीए, एवं जाव वेमाणिए, सिद्धे जहा जीवे। जीवा णं भंते ! पुच्छा, गोयमा ! ओघादेसेणवि विहाणादेसेणवि कडजुम्मसमयट्ठितीया नो तेओग० नो दावर० नो कलिओग०। नेरइया णं० पुच्छा, गोयमा ! ओघादेसेणं सिय कडजुम्मसमयट्ठितीया जाव सिय कलियोगसमयट्ठितीयावि, विहाणादेसेणं कडजुम्मसमयट्ठितीयावि जाव कलियोगसमयट्ठितीयावि, एवं जाव वेमाणिया, सिद्धा जहा जीवा ॥ (सूत्रं ७३६)

'जीवे ण'मित्यादि, औदारिकादिशरीराणां विचित्रावगाहनत्वाच्चतुरग्रादित्वमस्तीत्यत एवाह–'सिय कडजुम्मे'त्यादि। जीवा णं भंते !' इत्यादि, समस्तजीवैरवगाढानां प्रदेशानामसङ्ख्यातत्वादवस्थितत्वाच्चतुरग्रता एवेत्योघादेशेन कृतयुग्मप्रदेशावगाढाः, विधानादेशतस्तु विचित्रत्वादवगाहनाया युगपच्चतुर्विधास्ते, नारकाः पुनरोघतो विचित्रपरिणामत्वेन विचित्रशरीरप्रमाणत्वेन विचित्रावगाहप्रदेशप्रमाणत्वादयौगपद्येन चतुर्विधा अपि, विधानतस्तु विचित्रावगाहनत्वादेकदाऽपि चतुर्विधास्ते भवन्ति, 'एवं एगिंदियसिद्धवज्जा सव्वेवि'त्ति असुरादयो नारकवद्वक्तव्या इत्यर्थः, तत्रौघतस्ते कृतयुग्मादयोऽयौगपद्येन विधानतस्तु युगपदेवेति, 'सिद्धा एगिंदिया य जहा जीव'त्ति सिद्धा एकेन्द्रियाश्च यथा जीवास्तथा वाच्या इत्यर्थः, ते चौघतः कृतयुग्मा एव विधानतस्तु युगपच्चतुर्विधा अपि, युक्तिस्तूभयत्रापि प्राग्वत् ॥ अथ स्थितिमाश्रित्य जीवादि तथैव प्ररूप्यते–'जीवे ण'मित्यादि, तत्रातीतानागतवर्त्तमानकालेषु जीवोऽस्तीति सर्वाद्धाया अनन्त- ॥८७५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समयात्मकत्वादवस्थितत्वाच्चासौ कृतयुग्मसमयस्थितिक एव, नारकादिस्तु विचित्रसमयस्थितिकत्वात्कदाचिच्चतुरग्रः कदाचिदन्यत्रितयवर्त्तीति । 'जीवा ण'मित्यादि, बहुत्वे जीवा ओघतो विधानतश्च चतुरग्रसमयस्थितिका एव अनाद्यनन्तत्वेनानन्तसमयस्थितिकत्वात्तेषां, नारकादयः पुनर्विचित्रसमयस्थितिकाः, तेषां च सर्वेषां स्थितिसमयमीलने चतुष्कापहारे चौघादेशेन स्यात् कृतयुग्मसमयस्थितिका इत्यादि, विधानतस्तु युगपच्चतुर्विधा अपि ॥ अथ भावतो जीवादि तथैव प्ररूप्यते—

जीवे णं भंते ! कालवन्नपज्जवेहिं किं कडजुम्मे ? पुच्छा, गोयमा ! जीवपएसे पडुच्च णो कडजुम्मे जाव णो कलियोगे सरीरपएसे पडुच्च सिय कडजुम्मे जाव सिय कलियोगे, एवं जाव वेमाणिए, सिद्धो ण चेव पुच्छिज्जति । जीवा णं भंते ! कालवन्नपज्जवेहिं पुच्छा, गोयमा ! जीवपएसे पडुच्च ओघादेसेणवि विहाणादेसेणवि णो कडजुम्मा जाव णो कलिओगा, सरीरपएसे पडुच्च ओघादेसेणं सिय कडजुम्मा जाव सिय कलियोगा, विहाणादेसेणं कडजुम्मावि जाव कलि०, एवं जाव वेमा०, एवं नीलवन्नपज्जवेहिं दंडओ भा० एगत्तपुहत्तेणं एवं जाव लुक्खफासपज्जवेहिं ॥ जीवे णं भंते ! आभिणिबोहियणाणपज्जवेहिं किं कडजुम्मे पुच्छा, गोयमा ! सिय कडजुम्मे जाव सिय कलियोगे, एवं एगिंदियवज्जं जाव वेमाणिए । जीवा णं भंते ! आभिणिबोहियणाणपज्जवेहिं पुच्छा, गोयमा ! ओघादेसेणं सिय कडजुम्मा जाव सिय कलियोगा, विहाणादेसेणं कडजुम्मावि जाव कलियोगावि, एवं एगिंदियवज्जं जाव वेमाणिया, एवं सुयणाणपज्जवेहिवि, ओहिणाणपज्जवेहिवि एवं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७३७] दीप अनुक्रम [८८४]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः२

॥८७६॥

चेव, नवरं विकलिंदियाणं नत्थि ओहिनाणं, मणपज्जवनाणंपि एवं चेव, नवरं जीवाणं मणुस्साण य, सेसाणं नत्थि, जीवे णं भंते! केवलनाणप० किं कडजुम्मा पुच्छा, गोयमा! कडजुम्मे णो तेयोगे णो दावरजुम्मे णो कलियोगे, एवं मणुस्सेवि, एवं सिद्धेवि, जीवा णं भंते! केवलनाणपुच्छा, गोयमा! ओघादेसेणवि विहाणादे० कडजुम्मा नो तेओ० नो दावर० णो कलियो०, एवं मणुस्सावि, एवं सिद्धावि। जीवे णं भंते! मइअन्नाणपज्जवेहिं किं कडजुम्मे० ?, जहा आभिणिबोहियणाणपज्जवेहिं तहेव दो दंडगा, एवं सुयन्नाणपज्जवेहिवि, एवं विभंगनाणपज्जवेहिवि। चक्खुदंसणअचक्खुदंसणओहिदंसणपज्जवेहिवि एवं चेव, नवरं जस्स जं अत्थि तं भाणियव्वं, केवलदंसणपज्जवेहिं जहा केवलनाणपज्जवेहिं॥ (सूत्रं ७३७)

'जीवे ण'मित्यादि, 'जीवपएसे पडुच्च णो कडजुम्म'त्ति अमूर्त्तत्वाज्जीवप्रदेशानां न कालादिवर्णपर्यवानाश्रित्य कृतयुग्मादिव्यपदेशोऽस्ति, शरीरवर्णापेक्षया तु क्रमेण चतुर्विधोऽपि स्याद् अत एवाह–'सरीरे'त्यादि, 'सिद्धो न चेव पुच्छिज्जइ'त्ति अमूर्त्तत्वेन तस्य वर्णाद्यभावात्। 'आभिणिबोहियनाणपज्जवेहिं'ति आभिनिबोधिकज्ञानस्यावरणक्षयोपशमभेदेन ये विशेषास्तस्यैव च ये निर्विभागपलिच्छेदास्ते आभिनिबोधिकज्ञानपर्यवास्तैः, तेषां चानन्तत्वेऽपि क्षयोपशमस्य विचित्रत्वेनानवस्थितपरिणामत्वादयौगपद्येन जीवश्चतुरग्रादिः स्यात्, 'एवं एगिंदियवज्जं'ति एकेन्द्रियाणां सम्यक्त्वाभावान्नास्ति आभिनिबोधिकमिति न तदपेक्षया तेषां कृतयुग्मादिव्यपदेश इति। 'जीवा ण'मित्यादि, बहुत्वे समस्तानामाभिनिबोधिकज्ञानपर्यवाणां मीलने चतुष्कापहारे चायुगपच्चतुरग्रादित्वमोघतः स्याद्विचित्रत्वेन क्षयोपशमस्य तत्पर्यायाणामनव-

२५ शतके उद्देशः ४ पर्याय-कृतयुग्मादि सू ७३७

॥८७६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७३७]

दीप अनुक्रम [८८४]

स्थितत्वात्, विधानतस्त्वेकदैव चत्वारोऽपि तद्भेदाः स्युरिति, केवलज्ञानपर्यवपक्षे च सर्वत्र चतुरस्रत्वमेव वाच्यं, तस्यानन्तपर्यायत्वादवस्थितत्वाच्च, एतस्य च पर्याया अविभागपलिच्छेदरूपा एवावसेया न तु तद्विशेषा एकविधत्वात्तस्येति। 'दो दंडग'त्ति एकत्वबहुत्वकृतौ द्वौ दण्डकाविति॥ पूर्वं 'सरीरपएसे पडुच्चे'त्युक्तमिति शरीरप्रस्तावाच्छरीराणि प्ररूपयन्नाह–

कति णं भंते! सरीरगा पन्नत्ता?, गोयमा! पंच सरीरगा प०, तं०–ओरालिए जाव कम्मए, एत्थ सरीरगपदं निरवसेसं भाणियव्वं जहा पन्नवणाए॥ (सूत्रं ७३८) जीवा णं भंते! किं सेया णिरेया?, गोयमा! जीवा सेयावि निरेयावि, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चति जीवा सेयावि निरेयावि?, गोयमा! जीवा दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–संसारसमावन्नगा य असंसारसमावन्नगा य, तत्थ णं जे ते असंसारसमावन्नगा ते णं सिद्धा, सिद्धा णं दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–अणंतरसिद्धा य परंपरसिद्धा य, तत्थ णं जे ते परंपरसिद्धा ते णं निरेया, तत्थ णं जे ते अणंतरसिद्धा ते णं सेया, ते णं भंते! किं देसेया सव्वेया?, गोयमा! णो देसेया सव्वेया, तत्थ णं जे ते संसारसमावन्नगा ते दुविहा पं०, तंजहा–सेलेसिपडिवन्नगा य असेलेसिपडिवन्नगा य, तत्थ णं जे ते सेलेसीपडिवन्नगा ते णं निरेया, तत्थ णं जे ते असेलेसीपडिवन्नगा ते णं सेया, ते णं भंते! किं देसेया सव्वेया?, गोयमा! देसेयावि सव्वेयावि, से तेणट्ठेणं जाव निरेयावि। नेरइया णं भंते! किं देसेया सव्वेया?, गोयमा! देसेयावि सव्वेयावि, से केणट्ठेणं जाव सव्वेयावि?, गोयमा! नेरइया दुविहा पं०, तं०–विग्गहगतिस-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७३८--७३९] दीप अनुक्रम [८८५--८८६]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥८७७॥

भावन्नगा य अविग्गहगइसमावन्नगा य, तत्थ णं जे ते विग्गहगतिसमावन्नगा ते णं सव्वेया, तत्थ णं जे ते अविग्गहगतिसमावन्नगा ते णं देसेया, से तेणट्ठेणं जाव सव्वेयावि, एवं जाव वेमाणिया ॥ (सूत्रं ७३९)

२५ शतके उद्देशः ४ शरीराणि सैजनिरेजत्वादि सू ७३८-७३९

'कइ ण'मित्यादि, 'एत्थ सरीरगपय'मित्यादि, शरीरपदं च प्रज्ञापनायां द्वादशं पदं, तच्चैवं–'नेरइयाणं भंते ! कति सरीरा पन्नत्ता ?, गो० ! तओ सरीरा पन्नत्ता, तं०–वेउव्विए तेयए कम्मए य' इत्यादि ॥ शरीरवन्तश्च जीवाश्चलस्वभावा भवन्तीति सामान्येन जीवानां चलत्वादि पृच्छन्नाह–'जीवा ण'मित्यादि, 'सेय'त्ति सहैजेन–चलनेन सैजाः 'निरेय'त्ति निश्चलनाः 'अणंतरसिद्धा य'त्ति न विद्यते अन्तरं–व्यवधानं सिद्धत्वस्य येषां तेऽनन्तरास्ते च ते सिद्धाश्चेत्यनन्तरसिद्धाः ये सिद्धत्वस्य प्रथमसमये वर्त्तन्ते, ते च सैजाः, सिद्धिगमनसमयस्य सिद्धत्वप्राप्तिसमयस्य चकत्वादिति, परम्परसिद्धास्तु सिद्धत्वस्य द्व्यादिसमयवृत्तयः, 'देसेय'त्ति देशैजाः–देशतश्चलाः 'सव्वेय'त्ति सर्वैजाः–सर्वतश्चलाः 'नो देसेया सव्वेय'त्ति सिद्धानां सर्वात्मना सिद्धौ गमनात्सर्वैजत्वमेव, 'तत्थ णं जे ते सेलेसीपडिवन्नगा ते णं निरेय'त्ति निरुद्धयोगत्वेन स्वभावतोऽचलत्वात्तेषां 'देसेयावि सव्वेयावि'त्ति इलिकागत्या उत्पत्तिस्थानं गच्छंतो देशैजाः प्राक्तनशरीरस्थस्य देशस्य विवक्षया निश्चलत्वात्, गेन्दुकगत्या तु गच्छन्तः सर्वैजाः, सर्वात्मना तेषां गमनप्रवृत्तत्वादिति । 'विग्गहगइसमावन्नग'त्ति विग्रहगतिसमापन्नका ये मृत्वा विग्रहगत्योत्पत्तिस्थानं गच्छन्ति 'अविग्गहगइसमावन्नग'त्ति अविग्रहगतिसमापन्नकाः–विग्रहगतिनिषेधादृजुगतिका अवस्थिताश्च, तत्र विग्रहगतिसमापन्ना गेन्दुकगत्या गच्छन्तीतिकृत्वा सर्वैजाः, अविग्रहगतिसमापन्नकास्त्ववस्थिता एवेह विवक्षिता इति संभाव्यते, ते च देहस्था एव मारणान्तिकसमुद्घातात् देशेने- ॥८७७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत
सूत्रांक
[७३८-
-७३९]

दीप
अनुक्रम
[८८५-
-८८६]

लिकागत्योत्पत्तिक्षेत्रं स्पृशन्तीति देशैजाः स्वक्षेत्रावस्थिता वा हस्तादिदेशानामेजनादिति ॥ उक्ता जीववक्तव्यता अथाजीववक्तव्यतामाह—

परमाणुपोग्गला णं भंते ! किं संखेज्जा असंखेज्जा अणंता ?, गोयमा ! नो संखेज्जा नो असंखेज्जा अणंता, एवं जाव अणंतपएसिया खंधा । एगपएसोगाढा णं भंते ! पोग्गला किं संखेज्जा असंखेज्जा अणंता ?, एवं चेव, एवं जाव असंखेज्जपएसोगाढा । एगसमयठितीया णं भंते ! पोग्गला किं संखेज्जा ?, एवं चेव, एवं जाव असंखेज्जसमयट्ठितीया । एगगुणकालगा णं भंते ! पोग्गला किं संखेज्जा० ?, एवं चेव, एवं जाव अणंतगुणकालगा, एवं अवसेसावि वण्णगंधरसफासा णेयव्वा जाव अणंतगुणलुक्खत्ति । एएसि णं भंते ! परमाणुपोग्गलाणं दुपएसियाण य खंधाणं दव्वट्ठयाए कयरे२हिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा वि० ?, गोयमा ! दुपएसिएहिंतो खंधेहिंतो परमाणुपोग्गला दव्वट्ठयाए बहुगा, एएसि णं भंते ! दुपएसियाणं तिप्पएसाण य खंधाणं दव्वट्ठयाए कयरे२हिंतो बहुया० ?, गोयमा ! तिपएसियखंधेहिंतो दुपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए बहुया, एवं एएणं गमएणं जाव दसपएसिएहिंतो खंधेहिंतो नवपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए बहुया । एएसि णं भंते ! दसपएसिए पुच्छा, गोयमा ! दसपएसिएहिंतो खंधेहिंतो संखेज्जपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए बहुया, एएसि णं भंते ! संखेज्ज० पुच्छा, गोयमा ! संखेज्जपएसिएहिंतो खंधेहिंतो असंखेज्जपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए बहुया, एएसि णं भंते ! असंखेज्ज० पुच्छा, गो० !, अणंतपएसिएहिंतो खंधेहिंतो असंखेज्जप

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७४०]

दीप अनुक्रम [८८७]

एसिया खंधा दवट्ठयाए बहुया, एएसि णं भंते ! परमाणुपोग्गलाणं दुपएसियाण य खंधाणं पएसट्ठयाए कयरे-२ हिंतो बहुया ?, गोयमा ! परमाणुपोग्गलेहिंतो दुपएसिया खंधा पएसट्ठयाए बहुया, एवं एएणं गमएणं जाव नवपएसिएहिंतो खंधेहिंतो दसपएसिया खंधा पएसट्ठयाए बहुया, एवं सवत्थ पुच्छियवं, दसपएसिएहिंतो खंधेहिंतो संखेज्जपएसिया खंधा पएस० बहुया, संखेज्जपएसिएहिंतो असंखेज्जपएसिया खंधा पएसट्ठयाए बहुया, एएसि णं भंते ! असंखेज्जपएसियाणं पुच्छा, गोयमा ! अणंतपएसिएहिंतो खंधेहिंतो असंखेज्जपएसिया खंधा पएसट्ठयाए बहुया ॥ एएसि णं भंते ! एगपएसोगाढाणं दुपएसोगाढाण य पोग्गलाणं दवट्ठयाए कयरे२हिंतो जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! दुपएसोगाढेहिंतो पोग्गलेहिंतो एगपएसोगाढा पोग्गला दवट्ठयाए विसेसाहिया, एवं एएणं गमएणं तिपएसोगाढेहिंतो पोग्गलेहिंतो दुपएसोगाढा पोग्गला दवट्ठयाए विसेसा० जाव दसपएसोगाढेहिंतो पोग्गले हिंतो नवपएसोगाढा पोग्गला दवट्ठयाए विसेसाहिया, दसपएसोगाढेहिंतो पोग्गलेहिंतो संखिज्जपएसोगाढा पोग्गला दवट्ठयाए बहुया, संखेज्जपएसोगाढेहिंतो पोग्गलेहिंतो असंखेज्जपएसोगाढा पोग्गला दवट्ठयाए बहुया, पुच्छा सवत्थ भाणि० । एएसि णं भंते ! एगपएसोगाढाणं दुपएसोगाढाण य पोग्गलाणं पएसट्ठयाए कयरे२हिंतो० विसेसा० ?, गोयमा ! एगपएसोगाढेहिंतो पोग्गलेहिंतो दुपएसोगाढा पोग्गला पएसट्ठयाए विसेसा०, एवं जाव नवपएसोगाढेहिंतो पोग्गलेहिंतो दसपएसोगाढा पोग्गला पएस० विसेसाहिया, दसपएसोगाढेहिंतो पोग्गलेहिंतो संखेज्जपएसोगाढा पोग्गला पएसट्ठयाए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७४०]

दीप अनुक्रम [८८७]

बहुया, संखेज्जपएसोगाढेहिंतो पोग्गलेहिंतो असंखेज्जपएसोगाढा पोग्गला पएसट्ठयाए बहुया। एएसि णं भंते! एगसमयट्ठितीयाणं दुसमयट्ठितीयाण य पोग्गलाणं दव्वट्ठयाए जहा ओगाहणाए वत्तव्वया एवं ठितीएवि। एएसि णं भंते! एगगुणकालयाणं दुगुणकालयाण य पोग्गलाणं दव्वट्ठयाए एएसि णं जहा परमाणुपोग्गलादीणं तहेव वत्तव्वया निरवसेसा, एवं सव्वेसिं वन्नगंधरसाणं, एएसि णं भंते! एगगुणकक्खडाणं दुगुणकक्खडाण य पोग्गलाणं दव्वट्ठयाए कयरे२हिंतो० विसेसाहिया?, गोयमा! एगगुणकक्खडेहिंतो पोग्गलेहिंतो दुगुणकक्खडा पोग्गला दव्वट्ठयाए विसेसाहिया, एवं जाव नवगुणकक्खडेहिंतो पोग्गलेहिंतो दसगुणकक्खडा पोग्गला दव्वट्ठयाए विसे०, दसगुणकक्खडेहिंतो पोग्गलेहिंतो संखिज्जगुणकक्खडा पोग्गला दव्वट्ठयाए बहुया, संखेज्जगुणकक्खडेहिंतो पोग्गलेहिंतो असंखेज्जगुणकक्खडा पोग्गला दव्वट्ठयाए बहुया, असंखेज्जगुणकक्खडेहिंतो पोग्गलेहिंतो अणंतगुणकक्खडा पोग्गला दव्वट्ठयाए बहुया, एवं पएसट्ठयाए सव्वत्थ पुच्छा भाणियव्वा, जहा कक्खडा एवं मउयगरुयलहुयावि, सीयउसिणनिद्धलुक्खा जहा वन्ना ॥ (सूत्रं ७४०)

'परमाणुपोग्गलाण'मित्यादि, तत्र बहुवक्तव्यतायां द्व्यणुकेभ्यः परमाणवो बहवः सूक्ष्मत्वादेकत्वाच्च, द्विप्रदेशकास्त्वणुभ्यः स्तोकाः स्थूलत्वादिति वृद्धाः वस्तुस्वभावादिति चान्ये, एवमुत्तरत्रापि पूर्वे २ बहवस्तदुत्तरे तु स्तोकाः, दशप्रदेशिकेभ्यः पुनः सङ्ख्यातप्रदेशिका बहवः, सङ्ख्यातस्थानानां बहुत्वात्, स्थानबहुत्वादेव च सङ्ख्यातप्रदेशिकेभ्योऽसङ्ख्यातप्रदेशिका बहवः, अनन्तप्रदेशिकेभ्यस्तु असङ्ख्यातप्रदेशिका एव बहवस्तथाविधसूक्ष्मपरिणामात्। प्रदेशार्थचिन्तायां परमाणुभ्यो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [७४०]

दीप अनुक्रम [८८७]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥८७९॥

२५ शतके उद्देशः ४ द्रव्याद्यर्थ-तयाऽल्प-बहुत्वं सू ७४१

द्विप्रदेशिका बहवो, यथा किल द्रव्यत्वेन परिमाणतः शतं परमाणवः द्विप्रदेशास्तु षष्टिः, प्रदेशार्थतायां परमाणवः शतमात्रा एव द्व्यणुकास्तु विंशत्युत्तरं शतमित्येवं ते बहव इति, एवं भावना उत्तरत्रापि कार्या ॥ अथ क्षेत्रापेक्षया पुद्गलाल्पत्वादि चिन्त्यते–'एएसि णं'मित्यादि, 'एगपएसोगाढाणं दुपएसोगाढाणं'ति तत्रैकप्रदेशावगाढाः परमाण्वादयोऽनन्तप्रदेशिकस्कन्धान्ता भवन्ति, द्विप्रदेशावगाढास्तु द्व्यणुकादयोऽनन्ताणुकान्ताः, 'विसेसाहिय'त्ति समधिकाः न तु द्विगुणादय इति । वर्णादिभावविशेषितपुद्गलचिन्तायां तु कर्कशादिस्पर्शचतुष्टयविशेषितपुद्गलेषु पूर्वेभ्यः २ उत्तरोत्तरास्तथाविधस्वभावत्वाद्द्रव्यार्थतया बहवो वाच्याः, शीतोष्णस्निग्धरूक्षलक्षणस्पर्शविशेषितेषु पुनः कालादिवर्णविशेषिता इत्रोत्तरेभ्यः पूर्वे दशगुणान् यावद्बहवो वाच्याः, ततो दशगुणेभ्यः सङ्ख्येयगुणास्तेभ्योऽनन्तगुणा अनन्तगुणेभ्यश्चासङ्ख्येयगुणा बहव इति, एतदेवाह—'एगगुणकक्खडेहिंतो' इत्यादि ॥ अथ प्रकारान्तरेण पुद्गलांश्चिन्तयन्नाह—

एएसि णं भंते! परमाणुपोग्गलाणं संखेज्जपएसियाणं असंखेज्ज० अणंतपएसियाण य खंधाणं दव्वट्ठयाए पएस० दव्वट्ठपएसट्ठयाए कयरे २ जाव विसेसाहिया वा?, गोयमा! सव्वत्थोवा अणंतपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए परमाणुपोग्गला दव्वट्ठयाए अणंतगुणा संखेज्जपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा असंखेज्जपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा, पएसट्ठयाए सव्वत्थोवा अणंतपएसिया खंधा पएसट्ठयाए परमाणुपोग्गला अपएसट्ठयाए अणंतगुणा संखेज्जपएसिया खंधा पएसट्ठयाए संखेज्जगुणा असंखेज्जपएसिया खंधा पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा, दव्वट्ठपएसट्ठयाए सव्वत्थोवा अणंतपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए ते चेव पएसट्ठयाए अणंतगुणा परमाणुपोग्गला दव्वट्ठपएसट्ठ- ॥८७९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७४१]

दीप अनुक्रम [८८८]

याए अणंतगुणा संखेज्जपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा ते चेव पएसट्ठयाए संखेज्जगुणा असंखेज्जपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ते चेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा। एएसि णं भंते ! एगपएसोगाढाणं संखेज्जपएसोगाढाणं असंखेज्जपएसोगाढाण य पोग्गलाणं दव्वट्ठयाए पएसट्ठयाए दव्वट्ठपएसट्ठयाए कयरे २ जाव विसेसाहिया वा?, गोयमा! सव्वत्थोवा एगपएसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठयाए संखेज्जपएसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा असंखेज्जपएसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा, पएसट्ठयाए सव्वत्थोवा एगपएसोगाढा पोग्गला अपएसट्ठयाए संखेज्जपएसोगाढा पोग्गला पएसट्ठयाए संखेज्जगुणा असंखेज्जपएसोगाढा पोग्गला पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा दव्वट्ठपएसट्ठयाए सव्वत्थोवा एगपएसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठअपदेसट्ठयाए असंखेज्जपएसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा ते चेव पएसट्ठयाए संखेज्जगुणा असंखेज्जपएसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ते चेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा। एएसि णं भंते! एगसमयट्ठितीयाणं संखिज्जसमयट्ठितीयाणं असंखेज्जसमयट्ठितीयाण य पोग्गलाणं जहा ओगाहणाए तहा ठितीएवि भाणियव्वं अप्पाबहुगं। एएसि णं भंते ! एगगुणकालगाणं संखेज्जगुणकालगाणं असंखेज्जगुणकालगाणं अणंतगुणकालगाण य पोग्गलाणं दव्वट्ठयाए पएसट्ठयाए दव्वट्ठपएसट्ठयाए एएसि णं जहा परमाणुपोग्गलाणं अप्पाबहुगं तहा एएसिंपि अप्पाबहुगं, एवं सेसाणवि वन्नगंधरसाणं। एएसि णं भंते ! एगगुणकक्खडाणं संखेज्जगुणकक्खडाणं असंखेज्ज० अणंतगुणकक्खडाण य पोग्गलाणं दव्वट्ठयाए पएसट्ठयाए दव्वट्ठपएसट्ठयाए कयरे २ जाव वि० ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा एगगुणक-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७४१]

दीप अनुक्रम [८८८]

क्खडा पोग्गला दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणकक्खडा पोग्गला दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा असंखेज्जगुणकक्खडा पोग्गला दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा अणंतगुणकक्खडा दव्वट्ठयाए अणंतगुणा, पएसट्ठयाए एवं चेव नवरं संखेज्जगुणकक्खडा पोग्गला पएसट्ठयाए असं० सेसं तं चेव, दव्वट्ठपएसट्ठयाए सव्वत्थोवा एगगुणकक्खडा पोग्गला दव्वट्ठपएसट्ठयाए संखेज्जगुणकक्खडा पोग्गला दव्वट्ठयाए संखेज्जगु० ते चेव पएसट्ठयाए संखेज्जगुणा असंखेज्जगुणकक्खडा दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ते चेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा अणंतगुणकक्खडा दव्वट्ठयाए अणंतगुणा ते चेव पएसट्ठयाए अणंतगुणा एवं मउयगरुयलहुयाणवि अप्पाबहुयं, सीयउसिणनिद्धलुक्खाणं जहा वन्नाणं तहेव ॥ (सूत्रं ७४१)

२५ शतके उद्देशः ४ द्रव्याद्यर्थतयाऽल्पबहुत्वं सू ७४१

'एएसि ण'मित्यादि, 'परमाणुपोग्गला अपएसट्ठयाए'त्ति इह प्रदेशार्थताऽधिकारेऽपि यदप्रदेशार्थतयेत्युक्तं तत्परमाणूनामप्रदेशत्वात्, 'परमाणुपोग्गला दव्वट्ठअपएसट्ठयाए'त्ति परमाणवो द्रव्यविवक्षायां द्रव्यरूपाः अर्थाः प्रदेशविवक्षायां चाविद्यमानप्रदेशार्थाः इतिकृत्वा द्रव्यार्थाप्रदेशार्थास्ते उच्यन्ते तद्भावस्तत्ता तया, 'सव्वत्थोवा एगपएसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठयाए'त्ति इह क्षेत्राधिकारात्क्षेत्रस्यैव प्राधान्यात्परमाणुद्व्यणुकाद्यनन्ताणुकस्कन्धा अपि विशिष्टैकक्षेत्रप्रदेशावगाढा आधाराधेययोरभेदोपचारादेकत्वेन व्यपदिश्यन्ते ततश्च 'सव्वत्थोवा एगपएसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठयाए'त्ति, लोकाकाशप्रदेशपरिमाणा एवेत्यर्थः, तथाहि–न स कश्चिदेवंभूत आकाशप्रदेशोऽस्ति य एकप्रदेशावगाहपरिणामपरिणतानां परमाण्वादीनामवकाशदानपरिणामेन न परिणत इति, तथा 'संखेज्जपएसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठयाए संखेज्जगुण'त्ति अत्रापि क्षेत्रस्यैव प्राधान्यात्तथाविधस्कन्धाधारक्षेत्रप्रदेशापेक्षयैव भावना कार्या, नवरमसंमोहेन सुखप्रतिपत्त्यर्थमुदाहरणं दर्श्यते—

॥८८०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७४१]

दीप अनुक्रम [८८८]

'जहा किल पंच ते सव्वलोगपएसा, एते य पत्तेयचिंताए पंचेव, संजोगओ पुण एतेसु चेव अणेगे संजोगा लब्भंति' इमा एएसिं ठवणा– 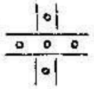 एतेषां च सम्पूर्णासम्पूर्णान्यग्रहणान्यमोक्षणद्वारेणाऽऽधेयवशादनेके संयोगभेदा भावनीयाः, तथा 'असंखेज्जपए- सोगाढा पोग्गला दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुण'त्ति भावनैवमेव असङ्ख्येयप्रदेशात्मकत्वादवगाहक्षेत्रस्यासङ्ख्येयगुणा इत्ययमस्य भावार्थ इति ॥ पुद्गलानेव कृतयुग्मादिभिर्निरूपयन्नाह—

परमाणुपोग्गले णं भंते ! दव्वट्ठयाए किं कडजुम्मे तेयोए दावर०कलियोगे?, गोयमा! नो कडजुम्मे नो तेयोए नो दावर० कलियोगे एवं जाव अणंतपएसिए खंधे। परमाणुपोग्गला णं भंते! दव्वट्ठयाए किं कडजुम्मा पुच्छा, गोयमा! ओघादेसेणं सिय कडजुम्मा जाव सिय कलियोगा, विहाणादेसेणं नो कडजुम्मा नो तेयोगा नो दावर० कलियोगा एवं जाव अणंतपएसिया खंधा। परमाणुपोग्गले णं भंते! पएसट्ठयाए किं कडजुम्मे पुच्छा, गोयमा! नो कडजुम्मा नो तेयोगा नो दावर० कलियोगे दुपएसिए पुच्छा गोयमा! नो कड० नो तेयोय० दावर० नो कलियोगे, तिपए० पुच्छा गोयमा! नो कडजुम्मे तेयोए नो दावर० नो कलियोए चउप्पएसिए पुच्छा गोयमा! कडजुम्मे नो तेओए नो दावर० नो कलियोगे पंचपएसिए जहा परमाणुपोग्गले छप्पएसिए जहा दुप्पएसिए सत्तपएसिए जहा तिपएसिए अट्ठपएसिए जहा चउप्पएसिए नवपएसिए जहा परमाणुपोग्गले दसपएसिए जहा दुप्पएसिए, संखेज्जपएसिए णं भंते! पोग्गले पुच्छा, गोयमा! सिय कडजुम्मे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७४२-७४३]

दीप अनुक्रम [८८९-८९०]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥८८१॥

जाव सिय कलियोए एवं असंखेज्जपएसिएवि अणंतपएसिएवि । परमाणुपोग्गला णं भंते ! पएसट्टयाए किं कड० पुच्छा, गोयमा ! ओघादेसेणं सिय कडजुम्मा जाव सिय कलियोगा, विहाणादेसेणं नो कड० नो तेयोया नो दावर० कलियोगा, दुप्पएसियाणं पुच्छा, गोयमा ! ओघादेसेणं सिय कडजुम्मा नो तेयोया सिय दावरजुम्मा नो कलियोगा, विहाणादेसेणं नो कडजुम्मा नो तेयोया दावरजुम्मा नो कलियोगा, तिपएसिया णं पुच्छा, गोयमा ! ओघादेसेणं सिय कडजुम्मा जाव सिय कलियोगा विहाणादेसेणं नो कडजुम्मा तेयोगा नो दावर० नो कलियोगा, चउप्पएसियाणं पुच्छा, गोयमा ! ओघादेसेणवि विहाणादेसेणवि कडजुम्मा नो तेयोगा नो दावर० नो कलियोगा, पंचपएसिया जहा परमाणुपोग्गला, छप्पएसिया जहा दुप्पएसिया, सत्तपएसिया जहा तिपएसिया, अट्ठपएसिया जहा चउपएसिया, नवपएसिया जहा परमाणुपोग्गला, दसपएसिया जहा दुपएसिया, संखेज्जपएसिया णं पुच्छा, गोयमा ! ओघादेसेणं सिय कडजुम्मा जाव सिय कलियोगा विहाणादेसेणं कडजुम्मावि जाव कलियोगावि एवं असंखेज्जपएसियावि अणंतपएसियावि ॥ परमाणुपोग्गले णं भंते ! किं कडजुम्मपएसोगाढे ? पुच्छा, गोयमा ! कडजुम्मपएसोगाढे नो तेयोग० नो दावरजुम्म० कलियोगपएसोगाढे । दुपएसिएणं पुच्छा, गोयमा ! नो कडजुम्मपएसोगाढे णो तेयोग० सिय दावरजुम्मपएसोगाढे सिय कलियोगपएसोगाढे । तिपएसिए णं पुच्छा, गोयमा ! णो कडजुम्मपएसोगाढे सिय तेयोगपएसोगाढे सिय दावरजुम्मपएसोगाढे सिय कलियोगपएसोगाढे ३ । चउप्पएसिए णं

२५ शतके उद्देशः ४ परमाण्वदिःकृतयुग्मत्वादि सार्धादि सू ७४२-७४३

॥८८१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७४२--७४३]

दीप अनुक्रम [८८९--८९०]

पुच्छा, गोयमा ! सिय कडजुम्मपएसोगाढे जाव सिय कलियोगपएसोगाढे ४, एवं जाव अणंतपएसिए ॥ परमाणुपोग्गला णं भंते ! किं कड० पुच्छा, गोयमा ! ओघादेसेणं कडजुम्मपएसोगाढा णो तेयोग० नो दावर० नो कलियोग०, विहाणादेसेणं नो कडजुम्मपएसोगाढा णो तेयोग० नो दावर० कलिओगपएसोगाढा । दुप्पएसिया णं पुच्छा, गोयमा ! ओघादेसेणं कडजुम्मपएसोगाढा नो तेयोग० नो दावर० नो कलिओग०, विहाणादेसेणं नो कडजुम्मपएसोगाढा नो तेयोगपएसोगाढा दावरजुम्मपएसोगाढावि कलियोगपएसोगाढावि । तिप्पएसियाणं पुच्छा, गोयमा ! ओघादेसेणं कडजुम्मपएसोगाढा नो तेयोग० नो दावर० नो कलि० विहादेसेणं नो कडजुम्मपएसोगाढा तेओगपएसोगाढावि दावरजुम्मपएसोगाढावि कलिओगपएसोगाढावि ३ । चउप्पएसियाणं पुच्छा, गोयमा ! ओघादेसेणं कडजुम्मपएसोगाढा नो तेयोग० नो दावर० नो कलिओग० विहाणादेसेणं कडजुम्मपएसोगाढावि जाव कलिओगपएसोगाढावि ४ एवं जाव अणंतपएसिया ॥ परमाणुपोग्गले णं भंते ! किं कडजुम्मसमयट्ठितीए ? पुच्छा, गोयमा ! सिय कडजुम्मसमयट्ठितीए जाव सिय कलिओगसमयट्ठितीए, एवं जाव अणंतपएसिए । परमाणुपोग्गला णं भंते ! किं कडजुम्म० ?, पुच्छा, गोयमा ! ओघादेसेणं सिय कडजुम्मसमयठितीया जाव सिय कलियोगसमयट्ठितीया ४, विहाणादेसेणं कडजुम्मसमयट्ठितीयावि जाव कलियोगसमयट्ठितीयावि ४, एवं जाव अणंतपएसिया । परमाणुपोग्गले णं भंते ! कालवन्नपज्जवेहिं किं कडजुम्मे तेओगे जहा ठितीए वत्तव्वया एवं वन्नेसुवि सव्वेसु गंधेसुवि एवं चेव रसेसुवि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७४२--७४३] दीप अनुक्रम [८८९--८९०]

जाव महुरो रसोत्ति, अणंतपएसिए णं भंते! खंधे कक्खडफासपज्जवेहिं किं कडजुम्मे पुच्छा, गोयमा! सिय कडजुम्मे जाव सिय कलिओगे। अणंतपएसिया णं भंते! खंधा कक्खडफासपज्जवेहिं किं कडजुम्मा पुच्छा, गोयमा! ओघादेसेणं सिय कडजुम्मा जाव सिय कलियोगा ४, विहाणादेसेणं कडजुम्मावि जाव कलियोगावि ४, एवं मउयगरुयलहुयावि भाणियव्वा, सीयउसिणनिद्धलुक्खा जहा वन्ना ॥ (सूत्रं ७४२) परमाणुपोग्गले णं भंते! किं सड्ढे अणड्ढे ?, गोयमा! नो सड्ढे अणड्ढे। दुपएसिए णं पुच्छा गो०! सड्ढे नो अणड्ढे, तिपएसिए जहा परमाणुपोग्गले, चउपएसिए जहा दुपएसिए, पंचपएसिए जहा तिपएसिए छप्पएसिए जहा दुपएसिए सत्तपएसिए जहा तिपएसिए अट्ठपएसिए जहा दुपएसिए नवपएसिए जहा तिपएसिए दसपएसिए जहा दुपएसिए, संखेज्जपएसिए णं भंते! खंधे पुच्छा, गोयमा! सिय सड्ढे सिय अणड्ढे, एवं असंखेज्जपएसिएवि, एवं अणंतपएसिएवि। परमाणुपोग्गला णं भंते! किं सड्ढा अणड्ढा ?, गोयमा! सड्ढा वा अणड्ढा वा एवं जाव अणंतपएसिया ॥ (सूत्रं ७४३)

'परमाणु'इत्यादि, परमाणुपुद्गला ओघादेशतः कृतयुग्मादयो भजनया भवन्ति अनन्तत्वेऽपि तेषां सङ्घातभेदतोऽनवस्थितस्वरूपत्वात्, विधानतस्त्वेकैकशः कल्योजा एवेति। 'पंचपएसिए जहा परमाणुपोग्गल'त्ति एकाग्रत्वात्कल्योज इत्यर्थः 'छप्पएसिए जहा दुप्पएसिए'त्ति द्व्यग्रत्वाद्द्वापरयुग्म इत्यर्थः, एवमन्यदपि ॥ 'संखेज्जपएसिए ण'मित्यादि, सङ्ख्यातप्रदेशिकस्य विचित्रसङ्ख्यत्वाद्भजनया चातुर्विध्यमिति। 'दुप्पएसिया ण'मित्यादि, द्विप्रदेशिका यदा समसङ्ख्या भवन्ति तदा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७४२-७४३]

दीप अनुक्रम [८८९-८९०]

प्रदेशतः कृतयुग्माः, यदा तु विषमसङ्ख्यास्तदा द्वापरयुग्माः, 'विहाणादेसेण'मित्यादि, ये द्विप्रदेशिकास्ते प्रदेशार्थतया एकैकशश्चिन्त्यमाना द्विप्रदेशत्वादेव द्वापरयुग्मा भवन्ति। 'तिप्पएसिया ण'मित्यादि, समस्तत्रिप्रदेशिकमीलने तत्प्रदेशानां च चतुष्कापहारे चतुरग्रादित्वं भजनया स्यादनवस्थितसङ्ख्यत्वात्तेषां, यथा चतुर्णां तेषां मीलने द्वादश प्रदेशास्ते च चतुरग्राः पञ्चानां त्र्योजाः षण्णां द्वापरयुग्माः सप्तानां कल्योजा इति, विधानादेशेन च त्र्योजा एव त्र्यणुकत्वात्स्कन्धानामिति। 'चउप्पएसिया ण'मित्यादि, चतुष्प्रदेशिकानामोघतो विधानतश्च प्रदेशाश्चतुरग्रा एव। 'पंचपएसिया जहा परमाणुपोग्गल'त्ति सामान्यतः स्यात्कृतयुग्मादयः प्रत्येकं चैकाग्रा एवेत्यर्थः। 'छप्पएसिया जहा दुप्पएसिय'त्ति ओघतः स्यात्कृतयुग्मद्वापरयुग्माः, विधानतस्तु द्वापरयुग्मा इत्यर्थः, एवमुत्तरत्रापि ॥ अथ क्षेत्रतः पुद्गलांश्चिन्तयन्नाह—'परमाणु' इत्यादि, परमाणुः कल्योजःप्रदेशावगाढ एव एकत्वात् द्विप्रदेशिकस्तु द्वापरयुग्मप्रदेशावगाढो वा कल्योजःप्रदेशावगाढो वा स्यात् परिणामविशेषात्, एवमन्यदपि सूत्रं नेयम् ॥ 'परमाणुपोग्गला ण'मित्यादि, तत्रौघतः परमाणवः कृतयुग्मप्रदेशावगाढा एव भवन्ति सकललोकव्यापकत्वात्तेषां, सकललोकप्रदेशानां चासङ्ख्यातत्वादवस्थितत्वाच्च चतुरग्रतेति, विधानतस्तु कल्योजःप्रदेशावगाढाः सर्वेषामेकैकप्रदेशावगाढत्वादिति, द्विप्रदेशावगाढास्तु सामान्यतश्चतुरग्रा एवोक्तयुक्तितः, विधानतस्तु द्विप्रदेशिकाः ये द्विप्रदेशावगाढास्ते द्वापरयुग्माः ये त्वेकप्रदेशावगाढास्ते कल्योजाः, एवमन्यदप्यूह्यम्। 'अणंतपएसिए णं भंते! खंधे'त्ति, इह कर्कशादिस्पर्शाधिकारे यदनन्तप्रदेशिकस्यैव स्कन्धस्य ग्रहणं तत्तस्यैव बादरस्य कर्कशादिस्पर्शचतुष्टयं भवति न तु परमाण्वादेरित्यभिप्रायेणेति, अत एवाह—सीओसिणनिद्धलुक्खा जहा वन्न'त्ति एत-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७४२- -७४३] दीप अनुक्रम [८८९- -८९०]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥८८३॥

त्पर्यवाधिकारे परमाण्वादयोऽपि वाच्या इति भावः ॥ पुद्गलाधिकारादिदमाह—'परमाणु'इत्यादि, 'सिय सड्ढे सिय अणड्ढे'त्ति यः समसङ्ख्यप्रदेशात्मकः स्कन्धः स सार्द्धः इतरस्त्वनर्द्ध इति । 'परमाणुपोग्गले'त्यादि, यदा बहवोऽणवः समसङ्ख्या भवन्ति तदा सार्द्धाः यदा तु विषमसङ्ख्यास्तदाऽनर्द्धाः, सङ्घातभेदाभ्यामनवस्थितरूपत्वात्तेषामिति ॥ पुद्गलाधिकारादेवेदमुच्यते—

परमाणुपोग्गले णं भंते ! किं सेए निरेए ?, गोयमा ! सिय सेए सिय निरेए, एवं जाव अणंतपएसिए । परमाणुपोग्गला णं भंते ! किं सेया निरेया ?, गोयमा ! सेयावि निरेयावि, एवं जाव अणंतपएसिया ॥ परमाणुपुग्गले णं भंते ! सेए कालओ केवचिरं होइ ?, गोयमा ! जह० एक्कं समयं उक्कोसे० आवलियाए असंखेज्जइभागं, परमाणुपोग्गले णं भंते ! निरेए कालओ केवचिरं होइ ?, गोयमा ! जह० एक्कं समयं उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं, एवं जाव अणंतपएसिए, परमाणुपोग्गला णं भंते ! सेया कालओ केवच्चिरं होन्ति ?, गोयमा ! सव्वद्धं, परमाणुपोग्गला णं भंते ! निरेया कालओ केवच्चिरं होइ ?, गोयमा ! सव्वद्धं, एवं जाव अणंतपएसिया ॥ परमाणुपोग्गलस्स णं भंते ! सेयस्स केवतियं कालं अंतरं होइ ?, गोयमा ! सट्ठाणंतरं पडुच्च जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं परट्ठाणंतरं पडुच्च जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं । निरेयस्स केवतियं कालं अंतरं होइ ?, गोयमा ! सट्ठाणंतरं पडुच्च जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइभागं, परट्ठाणंतरं पडुच्च जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं । दुपएसियस्स णं भंते ! खंधस्स सेयस्स

२५ शतके उद्देशः ४ परमाण्वादीनां सैजत्वादि धर्मादिमध्यप्रदेशाः सू ७४४-७४५

॥८८३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७४४--७४५]

दीप अनुक्रम [८९१--८९२]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

पुच्छा, गोयमा ! सट्ठाणंतरं पडुच्च जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं, परट्ठाणंतरं पडुच्च जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं अणंतं कालं। निरेयस्स केवतियं कालं अंतरं होइ ?, गोयमा ! सट्ठाणंतरं पडुच्च जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइभागं, परट्ठाणंतरं पडुच्च जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं अणंतं कालं, एवं जाव अणंतपएसियस्स। परमाणुपोग्गला णं भंते ! सेयाणं केवतियं कालं अंतरं होइ ?, गोयमा ! नत्थि अंतरं, एवं जाव अणंतपएसियाणं खंधाणं॥ एएसि णं भंते ! परमाणुपोग्गलाणं सेयाणं निरेयाण य कयरे-२ हिंतो जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा परमाणुपोग्गला सेया निरेया असंखेज्जगुणा एवं जाव असंखिज्जपएसियाणं खंधाणं। एएसि णं भंते! अणंतपएसियाणं खंधाणं सेयाणं निरेयाण य कयरे २ जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा अणंतपएसिया खंधा निरेया सेया अणंतगुणा॥ एएसि णं भंते ! परमाणुपोग्गलाणं संखेज्जपएसियाणं असंखेज्जपएसियाणं अणंतपएसियाण य खंधाणं सेयाणं निरेयाण य दव्वट्ठयाए पएसट्ठयाए दव्वट्ठपएसट्ठयाए कयरे २ जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा अणंतपएसिया खंधा निरेया दव्वट्ठयाए १ अणंतपएसिया खंधा सेया दव्वट्ठयाए अणंतगुणा २ परमाणुपोग्गला सेया दव्वट्ठयाए अणंतगुणा ३ संखेज्जपएसिया खंधा सेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ४ असंखेज्जपएसिया खंधा सेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ५ परमाणुपोग्गला निरेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ६ संखेज्जपएसिया खंधा निरेया दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा ७ असंखेज्जपएसिया खंधा निरेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ८ पएसट्ठयाए एवं चेव नवरं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७४४-७४५]

दीप अनुक्रम [८९१-८९२]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥८८४॥

परमाणुपोग्गला अपएसट्ठयाए भाणियव्वा, संखेज्जपएसिया खंधा निरेया पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा सेसं तं चेव, दव्वट्ठपएसट्ठयाए सव्वत्थोवा अणंतपएसिया खंधा निरेया दव्वट्ठयाए १ ते चेव पएसट्ठयाए अणंतगुणा २ अणंतपएसिया खंधा सेया दव्वट्ठयाए अणंतगुणा ३ ते चेव पएसट्ठयाए अणंतगुणा ४ परमाणुपोग्गला सेया दव्वट्ठयाए अपएसट्ठयाए अणंतगुणा ५ संखेज्जपएसिया खंधा सेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ६ ते चेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा ७ असंखेज्जपएसिया खंधा सेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ८ ते चेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा ९ परमाणुपोग्गला निरेया दव्वट्ठअपएसट्ठयाए असंखिज्जगुणा १० संखिज्जपएसिया खंधा निरेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ११ ते चेव पएसट्ठयाए संखिज्जगुणा १२ असंखिज्जपएसिया खंधा निरेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा १३ ते चेव पएसट्ठयाए असंखिज्जगुणा १४। परमाणुपोग्गले णं भंते ! किं देसेए सव्वेए निरेए ?, गोयमा ! नो देसेए सिय सव्वेए सिय निरेए, दुपएसिए णं भंते ! खंधे पुच्छा, गोयमा ! सिय देसेए सिय सव्वेए सिय निरेए एवं जाव अणंतपएसिए। परमाणुपोग्गला णं भंते ! किं देसेया सव्वेया निरेया ?, गोयमा ! नो देसेया सव्वेयावि निरेयावि, दुपएसिया णं भंते ! खंधा पुच्छा, गोयमा ! देसेयावि सव्वेयावि निरेयावि, एवं जाव अणंतपएसिया। परमाणुपोग्गले णं भंते! सव्वेए कालओ केवचिरं होइ?, गोयमा ! जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइभागं, निरेये कालओ केवचिरं होइ ?, गोयमा ! जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं असंखिज्जं कालं। दुपएसिए णं भंते ! खंधे देसेए कालओ केवचिरं होइ ?, गोयमा ! जहन्नेणं एक्कं समयं

२५ शतके उद्देशः ४ परमाण्वादीनां सैजत्वादि धर्मादिमध्यप्रदेशाः सू ७४४-७४५

॥८८४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७४४--७४५]

दीप अनुक्रम [८९१--८९२]

उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइभागं, सवेए कालओ केवचिरं होइ ?, गोयमा ! जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइभागं, निरेए कालओ केवचिरं होइ ?, गोयमा ! जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं असंखिज्जं कालं, एवं जाव अणंतपएसिए । परमाणुपोग्गला णं भंते ! सवेया कालओ केवचिरं होंति ?, गोयमा ! सवद्धं, निरेया कालओ केवचिरं होइ ?, सवद्धं । दुप्पएसिया णं भंते ! खंधा देसेया कालओ केवचिरं० ?, सवद्धं, सवेया कालओ केवचिरं ?, सवद्धं, निरेया कालओ केवचिरं० ?, सवद्धं, एवं जाव अणंतपएसिया । परमाणुपोग्गलस्स णं भंते ! सवेयस्स केवतियं कालं अंतरं होइ ?, गोयमा ! सट्ठाणंतरं पडुच्च जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं असंखिज्जं कालं, परट्ठाणंतरं पडुच्च जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं असंखिज्जं कालं । निरेयस्स केवतियं अंतरं होइ ?, सट्ठाणंतरं पडुच्च जह० एक्कं समयं उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइभागं, परट्ठाणंतरं पडुच्च जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं असंखिज्जं कालं । दुपएसियस्स णं भंते ! खंधस्स देसेयस्स केवतियं कालं अंतरं होइ ?, सट्ठाणंतरं पडुच्च जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं असंखिज्जं कालं, परट्ठाणंतरं पडुच्च जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं अणंतं कालं, सवेयस्स केवतियं कालं ? एवं चेव जहा देसेयस्स, निरेयस्स केवतियं ?, सट्ठाणंतरं पडुच्च जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइभागं, परट्ठाणंतरं पडुच्च जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं अणंतं कालं, एवं जाव अणंतपएसियस्स ॥ परमाणुपोग्गलाणं भंते ! सवेयाणं केवतियं कालं अंतरं होइ ?, नत्थि अंतरं, निरेयाणं केवतियं ?, नत्थि अंतरं, दुपएसियाणं भंते ! खंधाणं देसे-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७४४-७४५] दीप अनुक्रम [८९१-८९२]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥८८५॥

यार्ण केवतियं कालं ?, नत्थि अंतरं, सव्वेयाणं केवतियं कालं ?, नत्थि अंतरं, निरेयाणं केवतियं कालं ?, नत्थि अंतरं, एवं जाव अणंतपएसियाणं । एएसि णं भंते ! परमाणुपोग्गलाणं सव्वेयाणं निरेयाण य कयरे २ जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा परमाणुपोग्गला सव्वेया निरेया असंखेज्जगुणा । एएसि णं भंते ! दुपएसियाणं खंधाणं देसेयाणं सव्वेयाणं निरेयाण य कयरे २ जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा दुपएसिया खंधा सव्वेया देसेया असंखेज्जगुणा निरेया असंखिज्जगुणा, एवं जाव असंखेज्जपएसियाणं खंधाणं । एएसि णं भंते ! अणंतपएसियाणं खंधाणं देसेयाणं सव्वेयाणं निरेयाण य कयरे २ जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा अणंतपएसिया खंधा सव्वेया निरेया अणंतगुणा देसेया अणंतगुणा । एएसि णं भंते ! परमाणुपोग्गलाणं संखेज्जपएसियाणं असंखेज्जपएसियाणं अणंतपएसियाण य खंधाणं देसेयाणं सव्वेयाणं निरेयाणं दव्वट्ठयाए पएसट्ठयाए दव्वट्ठपएसट्ठयाए कयरे २ जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा अणंतपएसिया खंधा सव्वेया दव्वट्ठयाए १ अणंतपएसिया खंधा निरेया दव्वट्ठयाए अणंतगुणा २ अणंतपएसिया खंधा देसेया दव्वट्ठयाए अणंतगुणा ३ असंखेज्जपएसिया खंधा सव्वेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ४ संखेज्जपएसिया खंधा सव्वेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ५ परमाणुपोग्गला सव्वेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ६ संखेज्जपएसिया खंधा देसेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ७ असंखेज्जपएसिया खंधा देसेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ८ परमाणुपोग्गला निरेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ९ संखेज्जपएसिया खंधा निरेया दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा १० असंखे-

२५ शतके उद्देशः ४ परमाण्वादीनां सैजत्वादि धर्मादिमध्यप्रदेशाः सू ७४४-७४५

॥८८५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७४४--७४५]

दीप अनुक्रम [८९१--८९२]

ज्ञपएसिया खंधा निरेया दव्वट्ठयाए असंखिज्जगुणा ११, एवं पएसट्ठयाएवि नवरं परमाणुपोग्गला अपएसट्ठयाए भाणियव्वा संखिज्जपएसिया खंधा निरेया पएसट्ठयाए असंखिज्जगुणा सेसं तं चेव, दव्वट्ठपएसट्ठयाए सव्वत्थोवा अणंतपएसिया खंधा सव्वेया दव्वट्ठयाए १ ते चेव पएसट्ठयाए अणंतगुणा २ अणंतपएसिया खंधा निरेया दव्वट्ठयाए अणंतगुणा ३ ते चेव पएसट्ठयाए अनंतगुणा ४ अणंतपएसिया खंधा देसेया दव्वट्ठयाए अणंतगुणा ५ ते चेव पएसट्ठयाए अणंतगुणा ६ असंखिज्जपएसिया खंधा सव्वेया दव्वट्ठयाए अणंतगुणा ७ ते चेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा ८ संखिज्जपएसिया खंधा सव्वेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ९ ते चेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा १० परमाणुपोग्गला सव्वेया दव्वट्ठअपएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा ११ संखेज्जपएसिया खंधा देसेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा १२ ते चेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा १३ असंखेज्जपएसिया खंधा देसेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा १४ ते चेव पएस० असंखे० १५ परमाणुपोग्गला निरेया दव्वट्ठअपदेसट्ठयाए असंखेज्जगुणा १६ संखेज्जपएसिया खंधा निरेया दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा १७ ते चेव पएसट्ठयाए संखेज्जगुणा १८ असंखेज्जपएसिया निरेया दव्वट्ठ० असंखेज्जगुणा १९ ते चेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा २० (सूत्रं ७४४) कति णं भंते ! धम्मत्थिकायस्स मज्झपएसा पन्नत्ता ?, गोयमा ! अट्ठ धम्मत्थिकायस्स मज्झपएसा पन्नत्ता। कति णं भंते ! अधम्मत्थिकायस्स मज्झपएसा प०, एवं चेव, कति णं भंते ! आगासत्थिकायस्स मज्झपएसा प०, एवं चेव। कति णं भंते ! जीवत्थिकायस्स मज्झपएसा प०, गोयमा ! अट्ठ जीवत्थिकायस्स मज्झपएसा प०, एए णं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [७४४--७४५]

दीप अनुक्रम [८९१--८९२]

भंते ! अट्ठ जीवत्थिकायस्स मज्झपएसा कतिसु आगासपएसेसु ओगाहंति ?, गोयमा ! जहन्नेणं एक्कंसि वा दोहिं वा तीहिं वा चउहिं वा पंचहिं वा छहिं वा उक्कोसेणं अट्ठसु नो चेव णं सत्तसु । सेवं भंते २ त्ति ॥ (सूत्रं ७४५) ॥ २५ शते ४ उद्देशकः ॥

'परमाणु'इत्यादि, 'सेए'त्ति चलः, सैजत्वं चोत्कर्षतोऽप्यावलिकाअसङ्ख्येयभागमात्रमेव, निरेजताया औत्सर्गिकत्वात्, अत एव निरेजत्वमुत्कर्षतोऽसङ्ख्येयं कालमुक्तमिति, 'निरेए'त्ति निश्चलः । बहुत्वसूत्रे 'सव्वद्धं'ति सर्वाद्धां–सर्वकालं परमाणवः सैजाः सन्ति, नहि कश्चित् स समयोऽस्ति कालत्रयेऽपि यत्र परमाणवः सर्व एव न चलन्तीत्यर्थः, एवं निरेजा अपि सर्वाद्धामिति ॥ अथ परमाण्वादीनां सैजत्वाद्यन्तरमाह—'परमाणु'इत्यादि, 'सट्ठाणंतरं पडुच'त्ति स्वस्थानं–परमाणोः परमाणुभाव एव तत्र वर्त्तमानस्य यदन्तरं–चलनस्य व्यवधानं निश्चलत्वभवनलक्षणं तत्स्वस्थानान्तरं तत्प्रतीत्य 'जहन्नेणं एक्कं समयं'ति निश्चलताजघन्यकाललक्षणं 'उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं'ति निश्चलताया एवोत्कृष्टकाललक्षणं, तत्र जघन्यतोऽन्तरं परमाणुरेकं समयं चलनादुपरम्य पुनश्चलतीत्येवं, उत्कर्षतश्च स एवासङ्ख्येयं कालं क्वचित्स्थिरो भूत्वा पुनश्चलतीत्येवं दृश्यमिति, 'परट्ठाणंतरं पडुच'त्ति परमाणोर्यत्परस्थाने–द्व्यणुकादावन्तर्भूतस्यान्तरं–चलनव्यवधानं तत्परस्थानान्तरं तत्प्रतीत्येति 'जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं'ति, परमाणुपुद्गलो हि भ्रमन् द्विप्रदेशादिकं स्कन्धमनुप्रविश्य जघन्यतस्तेन सहैकं समयं स्थित्वा पुनर्भ्राम्यति उत्कर्षतस्त्वसङ्ख्येयं कालं द्विप्रदेशादितया स्थित्वा पुनरेकतया भ्राम्यतीति । 'निरेयस्से'त्यादि, निश्चलः सन् जघन्यतः समयमेकं परिभ्रम्य पुनर्निश्चलस्तिष्ठति, उत्कर्षतस्तु निश्चलः सन्नावलि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७४४--७४५] दीप अनुक्रम [८९१--८९२]	

काया असङ्ख्येयं भागं चलनो त्कृष्टकालरूपं परिभ्रम्य पुनर्निश्चल एव भवतीति स्वस्थानान्तरमुक्तं, परस्थानान्तरं तु निश्चल सन् ततः स्वस्थानाच्चलितो जघन्यतो द्विप्रदेशादौ स्कन्धे एकं समयं स्थित्वा पुनर्निश्चल एव तिष्ठति, उत्कर्षतस्त्वसङ्ख्येयं कालं तेन सह स्थित्वा पृथग् भूत्वा पुनस्तिष्ठति । 'दुपएसियस्से'त्यादि, 'उक्कोसेणं अणंतं कालं'ति, कथम् ?, द्विप्रदेशिकः संश्चलितस्ततोऽनन्तैः पुद्गलैः सह कालभेदेन सम्बन्धं कुर्वन्ननन्तेन कालेन पुनस्तेनैव परमाणुना सह सम्बन्धं प्रतिपद्य पुनश्चलतीत्येवमिति ॥ सैजादीनामेवाल्पबहुत्वमाह—'एएसि ण'मित्यादि, 'निरेया असंखेज्जगुण'त्ति स्थिति-क्रियाया औत्सर्गिकत्वाद्बहुत्वमिति, अनन्तप्रदेशिकेषु सैजा अनन्तगुणाः वस्तुस्वभावात् ॥ एतदेव द्रव्यार्थप्रदेशार्थोभया-र्थैर्निरूपयन्नाह—'एएसि ण'मित्यादि, तत्र द्रव्यार्थतायां सैजत्वनिरेजत्वाभ्यामष्टौ पदानि, एवं प्रदेशार्थतायामपि, उभ-यार्थतायां तु चतुर्दश सैजपक्षे निरेजपक्षे च परमाणुषु द्रव्यार्थप्रदेशार्थपदयोर्द्रव्यार्थाप्रदेशार्थतेत्येवमेकीकरणेनाभिलापात्, अथ 'पएसट्ठयाए एवं चेव' इत्यत्रातिदेशे यो विशेषोऽसावुच्यते–'नवरं परमाणु' इत्यादि, परमाणुपदे प्रदेशार्थतायाः स्थानेऽप्रदेशार्थतयेति वाच्यं, अप्रदेशार्थत्वात्परमाणूनां, तथा द्रव्यार्थतासूत्रे सङ्ख्यातप्रदेशिका निरेजा निरेजपरमाणुभ्यः सङ्ख्यातगुणा उक्ताः प्रदेशार्थतासूत्रे तु ते तेभ्योऽसङ्ख्येयगुणा वाच्याः, यतो निरेजपरमाणुभ्यो द्रव्यार्थतया निरेजसङ्ख्यात-प्रदेशिकाः सङ्ख्यातगुणा भवन्ति, तेषु च मध्ये बहूनामुत्कृष्टसङ्ख्यातकप्रमाणप्रदेशत्वान्निरेजपरमाणुभ्यस्ते प्रदेशतोऽसङ्ख्येय-गुणा भवन्ति उत्कृष्टसङ्ख्यातकस्योपर्येकप्रदेशप्रक्षेपेऽप्यसङ्ख्यातकस्य भावादिति ॥ अथ परमाण्वादीनेव सैजत्वादिना निरूप-यन्नाह—'परमाणु' इत्यादि, इह सर्वेषामल्पबहुत्वाधिकारे द्रव्यार्थचिन्तायां परमाणुपदस्य सर्वैजत्वनिरेजत्वविशेषणात्

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७४४-७४५]

दीप अनुक्रम [८९१-८९२]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥८८७॥

सङ्ख्येयादीनां तु त्रयाणां प्रत्येकं देशैजसर्वैजनिरेजत्वैर्विशेषणादेकादश पदानि भवन्ति, एवं प्रदेशार्थतायामपि, उभयार्थतायां चैतान्येव विंशतिः, सर्वैजपक्षे निरेजपक्षे च परमाणुषु द्रव्यार्थप्रदेशार्थपदयोर्द्रव्यार्थाप्रदेशार्थतेत्येवमेकीकरणेनाभिलापादिति ॥ अनन्तरं पुद्गलास्तिकायः प्रदेशतश्चिन्तितः, अथान्यानप्यस्तिकायान् प्रदेशत एव चिन्तयन्नाह—'कइ णं भंते !' इत्यादि, 'अट्ठ धम्मत्थिकायस्स मज्झपएस'त्ति, एते च रुचकप्रदेशाष्टकावगाहिनोऽवसेया इति चूर्णिकारः, इह च यद्यपि लोकप्रमाणत्वेन धर्मास्तिकायादेर्मध्यं रत्नप्रभावकाशान्तर एव भवति न रुचके तथाऽपि दिशामनुदिशां च तत्प्रभवत्वाद्धर्मास्तिकायादि मध्यं तत्र विवक्षितमिति संभाव्यते, 'जीवत्थिकायस्स'त्ति प्रत्येकं जीवानामित्यर्थः, ते च सर्वस्यामवगाहनायां मध्यभाग एव भवन्तीति मध्यप्रदेशा उच्यन्ते, 'जहन्नेणं एक्कंसि वे'त्यादि सङ्कोचविकाशधर्मत्वात्तेषाम् 'उक्कोसेणं अट्ठसु'त्ति एकैकस्मिंस्तेषामवगाहनात्, 'नो चेव णं सत्तसुवि'त्ति वस्तुस्वभावादिति ॥ ॥ पञ्चविंशतितमशते चतुर्थः ॥ २५ । ४ ॥

२५ शतके उद्देशः ४ परमाण्वादीनां सैजत्वादि धर्मादिमध्यप्रदेशाः सू ७४४-७४५

चतुर्थोद्देशके पुद्गलास्तिकायादयो निरूपितास्ते च प्रत्येकमनन्तपर्यवा इति पञ्चमे पर्यवाः प्ररूप्यन्त इत्येवंसम्बद्धस्यास्येदमादि सूत्रम्—

कतिविहा णं भंते ! पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! दुविहा पज्जवा पं०, तं०–जीवपज्जवा य अजीवपज्जवा य, पज्जवपदं निरवसेसं भाणियव्वं जहा पन्नवणाए । (सूत्रं ७४६) आवलियाणं भंते ! किं संखेज्जा समया असं-

॥८८७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र पञ्चविंशतितमे शतके चतुर्थ-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ पञ्चविंशतितमे शतके पञ्चम-उद्देशक: आरभ्यते

समय-संख्या: गणितं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [७४६--७४८]

दीप अनुक्रम [८९३--८९५]

खेज्जा समया अणंता समया ?, गोयमा ! नो संखेज्जा समया असंखेज्जा समया नो अणंता समया, आणापाणूणं भंते ! किं संखेज्जा एवं चेव, थोवे णं भंते ! किं संखेज्जा ?, एवं चेव, एवं लवेवि मुहुत्तेवि एवं अहोरत्तेवि, एवं पक्खे मासे उडू अयणे संवच्छरे जुगे वाससये वाससहस्से वाससयसहस्से पुव्वंगे पुव्वे तुडियंगे तुडिए अडडंगे अडडे अववंगे अववे हूहुयंगे हूहुए उप्पलंगे उप्पले पउमंगे पउमे नलिणंगे नलिणे अच्छिणिउपूरंगे अच्छणिउपूरे अउयंगे अउये नउयंगे नउए पउयंगे पउए चूलियंगे चूलिए सीसपहेलियंगे सीसपहेलिया पलिओवमे सागरोवमे ओसप्पिणी एवं उस्सप्पिणीवि, पोग्गलपरियट्टे णं भंते! किं संखेज्जा समया असंखेज्जा समया अणंता समया ? पुच्छा, गोयमा ! नो संखेज्जा समया नो असंखेज्जा समया अणंता समया, एवं तीयद्धाअणागयद्धसवद्धा ॥ आवलियाओ णं भंते ! किं संखेज्जा समया ? पुच्छा, गोयमा! नो संखेज्जा समया सिय असंखिज्जा समया सिय अणंता समया, आणापाणूणं भंते ! किं संखेज्जा समया ३ ?, एवं चेव, थोवाणं भंते ! किं संखेज्जा समया ३, एवं जाव ओसप्पिणीओत्ति, पोग्गलपरियट्टाणं भंते ! किं संखेज्जा समया ? पुच्छा, गोयमा ! णो संखेज्जा समया णो असंखेज्जा समया अणंता समया, आणापाणूणं भंते ! किं संखेज्जाओ आवलियाओ पुच्छा, गोयमा ! संखेज्जाओ आवलियाओ णो असंखिज्जाओ आवलियाओ नो अणंताओ आवलियाओ, एवं थोवेवि एवं जाव सीसपहेलियत्ति । पलिओवमे णं भंते ! किं संखेज्जा ३ ? पुच्छा, गोयमा ! णो संखेज्जाओ आवलियाओ असंखिज्जाओ आवलियाओ नो अणंताओ आवलियाओ,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समय-संख्या: गणितं

प्रत सूत्रांक [७४६--७४८] दीप अनुक्रम [८९३--८९५]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः२

॥८८८॥

२५ शतके उद्देशः ५ पर्यवाः आवलिकादीनां समयादि सू ७४६-७४७

एवं सागरोवमेवि एवं ओसप्पिणीवि उस्सप्पिणीवि, पोग्गलपरियट्टे पुच्छा, गोयमा ! नो संखेज्जाओ आवलियाओ णो असंखेज्जाओ आवलियाओ अणंताओ आवलियाओ, एवं जाव सवद्धा । आणापाणूणं भंते ! किं संखेज्जाओ आवलियाओ ? पुच्छा, गोयमा ! सिय संखेज्जाओ आवलियाओ सिय असंखेज्जाओ सिय अणंताओ, एवं जाव सीसपहेलियाओ, पलिओवमाणं पुच्छा, गोयमा ! णो संखेज्जाओ आवलियाओ सिय असंखेज्जाओ आवलियाओ सिय अणंताओ आवलियाओ एवं जाव उस्सप्पिणीओ, पोग्गलपरियट्टाणं पुच्छा, गोयमा ! णो संखेज्जाओ आवलियाओ णो असंखेज्जाओ आवलियाओ अणंताओ आवलियाओ । थोवे णं भंते ! किं संखेज्जाओ आणापाणूओ असंखेज्जाओ जहा आवलियाए वत्तवया एवं आणापाणूवि निरवसेसा, एवं एतेणं गमएणं जाव सीसपहेलिया भाणियवा । सागरोवमे णं भंते ! किं संखेज्जा पलिओवमा ? पुच्छा, गोयमा ! संखेज्जा पलिओवमा णो असंखेज्जा पलिओवमा णो अणंता पलिओवमा, एवं ओसप्पिणीएवि उस्सप्पिणीएवि, पोग्गलपरियट्टे णं पुच्छा, गोयमा ! णो संखेज्जा पलिओवमा णो असंखेज्जा पलिओवमा अणंता पलिओवमा एवं जाव सवद्धा । सागरोवमाणं भंते ! किं संखेज्जा पलिओवमा ? पुच्छा, गोयमा ! सिय संखेज्जा पलिओवमा सिय असंखिज्जा पलिओवमा सिय अणंता पलिओवमा, एवं जाव ओसप्पिणीवि उस्सप्पिणीवि । पोग्गलपरियट्टाणं पुच्छा, गोयमा ! णो संखेज्जा पलिओवमा णो असंखेज्जा पलिओवमा अणंता पलिओवमा । ओसप्पिणी णं भंते ! किं संखेज्जा सागरोवमा जहा पलिओवमस्स वत्तवया तहा

॥८८८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समय-संख्या: गणितं

प्रत सूत्रांक [७४६--७४८]

दीप अनुक्रम [८९३--८९५]

सागरोवमस्सवि, पोग्गलपरियट्टे णं भंते ! किं संखेज्जाओ ओसप्पिणीओ पुच्छा, गोयमा ! णो संखेज्जाओ ओसप्पिणीओ णो असंखिज्जा अणंताओ ओसप्पिणिउस्सप्पिणीओ एवं जाव सवद्धा, पोग्गलपरियट्टा णं भंते ! किं संखेज्जाओ ओसप्पिणिउस्सप्पिणीओ पुच्छा, गोयमा ! णो संखेज्जाओ ओसप्पिणिउस्सप्पिणीओ णो असंखे० अणंताओ ओसप्पिणिउस्सप्पिणीओ। तीतद्धा णं भंते ! किं संखेज्जा पोग्गलपरियट्टा ? पुच्छा, गोयमा ! नो संखेज्जा पोग्गलपरियट्टा नो असंखेज्जा अणंता पोग्गलप०, एवं अणागयद्धावि, एवं सवद्धावि। (सूत्रं ७४७) अणागयद्धा णं भंते ! किं संखेज्जाओ तीतद्धाओ असंखे० अणंताओ ?, गोयमा ! णो संखेज्जाओ तीतद्धाओ णो असंखेज्जाओ तीतद्धाओ णो अणंताओ तीतद्धाओ, अणागयद्धा णं तीतद्धाओ समयाहिया, तीतद्धा णं अणागयद्धाओ समयूणा। सवद्धा णं भंते ! किं संखेज्जाओ तीतद्धाओ ? पुच्छा, गोयमा ! णो संखेज्जाओ तीतद्धाओ णो असंखे० णो अणंताओ तीयद्धाओ, सवद्धा णं तीयद्धाओ सातिरेगदुगुणा तीतद्धाणं सवद्धाओ थोवूणए अद्धे, सवद्धा णं भन्ते ! किं संखेज्जाओ अणागयद्धाओ पुच्छा, गोयमा ! णो संखेज्जाओ अणागयद्धाओ णो असंखेज्जाओ अणागयद्धाओ णो अणंताओ अणागयद्धाओ सवद्धा णं अणागयद्धाओ थोवूणगदुगुणा अणागयद्धा णं सवद्धाओ सातिरेगे अद्धे (७४८) ॥

'कइविहे'त्यादि, 'पज्जव'त्ति पर्यवा गुणा धर्म्मा विशेषा इति पर्यायाः, 'जीवपज्जवा य'त्ति जीवधर्म्मा एवमजीवपर्यवा अपि, 'पज्जवपयं निरवसेसं भाणियवं'ति 'जहा पन्नवणाए'त्ति पर्यवपदं च–विशेषपदं प्रज्ञापनायां पञ्चमं, तच्चैवं–

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समय-संख्या: गणितं

प्रत सूत्रांक [७४६--७४८]

दीप अनुक्रम [८९३--८९५]

'जीवपज्जवा णं भंते ! किं संखेज्जा असंखेज्जा अणंता ?, गोयमा ! नो संखेज्जा णो असंखेज्जा अणंता' इत्यादीति ॥ विशेषाधिकारात्कालविशेषसूत्रम्—'आवलिया ण'मित्यादि, बहुत्वाधिकारे 'आवलियाओ ण'मित्यादौ 'नो संखेज्जा समय'त्ति एकस्यामपि तस्यामसङ्ख्याताः समयाः बहुषु पुनरसङ्ख्याता अनन्ता वा स्युर्न तु सङ्ख्येया इति । 'अणागयद्धा णं तीतद्धाओ समयाहिय'त्ति अनागतकालोऽतीतकालात्समयाधिकः, कथं ?, यतोऽतीतानागतौ कालावनादित्वानन्तत्वाभ्यां समानौ, तयोश्च मध्ये भगवतः प्रश्नसमयो वर्त्तते, स चाविनष्टत्वेनातीते न प्रविशति अविनष्टत्वसाधर्म्यादनागते क्षिप्तस्ततः समयातिरिक्ता अनागताद्धा भवति, अत एवाह–अनागतकालादतीतः कालः समयोनो भवतीति, एतदेवाह– 'तीतद्धा ण'मित्यादि, 'सव्वद्धा णं तीतद्धाओ सातिरेगदुगुण'त्ति सर्वाद्धा–अतीतानागताद्धाद्वयं, सा चातीताद्धातः सकाशात् सातिरेकद्विगुणा भवति, सातिरेकत्वं च वर्त्तमानसमयेनात एवातीताद्धा सर्वाद्धायाः स्तोकोनमर्द्धं, ऊनत्वं च वर्त्तमानसमयेनैव, एतदेवाह—'तीतद्धा णं सव्वद्धाए थोवूणए अद्धे'त्ति, इह कश्चिदाह–अतीताद्धातोऽनागताद्धाऽनन्तगुणा, यतो यदि ते वर्त्तमानसमये समे स्यातां ततस्तदतिक्रमे अनागताद्धा समयेनोना स्यात्ततो द्व्यादिभिः एवं च समत्वं नास्ति ततोऽनन्तगुणा, सा चातीताद्धायाः सकाशाद्, अत एवानन्तेनापि कालेन गतेन नासौ क्षीयत इति, अत्रोच्यते, इह समत्वमुभयोरप्याद्यन्ताभावमात्रेण विवक्षितमिति चादावेव निवेदितमिति ॥ पर्यवा उद्देशकादावुक्तास्ते च भेदा अपि भवन्तीति निगोदभेदान् दर्शयन्नाह— ॥८८९॥

कतिविहा णं भंते ! णिओदा पन्नत्ता ?, गोयमा ! दुविहा णिओदा प०, तं०–णिओगा य णिओयजीवा य'

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निगोद, तस्य भेदा:,

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [७४९--७५०]

दीप अनुक्रम [८९६--८९७]

णिओदा णं भंते ! कतिविहा पन्नत्ता ?, गोयमा ! दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–सुहुमनिगोदा य बायरनिओगा य, एवं निओगा भाणियव्वा जहा जीवाभिगमे तहेव निरवसेसं (सूत्रं ७४९) ॥ कतिविहे णं भंते ! णामे पन्नत्ते ?, गोयमा ! छव्विहे णामे पन्नत्ते, तंजहा–ओदइए जाव सन्निवाइए । से किं तं उदइए णामे ?, उदइए णामे दुविहे प०, तं०–उदए य उदयनिप्फन्ने य, एवं जहा सत्तरसमसए पढमे उद्देसए भावो तहेव इहवि, नवरं इमं नामणाणत्तं, सेसं तहेव जाव सन्निवाइए । सेवं भंते ! २ (सूत्रं ७५०) ॥ २५।५ ॥

'कतिविहे'त्यादि, 'निगोदा य'त्ति अनन्तकायिकजीवशरीराणि 'निगोयजीवा य'त्ति साधारणनामकर्म्मोदयवर्त्तिनो जीवाः, 'जहा जीवाभिगमे'त्ति, अनेनेदं सूचितं–'सुहुमनिगोदा णं भंते ! कतिविहा पन्नत्ता ?, गोयमा ! दुविहा पन्नत्ता, तंजहा—पज्जत्तगा य अपज्जत्तगा य' इत्यादि ॥ अनन्तरं निगोदा उक्तास्ते च जीवपुद्गलानां परिणामभेदाद् भवन्तीति परिणामभेदान् दर्शयन्नाह—'कतिविहे णं भंते ! नामे'इत्यादि, नमनं नामः परिणामो भाव इत्यनर्थान्तरं, 'नवरं इमं नाणत्तं'ति सप्तदशशते भावमाश्रित्येदं सूत्रमधीतं इह तु नामशब्दमाश्रित्येत्येतावान् विशेष इत्यर्थः ॥ ॥ पञ्चविंशतितमशते पञ्चमः ॥ २५।५ ॥

पञ्चमोद्देशकान्ते नामभेद उक्तो, नामभेदाच्च निर्ग्रन्थभेदा भवन्तीत्यतस्ते षष्ठेऽभिधीयन्ते इत्यनेन सम्बन्धेनायातस्यास्यैतास्तिस्रो द्वारगाथाः—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र पञ्चविंशतितमे शतके पंचम-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ पञ्चविंशतितमे शतके षष्ठं-उद्देशक: आरभ्यते

निगोद, तस्य भेदा:,

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [७५१] + गाथा:

दीप अनुक्रम [८९८--९०१]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥८९०॥

पन्नवण १ वेद २ रागे ३ कप्प ४ चरित्त ५ पडिसेवणा ६ णाणे ७ । तित्थे ८ लिंग ९ सरीरे १० खेत्ते ११ काल १२ गइ १३ संजम १४ निगासे १५ ॥ १ ॥ जोगु १६ वओग १७ कसाए १८ लेसा १९ परिणाम २० बंध २१ वेदे य २२ । कम्मोदीरण २३ उवसंपजहन्न २४ सन्ना य २५ आहारे २६ ॥ २ ॥ भव २७ आगरिसे २८ कालं २९ तरे य ३० समुग्घाय ३१ खेत्त ३२ फुसणा य ३३ । भावे ३४ परिणामे ३५ विय अप्पाबहुयं ३६ नियंठाणं ३७ ॥३॥ रायगिहे जाव एवं वयासी–कति णं भंते! णियंठा पन्नत्ता ?, गोयमा! पंच णियंठा पन्नत्ता, तंजहा–पुलाए बउसे कुसीले णियंठे सिणाए ॥ पुलाए णं भंते! कतिविहे पन्नत्ते?, गोयमा ! पंचविहे प०, तं–नाणपुलाए दंसणपुलाए चरित्तपुलाए लिंगपुलाए अहासुहुमपुलाए णामं पंचमे। बउसे णं भंते! कतिविहे प० ?, गोयमा ! पंचविहे प०, तं०–आभोगबउसे अणाभोगबउसे संवुडबउसे असंवुडबउसे अहासुहुमबउसे णामं पंचमे । कुसीले णं भंते ! कतिविहे प० ?, गोयमा ! दुविहे प० तं०–पडिसेवणाकुसीले य कसायकुसीले य, पडिसेवणाकुसीले णं भंते ! कतिविहे पन्नत्ते ?, गोयमा ! पंचविहे प०, तंजहा–नाणपडिसेवणाकुसीले दंसणपडिसेवणाकुसीले चरित्तपडिसेवणाकुसीले लिंगपडिसेवणाकुसीले अहासुहुमपडिसेवणाकुसीले णामं पंचमे, कसायकुसीले णं भंते ! कतिविहे पन्नत्ते ?, गोयमा ! पंचविहे पं० तं०–नाणकसायकुसीले दंसणकसायकुसीले चरित्तकसायकुसीले लिंगकसायकुसीले अहासुहुमकसायकुसीले णामं पंचमे । नियंठे णं भंते ! कतिविहे प० ?, गोयमा ! पंचविहे पं०, तंजहा–पढमसमयनियंठे अपढमसमयनियंठे चरमसमयनियंठे अच-

२५ शतके उद्देशः ५ निगोदा नामच सू ७४९-७५० उद्देशः ६ निर्ग्रन्थेषु भेदवेदौ सू ७५१

॥८९०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निर्ग्रन्थ:, तस्य स्वरुपम्, भेदा: इत्यादि विविध-विषय-वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [७५१] + गाथा:

दीप अनुक्रम [८९८--९०१]

मसमयनियंठे अहासुहुमनियंठे णामं पंचमे। सिणाए णं भंते! कतिविहे प० ?, गो० ! पंचविहे प० तं०– अच्छवी १ असबले २ अकम्मंसे ३ संसुद्धनाणदंसणधरे अरहा जिणे केवली ४ अपरिस्सावी ५।१। पुलाए णं भंते ! किं सवेयए होज्जा अवेदए होज्जा ?, गोयमा ! सवेयए होज्जा णो अवेयए होज्जा, जइ सवेयए होज्जा किं इत्थिवेदए होज्जा पुरिसवेयए पुरिसनपुंसगवेदए होज्जा ?, गोयमा ! नो इत्थिवेदए होज्जा पुरिसवेयए होज्जा पुरिसनपुंसगवेयए वा होज्जा। बउसे णं भंते! किं सवेदए होज्जा अवेदए होज्जा ?, गोयमा! सवेदए होज्जा णो अवेदए होज्जा, जइ सवेदए होज्जा किं इत्थिवेयए होज्जा पुरिसवेयए होज्जा पुरिसनपुंसगवेदए होज्जा ?, गोयमा ! इत्थिवेयए वा होज्जा पुरिसवेयए वा होज्जा पुरिसनपुंसगवेयए वा होज्जा, एवं पडिसेवणाकुसीलेवि, कसायकुसीले णं भंते ! किं सवेदए ? पुच्छा, गोयमा ! सवेदए वा हो० अवेदए वा हो०, जइ अवेदए किं उवसंतवेदए खीणवेदए हो० ?, गोयमा ! उवसंतवेदए वा खीणवेदए वा हो०, जइ सवेयए होज्जा किं इत्थिवेदए पुच्छा, गोयमा ! तिसुवि जहा बउसो। णियंठे णं भंते ! किं सवेदए पुच्छा, गोयमा! णो सवेयए होज्जा अवेयए हो०, जइ अवेयए हो० किं उवसंत पुच्छा, गोयमा ! उवसंतवेयए वा होइ खीणवेयए वा होज्जा । सिणाए णं भंते ! किं सवेयए होज्जा ?, जहा नियंठे तहा सिणाएवि, नवरं णो उवसंतवेयए होज्जा खीणवेयए होज्जा २ ॥ (सूत्रं ७५१)

'पण्णवणे'त्यादि, एताः पुनरुद्देशकार्थावगमगम्या इति, तत्र 'पन्नवण'त्ति द्वाराभिधानायाह—'रायगिहे'त्यादि, 'कति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निर्ग्रन्थ:, तस्य स्वरुपम्, भेदा: इत्यादि विविध-विषय-वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [७५१] + गाथा:

दीप अनुक्रम [८९८--९०१]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥८९१॥

ण'मित्यादि 'नियंठ'त्ति निर्गताः सबाह्याभ्यन्तराद्ग्रन्थादिति निर्ग्रन्थाः–साधवः, एतेषां च प्रतिपन्नसर्वविरतीनामपि विचित्रचारित्रमोहनीयकर्मक्षयोपशमादिकृतो भेदोऽवसेयः, तत्र 'पुलाय'त्ति पुलाको–निस्सारो धान्यकणः पुलाकवत्पुलाकः संयमसारापेक्षया, स च संयमवानपि मनाक् तमसारं कुर्वन् पुलाक इत्युच्यते, बउसे'त्ति बकुशं–शबलं कर्बुरमित्यनर्थान्तरं, ततश्च बकुशसंयमयोगाद्बकुशः 'कुसीले'त्ति कुत्सितं शीलं–चरणमस्येति कुशीलः 'नियंठे'त्ति निर्गतो ग्रन्थात्–मोहनीयकर्माख्यादिति निर्ग्रन्थः 'सिणाए'त्ति स्नात इव स्नातो घातिकर्म्मलक्षणमलपटलक्षालनादिति । तत्र पुलाको द्विविधो लब्धिप्रतिसेवाभेदात्, तत्र लब्धिपुलाको लब्धिविशेषवान्, यदाह—"संघाइयाण कज्जे चुन्निज्जा चक्कवट्टिमवि जीए। तीए लद्धीएँ जुओ लद्धिपुलाओ मुणेयव्वो ॥ १ ॥" [सङ्घादिकानां कार्ये यया चक्रवर्त्तिनमपि चूरयेत्तया लब्ध्या युतो लब्धिपुलाको ज्ञातव्यः ॥ १ ॥] अन्ये त्वाहुः–आसेवनतो यो ज्ञानपुलाकस्तस्येयमीदृशी लब्धिः स एव लब्धिपुलाको न तद्व्यतिरिक्तः कश्चिदपर इति । आसेवनापुलाकं पुनराश्रित्याह—'पुलाए णं भंते !'इत्यादि, 'नाणपुलाए'त्ति ज्ञानमाश्रित्य पुलाकस्तस्यासारताकारीविराधको ज्ञानपुलाकः, एवं दर्शनादिपुलाकोऽपि, आह च—"खलियाइदूसणेहिं नाणं संकाइएहिं सम्मत्तं । मूलुत्तरगुणपडिसेवणाइ चरणं विराहेइ ॥ १ ॥ लिंगपुलाओ अन्नं निक्कारणओ करेइ जो लिंगं । मणसा अकप्पियाणं निसेवओ होइ अहसुहमो ॥ २ ॥" [स्खलितादिदूषणैर्ज्ञानं शङ्कादिभिः सम्यक्त्वं मूलोत्तरगुणप्रतिसेवनया चारित्रं विराधयति ॥ १ ॥ लिङ्गपुलाकोऽन्यत् निष्कारणतः करोति यो लिङ्गम् । मनसाऽकल्पितानां निषेवको भवति यथासूक्ष्मः ॥ २ ॥] बकुशो द्विविधो भवत्युपकरणशरीरभेदात्, तत्र वस्त्रपात्राद्युपकरणविभूषानुवर्त्तन-

२५ शतके उद्देशः ५ निगोदा नामच सू ७४९-७५० उद्देशः ६ निर्ग्रन्थेषु भेदवेदौ सू ७५१

॥८९१॥

Jain Education International | For Personal & Private Use Only | www.jainelibrary.org

निर्ग्रन्थः, तस्य स्वरुपम्, भेदा: इत्यादि विविध-विषय-वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [७५१] + गाथा:

दीप अनुक्रम [८९८--९०१]

शील उपकरणबकुशः करचरणनखमुखादिदेहावयवविभूषाऽनुवर्त्ती शरीरबकुशः, स चायं द्विविधोऽपि पञ्चविधः, तथा चाह—'बउसे ण'मित्यादि, 'आभोगबउसे'त्ति आभोगः—साधूनामकृत्यमेतच्छरीरोपकरणविभूषणमित्येवं ज्ञानं तत्प्रधानो बकुश आभोगबकुशः एवमन्येऽपि, इहाप्युक्तम्—"आभोगे जाणंतो करेइ दोसं अजाणमणभोगे। मूलुत्तरेहिं संवुड विवरीअ असंवुडो होइ ॥ १ ॥ अच्छिमुह मज्जमाणो होइ अहासुहुमओ तहा बउसो। अहवा जाणिज्जंतो असंवुडो संवुडो इयरो ॥ २ ॥" [जानानो दोषं करोत्याभोगः अजानानोऽनाभोगो मूलोत्तरयोः संवृतोऽसंवृतो भवतीतरः ॥ १ ॥ अक्षिमुखं मार्जयन् भवति यथासूक्ष्मस्तथा बकुशः। अथवा ज्ञायमानोऽसंवृतः इतरः संवृतः ॥ २ ॥] 'पडिसेवणाकुसीले य'त्ति तत्र सेवना—सम्यगाराधना तत्प्रतिपक्षस्तु प्रतिषेवणा तया कुशीलः प्रतिसेवनाकुशीलः 'कसायकुसीले'त्ति कषायैः कुशीलः कषायकुशीलः 'नाणपडिसेवणाकुसीले'त्ति ज्ञानस्य प्रतिषेवणया कुशीलो ज्ञानप्रतिषेवणाकुशीलः एवमन्येऽपि, उक्तञ्च—"इह नाणाइकुसीलो उवजीवं होइ नाणपभिईए। अहसुहुमो पुण तुस्से एस तवस्सित्तिसंसाए ॥१॥" [ज्ञानप्रभृतिकानुपजीवन्निह ज्ञानादिकुशीलो भवति यथासूक्ष्मः पुनरेष तपस्वीति प्रशंसया तुष्यति ॥ १ ॥"] 'नाणकसायकुसीले'त्ति ज्ञानमाश्रित्य कषायकुशीलो ज्ञानकषायकुशीलः, एवमन्येऽपि, इह गाथाः—"णाणंदंसणलिंगे जो जुंजइ कोहमाणमाईहिं। सो नाणाइकुसीलो कसायओ होइ विन्नेओ ॥ १ ॥ चारित्तंमि कुसीलो कसायओ जो पयच्छई सावं। मणसा कोहाईए निसेवयं होइ अहसुहुमो ॥२॥ अहवावि कसाएहिं नाणाईणं विराहओ जो उ। सो नाणाइकुसीलो णेओ वक्खाणभेएणं ॥ ३ ॥" [ज्ञानदर्शनलिङ्गानि यः क्रोधमानादिभिर्युनक्ति स ज्ञानादिकुशीलः कषायतो भवति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निर्ग्रन्थ:, तस्य स्वरुपम्, भेदा: इत्यादि विविध-विषय-वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [७५१] + गाथा:

दीप अनुक्रम [८९८--९०१]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥८९२॥

विज्ञेयः ॥ १ ॥ यः कषायाच्छापं प्रयच्छति स चारित्रे कुशीलो मनसा क्रोधादीन्निषेवमाणो भवति यथासूक्ष्मः ॥ २ ॥ अथवाऽपि यस्तु कषायैर्ज्ञानादीनां विराधकः स ज्ञानादिकुशीलो ज्ञेयो व्याख्यानभेदेन ॥ ३ ॥] 'पढमसमयनियंठे' इत्यादि, उपशान्तमोहाद्धायाः क्षीणमोहच्छद्मस्थाद्धायाश्चान्तर्मुहूर्त्तप्रमाणायाः प्रथमसमये वर्त्तमानः प्रथमसमयनिर्ग्रन्थः शेषेष्वप्रथमसमयनिर्ग्रन्थः, एवं निर्ग्रन्थाद्धायाश्चरमसमये चरमसमयनिर्ग्रन्थः शेषेष्वितरः, सामान्येन तु यथासूक्ष्मेति पारिभाषिकी सञ्ज्ञा, उक्तं चेह—"अंतमुहुत्तपमाणयनिग्गंथद्धाइ पढमसमयंमि । पढमसमयंनियंठो अन्नेसु अपढमसमओ सो ॥ १ ॥ एमेव तयद्धाए चरिमे समयंमि चरमसमओ सो । सेसेसु पुण अचरमो सामन्नेणं तु अहसुहुमो ॥ २ ॥" [अन्तर्मुहूर्त्तप्रमाणनिर्ग्रन्थाद्धायाः प्रथमसमये प्रथमसमयनिर्ग्रन्थः अन्येष्वप्रथमसमयः सः ॥ १ ॥ एवमेव तदद्धायाश्चरमसमये चरमसमयः यः शेषेषु स पुनरचरमः सामान्येन तु यथासूक्ष्मः ॥ २ ॥] 'अच्छवी'त्यादि, 'अच्छवी'त्ति अव्यथक इत्येके, छवियोगाच्छविः—शरीरं तद्योगनिरोधेन यस्य नास्त्यसावच्छविक इत्यन्ये, क्षपा—सखेदो व्यापारस्तस्या अस्तित्वात्क्षपी तन्निषेधादक्षपीत्यन्ये, घातिचतुष्टयक्षपणानन्तरं वा तत्क्षपणाभावादक्षपीत्युच्यते १ 'अशबलः' एकान्तविशुद्धचरणोऽतिचारपङ्काभावात् २ 'अकर्म्मांशः' विगतघातिकर्म्मा ३ 'संशुद्धज्ञानदर्शनधरः' केवलज्ञानदर्शनधारीति चतुर्थः अर्हन् जिनः केवलीत्येकार्थं शब्दत्रयं चतुर्थस्नातकभेदार्थाभिधायकम् ४ 'अपरिश्रावी' परिश्रवति—आश्रवति कर्म्म बध्नातीत्येवंशीलः परिश्रावी तन्निषेधादपरिश्रावी—अबन्धको निरुद्धयोग इत्यर्थः, अयं च पञ्चमः स्नातकभेदः, उत्तराध्ययनेषु त्वर्हन् जिनः केवलीत्ययं पञ्चमो भेद उक्तः, अपरिश्रावीति तु नाधीतमेव, इह चावस्थाभेदेन भेदो न

२५ शतके उद्देशः ५ निगोदा नामच सू ७४९-७५० उद्देशः ६ निर्ग्रन्थेषु सू ७५१

॥८९२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निर्ग्रन्थः, तस्य स्वरुपम्, भेदाः इत्यादि विविध-विषय-वक्तव्यता

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [७५१] + गाथा:

दीप अनुक्रम [८९८--९०१]

केनचिद्वृत्तिकृतेहान्यत्र च ग्रन्थे व्याख्यातस्तत्र चैवं संभावयामः–शब्दनयापेक्षयैतेषां भेदो भावनीयः शक्रपुरन्दरादिवदिति, प्रज्ञापनेति गतम् ॥ अथ वेदद्वारे—'नो अवेयए होज्ज'त्ति पुलाकबकुशप्रतिसेवाकुशीलानामुपशमक्षपकश्रेण्योरभावात् 'नो इत्थिवेयए'त्ति स्त्रियाः पुलाकलब्धेरभावात् 'पुरिसनपुंसगवेयए'त्ति पुरुषः सन् यो नपुंसकवेदको वर्द्धितकत्वादिभावेन भवत्यसौ पुरुषनपुंसकवेदकः न स्वरूपेण नपुंसकवेदक इतियावत् । 'कसायकुसीले ण'मित्यादि, 'उवसंतवेदए वा होज्जा खीणवेयए वा होज्ज'त्ति सूक्ष्मसम्परायगुणस्थानकं यावत् कषायकुशीलो भवति, स च प्रमत्ताप्रमत्तापूर्वकरणेषु सवेदः अनिवृत्तिबादरे तूपशान्तेषु क्षीणेषु वा वेदेष्ववेदः स्यात् सूक्ष्मसम्पराये चेति, 'नियंठे ण' मित्यादौ 'उवसंतवेयए वा होज्जा खीणवेयए वा होज्ज'त्ति श्रेणिद्वये निर्ग्रन्थत्वभावादिति । 'सिणाए ण' मित्यादौ 'नो उवसंतवेयए होज्जा खीणवेयए होज्ज'त्ति क्षपकश्रेण्यामेव स्नातकत्वभावादिति ॥ रागद्वारे—

पुलाए णं भंते ! किं सरागे होज्जा वीयरागे होज्जा ?, गोयमा ! सरागे होज्जा णो वीयरागे होज्जा, एवं जाव कसायकुसीले । णियंठे णं भंते ! किं सरागे होज्जा ? पुच्छा, गोयमा ! णो सरागे होज्जा वीयरागे होज्जा, जइ वीयरागे होज्जा किं उवसंतकसायवीयरागे होज्जा खीणकसायवीयरागे वा होज्जा ?, गोयमा ! उवसंतकसायवीयरागेवा होज्जा खीणकसायवीयरागे वा होज्जा, सिणाए एवं चेव, नवरं णो उवसंतकसायवीयरागे होज्जा खीणकसायवीयरागे होज्जा ३ ॥ (सूत्रं ७५२) पुलाए णं भंते ! किं ठियकप्पे होज्जा अट्ठियकप्पे होज्जा ? गोयमा ! ठियकप्पे वा होज्जा अट्ठियकप्पे वा होज्जा, एवं जाव सिणाए । पुलाए णं भंते ! किं जिणकप्पे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निर्ग्रन्थ:, तस्य स्वरुपम्, भेदा: इत्यादि विविध-विषय-वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [७५२--७५५]

दीप अनुक्रम [९०२--९०५]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥८९३॥

२५ शतके उद्देशः ६ रागादिकलाः संयमाः प्रतिसेवा सू ७५२-७५५

होज्जा थेरकप्पे होज्जा कप्पातीते होज्जा ?, गोयमा ! नो जिणकप्पे होज्जा थेरकप्पे होज्जा णो कप्पातीते होज्जा । बउसे णं पुच्छा, गोयमा ! जिणकप्पे वा होज्जा थेरकप्पे वा होज्जा नो कप्पातीते होज्जा, एवं पडिसेवणाकुसीलेवि । कसायकुसीले णं पुच्छा, गोयमा ! जिणकप्पे वा होज्जा थेरकप्पे होज्जा कप्पातीते वा होज्जा । नियंठे णं पुच्छा, गोयमा ! नो जिणकप्पे होज्जा नो थेरकप्पे होज्जा कप्पातीते होज्जा, एवं सिणाएवि ४ ॥ (सूत्रं ७५३) पुलाए णं भंते ! किं सामाइयसंजमे होज्जा छेओवट्ठावणियसंजमे होज्जा परिहारविसुद्धियसंजमे होज्जा सुहुमसंपरागसंजमे होज्जा अहक्खायसंजमे होज्जा ?, गोयमा ! सामाइयसंजमे वा होज्जा छेओवट्ठावणियसंजमे वा होज्जा णो परिहारविसुद्धियसंजमे होज्जा णो सुहुमसंपरागे होज्जा णो अहक्खायसंजमे होज्जा, एवं बउसेवि, एवं पडिसेवणाकुसीलेवि, कसायकुसीले णं पुच्छा, गोयमा ! सामाइयसंजमे वा होज्जा जाव सुहुमसंपरागसंजमे वा होज्जा णो अहक्खायसंजमे होज्जा । नियंठे णं पुच्छा, गोयमा ! णो सामाइयसंजमे होज्जा जाव णो सुहुमसंपरागसंजमे हो० अहक्खायसं० होज्जा, एवं सिणाएवि ५ ॥ (सूत्रं ७५४) पुलाए णं भंते ! किं पडिसेवए होज्जा अपडिसेवए होज्जा ?, गोयमा ! पडिसेवए होज्जा णो अपडिसेवए होज्जा, जइ पडिसेवए होज्जा किं मूलगुणपडिसेवए होज्जा उत्तरगुणपडिसेवए होज्जा ?, गोयमा ! मूलगुणपडिसेवए वा होज्जा उत्तरगुणपडिसेवए वा होज्जा, मूलगुण पडिसेवमाणे पंचण्हं आसवाणं अन्नयरं पडिसेवेज्जा, उत्तरगुण पडिसेवमाणे दसविहस्स पच्चक्खाणस्स अन्नयरं पडिसेवेज्जा । बउसे णं पुच्छा, गोयमा ! पडिसेवए हो-

॥८९३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निर्ग्रन्थः, तस्य स्वरुपम्, भेदाः इत्यादि विविध-विषय-वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [७५२--७५५]

दीप अनुक्रम [९०२--९०५]

ज्ञा णो अपडिसेवए होज्जा, जइ पडिसेवए होज्जा किं मूलगुणपडिसेवए होज्जा उत्तरगुणपडिसेवए वा होज्जा?, गोयमा! णो मूलगुणपडिसेवए होज्जा उत्तरगुणपडिसेवए होज्जा, उत्तरगुण पडिसेवमाणे दसविहस्स पच्चक्खाणस्स अन्नयरं पडिसेवेज्जा, पडिसेवणाकुसीले जहा पुलाए। कसायकुसीले णं पुच्छा, गोयमा! णो पडिसेवए होज्जा अपडिसेवए होज्जा, एवं निग्गंथेवि, एवं सिणाएवि ६ ॥ (सूत्रं ७५५)

'पुलाए णं भंते! किं सरागे'त्ति सरागः–सकषायः॥ कल्पद्वारे—'पुलाए ण'मित्यादि 'पुलाए णं भंते! किं ठियकप्पे'त्यादि, आचेलक्यादिषु दशसु पदेषु प्रथमपश्चिमतीर्थङ्करसाधवः स्थिता एव अवश्यं तत्पालनादिति तेषां स्थितिकल्पस्तत्र वा पुलाको भवेत्, मध्यमतीर्थङ्करसाधवस्तु तेषु स्थिताश्चास्थिताश्चेत्यस्थितकल्पस्तेषां तत्र वा पुलाको भवेत्, एवं सर्वेऽपि, अथवा कल्पो जिनकल्पः स्थविरकल्पश्चेति द्विधेति तमाश्रित्याह—'पुलाए णं भंते! किं जिणकप्पे' इत्यादि, 'कप्पातीते'त्ति जिनकल्पस्थविरकल्पाभ्यामन्यत्र। 'कसायकुसीले ण'मित्यादौ 'कप्पातीते वा होज्ज'त्ति कल्पातीते वा कषायकुशीलो भवेत्, कल्पातीतस्य छद्मस्थस्य तीर्थकरस्य सकषायित्वादिति। 'नियंठे ण'मित्यादौ 'कप्पातीते होज्ज'त्ति निर्ग्रन्थः कल्पातीत एव भवेद्, यतस्तस्य जिनकल्पस्थविरकल्पधर्म्मा न सन्तीति। चारित्रद्वारं व्यक्तमेव॥ प्रतिसेवनाद्वारे च–'पुलाए ण' मित्यादि, 'पडिसेवए'त्ति संयमप्रतिकूलार्थस्य सञ्ज्वलनकषायोदयात्सेवकः प्रतिसेवकः संयमविराधक इत्यर्थः 'मूलगुणपडिसेवए'त्ति मूलगुणाः–प्राणातिपातविरमणादयस्तेषां प्रातिकूल्येन सेवको मूलगुणप्रतिसेवकः, एवमुत्तरगुणप्रतिसेवकोऽपि नवरमुत्तरगुणा–दशविधप्रत्याख्यानरूपाः, 'दसविहस्स पच्चक्खा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निर्ग्रन्थ:, तस्य स्वरुपम्, भेदा: इत्यादि विविध-विषय-वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [७५२--७५५] दीप अनुक्रम [९०२--९०५]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

णस्स'त्ति तत्र दशविधं प्रत्याख्यानं 'अनागतमइक्कंतं कोडीसहिय'मित्यादि प्राग्व्याख्यातस्वरूपम्, अथवा 'नवकारपोरिसीए' इत्याद्यावश्यकप्रसिद्धम् 'अन्नयरं पडिसेवेज्ज'त्ति एकतरं प्रत्याख्यानं विराधयेत्, उपलक्षणत्वाच्चास्य पिण्डविशुद्ध्यादिविराधकत्वमपि संभाव्यत इति ६ ॥ ज्ञानद्वारे—

पुलाए णं भंते ! कतिसु नाणेसु होज्जा ?, गोयमा ! दोसु वा तिसु वा होज्जा, दोसु होज्जमाणे दोसु आभिणिबोहियनाणे सुअनाणे होज्जा तिसु होमाणे तिसु आभिणिबोहियनाणे सुयनाणे ओहिनाणे होज्जा, एवं बउसेवि, एवं पडिसेवणाकुसीलेवि, कसायकुसीले णं पुच्छा, गोयमा ! दोसु वा तिसु वा चउसु वा होज्जा, दोसु होमाणे दोसु आभिणिबोहियनाणे सुयनाणे होज्जा, तिसु होमाणे तिसु आभिणिबोहियनाणसुयनाणओहिनाणेसु होज्जा अहवा तिसु होमाणे आभिणिबोहियनाणसुयनाणमणपज्जवनाणेसु होज्जा, चउसु होज्जमाणे चउसु आभिणिबोहियनाणसुयनाणओहिनाणमणपज्जवनाणेसु होज्जा, एवं नियंठेवि । सिणाए णं पुच्छा, गोयमा ! एगंमि केवलनाणे होज्जा ॥ (सूत्रं ७५६) पुलाए णं भंते ! केवतियं सुयं अहिज्जेज्जा ?, गोयमा ! जहन्नेणं नवमस्स पुव्वस्स ततियं आयारवत्थुं, उक्कोसेणं नव पुव्वाइं अहिज्जेज्जा । बउसे पुच्छा, गोयमा ! जहन्नेणं अट्ठ पवयणमायाओ उक्कोसेणं दस पुव्वाइं अहिज्जेज्जा । एवं पडिसेवणाकुसीलेवि । कसायकुसीले पुच्छा, गोयमा ! जहन्नेणं अट्ठ पवयणमायाओ उक्कोसेणं चोद्दस पुव्वाइं अहिज्जेज्जा, एवं नियंठेवि । सिणाए पुच्छा, गोयमा ! सुयवतिरित्ते होज्जा ७ ॥ (सूत्रं ७५७) ॥८९४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निर्ग्रन्थः, तस्य स्वरुपम्, भेदाः इत्यादि विविध-विषय-वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [७५६--७५७]

दीप अनुक्रम [९०६--९०७]

आभिनिबोधिकादिज्ञानप्रस्तावात् ज्ञानविशेषभूतं श्रुतं विशेषेण चिन्तयन्नाह—'पुलाए णं भंते ! केवइयं सुय' मित्यादि, 'जहन्नेणं अट्ठ पवयणमायाओ'त्ति अष्टप्रवचनमातृपालनरूपत्वाच्चारित्रस्य तद्वतोऽष्टप्रवचनमातृपरिज्ञानेनावश्यं भाव्यं, ज्ञानपूर्वकत्वाच्चारित्रस्य, तत्परिज्ञानं च श्रुतादतोऽष्टप्रवचनमातृप्रतिपादनपरं श्रुतं बकुशस्य जघन्यतोऽपि भवतीति, तच्च 'अट्ठण्हं पवयणमाईणं' इत्यस्य यद् विवरणसूत्रं तत्संभाव्यते, यत्पुनरुत्तराध्ययनेषु प्रवचनमातृनामकमध्ययनं तद्गुरुत्वाद्विशिष्टतरश्रुतत्वाच्च न जघन्यतः संभवतीति, बाहुल्याश्रयं चेदं श्रुतप्रमाणं तेन न माषतुषादिना व्यभिचार इति ॥ तीर्थद्वारे—

पुलाए णं भंते ! किं तित्थे होज्जा अतित्थे होज्जा ?, गोयमा ! तित्थे होज्जा णो अतित्थे होज्जा, एवं बउसेवि, एवं पडिसेवणाकुसीलेवि । कसायकुसीले पुच्छा, गोयमा ! तित्थे वा होज्जा अतित्थे वा होज्जा, जइ अतित्थे होज्जा किं तित्थयरे होज्जा पत्तेयबुद्धे होज्जा ?, गोयमा ! तित्थगरे वा होज्जा पत्तेयबुद्धे वा होज्जा, एवं नियंठेवि, एवं सिणाएवि ८ ॥ (सूत्रं ७५८) पुलाए णं भंते ! किं सलिंगे होज्जा अन्नलिंगे होज्जा गिहिलिंगे होज्जा ?, गोयमा ! दव्वलिंगं पडुच्च सलिंगे वा होज्जा अन्नलिंगे वा होज्जा गिहिलिंगे वा होज्जा, भावलिंगं पडुच्च नियमा सलिंगे होज्जा एवं जाव सिणाए ९ ॥ (सूत्रं ७५९) पुलाए णं भंते ! कइसु सरीरेसु होज्जा ?, गोयमा ! तिसु ओरालियतेयाकम्मएसु होज्जा, बउसे णं भंते ! पुच्छा, गोयमा ! तिसु वा चउसु

व्या. १५०

वा होज्जा, तिसु होमाणे तिसु ओरालियतेयाकम्मएसु होज्जा, चउसु होमाणे चउसु ओरालियवेउव्वियतेया-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निर्ग्रन्थः, तस्य स्वरुपम्, भेदाः इत्यादि विविध-विषय-वक्तव्यता

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [७५८-७६१] दीप अनुक्रम [९०८-९११]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥८९५॥

२५ शतके उद्देशः ६ पुलाकादे-स्तीर्थलिंग-शरीरभूमयः सू ७५८-७६१

कम्मएसु होज्जा, एवं पडिसेवणाकुसीलेवि । कसायकुसीले पुच्छा, गोयमा ! तिसु वा चउसु वा पंचसु वा होज्जा, तिसु होज्जमाणे तिसु ओरालियतेयाकम्मएसु होज्जा, चउसु होमाणे चउसु ओरालियवेउव्वियतेयाकम्मएसु होज्जा पंचसु होमाणे पंचसु ओरालियवेउव्वियआहारगतेयाकम्मएसु होज्जा, णियंठे सिणाओ य जहा पुलाओ ॥ १० ॥ (सूत्रं ७६०) पुलाए णं भंते ! किं कम्मभूमीए होज्जा अकम्मभूमीए होज्जा ?, गोयमा ! जम्मणसंतिभावं पडुच्च कम्मभूमीए होज्जा णो अकम्मभूमीए होज्जा, बउसे णं पुच्छा, गोयमा ! जम्मणसंतिभावं पडुच्च कम्मभूमीए होज्जा णो अकम्भूमीए होज्जा, साहरणं पडुच्च कम्मभूमीए वा होज्जा अकम्मभूमीए वा होज्जा, एवं जाव सिणाए ॥ ११ ॥ (सूत्रं ७६१)

'तित्थे'त्ति सङ्घे सति, 'कसायकुसीले'त्यादि कषायकुशीलश्छद्मस्थावस्थायां तीर्थङ्करोऽपि स्यादतस्तदपेक्षया तीर्थव्यवच्छेदे च तदन्योऽप्यसौ स्यादिति तदन्यापेक्षया च 'अतित्थे वा होज्जे'त्युच्यते, अत एवाह–'जइ अतित्थे होज्जा किं तित्थयरे होज्जे'त्यादि ॥ लिङ्गद्वारे लिङ्गं द्विधा–द्रव्यभावभेदात्, तत्र च भावलिङ्गं–ज्ञानादि, एतच्च स्वलिङ्गमेव, ज्ञानादिभावस्यार्हतानामेव भावात्, द्रव्यलिङ्गं तु द्वेधा–स्वलिङ्गपरलिङ्गभेदात्, तत्र स्वलिङ्गं–रजोहरणादि, परलिङ्गं च द्विधा–कुतीर्थिकलिङ्गं गृहस्थलिङ्गं चेत्यत आह–'पुलाए णं भंते ! किं सलिंगे'त्यादि । त्रिविधलिङ्गेऽपि भवेद्, द्रव्यलिङ्गानपेक्षत्वाच्चरणपरिणामस्येति ॥ शरीरद्वारं व्यक्तं । क्षेत्रद्वारे–'पुलाए णं भंते ! किं कम्मभूमीए' इत्यादि, 'जम्मणसंतिभावं पडुच्च'त्ति जन्म–उत्पादः सद्भावश्च–विवक्षितक्षेत्रादन्यत्र तत्र वा जातस्य तत्र चरणभावेना- ॥८९५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निर्ग्रन्थ:, तस्य स्वरुपम्, भेदा: इत्यादि विविध-विषय-वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [७५८-७६१]

दीप अनुक्रम [९०८-९११]

सित्यमेव तयोश्च समाहारद्वन्द्वोऽतस्तत्प्रतीत्य पुलाकः कर्म्मभूमौ भवेत्, तत्र जायते विहरति च तत्रैवेत्यर्थः, अकर्म्मभूमौ पुनरसौ न जायते तज्जातस्य चारित्राभावात्, न च तत्र वर्त्तते, पुलाकलब्धौ वर्त्तमानस्य देवादिभिः संहर्त्तुमशक्यत्वात्। बकुशसूत्रे 'नो अकम्मभूमीए होज्ज'त्ति अकर्म्मभूमौ बकुशो न जन्मतो भवति स्वकृतविहारतश्च, परकृतविहारतस्तु कर्म्मभूम्यामकर्म्मभूम्यां च संभवतीत्येतदेवाह—'साहरणं पडुच्चे'त्यादि, इह च संहरणं-क्षेत्रान्तरात् क्षेत्रान्तरे देवादिभिर्नयनम् ॥ कालद्वारे—

पुलाए णं भंते ! किं ओसप्पिणिकाले होज्जा उस्सप्पिणिकाले हो० णोओसप्पिणिणोउस्सप्पिणिकाले वा होज्जा ?, गोयमा ! ओसप्पिणिकाले वा होज्जा उस्सप्पिणिकाले वा होज्जा नोउस्सप्पिणिनोओसप्पिणिकाले वा होज्जा, जइ ओसप्पिणिकाले होज्जा किं सुसमसुसमाकाले होज्जा १ सुसमाकाले होज्जा २ सुसमदूसमाकाले होज्जा ३ दूसमसुसमाकाले होज्जा ४ दूसमाकाले होज्जा ५ दूसमदूसमाकाले होज्जा ६ ?, गो० ! जंमणं पडुच्च णो सुसमसुसमाकाले होज्जा १ णो सुसमाकाले होज्जा २ सुसमदूसमाकाले होज्जा ३ दूसमसुसमाकाले वा होज्जा ४ णो दूसमाकाले होज्जा ५ णो दूसमदूसमाकाले होज्जा ६, संतिभावं पडुच्च णो सुसमसुसमाकाले होज्जा णो सुसमाकाले होज्जा सुसमदूसमाकाले वा होज्जा दूसमसुसमाकाले वा होज्जा दूसमाकाले वा होज्जा णो दूसमदूसमाकाले होज्जा, जइ उस्सप्पिणिकाले होज्जा किं दूसमदूसमाकाले होज्जा दूसमाकाले होज्जा दूसमसुसमाकाले होज्जा सुसमदूसमाकाले होज्जा सुसमाकाले होज्जा सुसमसुसमाकाले होज्जा ?,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निर्ग्रन्थः, तस्य स्वरुपम्, भेदा: इत्यादि विविध-विषय-वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [७६२]

दीप अनुक्रम [९१२]

गो०! जंमणं पडुच णो दूसमदूसमाकाले होज्जा १ दूसमाकाले वा होज्जा २ दूसमसुसमाकाले वा होज्जा ३ सुसमदूसमाकाले वा होज्जा ४ णो सुसमाकाले होज्जा ५ णो सुसमसुसमाकाले होज्जा ६, संतिभावं पडुच णोदूसमदूसमाकाले होज्जा १ दूसमाकाले होज्जा २ दूसमसुसमाकाले वा होज्जा ३ सुसमदूसमाकाले वा होज्जा ४ णो सुसमाकाले होज्जा ५ णो सुसमसुसमाकाले होज्जा ६। जइ णोउस्सप्पिणिनोअवसप्पिणिकाले होज्जा किं सुसमसुसमापलिभागे हो० सुसमपलिभागे० सुसमदूसमापलिभागे हो० दूसमसुसमापलिभागे ?, गोयमा! जंमणं संतिभावं च पडुच णो सुसमसुसमापलिभागे होज्जा णो सुसमपलिभागे० णो दूसमदूसमापलिभागे होज्जा दूसमसुसमापलिभागे हो०। बउसे णं पुच्छा, गोयमा! ओसप्पिणिकाले वा होज्जा उस्सप्पिणिकाले वा हो० नोओसप्पिणिनोउस्सप्पिणिकाले वा होज्जा, जइ ओसप्पिणिकाले हो० किं सुसमसुसमाकाले पुच्छा, गोयमा! जंमणं संतिभावं च पडुच णो सुसमसुसमाकाले होज्जा णो सुसमाकाले होज्जा सुसमदूसमाकाले वा होज्जा दूसमसुसमाकाले वा होज्जा दूसमाकाले वा हो० णो दूसमदूसमाकाले हो०, साहरणं पडुच अन्नयरे समाकाले होज्जा। जइ उस्सप्पिणिकाले होज्जा किं दूसमदूसमाकाले हो० ६? पुच्छा, गोयमा! जम्मणं पडुच णो दूसमदूसमाकाले होज्जा जहेव पुलाए, संतिभावं पडुच णो दूसमदूसमाकाले होज्जा णो दूसमाकाले होज्जा एवं संतिभावेणवि जहा पुलाए जाव णो सुसमसुसमाकाले हो०, साहरणं पडुच अन्नयरे समाकाले हो०। जइ नोओसप्पिणिनोउस्सप्पिणिकाले हो०? पुच्छा, गोयमा! जम्मणसं-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निर्ग्रन्थ:, तस्य स्वरुपम्, भेदा: इत्यादि विविध-विषय-वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [७६२]

दीप अनुक्रम [९१२]

तिभावं पडुच्च णो सुसमसुसमापलिभागे होज्जा जहेव पुलाए जाव दूसमसुसमापलिभागे हो०, साहरणं पडुच्च अन्नयरे पलिभागे होज्जा, जहा बउसे एवं पडिसेवणाकुसीलेवि, एवं कसायकुसीलेवि, नियंठो सिणाओ य जहा पुलाओ, नवरं एतेसिं अब्भहियं साहरणं भाणियवं, सेसं तं चेव १२ ॥ (सूत्रं ७६२)

त्रिविधः कालोऽवसर्प्पिण्यादिः, तत्राद्यद्वयं भरतैरावतयोस्तृतीयस्तु महाविदेहहेमवतादिषु, 'सुसमदूसमाकाले वा होज्ज'त्ति आदिदेवकाले इत्यर्थः, 'दुस्समसुसमकाले व'त्ति चतुर्थेऽरके इत्यर्थः, उक्तात्समाद्वयान्नान्यत्रासौ जायते, 'संतिभावं पडुच्चे'त्यादि, अवसर्प्पिण्यां सद्भावं प्रतीत्य तृतीयचतुर्थपञ्चमारकेषु भवेत्, तत्र चतुर्थारके जातः सन् पञ्चमेऽपि वर्त्तते, तृतीयचतुर्थारके सद्भावस्तु तज्जन्मपूर्वक इति, 'जइ उस्सप्पिणी'त्यादि, उत्सर्पिण्यां द्वितीयतृतीयचतुर्थेष्वरकेषु जन्मतो भवति, तत्र द्वितीयस्यान्ते जायते तृतीये तु चरणं प्रतिपद्यते, तृतीयचतुर्थयोस्तु जायते चरणं च प्रतिपद्यत इति, सद्भावं पुनः प्रतीत्य तृतीयचतुर्थयोरेव तस्य सत्ता, तयोरेव चरणप्रतिपत्तेरिति, 'जइ णोओसप्पिणी'त्यादि, 'सुसमपलिभागे'त्ति सुषमसुषमायाः प्रतिभागः—सादृश्यं यत्र काले स तथा, स च देवकुरूत्तरकुरुषु, एवं सुषमाप्रतिभागो हरिवर्षरम्यकवर्षेषु, सुषमदुष्षमाप्रतिभागो हैमवतैरण्यवतेषु, दुष्षमसुषमाप्रतिभागो महाविदेहेषु । 'नियंठो सिणाओ य जहा पुलाओ'त्ति एतौ पुलाकवद्वक्तव्यौ, विशेषं पुनराह–'नवरं एएसिं अब्भहियं साहरणं भाणियवं'ति पुलाकस्य हि पूर्वोक्तयुक्त्या संहरणं नास्ति एतयोश्च तत्संभवतीति कृत्वा तद्वाच्यं, संहरणद्वारेण च यस्तयोः सर्वकालेषु सम्भवोऽसौ पूर्वसंहृतयोर्निर्ग्रन्थस्नातकत्वप्राप्तौ द्रष्टव्यो, यतो नापगतवेदानां संहरणमस्तीति, यदाह–"समणीमवगयवेयं परिहारपुलाय-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निर्ग्रन्थः, तस्य स्वरुपम्, भेदाः इत्यादि विविध-विषय-वक्तव्यता

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [७६२]

दीप अनुक्रम [९१२]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥८९७॥

मप्पमत्तं च । चोद्दसपुव्विं आहारयं च ण य कोइ संहरइ ॥ १ ॥” [श्रमणीमपगतवेदं परिहारं पुलाकमप्रमत्तं च । चतुर्दशपूर्विणमाहारकं च न कोऽपि संहरति ॥ १ ॥] इति ॥ गतिद्वारे सौधर्मादिका देवगतिरिन्द्रादयस्तद्भेदास्तद्गमुख्य पुलाकादीनां निरूप्यते–

पुलाए णं भंते ! कालगए समाणे किं गतिं गच्छति ?, गोयमा ! देवगतिं गच्छति, देवगतिं गच्छमाणे किं भवणवासीसु उववज्जेज्जा वाणमंतरेसु उववज्जेज्जा जोइसवेमाणिएसु उववज्जेज्जा ?, गोयमा ! णो भवणवासीसु णो वाण० णो जोइस० वेमाणिएसु उवव०, वेमाणिएसु उववज्जमाणे जह० सोहम्मे कप्पे उक्कोसेणं सहस्सारे कप्पे उववज्जेज्जा, बउसे णं एवं चेव नवरं उक्कोसेणं अच्चुए कप्पे, पडिसेवणाकुसीले जहा बउसे, कसायकुसीले जहा पुलाए, नवरं उक्कोसेणं अणुत्तरविमाणेसु उववज्जेज्जा, णियंठे णं भंते ! एवं चेव, एवं जाव वेमाणिएसु उववज्जमाणे अजहन्नमणुक्कोसेणं अणुत्तरविमाणेसु उववज्जेज्जा, सिणाए णं भंते ! कालगए समाणे किं गतिं गच्छइ ?, गोयमा ! सिद्धिगतिं गच्छइ । पुलाए णं भंते ! देवेसु उववज्जमाणे किं इंदत्ताए उववज्जेज्जा सामाणियत्ताए उववज्जेज्जा तायत्तीसाए वा उववज्जेज्जा लोगपालत्ताए वा उववज्जेज्जा अहमिंदत्ताए वा उववज्जेज्जा ?, गोयमा ! अविराहणं पडुच्च इंदत्ताए उवव० सामाणियत्ताए उववज्जेज्जा लोगपालत्ताए वा उवव० तायत्तीसाए वा उववज्जेज्जा नो अहमिंदत्ताए उववज्जेज्जा, विराहणं पडुच्च अन्नयरेसु उववज्जेज्जा, एवं बउसेवि, एवं पडिसेवणाकुसीलेवि, कसायकुसीले पुच्छा, गोयमा ! अविराहणं पडुच्च इंदत्ताए वा उववज्जेज्जा जाव

२५ शतके उद्देशः ६ पुलाकादेर्गतिः सू ७६२

॥८९७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निर्ग्रन्थः, तस्य स्वरुपम्, भेदा: इत्यादि विविध-विषय-वक्तव्यता

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत
सूत्रांक
[७६३]

दीप
अनुक्रम
[९१३]

अहमिंदत्ताए उवव० विराहणं पडुच्च अन्नयरेसु उवव०, नियंठे पुच्छा, गोयमा अविराहणं पडुच्च णो इंदत्ताए उवव० जाव णो लोगपालत्ताए उवव० अहमिंदत्ताए उवव०, विराहणं पडुच्च अन्नयरेसु उवव० ॥ पुलागस्स णं भंते ! देवलोगेसु उववज्जमाणस्स केवतियं कालं ठिती प० ?, गोयमा ! जहन्नेणं पलिओवमपुहुत्तं उक्कोसे० अट्ठारस सागरोवमाइं, बउसस्स पुच्छा, गोयमा ! जहन्नेणं पलिओवमपुहुत्तं उक्कोसेणं बावीसं सागरोवमाइं, एवं पडिसेवणाकुसीलेवि, कसायकुसीलस्स पुच्छा, गोयमा ! जहन्नेणं पलिओवमपुहुत्तं उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं, णियंठस्स पुच्छा, गोयमा ! अजहन्नमणुक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं १३ ॥ (सूत्रं ७६३)

तत्र च 'अविराहणं पडुच्च'त्ति अविराधना ज्ञानादीनां अथवा लब्धेरनुपजीवनाऽतस्तां प्रतीत्य अविराधकाः सन्त इत्यर्थः, 'अन्नयरेसु उववज्जेज्ज'त्ति भवनपत्यादीनामन्यतरेषु देवेषूत्पद्यन्ते, विराधितसंयमानां भवनपत्याद्युत्पादस्योक्तत्वात्, यच्च प्रागुक्तं 'वेमाणिएसु उववज्जेज्ज'त्ति तत्संयमाविराधकत्वमाश्रित्यावसेयम् ॥ संयमद्वारे संयमस्थानानि तेषां चाल्पत्वादि चिन्त्यते, तत्र–

पुलागस्स णं भंते ! केवतिया संयमट्ठाणा प० ?, गो० ! असंखेज्जा संयमट्ठाणा प०, एवं जाव कसायकुसीलस्स । नियंठस्स णं भंते ! केवइया संजमट्ठाणा प० ?, गोयमा ! एगे अजहन्नमणुक्कोसए संजमट्ठाणे, एवं सिणायस्सवि, एतेसि णं भंते ! पुलागबउसपडिसेवणाकसायकुसीलनियंठसिणायाणं संजमट्ठाणाणं कयरे २ जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवे नियंठस्स सिणायस्स [ग्रन्थाग्रम् १४०००] य एगे अज-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निर्ग्रन्थ:, तस्य स्वरुपम्, भेदा: इत्यादि विविध-विषय-वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [७६४]

दीप अनुक्रम [९१४]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥८९८॥

२५ शतके उद्देशः ६ पुलाकादेः संयमस्थानानि सू ७६४

हन्नमणुक्कोसए संजमट्ठाणे पुलागस्स णं संजमट्ठाणा असंखेज्जगुणा बउसस्स संजमट्ठाणा असंखेज्जगुणा पडिसेवणाकुसीलस्स संजमट्ठाणा असंखेज्जगुणा कसायकुसीलस्स संजमट्ठाणा असंखेज्जगुणा १४॥ (सूत्रं ७६४)

'पुलागस्से'त्यादि, संयमः-चारित्रं तस्य स्थानानि-शुद्धिप्रकर्षाप्रकर्षकृता भेदाः संयमस्थानानि, तानि च प्रत्येकं सर्वाकाशप्रदेशाग्रगुणितसर्वाकाशप्रदेशपरिमाणपर्यवोपेतानि भवन्ति, तानि च पुलाकस्यासङ्ख्येयानि भवन्ति, विचित्रत्वाच्चारित्रमोहनीयक्षयोपशमस्य, एवं यावत्कषायकुशीलस्य, 'एगे अजहन्नमणुक्कोसए संजमठाणे'त्ति निर्ग्रन्थस्यैकं संयमस्थानं भवति, कषायाणामुपशमस्य क्षयस्य चाविचित्रत्वेन शुद्धेरेकविधत्वात्, एकत्वादेव तदजघन्योत्कृष्टं, बहुष्वेव जघन्योत्कृष्टभावसद्भावादिति ॥ अथ पुलाकादीनां परस्परतः संयमस्थानाल्पबहुत्वमाह-'एएसि णं'मित्यादि, सर्वेभ्यः स्तोकं सर्वस्तोकं निर्ग्रन्थस्य स्नातकस्य च संयमस्थानं, कुतः?, यस्मादेकं, किंभूतं तत्? इत्याह-'अजहन्ने'त्यादि, एत्तच्चैवं शुद्धेरेकविधत्वात्, पुलाकादीनां तूक्तक्रमेणासङ्ख्येयगुणानि तानि क्षयोपशमवैचित्र्यादिति ॥ अथ निकर्षद्वारं, तत्र निकर्षः-संनिकर्षः, पुलाकादीनां परस्परेण संयोजनं, तस्य च प्रस्तावनार्थमाह—

पुलागस्स णं भंते ! केवतिया चरित्तपज्जवा प० ?, गो० ! अणंता चरित्तपज्जवा प०, एवं जाव सिणायस्स। पुलाए णं भंते ! पुलागस्स सट्ठाणसन्निगासेणं चरित्तपज्जवेहिं किं हीणे तुल्ले अब्भहिए ?, गोयमा ! सिय हीणे १ सिय तुल्ले २ सिय अब्भहिए ३, जइ हीणे अणंतभागहीणे वा असंखेज्जभागहीणे वा संखेज्जइभागहीणे वा संखेज्जगुणहीणे वा असंखेज्जगुणहीणे वा अनंतगुणहीणे वा, अह अब्भहिए अणंतभागमब्भहिए वा ॥८९८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निर्ग्रन्थ:, तस्य स्वरुपम्, भेदा: इत्यादि विविध-विषय-वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [७६५- -७६८] दीप अनुक्रम [९१५- -९१८]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः असंखेज्जइभागमब्भहिए वा संखेज्जभागमब्भहिए वा संखेज्जगुणमब्भहिए वा असंखेज्जगुणमब्भहिए वा अणंतगुणमब्भहिए वा ॥ पुलाए णं भंते ! बउसस्स परट्ठाणसन्निगासेणं चरित्तपज्जवेहिं किं हीणे तुल्ले अब्भहिए ?, गोयमा ! हीणे नो तुल्ले नो अब्भहिए, अणंतगुणहीणे, एवं पडिसेवणाकुसीलस्सवि, कसायकुसीलेणं समं छट्ठाणवडिए जहेव सट्ठाणे, नियंठस्स जहा बउसस्स, एवं सिणायस्सवि ॥ बउसे णं भंते ! पुलागस्स परट्ठाणसन्निगासेणं चरित्तपज्जवेहिं किं हीणे तुल्ले अब्भहिए ?, गोयमा ! णो हीणे णो तुल्ले अब्भहिए अणंतगुणमब्भहिए । बउसे णं भंते ! बउसस्स सट्ठाणसन्निगासेणं चरित्तपज्जवेहिं पुच्छा, गोयमा ! सिय हीणे सिय तुल्ले सिय अब्भहिए, जइ हीणे छट्ठाणवडिए । बउसे णं भंते ! पडिसेवणाकुसीलस्स परट्ठाणसन्निगासेणं चरित्तपज्जवेहिं किं हीणे० ?, छट्ठाणवडिए, एवं कसायकुसीलस्सवि ॥ बउसे णं भंते ! नियंठस्स परट्ठाणसन्निगासेणं चरित्तपज्जवेहिं पुच्छा, गोयमा ! हीणे णो तुल्ले णो अब्भहिए अणंतगुणहीणे, एवं सिणायस्सवि, पडिसेवणाकुसीलस्स एवं चेव बउसवत्तव्वया भाणियव्वा, कसायकुसीलस्स एस चेव बउसवत्तव्वया नवरं पुलाएणवि समं छट्ठाणवडिए । णियंठे णं भंते ! पुलागस्स परट्ठाणसन्निगासेणं चरित्तपज्जवेहिं पुच्छा, गोयमा ! णो हीणे णो तुल्ले अब्भहिए अणंतगुणमब्भहिए, एवं जाव कसायकुसीलस्स । णियंठे णं भंते ! णियंठस्स सट्ठाणसन्निगासेणं पुच्छा, गोयमा ! नो हीणे तुल्ले णो अब्भहिए, एवं सिणायस्सवि । सिणाए णं भंते ! पुलागस्स परट्ठाणसन्नि० एवं जहा नियंठस्स वत्तव्वया तहा सिणायस्सवि भाणियव्वा जाव सिणाए णं भंते ! सिणायस्स Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org
	निर्ग्रन्थः, तस्य स्वरुपम्, भेदाः इत्यादि विविध-विषय-वक्तव्यता

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [७६५-७६८]

दीप अनुक्रम [९१५-९१८]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥८९९॥

२५ शतके उद्देशः ६ पुलाकादेः पर्यवयोग-कषायाः सू ७६५-७६७

सट्ठाणसन्निगासेणं पुच्छा, गोयमा! णो हीणे तुल्ले णो अब्भहिए ॥ एएसि णं भंते! पुलागबकुसपडिसेवणा-कुसीलकसायकुसीलनियंठसिणायाणं जहन्नुक्कोसगाणं चरित्तपज्जवाणं कयरे २ जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा! पुलागस्स कसायकुसीलस्स य एएसि णं जहन्नगा चरित्तपज्जवा दोण्हवि तुल्ला सव्वत्थोवा, पुलागस्स उक्कोसगा चरित्तपज्जवा अनंतगुणा, बउसस्स पडिसेवणाकुसीलस्स य एएसि णं जहन्नगा चरित्तपज्जवा दोण्हवि तुल्ला अणंतगुणा, बउसस्स उक्कोसगा चरित्तपज्जवा अणंतगुणा, पडिसेवणाकुसीलस्स उक्कोसगा चरित्तपज्जवा अणंतगुणा, कसायकुसीलस्स उक्कोसगा चरित्तपज्जवा अणंतगुणा, णियंठस्स सिणायस्स य एतेसि णं अजहन्नमणुक्कोसगा चरित्तपज्जवा दोण्हवि तुल्ला अणंतगुणा १५ ॥ (सूत्रं ७६५) पुलाए णं भंते! किं सयोगी होज्जा अजोगी वा होज्जा ?, गोयमा! सयोगी होज्जा नो अयोगी होज्जा, जइ सयोगी होज्जा किं मणजोगी होज्जा वइजोगी होज्जा काययोगी होज्जा ?, गोयमा! मणजोगी वा होज्जा वयजोगी वा होज्जा कायजोगी वा होज्जा, एवं जाव नियंठे। सिणाए णं पुच्छा, गोयमा! सयोगी वा होज्जा अयोगी वा होज्जा, जइ सयोगी होज्जा किं मणजोगी होज्जा सेसं जहा पुलागस्स १६ ॥ (सूत्रं ७६६) पुलाए णं भंते! किं सागारोवउत्ते होज्जा अणागारोवउत्ते होज्जा ?, गोयमा! सागारोवउत्ते वा होज्जा अणागारोवउत्ते वा होज्जा एवं जाव सिणाए १७ ॥ (सूत्रं ७६७) पुलाए णं भंते! सकसायी होज्जा अकसायी होज्जा ?, गोयमा! सकसायी होज्जा णो अकसायी होज्जा, जइ सकसाई से णं भंते! कतिसु कसाएसु होज्जा ?, गोयमा! चउसु

॥८९९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निर्ग्रन्थः, तस्य स्वरुपम्, भेदाः इत्यादि विविध-विषय-वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [७६५-७६८] दीप अनुक्रम [९१५-९१८]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

कोहमाणमायालोभेसु होज्जा, एवं बउसेवि, एवं पडिसेवणाकुसीलेवि, कसायकुसीले णं पुच्छा, गोयमा! सकसायी होज्जा णो अकसायी होज्जा, जइ सकसायी होज्जा से णं भंते! कतिसु कसाएसु होज्जा?, गोयमा! चउसु वा तिसु वा दोसु वा एगंमि वा होज्जा, चउसु होमाणे चउसु संजलणकोहमाणमायालोभेसु होज्जा तिसु होमाणे तिसु संजलणमाणमायालोभेसु होज्जा दोसु होमाणे संजलणमायालोभेसु होज्जा एगंमि होमाणे संजलणलोभे होज्जा, नियंठे णं पुच्छा, गोयमा! णो सकसायी होज्जा अकसायी होज्जा, जइ अकसायी होज्जा किं उवसंतकसायी होज्जा खीणकसायी होज्जा?, गोयमा! उवसंतकसायी वा होज्जा खीणकसायी वा होज्जा, सिणाए एवं चेव, नवरं णो उवसंतकसायी होज्जा, खीणकसायी होज्जा १८॥ (सूत्रं ७६८)

'पुलागस्से'त्यादि, 'चरित्तपज्जव'त्ति चारित्रस्य–सर्वविरतिरूपपरिणामस्य पर्यवा–भेदाश्चारित्रपर्यवास्ते च बुद्धिकृता अविभागपलिच्छेदा विषयकृता वा 'सट्ठाणसंनिगासेणं'ति स्वं–आत्मीयं सजातीयं स्थानं–पर्यवाणामाश्रयः स्वस्थानं–पुलाकादेः पुलाकादिरेव तस्य संनिकर्षः–संयोजनं स्वस्थानसंनिकर्षस्तेन, किं?–'हीणे'त्ति विशुद्धसंयमस्थानसम्बन्धित्वेन विशुद्धतरपर्यवापेक्षया अविशुद्धतरसंयमस्थानसम्बन्धित्वेनाविशुद्धतराः पर्यवा हीनास्तद्योगात्साधुरपि हीनः 'तुल्ले'त्ति तुल्यशुद्धिकपर्यवयोगात्तुल्यः 'अब्भहिय'त्ति विशुद्धतरपर्यवयोगादभ्यधिकः, 'सिय हीणे'त्ति अशुद्धसंयमस्थानवर्त्तित्वात् 'सिय तुल्ले'त्ति एकसंयमस्थानवर्त्तित्वात् 'सिय अब्भहिए'त्ति विशुद्धतरसंयमस्थानवर्त्तित्वात्, 'अणंतभागहीणे'त्ति किलासद्भावस्थापनया पुलाकस्योत्कृष्टसंयमस्थानपर्यवाग्रं दश सहस्राणि १००००, तस्य सर्वजीवानन्तकेन शतप-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निर्ग्रन्थ:, तस्य स्वरुपम्, भेदा: इत्यादि विविध-विषय-वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [७६५-७६८] दीप अनुक्रम [९१५-९१८]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः२ ॥ ९०० ॥

२५ शतके उद्देशः ६ पुलाकादेः पर्यवयोग-कषायाः सू ७६८

रिमाणतया कल्पितेन भागे हृते शतं लब्धं १००, द्वितीयप्रतियोगिपुलाकचरणपर्यवाग्रं नव सहस्राणि नवशताधिकानि ९९००, पूर्वभागलब्धं शतं तत्र प्रक्षिप्तं जातानि दश सहस्राणि, ततोऽसौ सर्वजीवानन्तकभागहारलब्धेन शतेन हीनमित्यनन्तभागहीनः, 'असंखेज्जभागहीणे व'त्ति पूर्वोक्तकल्पितपर्यायराशेर्दशसहस्रस्य १०००० लोकाकाशप्रदेशपरिमाणेनासङ्ख्येयकेन कल्पनया पञ्चाशत्प्रमाणेन भागे हृते लब्धं द्विशती, द्वितीयप्रतियोगिपुलाकचरणपर्यवाग्रं नव सहस्राण्यष्टौ च शतानि ९८००, पूर्वभागलब्धा च द्विशती तत्र प्रक्षिप्ता, जातानि दश सहस्राणि, ततोऽसौ लोकाकाशप्रदेशपरिमाणासङ्ख्येयकभागहारलब्धेन शतद्वयेन हीन इत्यसङ्ख्येयभागहीनः, 'संखेज्जभागहीणे व'त्ति पूर्वोक्तकल्पितपर्यायराशेर्दशसहस्रस्य १०००० उत्कृष्टसङ्ख्येयकेन कल्पनया दशकपरिमाणेन भागे हृते लब्धं सहस्रं, द्वितीयप्रतियोगिपुलाकचरणपर्यवाग्रं नव सहस्राणि ९००० पूर्वभागलब्धं च सहस्रं तत्र प्रक्षिप्तं जातानि दश सहस्राणि, ततोऽसावुत्कृष्टसङ्ख्येयकभागहारलब्धेन सहस्रेण हीनः, 'संखेज्जगुणहीणे व'त्ति किलैकस्य पुलाकस्य चरणपर्यवाग्रं कल्पनया सहस्रदशकं द्वितीयप्रतियोगिपुलाकचरणपर्यवाग्रं च सहस्रं, ततश्चोत्कृष्टसङ्ख्येयकेन कल्पनया दशकपरिमाणेन गुणकारेण गुणितः साहस्रो राशिर्जायते दश सहस्राणि, स च तेनोत्कृष्टसङ्ख्येयकेन कल्पनया दशकपरिमाणेन गुणकारेण हीनः—अनभ्यस्त इति सङ्ख्येयगुणहीनः, 'असंखेज्जगुणहीणे व'त्ति किलैकस्य पुलाकस्य चरणपर्यवाग्रं कल्पनया सहस्रदशकं द्वितीयप्रतियोगिपुलाकचरणपर्यवाग्रं च द्विशती, ततश्च लोकाकाशप्रदेशपरिमाणेनासङ्ख्येयकेन कल्पनया पञ्चाशत्परिमाणेन गुणकारेण गुणितो द्विशतिको राशिर्जायते दश सहस्राणि, स च तेन लोकाकाशप्रदेशपरिमाणासङ्ख्येयकेन कल्पनया पञ्चाशत्प्रमाणेन गुणकारेण हीन ॥९००॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निर्ग्रन्थ:, तस्य स्वरुपम्, भेदा: इत्यादि विविध-विषय-वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [७६५--७६८]

दीप अनुक्रम [९१५--९१८]

इत्यसङ्ख्येयगुणहीन इति, 'अनंतगुणहीणे व'त्ति किलैकस्य पुलाकस्य चरणपर्यवाग्रं कल्पनया सहस्रदशकं द्वितीयप्रतियोगिपुलाकचरणपर्यवाग्रं च शतं, ततश्च सर्वजीवानन्तकेन कल्पनया शतपरिमाणेन गुणकारेण गुणितः शतिको राशिर्जायते दश सहस्राणि, स च तेन सर्वजीवानन्तकेन कल्पनया शतपरिमाणेन गुणकारेण हीन इत्यनन्तगुणहीनः, एवमभ्यधिकषट्स्थानकशब्दार्थोऽप्येभिरेव भागापहारगुणकारैर्व्याख्येयः, तथाहि—एकस्य पुलाकस्य कल्पनया दश सहस्राणि चरणपर्यवमानं तदन्यस्य नवशताधिकानि नव सहस्राणि, ततो द्वितीयापेक्षया प्रथमोऽनन्तभागाभ्यधिकः, तथा यस्य नव सहस्राण्यष्टौ च शतानि पर्यवाग्रं तस्मात्प्रथमोऽसङ्ख्येयभागाधिकः, तथा यस्य नव सहस्राणि चरणपर्यवाग्रं तस्मात्प्रथमः सङ्ख्येयभागाधिकः, तथा यस्य चरणपर्यवाग्रं सहस्रमानं तदपेक्षया प्रथमः सङ्ख्येयगुणाधिकः, तथा यस्य चरणपर्यवाग्रं द्विशती तदपेक्षयाऽऽद्योऽसङ्ख्येयगुणाधिकः, तथा यस्य चरणपर्यवाग्रं शतमानं तदपेक्षयाऽऽद्योऽनन्तगुणाधिक इति ॥ 'पुलाए णं भंते ! बउसस्से'त्यादि, 'परट्ठाणसन्निगासेणं'ति विजातीययोगमाश्रित्येत्यर्थः, विजातीयश्च पुलाकस्य बकुशादिः, तत्र पुलाको बकुशाद्धीनस्तथाविधविशुद्ध्यभावात्, 'कसायकुसीलेणं समं छट्ठाणवडिए जहेव सट्ठाणे'त्ति पुलाकः पुलाकापेक्षया यथाऽभिहितस्तथा कषायकुशीलापेक्षयाऽपि वाच्य इत्यर्थः, तत्र पुलाकः कषायकुशीलाद्धीनो वा स्यात् अविशुद्धसंयमस्थानवृत्तित्वात् तुल्यो वा स्यात् समानसंयमस्थानवृत्तित्वाद् अधिको वा स्यात् शुद्धतरसंयमस्थानवृत्तित्वात्,
व्या. १५१ यतः पुलाकस्य कषायकुशीलस्य च सर्वजघन्यानि संयमस्थानान्यधः, ततस्तौ युगपदसङ्ख्येयानि गच्छतस्तुल्याध्यवसानत्वात्, ततः पुलाको व्यवच्छिद्यते हीनपरिणामत्वात्, व्यवच्छिन्ने च पुलाके कषायकुशील एकक एवासङ्ख्येयानि संयमस्थानानि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निर्ग्रन्थ:, तस्य स्वरुपम्, भेदा: इत्यादि विविध-विषय-वक्तव्यता

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [७६५--७६८]

दीप अनुक्रम [९१५--९१८]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥९०१॥

२५ शतके उद्देशः ६ पुलाकादेः पर्यवयोग-कषायाः सू ७६८

गच्छति शुभतरपरिणामत्वात्, ततः कषायकुशीलप्रतिसेवनाकुशीलबकुशा युगपदसङ्ख्येयानि संयमस्थानानि गच्छन्ति, ततश्च बकुशो व्यवच्छिद्यते, प्रतिसेवनाकुशीलकषायकुशीलावसङ्ख्येयानि संयमस्थानानि गच्छतस्ततश्च प्रतिसेवनाकुशीलो व्यवच्छिद्यते, कषायकुशीलस्त्वसङ्ख्येयानि संयमस्थानानि गच्छति, ततः सोऽपि व्यवच्छिद्यते, ततो निर्ग्रन्थस्नातकावेकं संयमस्थानं प्राप्नुत इति । 'नियंठस्स जहा बउसस्स'त्ति पुलाको निर्ग्रन्थादनन्तगुणहीन इत्यर्थः ॥ चिन्तितः पुलाकोऽवशेषैः सह, अथ बकुशश्चिन्त्यते—'बउसे ण'मित्यादि, बकुशः पुलाकादनन्तगुणाभ्यधिक एव विशुद्धतरपरिणामत्वात्, बकुशात्तु हीनादिर्विचित्रपरिणामत्वात्, प्रतिसेवाकषायकुशीलाभ्यामपि हीनादिरेव, निर्ग्रन्थस्नातकाभ्यां तु हीन एवेति, 'बउसवत्तवया भाणियव्व'त्ति प्रतिसेवाकुशीलस्तथा वाच्यो यथा बकुश इत्यर्थः, कषायकुशीलोऽपि बकुशवद्वाच्यः, केवलं पुलाकाद्बकुशोऽभ्यधिक एवोक्तः सकषायस्तु षट्स्थानपतितो वाच्यो हीनादिरित्यर्थः, तत्परिणामस्य पुलाकापेक्षया हीनसमाधिकस्वभावत्वादिति ॥ अथ पर्यवाधिकारात्तेषामेव जघन्यादिभेदानां पुलाकादिसम्बन्धिनामल्पत्वादि प्ररूपयन्नाह–'एएसि ण'मित्यादि ॥ योगद्वारे–'अयोगी वा होज्ज'त्ति इहायोगी शैलेशीकरणे । उपयोगद्वारं तु सुगमत्वान्न लिखितम् । कषायद्वारे—'सकसाई होज्ज'त्ति पुलाकस्य कषायाणां क्षयस्योपशमस्य चाभावात् । 'तिसु होमाणे'इत्यादि, उपशमश्रेण्यां क्षपकश्रेण्यां वा सञ्ज्वलनक्रोधे उपशान्ते क्षीणे वा शेषेषु त्रिषु, एवं माने विगते द्वयोर्मायायां तु विगतायां सूक्ष्मसम्परायगुणस्थानके एकत्र लोभे भवेदिति ॥ लेश्याद्वारे— ॥९०१॥

पुलाए णं भंते ! किं सलेस्से होज्जा अलेस्से होज्जा ?, गोयमा ! सलेस्से होज्जा णो अलेस्से होज्जा, जइ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निर्ग्रन्थः, तस्य स्वरुपम्, भेदाः इत्यादि विविध-विषय-वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [७६९-७७०]

दीप अनुक्रम [९१९-९२०]

सलेस्से होज्जा से णं भंते ! कतिसु लेस्सासु होज्जा ?, गोयमा ! तिसु विसुद्धलेस्सासु होज्जा, तं०–तेउलेस्साए पम्हलेस्साए सुक्कलेस्साए, एवं बउसस्सवि, एवं पडिसेवणाकुसीलेवि, कसायकुसीले पुच्छा, गोयमा ! सलेस्से होज्जा णो अलेस्से होज्जा, जइ सलेस्से होज्जा से णं भंते ! कतिसु लेसासु होज्जा ? गोयमा ! छसु लेसासु होज्जा, तं०–कण्हलेस्साए जाव सुक्कलेस्साए, नियंठे णं भंते ! पुच्छा, गोयमा ! सलेस्से होज्जा णो अलेस्से होज्जा, जइ सलेसे हो० से णं भंते ! कतिसु लेस्सासु होज्जा ?, गोयमा ! एक्काए सुक्कलेस्साए होज्जा, सिणाए पुच्छा, गोयमा ! सलेस्से वा अलेस्से वा होज्जा, जइ सलेस्से हो० से णं भंते ! कतिसु लेस्सासु होज्जा ? गोयमा ! एगाए परमसुक्कलेस्साए होज्जा १९ ॥ (सूत्रं ७६९) पुलाए णं भंते ! किं वड्ढमाणपरिणामे होज्जा हीयमाणपरिणामे होज्जा अवट्ठियपरि० ?, गोयमा ! वड्ढमाणपरि० वा होज्जा हीयमाणपरिणामे वा होज्जा अवट्ठियपरिणामे वा होज्जा, एवं जाव कसायकुसीले । णियंठे णं पुच्छा, गोयमा ! वड्ढमाणपरिणामे हो० णो हीयमाणप० हो०, अवट्ठियपरिणामे वा होज्जा, एवं सिणाएवि ॥ पुलाए णं भंते ! केवइयं कालं वड्ढमाणपरिणामे होज्जा ?, गोयमा ! जहन्नेणं एक्कं समयं उक्को० अंतोमु०, केवतियं कालं हीयमाणपरिणामे होज्जा ?, गोयमा ! जह० एक्कं समयं उक्को० अंतोमु०, केवइयं कालं अवट्ठियपरिणामे होज्जा ?, गोयमा ! जहन्ने० एक्कं समयं उक्कोसेणं सत्त समया, एवं जाव कसायकुसीले । नियंठे णं भंते ! केवतियं कालं वड्ढमाणपरिणामे होज्जा ?, गोयमा ! जहन्ने० अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, केवतियं कालं अवट्ठियपरिणामे होज्जा ?,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निर्ग्रन्थ:, तस्य स्वरुपम्, भेदा: इत्यादि विविध-विषय-वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [७६९--७७०] दीप अनुक्रम [९१९--९२०]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

व्याख्याप्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥९०२॥

२५ शतके उद्देशः ६ पुलाकादेर्लेश्यापरिणामाः सू ७६९-७७०

गोयमा ! जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं अंतोमुहुत्तं। सिणाए णं भंते ! केवइयं कालं वड्ढमाणपरिणामे होज्जा ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, केवइयं कालं अवट्ठियपरिणामे होज्जा ?, गोयमा ! जह० अंतोमु० उक्कोसे० देसूणा पुव्वकोडी २० ॥ (सूत्रं ७७०)

'तिसु विसुद्धलेसासु'त्ति भावलेश्यापेक्षया प्रशस्तासु तिसृषु पुलाकादयस्त्रयो भवन्ति, कषायकुशीलस्तु षट्स्वपि, सकषायमेव आश्रित्य 'पुव्वपडिवन्नओ पुण अन्नयरीए उ लेसाए' [पूर्वप्रतिपन्नः पुनरन्यतरस्यां लेश्यायां] इत्येतदुक्तमिति संभाव्यते, 'एक्काए परमसुक्काए'त्ति शुक्लध्यानतृतीयभेदावसरे या लेश्या सा परमशुक्लाऽन्यदा तु शुक्लैव, साऽपीतरजीवशुक्ललेश्यापेक्षया स्नातकस्य परमशुक्लेति ॥ परिणामद्वारे—'वड्ढमाणपरिणामे'इत्यादि, तत्र च वर्द्धमानः–शुद्धेरुत्कर्षं गच्छन् हीयमानस्त्वपकर्षं गच्छन् अवस्थितस्तु स्थिर इति, तत्र निर्ग्रन्थो हीयमानपरिणामो न भवति, तस्य परिणामहानौ कषायकुशीलव्यपदेशात्, स्नातकस्तु हानिकारणाभावाच्च हीयमानपरिणामः स्यादिति ॥ परिणामाधिकारादेवेदमाह—'पुलाए ण'मित्यादि, तत्र पुलाको वर्द्धमानपरिणामकाले कषायविशेषेण बाधिते तस्मिंस्तस्यैकादिकं समयमनुभवतीत्यत उच्यते जघन्येनैकं समयमिति 'उक्कोसेणं अंतोमुहुत्तं'ति एतत्स्वभावत्वाद्वर्द्धमानपरिणामस्येति । एवं बकुशप्रतिसेवाकुशीलकषायकुशीलेष्वपि, नवरं बकुशादीनां जघन्यत एकसमयता मरणादपीष्टा, न पुनः पुलाकस्य, पुलाकत्वे मरणाभावात्, स हि मरणकाले कषायकुशीलत्वादिना परिणमति, यच्च प्राक् पुलाकस्य कालगमनं तद्भूतभावापेक्षयेति, निर्ग्रन्थो जघन्येनोत्कर्षेण चान्तर्मुहूर्त्तं वर्द्धमानपरिणामः स्यात्, केवलज्ञानोत्पत्तौ परिणामान्तरभावात्, अवस्थितपरिणामः पुन- ॥९०२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निर्ग्रन्थः, तस्य स्वरुपम्, भेदाः इत्यादि विविध-विषय-वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [७६९- -७७०] दीप अनुक्रम [९१९- -९२०]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

निर्ग्रन्थस्य जघन्यत एकं समयं मरणात्स्यादिति । 'सिणाए णं भंते !' इत्यादि, स्नातको जघन्येतराभ्यामन्तर्मुहूर्त्तं वर्द्धमानपरिणामः, शैलेश्यां तस्यास्तत्प्रमाणत्वात्, अवस्थितपरिणामकालोऽपि जघन्यतस्तस्यान्तर्मुहूर्त्तं, कथम्?, उच्यते, यः स केवलज्ञानोत्पादानन्तरमन्तर्मुहूर्त्तमवस्थितपरिणामो भूत्वा शैलेशीं प्रतिपद्यते तदपेक्षयेति, 'उक्कोसेणं देसूणा पुव्वकोडी'त्ति पूर्वकोट्यायुषः पुरुषस्य जन्मतो जघन्येन नवसु वर्षेष्वतिगतेषु केवलज्ञानमुत्पद्यते ततोऽसौ तदूनां पूर्वकोटीमवस्थितपरिणामः शैलेशीं यावद्विहरति, शैलेश्यां च वर्द्धमानपरिणामः स्यादित्येवं देशोनामिति ॥ बन्धद्वारे—

पुलाए णं भंते ! कति कम्मपगडीओ बंधति ?, गोयमा ! आउयवज्जाओ सत्त कम्मप्पगडीओ बंधति । बउसे पुच्छा, गोयमा ! सत्तविहबंधए वा अट्ठविहबंधए वा, सत्त बंधमाणे आउयवज्जाओ सत्त कम्मप्पगडीओ बंधति, अट्ठ बंधमाणे पडिपुन्नाओ अट्ठ कम्मप्पगडीओ बंधइ, एवं पडिसेवणाकुसीलेवि, कसायकुसीले पुच्छा, गोयमा ! सत्तविहबंधए वा अट्ठविहबंधए वा छव्विहबंधए वा, सत्त बंधमाणे आउयवज्जाओ सत्त कम्मप्पगडीओ बंधइ, अट्ठ बंधमाणे पडिपुन्नाओ अट्ठ कम्मप्पगडीओ बंधइ, छ बंधमाणे आउयमोहणिज्जवज्जाओ छक्कम्मप्पगडीओ बंधइ । नियंठे णं पुच्छा, गोयमा ! एगं वेयणिज्जं कम्मं बंधइ । सिणाए पुच्छा, गोयमा ! एगविहबंधए वा अबंधए वा, एगं बंधमाणे एगं वेयणिज्जं कम्मं बंधइ २१ ॥ (सूत्रं ७७१) पुलाए णं भंते ! कति कम्मप्पगडीओ वेदेइ ?, गोयमा ! नियमं अट्ठ कम्मप्पगडीओ वेदेइ, एवं जाव कसायकुसीले, नियंठे णं पुच्छा, गोयमा ! मोहणिज्जवज्जाओ सत्त कम्मप्पगडीओ वेदेइ । सिणाए णं पुच्छा, गोयमा ! वेय-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निर्ग्रन्थ:, तस्य स्वरुपम्, भेदा: इत्यादि विविध-विषय-वक्तव्यता

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [७७१--७७३]

दीप अनुक्रम [९२१--९२३]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥ ९०२॥

२५ शतके उद्देशः ६ पुलाकादेर्बन्धवेदोदीरणाः सू ७७१-७७३

णिज्जआउयनामगोयाओ चत्तारि कम्मप्पगडीओ वेदेइ २२ ॥ (सूत्रं ७७२) पुलाए णं भंते ! कति कम्मप्पगडीओ उदीरेति ?, गोयमा ! आउयवेयणिज्जवज्जाओ छ कम्मप्पगडीओ उदीरेइ । बउसे पुच्छा, गोयमा ! सत्तविहउदीरए वा अट्ठविहउदीरए वा छव्विहउदीरए वा, सत्त उदीरेमाणे आउयवज्जाओ सत्त कम्मप्पगडीओ उदीरेति, अट्ठ उदीरेमाणे पडिपुन्नाओ अट्ठ कम्मप्पगडीओ उदीरेति, छ उदीरेमाणे आउयवेयणिज्जवज्जाओ छ कम्मपगडीओ उदीरेति, पडिसेवणाकुसीले एवं चेव, कसायकुसीले णं पुच्छा, गो० ! सत्तविहउदीरए वा अट्ठविहउदीरए वा छव्विहउदीरए वा पंचविहउदीरए वा, सत्त उदीरेमाणे आउयवज्जाओ सत्त कम्मप्पगडीओ उदीरेति, अट्ठ उदीरेमाणे पडिपुन्नाओ अट्ठ कम्मप्पगडीओ उदीरेति, छ उदीरेमाणे आउयवेयणिज्जवज्जाओ छ कम्मप्पगडीओ उदीरेति, पंच उदीरेमाणे आउयवेयणिज्जमोहणिज्जवज्जाओ पंच कम्मप्पगडीओ उदीरेति । नियंठे णं पुच्छा, गोयमा ! पंचविहउदीरए वा दुविहउदीरए वा, पंच उदीरेमाणे आउयवेयणिज्जमोहणिज्जवज्जाओ पंच कम्मप्पगडीओ उदीरेति, दो उदीरेमाणे णामं च गोयं च उदीरेति । सिणाए पुच्छा, गोयमा ! दुविहउदीरए वा अणुदीरए वा, दो उदीरेमाणे णामं च गोयं च उदीरेति २३ ॥ (सूत्रं ७७३)

'आउयवज्जाओ'त्ति पुलाकस्यायुर्बन्धो नास्ति, तद्बन्धाध्यवसायस्थानानां तस्याभावादिति । 'बउसे'इत्यादि, त्रिभागाद्यवशेषायुषो हि जीवा आयुर्बध्नन्तीति त्रिभागद्वयादौ तत्र बध्नन्तीतिकृत्वा बकुशादयः सप्तानामष्टानां वा कर्मणां बन्धका भवन्तीति, 'छव्विहं बंधेमाणा' इत्यादि, कषायकुशीलो हि सूक्ष्मसम्परायत्वे आयुर्न बध्नाति, अप्रमत्तान्तत्वात्त-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निर्ग्रन्थ:, तस्य स्वरुपम्, भेदा: इत्यादि विविध-विषय-वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [७७१-७७३]

दीप अनुक्रम [९२१-९२३]

द्ब्रन्धस्य, मोहनीयं च बादरकषायोदयाभावान्न बध्नातीति शेषाः षडेवेति। 'एगं वेयणिज्जं'ति निर्ग्रन्थो वेदनीयमेव बध्नाति, बन्धहेतुषु योगानामेव सद्भावात्, 'अबंधए व'त्ति अयोगी बन्धहेतूनां सर्वेषामभावादबन्धक एवेति ॥ वेदनद्वारे—'मोहणिज्जवज्जाओ'त्ति निर्ग्रन्थो हि मोहनीयं न वेदयति, तस्योपशान्तत्वात् क्षीणत्वाद्वा, स्नातकस्य तु घातिकर्म्मणां क्षीणत्वाद्वेदनीयादीनामेव वेदनमत उच्यते–'वेयणिज्जे'त्यादि ॥ उदीरणाद्वारे—'आउयवेयणिज्जवज्जाओ'त्ति, अयमर्थः–पुलाक आयुर्वेदनीयप्रकृतीर्नोदीरयति तथाविधाध्यवसायस्थानाभावात्, किन्तु पूर्वं ते उदीर्य्य पुलाकतां गच्छति, एवमुत्तरत्रापि यो याः प्रकृतीर्नोदीरयति स ताः पूर्वमुदीर्य बकुशादितां प्राप्नोति, स्नातकः सयोग्यवस्थायां तु नामगोत्रयोरेवोदीरकः, आयुर्वेदनीये तु पूर्वोदीर्णे एव, अयोग्यवस्थायां त्वनुदीरक एवेति ॥ 'उपसंपजहन्न'त्तिद्वारं, तत्रोपसम्पत् उपसम्पत्तिः–प्राप्तिः 'जहन्न'त्ति हानं–त्यागः उपसम्पच्च हानं चोपसम्पद्धानं–किं पुलाकत्वादि त्यक्त्वा किं सकषायत्वादिकमुपसम्पद्यते इत्यर्थः, तत्र—

पुलाए णं भंते ! पुलायत्तं जहमाणे किं जहति किं उवसंपज्जति ?, गोयमा ! पुलायत्तं जहति कसायकुसीलं वा अस्संजमं वा उवसंपज्जति, बउसे णं भंते ! बउसत्तं जहमाणे किं जहति किं उवसंपज्जति?, गोयमा ! बउसत्तं जहति पडिसेवणाकुसीलं वा कसायकुसीलं वा असंजमं वा संजमासंजमं वा उवसंपज्जति, पडिसेवणाकुसीले णं भंते ! पडि० पुच्छा, गोयमा ! पडिसेवणाकुसीलत्तं जहति बउसं वा कसायकुसीलं वा अस्संजमं वा संयमासंयमं वा उवसंपज्जति, कसायकुसीले पुच्छा, गोयमा ! कसायकुसीलत्तं जहति पुलायं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निर्ग्रन्थः, तस्य स्वरुपम्, भेदाः इत्यादि विविध-विषय-वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [७७४--७७६] दीप अनुक्रम [९२४--९२६]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥ ९०४ ॥

२५ शतके उद्देशः ६ पुलाकादेग्रहसंज्ञाहारेतराः सू ७७४–७७६

वा बउसं वा पडिसेवणाकुसीलं वा णियंठं वा अस्संजमं वा संयमासंयमं वा उवसंपज्जति, णियंठे पुच्छा, गोयमा! नियंठत्तं जहति कसायकुसीलं वा सिणायं वा अस्संजमं वा उवसंपज्जति। सिणाए पुच्छा, गोयमा! सिणायत्तं जहति सिद्धिगतिं उवसंपज्जति २४ ॥ (सूत्रं ७७४) पुलाए णं भंते! किं सन्नोवउत्ते होज्जा नोसन्नोवउत्ते होज्जा ?, गोयमा! णोसन्नोवउत्ते वा होज्जा सन्नोवउत्ते वा होज्जा। बउसे णं भंते! पुच्छा, गोयमा! सन्नोवउत्ते वा होज्जा नोसन्नोवउत्ते वा होज्जा, एवं पडिसेवणाकुसीलेवि, एवं कसायकुसीलेवि, नियंठे सिणाए य जहा पुलाए २५ ॥ (सूत्रं ७७५) पुलाए णं भंते! किं आहारए होज्जा अणाहारए होज्जा?, गोयमा! आहारए होज्जा णो अणाहारए होज्जा, एवं जाव नियंठे। सिणाए पुच्छा, गोयमा! आहारए वा होज्जा अणाहारए वा होज्जा २६ ॥ (सूत्रं ७७६)

'पुलाए ण'मित्यादि, पुलाकः पुलाकत्वं त्यक्त्वा संयतः कषायकुशील एव भवति, तत्सदृशसंयमस्थानसद्भावात्, एवं यस्य यत्सदृशानि संयमस्थानानि सन्ति स तद्भावमुपसम्पद्यते मुक्त्वा कषायकुशीलादीन्, कषायकुशीलो हि विद्यमानस्वसदृशसंयमस्थानकान् पुलाकादिभावानुपसम्पद्यते, अविद्यमानसमानसंयमस्थानकं च निर्ग्रन्थभावं, निर्ग्रन्थस्तु कषायित्वं वा स्नातकत्वं वा याति, स्नातकस्तु सिद्ध्यत्येवेति। निर्ग्रन्थसूत्रे 'कसायकुसीलं वा सिणायं वा' इह भावप्रत्ययलोपात् कषायकुशीलत्वमित्यादि दृश्यं, एवं पूर्वसूत्रेष्वपि, तत्रोपशमनिर्ग्रन्थः श्रेणीतः प्रच्यवमानः सकषायो भवति, श्रेणीमस्तके तु मृतोऽसौ देवत्वेनोत्पन्नोऽसंयतो भवति नो संयतासंयतो, देवत्वे तदभावात्, यद्यपि च श्रेणीपतितोऽसौ संयतासंयतोऽपि ॥ ९०४ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निर्ग्रन्थ:, तस्य स्वरुपम्, भेदा: इत्यादि विविध-विषय-वक्तव्यता

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

भवति तथाऽपि नासाविहोक्तः, अनन्तरं तदभावादिति ॥ सञ्ज्ञाद्वारे—'सन्नोवउत्ते'त्ति, इह सञ्ज्ञा–आहारादिसञ्ज्ञा तत्रोपयुक्तः–कथञ्चिदाहाराद्यभिष्वङ्गवान् सञ्ज्ञोपयुक्तः, नोसञ्ज्ञोपयुक्तस्त्वाहाराद्युपभोगेऽपि तत्रानभिष्वक्तः, तत्र पुलाकनिर्ग्रन्थस्नातका नोसञ्ज्ञोपयुक्ता भवन्ति, आहारादिष्वनभिष्वङ्गात्, ननु निर्ग्रन्थस्नातकावेवं युक्तौ वीतरागत्वात्, न तु पुलाकः सरागत्वात्, नैवं, न हि सरागत्वे निरभिष्वङ्गता सर्वथा नास्तीति वक्तुं शक्यते, बकुशादीनां सरागत्वेऽपि निःसङ्गताया अपि प्रतिपादितत्वात्, चूर्णिकारस्त्वाह—'नोसन्ना नाणसन्न'त्ति, तत्र च पुलाकनिर्ग्रन्थस्नातकाः नोसञ्ज्ञोपयुक्ताः, ज्ञानप्रधानोपयोगवन्तो न पुनराहारादिसञ्ज्ञोपयुक्ताः, बकुशादयस्तूभयथाऽपि, तथाविधसंयमस्थानसद्भावादिति ॥ आहारकद्वारे—'आहारए होज्ज'त्ति पुलाकादेर्निर्ग्रन्थान्तस्य विग्रहगत्यादीनामनाहारकत्वकारणानामभावादाहारकत्वमेव। 'सिणाए' इत्यादि, स्नातकः केवलिसमुद्घाते तृतीयचतुर्थपञ्चमसमयेषु अयोग्यवस्थायां चानाहारकः स्यात्, ततोऽन्यत्र पुनराहारक इति ॥ भवद्वारे—

पुलाए णं भंते ! कति भवग्गहणाइं होज्जा ?, गोयमा ! जहन्नेणं एक्कं उक्कोसेणं तिन्नि। बउसे पुच्छा, गोयमा ! जह० एक्कं उक्कोसेणं अट्ठ, एवं पडिसेवणाकुसीलेवि, एवं कसायकुसीलेवि, नियंठे जहा पुलाए। सिणाए पुच्छा, गोयमा ! एक्कं २७॥(सूत्रं ७७७) पुलागस्स णं भंते ! एगभवग्गहणीया केवतिया आगरिसा प० ?, गोयमा ! जहन्नेणं एक्को उक्कोसेणं तिन्नि। बउसस्स णं पुच्छा, गोयमा ! जहन्नेणं एक्को उक्कोसेणं सतग्गसो, एवं पडिसेवणाकुसीलेवि, कसायकुसीलेवि। णियंठस्स णं पुच्छा, गोयमा ! जहन्नेणं एक्को उक्कोसेणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निर्ग्रन्थ:, तस्य स्वरुपम्, भेदा: इत्यादि विविध-विषय-वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [७७७-७७८]

दीप अनुक्रम [९२७-९२८]

दोन्नि। सिणायस्स णं पुच्छा, गोयमा ! एक्को॥ पुलागस्स णं भंते ! नाणाभवग्गहणिया केवतिया आगरिसा पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं दोन्नि उक्कोसे० सत्त। बउसस्स पुच्छा, गोयमा! जहन्नेणं दोन्नि उक्कोसेणं सहस्सग्गसो, एवं जाव कसायकुसीलस्स । नियंठस्स णं पुच्छा, गोयमा ! जहन्नेणं दोन्नि उक्कोसेणं पंच। सिणायस्स पुच्छा, गोयमा ! नत्थि एक्कोवि २८ ॥ (सूत्रं ७७८)

'पुलाए ण'मित्यादि, पुलाको जघन्यत एकस्मिन् भवग्रहणे भूत्वा कषायकुशीलत्वादिकं संयतत्वान्तरमेकशोऽनेकशो वा तत्रैव भवे भवान्तरे वाऽवाप्य सिद्ध्यति, उत्कृष्टतस्तु देवादिभवान्तरितान् त्रीन् भवान् पुलाकत्वमवाप्नोति । 'बउसे'त्यादि, इह कश्चिदेकत्र भवे बकुशत्वमवाप्य कषायकुशीलत्वादि च सिद्ध्यति, कश्चित्त्वेकत्रैव बकुशत्वमवाप्य भवान्तरे तदनवाप्यैव सिद्ध्यतीत्यत उच्यते—'जहन्नेणं एक्कं भवग्गहणं'ति, 'उक्कोसेणं अट्ठ'त्ति किलाष्टौ भवग्रहणानि उत्कृष्टतया चरणमात्रमवाप्यते, तत्र कश्चित्तान्यष्टौ बकुशतया पर्यन्तिमभवे सकषायत्वादियुक्तया, कश्चित्तु प्रतिभवं प्रतिसेवाकुशीलत्वादियुक्तया पूरयतीत्यत उच्यते–'उक्कोसेणं अट्ठ'त्ति ॥ अथाकर्षद्वारं, तत्राकर्षणमाकर्षः—चारित्रस्य प्राप्तिरिति । 'एगभवग्गहणिय'त्ति एकभवग्रहणे ये भवन्ति 'सयग्गसो'त्ति शतपरिमाणेनेत्यर्थः, शतपृथक्त्वमिति भावना, उक्तञ्च—"तिण्ह सहस्सपुहुत्तं सयपुहुत्तं च होति विरईए।"त्ति [त्रयाणां सहस्रपृथक्त्वं विरतेः पुनः शतपृथक्त्वं भवति ॥] 'उक्कोसेणं दोन्नि'त्ति एकत्र भवे वारद्वयमुपश्रेणिकरणादुपशमनिर्ग्रन्थत्वस्य द्वावाकर्षाविति ॥ 'पुलागस्से'त्यादौ 'नाणाभवग्गहणिय'त्ति नानाप्रकारेषु भवग्रहणेषु ये भवन्तीत्यर्थः, 'जहन्नेणं दोन्नि'त्ति एक आकर्ष एकत्र भवे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निर्ग्रन्थः, तस्य स्वरुपम्, भेदाः इत्यादि विविध-विषय-वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [७७७-७७८] दीप अनुक्रम [९२७-९२८]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

द्वितीयोऽन्यत्रेत्येवमनेकत्र भवे आकर्षौ स्यातां, 'उक्कोसेणं सत्त'त्ति पुलाकत्वमुत्कर्षतस्त्रिषु भवेषु स्यादेकत्र च तदुत्कर्षतो वारत्रयं भवति ततश्च प्रथमभवे एक आकर्षोऽन्यत्र च भवद्वये त्रयस्त्रय इत्यादिभिर्विकल्पैः सप्त ते भवन्तीति । 'बउसे'-त्यादि, 'उक्कोसेणं सहस्सग्गसो'त्ति बकुशस्याष्टौ भवग्रहणानि उत्कर्षत उक्तानि, एकत्र च भवग्रहणे उत्कर्षत आकर्षाणां शतपृथक्त्वमुक्तं, तत्र च यदाऽष्टास्वपि भवग्रहणेषूत्कर्षतो नव प्रत्येकमाकर्षशतानि तदा नवानां शतानामष्टाभिर्गुणनात्सप्त सहस्राणि शतद्वयाधिकानि भवन्तीति । 'नियंठस्से'त्यादौ 'उक्कोसेणं पंच'त्ति निर्ग्रन्थस्योत्कर्षतस्त्रीणि भवग्रहणान्युक्तानि, एकत्र च भवे द्वावाकर्षावित्येवमेकत्र द्वावन्यत्र च द्वावपरत्र चैकं क्षपकनिर्ग्रन्थत्वाकर्षं कृत्वा सिद्ध्यतीति कृत्वोच्यते पञ्चेति ॥ कालद्वारे—

पुलाए णं भंते ! कालओ केवच्चिरं होइ ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं । बउस पुच्छा, गोयमा ! जह० एक्कं समयं उक्कोसेणं देसूणा पुव्वकोडी, एवं पडिसेवणाकुसीलेवि कसायकुसीलेवि । नियंठे पुच्छा, गोयमा ! जह० एक्कं समयं उक्कोसेणं अंतोमुहुत्तं । सिणाए पुच्छा, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं देसूणा पुव्वकोडी ॥ पुलाया णं भंते ! कालओ केवच्चिरं होइ ?, गोयमा ! जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं अंतोमुहुत्तं । बउसे णं पुच्छा, गोयमा ! सव्वद्धं, एवं जाव कसायकुसीला, नियंठा जहा पुलागा, सिणाया जहा बउसा २९ ॥ (सूत्रं ७७९) पुलागस्स णं भंते ! केवतियं कालं अंतरं होइ ?, गोयमा ! जह० अंतोमु० उक्को० अणंतं कालं अणंताओ ओसप्पिणिउस्सप्पिणीओ कालओ खेत्तओ अवड्ढपोग्गलपरियट्टं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निर्ग्रन्थः, तस्य स्वरुपम्, भेदाः इत्यादि विविध-विषय-वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [७७९-७८०] दीप अनुक्रम [९२९-९३०]

देसूणं, एवं जाव नियंठस्स। सिणायस्स पुच्छा, गोयमा ! नत्थि अंतरं ॥ पुलायाणं भंते ! केवतियं कालं अंतरं होइ ?, गोयमा ! जह० एक्कं समयं उक्को० संखेज्जाइं वासाइं। बउसाणं भंते ! पुच्छा, गोयमा ! नत्थि अंतरं, एवं जाव कसायकुसीलाणं। नियंठाणं पुच्छा, गोयमा ! जह० एक्कं स० उक्कोसेणं छम्मासा, सिणायाणं जहा बउसाणं ३० ॥ (सूत्रं ७८०)

'पुलाए ण'मित्यादौ, 'जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं'ति पुलाकत्वं प्रतिपन्नोऽन्तर्मुहूर्त्तापरिपूर्त्तौ पुलाको न म्रियते नापि प्रतिपततीतिकृत्वा जघन्यतोऽन्तर्मुहूर्त्तमित्युच्यते, उत्कर्षतोऽप्यन्तर्मुहूर्त्तमेतत्प्रमाणत्वादेतत्स्वभावस्येति। 'बउसे'इत्यादि, 'जहन्नेणमेक्कं समयं'ति बकुशस्य चरणप्रतिपत्त्यनन्तरसमय एव मरणसम्भवादिति, 'उक्कोसेणं देसूणा पुव्वकोडि'त्ति पूर्वकोट्यायुषोऽष्टवर्षान्ते चरणप्रतिपत्ताविति। 'नियंठे ण'मित्यादौ 'जहन्नेणं एक्कं समयं'ति उपशान्तमोहस्य प्रथमसमयसमनन्तरमेव मरणसम्भवात्, 'उक्कोसेणं अंतोमुहुत्तं'ति निर्ग्रन्थाद्धाया एतत्प्रमाणत्वादिति। 'सिणाये'त्यादौ 'जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं'ति आयुष्कान्तिमेऽन्तर्मुहूर्त्ते केवलोत्पत्तावन्तर्मुहूर्त्तं जघन्यतः स्नातककालः स्यादिति ॥ पुलाकादीनामेकत्वेन कालमानमुक्तं अथ पृथक्त्वेनाह—'पुलाया ण'मित्यादि, 'जहन्नेणं एक्कं समयं'ति, कथम् ?, एकस्य पुलाकस्य योऽन्तर्मुहूर्त्तकालस्तस्यान्त्यसमयेऽन्यः पुलाकत्वं प्रतिपन्न इत्येवं जघन्यत्वविवक्षायां द्वयोः पुलाकयोरेकत्र समये सद्भावो द्वित्वे च जघन्यं पृथक्त्वं भवतीति। 'उक्कोसेणं अंतोमुहुत्तं'ति यद्यपि पुलाका उत्कर्षत एकदा सहस्रपृथक्त्वपरिमाणाः प्राप्यन्ते तथाऽप्यन्तर्मुहूर्त्तत्वात्तदद्धाया बहुत्वेऽपि तेषामन्तर्मुहूर्त्तमेव तत्कालः, केवलं बहूनां स्थितौ यदन्तर्मुहूर्त्तं तदेकपुलाकस्थि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निर्ग्रन्थ:, तस्य स्वरुपम्, भेदा: इत्यादि विविध-विषय-वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [७७९--७८०]

दीप अनुक्रम [९२९--९३०]

त्यन्तर्मुहूर्त्तान्महत्तरमित्यवसेयं, बकुशादीनां तु स्थितिकालः सर्वाद्धा, प्रत्येकं तेषां बहुस्थितिकत्वादिति । 'नियंठा जहा पुलाय'त्ति ते चैवं-जघन्यत एकं समयमुत्कर्षतोऽन्तर्मुहूर्त्तमिति ॥ अन्तरद्वारे—'पुलागस्स ण'मित्यादि, तत्र पुलाकः पुलाको भूत्वा कियता कालेन पुलाकत्वमापद्यते ?, उच्यते, जघन्यतोऽन्तर्मुहूर्त्तं स्थित्वा पुनः पुलाक एव भवति, उत्कर्षतः पुनरनन्तेन कालेन पुलाकत्वमाप्नोति, कालानन्त्यमेव कालतो नियमयन्नाह—'अणंताओ' इत्यादि, इदमेव क्षेत्रतोऽपि नियमयन्नाह–'खेत्तओ' इति, स चानन्तः कालः क्षेत्रतो मीयमानः किंमानः ? इत्याह–'अवड्ढ'मित्यादि, तत्र पुद्गलपरावर्त्त एवं श्रूयते—किल केनापि प्राणिना प्रतिप्रदेशं म्रियमाणेन मरणैर्यावता कालेन लोकः समस्तोऽपि व्याप्यते तावता क्षेत्रतः पुद्गलपरावर्त्तो भवति, स च परिपूर्णोऽपि स्यादत आह–'अपार्द्धम्' अपगतार्द्धमर्द्धमात्रमित्यर्थः, अपार्द्धोऽप्यर्द्धतः पूर्णः स्यादत आह–'देसूणं'ति देशेन–भागेन न्यूनमिति। 'सिणायस्स नत्थि अंतरं'ति प्रतिपाताभावात् ॥ एकत्वापेक्षया पुलाकत्वादीनामन्तरमुक्तमथ पृथक्त्वापेक्षया तदेवाह–'पुलायाण'मित्यादि, व्यक्तम् ॥ समुद्घातद्वारे—

पुलागस्स णं भंते ! कति समुग्घाया पन्नत्ता ?, गोयमा ! तिन्नि समुग्घाया प०, तं–वेयणासमुग्घाए कसायसमुग्घाए मारणंतियसमुग्घाए, बउसस्स णं भंते ! पुच्छा, गोयमा ! पंच समुग्घाया प०, तं०–वेयणासमुग्घाए जाव तेयासमुग्घाए, एवं पडिसेवणाकुसीलेवि, कसायकुसीलस्स पुच्छा, गोयमा ! छ समुग्घाया प०, तं०–वेयणासमुग्घाए जाव आहारसमुग्घाए, नियंठस्स णं पुच्छा, गोयमा ! नत्थि एक्कोवि, सिणायस्स पुच्छा, गोयमा ! एगे केवलिसमुग्घाए प० ३१ ॥ (सूत्रं ७८१) पुलाए णं भंते ! लोगस्स किं संखेज्जइभागे होज्जा ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निर्ग्रन्थ:, तस्य स्वरुपम्, भेदा: इत्यादि विविध-विषय-वक्तव्यता

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [७८१-७८४]

दीप अनुक्रम [९३१-९३४]

व्याख्याप्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥९०७॥

२५ शतक उद्देशः ६ पुलाकादेः समुद्घातक्षेत्रावगाहभावाः सू ७८१-७८४

असंखेज्जइभागे होज्जा २ संखेज्जेसु भागेसु होज्जा ३ असंखेज्जेसु भागेसु होज्जा ४ सव्वलोए होज्जा ५?, गोयमा! णो संखेज्जइभागे होज्जा असंखेज्जइभागे होज्जा णो संखेज्जेसु भागेसु होज्जा णो असंखेज्जेसु भागेसु होज्जा णो सव्वलोए होज्जा, एवं जाव नियंठे। सिणाए णं पुच्छा, गोयमा! णो संखेज्जइभागे होज्जा असंखेज्जइभागे होज्जा णो संखेज्जेसु भागेसु होज्जा असंखेज्जेसु भागेसु होज्जा सव्वलोए वा होज्जा ३२॥ (सूत्रं ७८२) पुलाए णं भंते! लोगस्स किं संखेज्जइभागं फुसइ असंखेज्जइभागं फुसइ?, एवं जहा ओगाहणा भणिया तहा फुसणावि भाणियव्वा जाव सिणाए ३३॥ (सूत्रं ७८३) पुलाए णं भंते! कतरंमि भावे होज्जा?, गो०! खओवसमिए भावे होज्जा, एवं जाव कसायकुसीले। नियंठे पुच्छा, गोयमा! उवसमिए वा भावे होज्जा खइए वा भावे होज्जा। सिणाए पुच्छा, गो०! खाइए भावे होज्जा [1]३४॥ (सूत्रं ७८४)

'कसायसमुग्घाए'त्ति चारित्रवतां संज्वलनकषायोदयसम्भवेन कषायसमुद्घातो भवतीति, 'मारणंतियसमुग्घाए'त्ति, इह पुलाकस्य मरणाभावेऽपि मारणान्तिकसमुद्घातो न विरुद्धः समुद्घातान्निवृत्तस्य कषायकुशीलत्वादिपरिणामे सति मरणभावात्, 'नियंठस्स नत्थि एक्कोवि'त्ति तथास्वभावत्वादिति॥ अथ क्षेत्रद्वारं, तत्र क्षेत्रं–अवगाहनाक्षेत्रं, तत्र 'असंखेज्जइभागे होज्ज'त्ति पुलाकशरीरस्य लोकासङ्ख्येयभागमात्रावगाहित्वात्। 'सिणाए ण'मित्यादि, 'असंखेज्जइभागे होज्ज'त्ति शरीरस्थो दण्डकपाटकरणकाले च लोकासङ्ख्येयभागवृत्तिः केवलिशरीरादीनां तावन्मात्रत्वात्, 'असंखेज्जेसु भागेसु

१ पुलाकत्वादिनिबन्धनानां चारित्रमोहक्षयोपशमादीनामेव विवक्षणात् नात्रौदयिकपारिणामिकाद्यनुक्तौ क्षतिः।

॥९०७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निर्ग्रन्थः, तस्य स्वरुपम्, भेदाः इत्यादि विविध-विषय-वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [७८१--७८४]

दीप अनुक्रम [९३१--९३४]

होज्ज'त्ति मथिकरणकाले बहोर्लोकस्य व्याप्तत्वेन स्तोकस्य चाव्याप्ततयोक्तत्वाल्लोकस्यासङ्ख्येयेषु भागेषु स्नातको वर्त्तते, लोकापूरणे च सर्वलोके वर्त्तत इति ॥ स्पर्शनाद्वारे—स्पर्शना क्षेत्रवन्नवरं क्षेत्रं अवगाढमात्रं स्पर्शना त्ववगाढस्य तत्पार्श्ववर्तिनश्चेति विशेषः ॥ भावद्वारं च व्यक्तमेव ॥ परिमाणद्वारे च—

पुलाया णं भंते ! एगसमएणं केवतिया होज्जा ? गोयमा ! पडिवज्जमाणए पडुच्च सिय अत्थि सिय नत्थि, जइ अत्थि जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं सयपुहत्तं, पुव्वपडिवन्नए पडुच्च सिय अत्थि सिय नत्थि, जइ अत्थि जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं सहस्सपुहत्तं। बउसा णं भंते ! एगसमएणं पुच्छा, गोयमा ! पडिवज्जमाणए पडुच्च सिय अत्थि सिय नत्थि, जइ अत्थि जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं सयपुहत्तं, पुव्वपडिवन्नए पडुच्च जहन्नेणं कोडिसयपुहुत्तं उक्कोसेणवि कोडिसयपुहुत्तं, एवं पडिसेवणाकुसीलेवि। कसायकुसीलाणं पुच्छा, गोयमा ! पडिवज्जमाणए पडुच्च सिय अत्थि सिय नत्थि, जइ अत्थि जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं सहस्सपुहुत्तं, पुव्वपडिवन्नए पडुच्च जहन्नेणं कोडिसहस्सपुहुत्तं उक्कोसेणवि

१ यद्यपि भाषापुद्गलैर्लोकव्याप्तिर्भाषाभागैः संख्येयैः संख्येयेषु लोकभागेषु अस्ति ततः अत्रापि समुद्घाते स्नातकस्य संख्येयानां भागानां पूरणं स्यात् परं तत्र वासकत्वात् पूर्णत्वाच्च वास्यद्रव्यैर्लोकस्य युक्तं लोकपूरणादर्वाग् लोकसंख्येयभागानां पूरणं न चैवमत्र वासकत्वं वास्यद्रव्यपूर्णत्वं वा तेनासंख्येयेषु सर्वलोके चेति भङ्गद्वयमेव, न चात्र मथिषट्कं, मथिकाले चासंख्येया एव भागा व्याप्यन्ते ततः, अत एव जैनसमुद्घातवत् भाषाद्रव्येण लोकापूर्त्तिर्नेष्टा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निर्ग्रन्थ:, तस्य स्वरुपम्, भेदा: इत्यादि विविध-विषय-वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [७८५]

दीप अनुक्रम [९३५]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥९०८॥

२५ शतके उद्देशः ६ पुलाकादेः संख्या सू ७८५

कोडिसहस्सपुहुत्तं । नियंठाणं पुच्छा, गोयमा ! पडिवज्जमाणए पडुच्च सिय अत्थि सिय नत्थि, जइ अत्थि जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं बावट्ठं सतं, अट्ठसयं खवगाणं चउप्पन्नं उवसामगाणं, पुव्वपडिवन्नए पडुच्च सिय अत्थि सिय नत्थि, जइ अत्थि जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं सयपुहुत्तं । सिणायाणं पुच्छा, गोयमा ! पडिवज्जमाणए पडुच्च सिय अत्थि सिय नत्थि, जइ अत्थि जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं अट्ठसतं, पुव्वपडिवन्नए पडुच्च जहन्नेणं कोडिपुहुत्तं उक्कोसेणवि कोडिपुहुत्तं ॥ एएसि णं भंते ! पुलागबकुसपडिसेवणाकुसीलकसायकुसीलनियंठसिणायाणं कयरे २ जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा नियंठा पुलागा संखेज्जगुणा सिणाया संखेज्जगुणा बउसा संखेज्जगुणा पडिसेवणाकुसीला संखेज्जगुणा कसायकुसीला संखेज्जगुणा । सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति जाव विहरति ॥ (सूत्रं ७८५)॥ पंचवीसमसयस्स छट्ठो उद्देसओ सम्मत्तो ॥ २५ । ६ ॥

'पुलाया ण' मित्यादि, ननु सर्वसंयतानां कोटीसहस्रपृथक्त्वं श्रूयते, इह तु केवलानामेव कषायकुशीलानां तदुक्तं ततः पुलाकादिमानानि ततोऽतिरिच्यन्त इति कथं न विरोधः ?, उच्यते, कषायकुशीलानां यत् कोटीसहस्रपृथक्त्वं तद्द्वित्रादिकोटीसहस्ररूपं कल्पयित्वा पुलाकबकुशादिसङ्ख्या तत्र प्रवेश्यते ततः समस्तसंयतमानं यदुक्तं तन्नातिरिच्यत इति ॥ अल्पबहुत्वद्वारे–'सव्वत्थोवा नियंठ'त्ति तेषामुत्कर्षतोऽपि शतपृथक्त्वसङ्ख्यत्वात्, 'पुलागा संखेज्जगुण'त्ति तेषामुत्कर्षतः सहस्रपृथक्त्वसङ्ख्यत्वात्, 'सिणाया संखेज्जगुण'त्ति तेषामुत्कर्षतः कोटीपृथक्त्वमानत्वात्, 'बउसा संखेज्जगुण'त्ति तेषा- ॥९०८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निर्ग्रन्थ:, तस्य स्वरुपम्, भेदा: इत्यादि विविध-विषय-वक्तव्यता

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [७८५]

दीप अनुक्रम [९३५]

मुत्कर्षतः कोटीशतपृथक्त्वमानत्वात्, 'पडिसेवणाकुसीला संखेज्जगुण'त्ति, कथमेतत् तेषामप्युत्कर्षतः कोटीशतपृथक्त्वमानतयोक्तत्वात् ?, सत्यं, किन्तु बकुशानां यत्कोटीशतपृथक्त्वं तद्द्वित्रादिकोटीशतमानं प्रतिसेविनां तु कोटीशतपृथक्त्वं चतुःषट्कोटीशतमानमिति न विरोधः, कषायिणां तु सङ्ख्यातगुणत्वं व्यक्तमेवोत्कर्षतः कोटीसहस्रपृथक्त्वमानतया तेषामुक्तत्वादिति ॥ ॥ पञ्चविंशतितमशते षष्ठः ॥ २५-६ ॥

षष्ठोद्देशके संयतानां स्वरूपमुक्तं, सप्तमेऽपि तदेवोच्यते इत्येवंसम्बन्धस्यास्येदमादिसूत्रम्-'कइ णं भंते !' इत्यादि, इहापि प्रज्ञापनादीनि द्वाराणि वाच्यानि, तत्र प्रज्ञापनाद्वारमधिकृत्योक्तम्-

कति णं भंते! संजया पन्नत्ता ?, गोयमा ! पंच संजया पं०, तं०-सामाइयसंजए छेदोवट्ठावणियसंजए परिहारविसुद्धियसंजए सुहुमसंपरायसंजए अहक्खायसंजए, सामाइयसंजए णं भंते ! कतिविहे पन्नत्ते ?, गोयमा! दुविहे पन्नत्ते, तंजहा—इत्तरिए य आवकहिए य, छेओवट्ठावणियसंजए णं पुच्छा, गोयमा ! दुविहे प०, तं०—सातियारे य निरतियारे य, परिहारविसुद्धियसंजए पुच्छा, गोयमा ! दुविहे पं०, तं०-णिव्विसमाणए य निव्विट्ठकाइए य, सुहुमसंपरागपुच्छा, गोयमा ! दुविहे पं०, तं०-संकिलिस्समाणए य विसुद्धमाणए य, अहक्खायसंजए पुच्छा, गोयमा ! दुविहे पं०, तं०—छउमत्थे य केवली य ॥ सामाइयंमि उ कए चाउज्जामं अणुत्तरं धम्मं । तिविहेणं फासयंतो सामाइयसंजओ स खलु ॥ १ ॥ छेत्तूण उ परियागं पोराणं जो ठवेइ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र पञ्चविंशतितमे शतके षष्ठं-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ पञ्चविंशतितमे शतके सप्तम-उद्देशक: आरभ्यते

संयत, तस्य स्वरुपम्, सामायिकसंयत आदि पञ्च-भेदा:, संयतस्य विविध-वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [७८६] + गाथा:

दीप अनुक्रम [९३६-९४१]

अप्पाणं। धम्मंमि पंचजामे छेदोवट्ठावणो स खलु ॥ २ ॥ परिहरइ जो विसुद्धं तु पंचयामं अणुत्तरं धम्मं। तिविहेणं फासयंतो परिहारियसंजओ स खलु ॥ ३ ॥ लोभाणु वेययंतो जो खलु उवसामओ व खवओ वा। सो सुहुमसंपराओ अहखाया ऊणओ किंचि ॥ ४ ॥ उवसंते खीणंमि व जो खलु कम्मंमि मोहणिज्जंमि। छउमत्थो व जिणो वा अहखाओ संजओ स खलु ॥ ५ ॥ (सूत्रं ७८६)

'कति णं भंते!' इत्यादि, 'सामाइयसंजए'त्ति सामायिकं नाम चारित्रविशेषस्तत्प्रधानस्तेन वा संयतः सामायिकसंयतः, एवमन्येऽपि, 'इत्तरिए य'त्ति इत्वरस्य—भाविव्यपदेशान्तरत्वेनाल्पकालिकस्य सामायिकस्यास्तित्वादित्वरिकः, स चारोपयिष्यमाणमहाव्रतः प्रथमपश्चिमतीर्थकरसाधुः, 'आवकहिए य'त्ति यावत्कथिकस्य–भाविव्यपदेशान्तराभावाद् यावज्जीविकस्य सामायिकस्यास्तित्वाद्यावत्कथिकः, स च मध्यमजिनमहाविदेहजिनसम्बन्धी साधुः, 'साइयारे य'त्ति सातिचारस्य यदारोप्यते तत्सातिचारमेव छेदोपस्थापनीयं, तद्योगात्साधुरपि सातिचार एव, एवं निरतिचारच्छेदोपस्थापनीययोगान्निरतिचारः स च शैक्षकस्य पार्श्वनाथतीर्थान्महावीरतीर्थसङ्क्रान्तौ वा, छेदोपस्थापनीयसाधुश्च प्रथमपश्चिमतीर्थयोरेव भवतीति, 'णिव्विसमाणए य'त्ति परिहारिकतपस्तपस्यन् 'निव्विट्ठकाइए य'त्ति निर्विशमानकानुचरक इत्यर्थः, 'संकिलिस्समाणए'त्ति उपशमश्रेणीतः प्रच्यवमानः 'विसुद्धमाणए य'त्ति उपशमश्रेणीं क्षपकश्रेणीं वा समारोहन्, 'छउमत्थे य केवली य'त्ति व्यक्तम् ॥ अथ सामायिकसंयतादीनां स्वरूपं गाथाभिराह–'सामाइयंमि उ'गाहा, सामायिक एव प्रतिपन्ने न तु छेपस्थापनीयादौ 'चतुर्यामं' चतुर्महाव्रतम् 'अनुत्तरं धर्मं' श्रमणधर्ममित्यर्थः 'त्रिविधेन' मनःप्रभृतिना

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संयत, तस्य स्वरुपम्, सामायिकसंयत आदि पञ्च-भेदा:, संयतस्य विविध-वक्तव्यता

| प्रत सूत्रांक [७८६] + गाथा:

दीप अनुक्रम [९३६-९४१] | पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः |

'फासयंतो'त्ति स्पृशन्—पालयन् यो वर्त्तते इति शेषः सामायिकसंयतः सः 'खलु'निश्चितमित्यर्थः, अनया च गाथया यावत्कथिकसामायिकसंयतः उक्तः, इत्वरसामायिकसंयतस्तु स्वयं वाच्यः ॥ १ ॥ 'छेत्तूण'गाहा, कण्ठ्या, नवरं 'छेदोवट्ठावणे'त्ति छेदेन–पूर्वपर्यायच्छेदेन उपस्थापनं व्रतेषु यत्र तच्छेदोपस्थानं तद्योगाच्छेदोपस्थापनः, अनया च गाथया सातिचार इतरश्च द्वितीयसंयत उक्तः ॥ २ ॥ 'परिहरइ'गाहा, परिहरति—निर्विशमानकादिभेदं तप आसेवते यः साधुः, किं कुर्वन् ? इत्याह—विशुद्धमेव 'पञ्चयामं' अनुत्तरं धर्मं त्रिविधेन स्पृशन्, परिहारिकसंयतः स खल्विति, पञ्चयाममित्यनेन च प्रथमचरमतीर्थयोरेव तत्सत्तामाह ॥ ३ ॥ 'लोभाणु'गाहा, 'लोभाणून्' लोभलक्षणकषायसूक्ष्मकिट्टिकाः वेदयन् यो वर्त्तत इति, शेषं कण्ठ्यम् ॥ ४ ॥ 'उवसंते' गाहा, अयमर्थः—उपशान्ते मोहनीये कर्म्मणि क्षीणे वा यश्छद्मस्थो जिनो वा वर्त्तते स यथाख्यातसंयतः खल्विति ॥ ५ ॥ वेदद्वारे—

सामाइयसंजए णं भंते ! किं सवेदए होज्जा अवेदए होज्जा ?, गोयमा ! सवेदए वा होज्जा अवेदए वा होज्जा, जइ सवेदए एवं जहा कसायकुसीले तहेव निरवसेसं, एवं छेदोवट्ठावणियसंजएवि, परिहारविसुद्धियसंजओ जहा पुलाओ, सुहुमसंपरायसंजओ अहक्खायसंजओ य जहा नियंठो २। सामाइयसंजए णं भंते ! किं सरागे होज्जा वीयरागे होज्जा ?, गोयमा ! सरागे होज्जा नो वीयरागे होज्जा, एवं सुहुमसंपरायसंजए, अहक्खायसंजए जहा नियंठे ३ ॥ सामाइयसंजमे णं भंते! किं ठियकप्पे होज्जा अट्ठियकप्पे होज्जा ?, गोयमा ! ठियकप्पे वा होज्जा अट्ठियकप्पे वा होज्जा, छेदोवट्ठावणियसंजए पुच्छा, गोयमा ! ठियकप्पे होज्जा नो अट्ठि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संयत, तस्य स्वरुपम्, सामायिकसंयत आदि पञ्च-भेदाः, संयतस्य विविध-वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [७८७-७८८]

दीप अनुक्रम [९४२-९४३]

यकप्पे होज्जा, एवं परिहारविसुद्धियसंजएवि, सेसा जहा सामाइयसंजए। सामाइयसंजए णं भंते! किं जिणकप्पे होज्जा थेरकप्पे वा होज्जा कप्पातीते वा होज्जा ?, गोयमा ! जिणकप्पे वा हो० जहा कसायकुसीले तहेव निरवसेसं, छेदोवट्ठावणिओ परिहारविसुद्धिओ य जहा बउसो, सेसा जहा नियंठे ४ ॥ (सूत्रं ७८७) सामाइयसंजए णं भंते ! किं पुलाए होज्जा बउसे जाव सिणाए होज्जा ?, गोयमा ! पुलाए वा होज्जा बउसे जाव कसायकुसीले वा होज्जा नो नियंठे होज्जा नो सिणाए होज्जा, एवं छेदोवट्ठावणिएवि, परिहारविसुद्धियसंजए णं भंते ! पुच्छा, गोयमा ! नो पुलाए नो बउसे नो पडिसेवणाकुसीले होज्जा कसायकुसीले होज्जा नो नियंठे होज्जा नो सिणाए होज्जा, एवं सुहुमसंपराएवि, अहक्खायसंजए पुच्छा, गोयमा ! नो पुलाए होज्जा जाव नो कसायकुसीले होज्जा नियंठे वा होज्जा सिणाए वा हो० ५॥ सामाइयसंजए णं भंते ! किं पडिसेवए हो० अपडिसेवए होज्जा ?, गोयमा ! पडिसेवए वा होज्जा अपडिसेवए वा होज्जा, जइ पडिसेवए होज्जा किं मूलगुणपडिसेवए होज्जा सेसं जहा पुलागस्स, जहा सामाइयसंजए एवं छेदोवट्ठावणिएवि, परिहारविसुद्धियसंजए पुच्छा, गोयमा ! नो पडिसेवए होज्जा अपडिसेवए होज्जा एवं जाव अहक्खायसंजए ६ ॥ सामाइयसंजए णं भंते ! कतिसु नाणेसु होज्जा ?, गोयमा ! दोसु वा तिसु वा चउसु वा नाणेसु होज्जा, एवं जहा कसायकुसीलस्स तहेव चत्तारि नाणाइं भयणाए, एवं जाव सुहुमसंपराए, अहक्खायसंजयस्स पंच नाणाइं भयणाए जहा नाणुद्देसए। सामाइयसंजए णं भंते ! केवतियं सुयं अहिज्जेज्जा ?, गोयमा ! जहन्नेणं अट्ठ पव-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संयत, तस्य स्वरुपम्, सामायिकसंयत आदि पञ्च-भेदा:, संयतस्य विविध-वक्तव्यता

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत
सूत्रांक
[७८७-
-७८८]

दीप
अनुक्रम
[९४२-
-९४३]

यणमायाओ जहा कसायकुसीले, एवं छेदोवट्ठावणिएवि, परिहारविसुद्धियसंजए पुच्छा, गोयमा ! जहन्नेणं नवमस्स पुव्वस्स ततियं आयारवत्थुं उक्कोसेणं असंपुन्नाइं दस पुव्वाइं अहिज्जेज्जा, सुहुमसंपरायसंजए जहा सामाइयसंजए, अहक्खायसंजए पुच्छा, गोयमा ! जहन्नेणं अट्ठ पवयणमायाओ उक्कोसेणं चोद्दस पुव्वाइं अहिज्जेज्जा सुयवतिरित्ते वा होज्जा ७। सामाइयसंजए णं भंते ! किं तित्थे हो० अतित्थे होज्जा ?, गोयमा ! तित्थे वा होज्जा अतित्थे वा होज्जा जहा कसायकुसीले, छेदोवट्ठावणिए परिहारविसुद्धिए य जहा पुलाए, सेसा जहा सामाइयसंजए ८। सामाइयसंजए णं भंते ! किं सलिंगे होज्जा अन्नलिंगे होज्जा गिहिलिंगे होज्जा जहा पुलाए, एवं छेदोवट्ठावणिएवि, परिहारिविसुद्धियसंजए णं भंते ! किं पुच्छा, गोयमा ! दव्वलिंगंपि भावलिंगंपि पडुच्च सलिंगे होज्जा नो अन्नलिंगे होज्जा नो गिहिलिंगे होज्जा, सेसा जहा सामाइयसंजए ९। सामाइयसंजए णं भंते ! कतिसु सरीरेसु होज्जा ?, गोयमा ! तिसु वा चउसु वा पंचसु वा जहा कसायकुसीले, एवं छेदोवट्ठावणिएवि, सेसा जहा पुलाए १०। सामाइयसंजए णं भंते ! किं कम्मभूमीए होज्जा अकम्मभूमीए होज्जा ?, गोयमा ! जम्मणं संतिभावं च पडुच्च कम्मभूमीए नो अकम्मभूमीए जहा बउसे, एवं छेदोवट्ठावणिएवि, परिहारविसुद्धिए य जहा पुलाए, सेसा जहा सामाइयसंजए ११ ॥ (सूत्रं ७८८)

सामायिकसंयतोऽवेदकोऽपि भवेत्, नवमगुणस्थानके हि वेदस्योपशमः क्षयो वा भवति, नवमगुणस्थानकं च यावत्सामायिकसंयतोऽपि व्यपदिश्यते, 'जहा कसायकुसीले'त्ति सामायिकसंयतः सवेदस्त्रिवेदोऽपि स्यात्, अवेदस्तु क्षीणो-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संयत, तस्य स्वरुपम्, सामायिकसंयत आदि पञ्च-भेदा:, संयतस्य विविध-वक्तव्यता

प्रत
सूत्रांक
[७८७-
-७८८]

दीप
अनुक्रम
[९४२-
-९४३]

पशान्तवेद इत्यर्थः । 'परिहारविसुद्धियसंजए जहा पुलागो'त्ति पुरुषवेदो वा पुरुषनपुंसकवेदो वा स्यादित्यर्थः, 'सुहुमसंपराये'त्यादौ 'जहा नियंठो'त्ति क्षीणोपशान्तवेदत्वेनावेदक इत्यर्थः । एवमन्यान्यप्यतिदेशसूत्राण्यनन्तरोद्देशकानुसारेण स्वयमवगन्तव्यानीति॥ कल्पद्वारे—'णो अट्ठियकप्पे'त्ति अस्थितकल्पो हि मध्यमजिनमहाविदेहजिनतीर्थेषु भवति, तत्र च छेदोपस्थापनीयं नास्तीति ॥ चारित्रद्वारमाश्रित्येदमुक्तम्—'सामाइयसंजए णं भंते ! किं पुलाए'इत्यादि, पुलाकादिपरिणामस्य चारित्रत्वात् ॥ ज्ञानद्वारे—'अहक्खायसंजयस्स पंच नाणाइं भयणाए जहा णाणुद्देसए'त्ति, इह च ज्ञानोद्देशकः—अष्टमशतद्वितीयोद्देशकस्य ज्ञानवक्तव्यतार्थमवान्तरप्रकरणं, भजना पुनः केवलियथाख्यातचारित्रिणः केवलज्ञानं छद्मस्थवीतरागयथाख्यातचारित्रिणो द्वे वा त्रीणि वा चत्वारि वा ज्ञानानि भवन्तीत्येवंरूपा, श्रुताधिकारे यथाख्यातसंयतो यदि निर्ग्रन्थस्तदाऽष्टप्रवचनमात्रादिचतुर्दशपूर्वान्तं श्रुतं यदि तु स्नातकस्तदा श्रुतातीतोऽत एवाह—'जहन्नेणं अट्ठ पवयणमायाओ' इत्यादि ॥ कालद्वारे—

सामाइयसंजए णं भंते ! किं ओसप्पिणीकाले होज्जा उस्सप्पिणिकाले होज्जा नोओसप्पिणिनोउस्सप्पिणिकाले होज्जा ?, गोयमा ! ओसप्पिणिकाले जहा बउसे, एवं छेदोवट्ठावणिएवि, नवरं जम्मणं संतिभावं(च) पडुच्च चउसुवि पलिभागेसु नत्थि साहरणं पडुच्च अन्नयरे पडिभागे होज्जा, सेसं तं चेव, परिहारविसुद्धिए पुच्छा, गोयमा ! ओसप्पिणिकाले वा होज्जा उस्सप्पिणिकाले वा होज्जा नोओसप्पिणिनोउस्सप्पिणिकाले नो होज्जा, जइ ओसप्पिणिकाले होज्जा जहा पुलाओ, उस्सप्पिणिकालेवि जहा पुलाओ, सुहुमसंपराइओ जहा

॥९११॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संयत, तस्य स्वरुपम्, सामायिकसंयत आदि पञ्च-भेदा:, संयतस्य विविध-वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [७८९-७९२]

दीप अनुक्रम [९४४-९४८..]

नियंठो, एवं अहक्खाओवि १२॥ (सूत्रं ७८९) सामाइयसंजए णं भंते! कालगए समाणे किं गतिं गच्छति?, गोयमा! देवगतिं गच्छति, देवगतिं गच्छमाणे किं भवणवासीसु उवव० वाणमंतर० उववज्जेज्जा जोइसिएसु उववज्जेज्जा वेमाणिएसु उववज्जेज्जा ?, गो०! णो भवणवासीसु उववज्जेज्जा जहा कसायकुसीले, एवं छेदोवट्ठावणिएवि, परिहारविसुद्धिए जहा पुलाए, सुहुमसंपराए जहा नियंठे, अहक्खाए पुच्छा, गोयमा! एवं अहक्खायसंजएवि जाव अजहन्नमणुक्कोसेणं अणुत्तरविमाणेसु उववज्जेज्जा, अत्थेगतिए सिज्झंति जाव अंतं करेंति ॥ सामाइयसंजए णं भंते! देवलोगेसु उववज्जमाणे किं इंदत्ताए उववज्जति पुच्छा, गोयमा! अविराहणं पडुच्च एवं जहा कसायकुसीले, एवं छेदोवट्ठावणिएवि, परिहारविसुद्धिए जहा पुलाए, सेसा जहा नियंठे। सामाइयसंजयस्स णं भंते! देवलोगेसु उववज्जमाणस्स केवतियं कालं ठिती प० ?, गोयमा! जहन्नेणं दो पलिओवमाइं उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं, एवं छेदोवट्ठावणिएवि, परिहारविसुद्धियस्स पुच्छा, गोयमा! जहन्नेणं दो पलिओवमाइं उक्कोसेणं अट्ठारस सागरोवमाइं, सेसाणं जहा नियंठस्स १३॥ (सूत्रं ७९०) सामाइयसंजयस्स णं भंते! केवइया संजमट्ठाणा पन्नत्ता ?, गोयमा! असंखेज्जा संजमट्ठाणा प०, एवं जाव परिहारविसुद्धियस्स, सुहुमसंपरायसंजयस्स पुच्छा, गोयमा! असंखेज्जा अंतोमुहुत्तिया संजमट्ठाणा प०, अहक्खायसंजयस्स पुच्छा, गोयमा! एगे अजहन्नमणुक्कोसए संजमट्ठाणे। एएसि णं भंते! सामाइयछेदोवट्ठावणियपरिहारविसुद्धियसुहुमसंपरागअहक्खायसंजयाणं संजमट्ठाणाणं कयरे २ जाव विसेसाहिया वा ?,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संयत, तस्य स्वरुपम्, सामायिकसंयत आदि पञ्च-भेदाः, संयतस्य विविध-वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [७८९-७९२] दीप अनुक्रम [९४४-९४८..]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः२ ॥९१२॥

गोयमा ! सव्वत्थोवे अहक्खायसंजमस्स एगे अजहन्नमणुक्कोसए संजमट्ठाणे सुहुमसंपरागसंजयस्स अंतोमुहुत्तिया संजमट्ठाणा असंखेज्जगुणा परिहारविसुद्धियसंजयस्स संजमट्ठाणा असंखेज्जगुणा सामाइयसंजयस्स छेदोवट्ठावणियसंजयस्सय एएसि णं संजमट्ठाणा दोण्हवि तुल्ला असंखेज्जगुणा १४ ॥ (सूत्रं ७९१) सामाइयसंजयस्स णं भंते ! केवइया चरित्तपज्जवा प० ?, गोयमा ! अणंता चरित्तपज्जवा प० एवं जाव अहक्खायसंजयस्स ॥ सामाइयसंजए णं भंते ! सामाइयसंजयस्स सट्ठाणसन्निगासेणं चरित्तपज्जवेहिं किं हीणे तुल्ले अब्भहिए ?, गोयमा ! सिय हीणे छट्ठाणवडिए, सामाइयसंजए णं भंते ! छेदोवट्ठावणियसंजयस्स परट्ठाणसन्निगासेणं चरित्तपज्जवेहिं पुच्छा, गोयमा ! सिय हीणे छट्ठाणवडिए, एवं परिहारविसुद्धियस्सवि, सामाइयसंजए णं भंते ! सुहुमसंपरागसंजयस्स परट्ठाणसन्निगासेणं चरित्तपज्जवे पुच्छा, गोयमा ! हीणे नो तुल्ले नो अब्भहिए अणंतगुणहीणे, एवं अहक्खायसंजयस्सवि, एवं छेदोवट्ठावणिएवि, हेट्ठिल्लेसु तिसुवि समं छट्ठाणवडिए उवरिल्लेसु दोसु तहेव हीणे, जहा छेदोवट्ठावणिए तहा परिहारविसुद्धिएवि, सुहुमसंपरागसंजए णं भंते ! सामाइयसंजयस्स परट्ठाण पुच्छा, गोयमा ! नो हीणे नो तुल्ले अब्भहिए अणंतगुणमब्भहिए, एवं छेओवट्ठावणियपरिहारविसुद्धिएसुवि समं सट्ठाणे सिय हीणे नो तुल्ले सिय अब्भहिए, जइ हीणे अणंतगुणहीणे अह अब्भहिए अणंतगुणमब्भहिए, सुहुमसंपरायसंजयस्स अहक्खायसंजयस्स परट्ठाणे पुच्छा, गोयमा ! हीणे नो तुल्ले नो अब्भहिए अणंतगुणहीणे, अहक्खाए हेट्ठिल्लाणं चउण्हवि नो हीणे नो तुल्ले अब्भहिए अणंतगुणमब्भहिए,

२५ शतके उद्देशः ७ कालगतिसंयमस्थानचरित्रपर्यवाः सू ७८९-७९२

॥९१२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संयत, तस्य स्वरुपम्, सामायिकसंयत आदि पञ्च-भेदा:, संयतस्य विविध-वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [७८९- -७९२] दीप अनुक्रम [९४४- -९४८..]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति: सट्ठाणे नो हीणे तुल्ले नो अब्भहिए। एएसि णं भंते ! सामाइयछेदोवट्ठावणियपरिहारविसुद्धियसुहुमसंपराय अहक्खायसंजयाणं जहन्नुक्कोसगाणं चरित्तपज्जवाणं कयरे २ जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सामाइयसंजयस्स छेओवट्ठावणियसंजयस्स य एएसि णं जहन्नगा चरित्तपज्जवा दोण्हवि तुल्ला सव्वत्थोवा परिहारविसुद्धियसंजयस्स जहन्नगा चरित्तपज्जवा अणंतगुणा तस्स चेव उक्कोसगा चरित्तपज्जवा अणंतगुणा सामाइयसंजयस्स छेओवट्ठावणियसंजयस्स य एएसि णं उक्कोसगा चरित्तपज्जवा दोण्हवि तुल्ला अनंतगुणा सुहुमसंपरायसंजयस्स जहन्नगा चरित्तपज्जवा अणंतगुणा तस्स चेव उक्कोसगा चरित्तपज्जवा अणंतगुणा अहक्खायसंजयस्स अजहन्नमणुक्कोसगा चरित्तपज्जवा अणंतगुणा १५ ॥ सामाइयसंजए णं भंते ! किं सजोगी होज्जा अजोगी होज्जा ?, गोयमा ! सजोगी जहा पुलाए एवं जाव सुहुमसंपरायसंजए अहक्खाए जहा सिणाए १६ ॥ सामाइयसंजए णं भंते ! किं सागारोवउत्ते होज्जा अणागारोवउ० ?, गोयमा ! सागारोवउत्ते जहा पुलाए एवं जाव अहक्खाए, नवरं सुहुमसंपराए सागारोवउत्ते होज्जा नो अणागारोवउत्ते होज्जा १७ ॥ सामाइयसंजए णं भंते ! किं सकसायी होज्जा अकसायी होज्जा ?, गोयमा ! सकसायी होज्जा नो अकसायी होज्जा, जहा कसायकुसीले, एवं छेदोवट्ठावणिएवि, परिहारविसुद्धिए जहा पुलाए, सुहुमसंपरागसंजए पुच्छा, गोयमा ! सकसायी होज्जा नो अकसायी होज्जा, जइ सकसायी होज्जा से णं भंते ! कतिसु कसायेसु होज्जा ?, गोयमा ! एगंमि संजलणलोभे होज्जा, अहक्खायसंजए जहा नियंठे १८ ॥ सामाइयसंजए णं भंते ! किं सलेस्से होज्जा अलेस्से होज्जा ?, Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org
	संयत, तस्य स्वरुपम्, सामायिकसंयत आदि पञ्च-भेदा:, संयतस्य विविध-वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [७८९-७९२]

दीप अनुक्रम [९४४-९४८..]

गोयमा ! सलेस्से होज्जा जहा कसायकुसीले, एवं छेदोवट्ठावणिएवि, परिहारविसुद्धिए जहा पुलाए, सुहुमसंपराए जहा नियंठे, अहक्खाए जहा सिणाए, नवरं जइ सलेस्से होज्जा एगाए सुक्कलेस्साए होज्जा १९ ॥ (सूत्रं ७९२)

'एवं छेओवट्ठावणिएवि'त्ति, अनेन बकुशसमानः कालतश्छेदोपस्थापनीयसंयत उक्तः, तत्र च बकुशस्योत्सर्प्पिण्यवसर्प्पिणीव्यतिरिक्तकाले जन्मतः सद्भावतश्च सुषमसुषमादिप्रतिभागत्रये निषेधोऽभिहितः दुष्षमसुषमाप्रतिभागे च विधिः छेदोपस्थापनीयसंयतस्य तु तत्रापि निषेधार्थमाह—'नवर'मित्यादि ॥ संयमस्थानद्वारे—'सुहुमसंपराये'त्यादौ 'असंखेज्जा अंतोमुहुत्तिया संजमट्ठाण'त्ति अन्तर्मुहूर्त्ते भवानि आन्तर्मुहूर्त्तिकानि, अन्तर्मुहूर्त्तप्रमाणा हि तदद्धा, तस्याश्च प्रतिसमयं चरणविशुद्धिविशेषभावादसङ्ख्येयानि तानि भवन्ति, यथाख्याते त्वेकमेव, तदद्धायाश्चरणविशुद्धेर्निर्विशेषत्वादिति ॥ संयमस्थानाल्पबहुत्वचिन्तायां तु किलासद्भावस्थापनया समस्तानि संयमस्थानान्येकविंशतिः, तत्रैकमुपरितनं यथाख्यातस्य, ततोऽधस्तनानि चत्वारि सूक्ष्मसम्परायस्य, तानि च तस्मादसङ्ख्येयगुणानि द्रष्टव्यानि, तेभ्योऽधश्चत्वारि परिहृत्यान्यान्यष्टौ परिहारिकस्य, तानि च पूर्वेभ्योऽसङ्ख्येयगुणानि द्रष्टव्यानि, ततः परिहृतानि, यानि चत्वार्यष्टौ च पूर्वोक्तानि तेभ्योऽन्यानि च चत्वारीत्येवं तानि षोडश सामायिकच्छेदोपस्थापनीयसंयतयोः, पूर्वेभ्यश्चैतान्यसङ्ख्यातगुणानीति ॥ सन्निकर्षद्वारे—'सामाइयसंजमे णं भंते ! सामाइयसंजयस्से'त्यादौ 'सिय हीणे'त्ति असङ्ख्यातानि तस्य संयमस्थानानि, तत्र च यदैको हीनशुद्धिकेऽन्यस्त्वितरत्र वर्त्तते तदैको हीनोऽन्यस्त्वभ्यधिकः, यदा तु समाने संयमस्थाने वर्त्तेते तदा तुल्ये, ॥९१३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संयत, तस्य स्वरुपम्, सामायिकसंयत आदि पञ्च-भेदाः, संयतस्य विविध-वक्तव्यता

हीनाधिकत्वे च षट्स्थानपतितत्वं स्यादत एवाह–'छट्ठाणवडिए'त्ति ॥ उपयोगद्वारे–सामायिकसंयतादीनां पुलाकवदुपयोगद्वयं भवति, सूक्ष्मसम्परायसंयतस्य तु विशेषोपदर्शनार्थमाह–'नवरं सुहुमसंपराइए'इत्यादि, सूक्ष्मसम्परायः साकारोपयुक्तस्तथास्वभावत्वादिति ॥ लेश्याद्वारे–यथाख्यातसंयतः स्नातकसमान उक्तः, स्नातकश्च सलेश्यो वा स्यादलेश्यो वा, यदि सलेश्यस्तदा परमशुक्लेश्यः स्यादित्येवमुक्तः, यथाख्यातसंयतस्य तु निर्ग्रन्थत्वापेक्षया निर्विशेषेणापि शुक्लेश्या स्यादतोऽस्य विशेषस्याभिधानार्थमाह–'नवरं जई'त्यादि ॥ परिणामद्वारे–

सामाइयसंजए णं भंते ! किं वड्ढमाणपरिणामे होज्जा हीयमाणपरिणामे अवट्ठियपरिणामे ?, गोयमा ! वड्ढमाणपरिणामे जहा पुलाए, एवं जाव परिहारविसुद्धिए, सुहुमसंपराय पुच्छा, गोयमा ! वड्ढमाणपरिणामे वा होज्जा हीयमाणपरिणामे वा होज्जा नो अवट्ठियपरिणामे होज्जा, अहक्खाए जहा नियंठे। सामाइयसंजए णं भंते ! केवतियं कालं वड्ढमाणपरिणामे होज्जा ?, गोयमा ! जह० एक्कं समयं जहा पुलाए, एवं जाव परिहारविसुद्धिएवि, सुहुमसंपरागसंजए णं भंते ! केवतियं कालं वड्ढमाणपरिणामे होज्जा ?, गोयमा ! जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं अंतोमुहुत्तं, केवतियं कालं हीयमाणपरिणामे एवं चेव, अहक्खायसंजए णं भंते ! केवतियं कालं वड्ढमाणपरिणामे होज्जा ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, केवतियं कालं अवट्ठिय परिणामे होज्जा ?, गोयमा ! जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं देसूणा पुव्वकोडी २० ॥ (सूत्रं ७९३)

'सुहुमसंपराये'इत्यादौ, 'वड्ढमाणपरिणामे वा होज्जा हीयमाणपरिणामे वा होज्जा नो अवट्ठियपरिणामे होज्ज'त्ति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संयत, तस्य स्वरुपम्, सामायिकसंयत आदि पञ्च-भेदा:, संयतस्य विविध-वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [७८९-७९२] दीप अनुक्रम [९४४-९४८..]

सूक्ष्मसम्परायसंयतः श्रेणिं समारोहन् वर्द्धमानपरिणामस्ततो भ्रश्यन् हीयमानपरिणामः, अवस्थितपरिणामस्त्वसौ न भवति, गुणस्थानकस्वभावादिति। तथा 'सुहुमसम्परायसंजए णं भंते ! केवइयं कालं' इत्यादौ 'जहन्नेणं एक्कं समयं'ति सूक्ष्मसम्परायस्य जघन्यतो वर्द्धमानपरिणाम एकं समयं प्रतिपत्तिसमयानन्तरमेव मरणात्, 'उक्कोसेणं अंतोमुहुत्तं'ति तद्गुणस्थानकस्यैतावत्प्रमाणत्वात्, एवं तस्य हीयमानपरिणामोऽपि भावनीय इति। तथा 'अहक्खायसंजए णं भंते !' इत्यादौ 'जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणंपि अंतोमुहुत्तं'त्ति यो यथाख्यातसंयतः केवलज्ञानमुत्पादयिष्यति यश्च शैलेशीप्रतिपन्नस्तस्य वर्द्धमानपरिणामो जघन्यत उत्कर्षतश्चान्तर्मुहूर्त्तं तदुत्तरकालं तद्व्यवच्छेदात्, अवस्थितपरिणामस्तु जघन्येनैकं समयं, उपशमाद्धायाः प्रथमसमयानन्तरमेव मरणात्, 'उक्कोसेणं देसूणा पुव्वकोडि'त्ति एतच्च प्राग्वद्भावनीयमिति ॥ बन्धद्वारे—

सामाइयसंजए णं भंते ! कइ कम्मप्पगडीओ बंधइ ?, गोयमा ! सत्तविहबंधए वा अट्ठविहबंधए वा एवं जहा बउसे, एवं जाव परिहारविसुद्धिए, सुहुमसंपरागसंजए पुच्छा, गोयमा ! आउयमोहणिज्जवज्जाओ छ कम्मप्पगडीओ बंधति, अहक्खाएसंजए जहा सिणाए २१ ॥ सामाइयसंजए णं भंते ! कति कम्मप्पगडीओ वेदेति ?, गोयमा ! नियमं अट्ठ कम्मप्पगडीओ वेदेति, एवं जाव सुहुमसंपराए, अहक्खाए पुच्छा, गोयमा ! सत्तविहवेयए वा चउव्विहवेयए वा, सत्तविह वेदेमाणे मोहणिज्जवज्जाओ सत्त कम्मप्पगडीओ वेदेति, चत्तारि वेदेमाणे वेयणिज्जाउयनामगोयाओ चत्तारि कम्मप्पगडीओ वेदेति २२॥ सामाइयसंजए णं भंते ! कति कम्म-

॥९१४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संयत, तस्य स्वरुपम्, सामायिकसंयत आदि पञ्च-भेदाः, संयतस्य विविध-वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [७९३-७९६]

दीप अनुक्रम [..९४८-९५१]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्पगडीओ उदीरेति ?, गोयमा ! सत्तविह जहा बउसो, एवं जाव परिहारविसुद्धीए, सुहुमसंपराए पुच्छा, गोयमा ? छव्विह उदीरए वा पंचविह उदीरए वा, छ उदीरेमाणे आउयवेयणिज्जवज्जाओ छ कम्मप्पगडीओ उदीरेइ पंच उदीरेमाणे आउयवेयणिज्जमोहणिज्जवज्जाओ पंच कम्मप्पगडीओ उदीरेइ, अहक्खायसंजए पुच्छा, गोयमा ! पंचविह उदीरए वा दुविह उदीरए वा अणुदीरए वा, पंच उदीरेमाणे आउय०सेसं जहा नियंठस्स २३ ॥ (सूत्रं ७९४) सामाइयसंजए णं भंते ! सामाइयसंजयत्तं जहमाणे किं जहति किं उवसंपज्जति ?, गोयमा ! सामाइयसंजयत्तं जहति छेदोवट्ठावणियसंजयं वा सुहुमसंपरागसंजयं वा असंजमं वा संजमासंजमं वा उवसंपज्जति, छेओवट्ठावणिए पुच्छा, गोयमा ! छेओवट्ठावणियसंजयत्तं जहति सामाइयसंज० परिहारवि० सुहुमसं० असंज० संजमासंजमं वा उव०, परिहारविसुद्धिए पुच्छा, गोयमा ! परिहारविसुद्धियसंजयत्तं जहति छेदोवट्ठावणियसंजयं वा असंजमं वा उपसंपज्जति, सुहुमसंपराए पुच्छा, गोयमा ! सुहुमसंपरायसंजयत्तं जहति सामाइयसंजयं वा छेओवट्ठावणियसंजयं वा अहक्खायसंजयं वा असंजमं वा उवसंपज्जइ, अहक्खायसंजए णं पुच्छा, गोयमा ! अहक्खायसंजयत्तं जहति सुहुमसंपरागसंजयं वा असंजमं वा सिद्धिगतिं वा उवसंपज्जति २४ ॥ (सूत्रं ७९५) सामाइयसंजए णं भंते ! किं सन्नोवउत्ते हो० नोसन्नोवउत्ते होज्जा ?, गोयमा ! सन्नोवउत्ते जहा बउसो, एवं जाव परिहारविसुद्धिए, सुहुमसंपराए अहक्खाए य जहा पुलाए २५ ॥ सामाइयसंजए णं भंते ! किं आहारए होज्जा अणाहारए होज्जा जहा पुलाए, एवं जाव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संयत, तस्य स्वरुपम्, सामायिकसंयत आदि पञ्च-भेदा:, संयतस्य विविध-वक्तव्यता

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [७९३-७९६]

दीप अनुक्रम [..९४८-९५१]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥९१५॥

२५ शतके उद्देशः ७ सामायिकादि संयताः

सुहुमसंपराए, अहक्खायसंजए जहा सिणाए २६ ॥ सामाइयसंजए णं भंते ! कति भवग्गहणाइं होज्जा ?, गोयमा ! जह० एक्कं समयं उक्कोसेणं अट्ठ, एवं छेदोवट्ठावणिएवि, परिहारविसुद्धिए पुच्छा, गोयमा ! जह० एक्कं समयं उक्कोसेणं तिन्नि, एवं जाव अहक्खाए २७ ॥ (सूत्रं ७९६)

'सुहुमसंपराए' इत्यादौ 'आउयमोहणिज्जवज्जाओ छ कम्मप्पगडीओ बंधइ'त्ति सूक्ष्मसम्परायसंयतो ह्यायुर्न बध्नाति अप्रमत्तान्तत्वात्तद्बन्धस्य, मोहनीयं च बादरकषायोदयाभावान्न बध्नातीति तद्वर्जाः षट् कर्म्मप्रकृतीर्बध्नातीति ॥ वेदद्वारे– 'अहक्खाये'त्यादौ 'सत्तविहवेयए वा चउव्विहवेयए व'त्ति यथाख्यातसंयतो निर्ग्रन्थावस्थायां 'मोहवज्ज'त्ति मोहवर्जानां सप्तानां कर्म्मप्रकृतीनां वेदको, मोहनीयस्योपशान्तत्वात् क्षीणत्वाद्वा, स्नातकावस्थायां तु चतसृणामेव, घातिकर्म्मप्रकृतीनां तस्य क्षीणत्वात् ॥ उपसम्पद्धानद्वारे–'सामाइयसंजए ण'मित्यादि, सामायिकसंयतः सामायिकसंयतत्वं त्यजति छेदोपस्थापनीयसंयतत्वं प्रतिपद्यते, चतुर्यामधर्म्मात्पञ्चयामधर्म्मसङ्क्रमे पार्श्वनाथशिष्यवत्, शिष्यको वा महाव्रतारोपणे, सूक्ष्मसम्परायसंयतत्वं वा प्रतिपद्यते श्रेणिप्रतिपत्तितः असंयमादिर्वा भवेद्भावप्रतिपातादिति । तथा छेदोपस्थापनीयसंयतश्छेदोपस्थापनीयसंयतत्वं त्यजन् सामायिकसंयतत्वं प्रतिपद्यते, यथाऽऽदिदेवतीर्थसाधुः अजितस्वामितीर्थं प्रतिपद्यमानः, परिहारविशुद्धिकसंयतत्वं वा प्रतिपद्यते, छेदोपस्थापनीयवत एव परिहारविशुद्धिसंयमस्य योग्यत्वादिति । तथा परिहारविशुद्धिकसंयतः परिहारविशुद्धिकसंयतत्वं त्यजन् छेदोपस्थापनीयसंयतत्वं प्रतिपद्यते पुनर्गच्छाद्याश्रयणात् असंयमं वा प्रतिपद्यते देवत्वोत्पत्ताविति । तथा सूक्ष्मसम्परायसंयतः सूक्ष्मसम्परायसंयतत्वं श्रेणीप्रतिपातेन त्यजन् सामायिकसंयतत्वं

॥९१५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संयत, तस्य स्वरुपम्, सामायिकसंयत आदि पञ्च-भेदाः, संयतस्य विविध-वक्तव्यता

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [७९३-७९६]

दीप अनुक्रम [..९४८-९५१]

प्रतिपद्यते यदि पूर्वं सामायिकसंयतो भवेत् छेदोपस्थापनीयसंयतत्वं वा प्रतिपद्यते यदि पूर्वं छेदोपस्थापनीयसंयतो भवेत्, यथाख्यातसंयतत्वं वा प्रतिपद्यते श्रेणीसमारोहणत इति, तथा यथाख्यातसंयतो यथाख्यातसंयतत्वं त्यजन् श्रेणिप्रतिपतनात् सूक्ष्मसम्परायसंयतत्वं प्रतिपद्यते असंयमं वा प्रतिपद्यते, उपशान्तमोहत्वे मरणात् देवोत्पत्तौ, सिद्धिगतिं वोपसम्पद्यते स्नातकत्वे सतीति ॥ आकर्षद्वारे—

सामाइयसंजयस्स णं भंते ! एगभवग्गहणिया केवतिया आगरिसा प०, गोयमा ! जहन्नेणं जहा बउसस्स, छेदोवट्ठावणियस्स पुच्छा, गोयमा ! जहन्नेणं एक्कं उक्कोसेणं वीसपुहुत्तं, परिहारविसुद्धियस्स पुच्छा, गोयमा ! जहन्नेणं एक्कं उक्कोसेणं तिन्नि, सुहुमसंपरायस्स पुच्छा, गोयमा ! जहन्नेणं एक्कं उक्कोसेणं चत्तारि, अहक्खायस्स पुच्छा, गोयमा ! जहन्नेणं एक्कं उक्कोसेणं दोन्नि । सामाइयसंजयस्स णं भंते ! णाणाभवग्गहणिया केवतिया आगरिसा प० ?, गोयमा ! जहा बउसे, छेदोवट्ठावणियस्स पुच्छा, गोयमा ! जहन्नेणं दोन्नि उक्कोसेणं उवरिं नवण्हं सयाणं अंतो सहस्सस्स, परिहारविसुद्धियस्स जहन्नेणं दोन्नि उक्कोसेणं सत्त, सुहुमसंपरागस्स जहन्नेणं दोन्नि उक्कोसेणं नव, अहक्खायस्स जहन्नेणं दोन्नि उक्कोसेणं पंच ॥ (सूत्रं ७९७)

‘छेदोवट्ठावणीयस्से’त्यादौ ‘वीसपुहुत्तं’ति छेदोपस्थापनीयस्योत्कर्षतो विंशतिपृथक्त्वं पञ्चषादिविंशतयः आकर्षाणां भवन्ति ‘परिहारविसुद्धियस्से’त्यादौ ‘उक्कोसेणं तिन्नि’त्ति परिहारविसुद्धिकसंयतत्वं त्रीन् वारान् एकत्र भवे उत्कर्षतः प्रतिपद्यते, ‘सुहुमसंपरायस्से’त्यादौ ‘उक्कोसेणं चत्तारि’त्ति एकत्र भवे उपशमश्रेणीद्वयसम्भवेन प्रत्येकं सङ्क्लिश्यमान-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संयत, तस्य स्वरुपम्, सामायिकसंयत आदि पञ्च-भेदा:, संयतस्य विविध-वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [७९७]

दीप अनुक्रम [९५२]

विशुद्ध्यमानलक्षणसूक्ष्मसम्परायद्वयभावाच्चतस्रः प्रतिपत्तयः सूक्ष्मसम्परायसंयतत्वे भवन्ति, 'अहक्खाए' इत्यादौ 'उक्कोसेणं दोन्नि'त्ति उपशमश्रेणीद्वयसम्भवादिति। नानाभवग्रहणाकर्षाधिकारे 'छेओवट्ठावणीयस्से'त्यादौ 'उक्कोसेणं उवरिं नवण्हं सयाणं अंतोसहस्स'त्ति, कथं ?, किलैकत्र भवग्रहणे षड्विंशतय आकर्षाणां भवन्ति, ताश्चाष्टाभिर्भवैर्गुणिता नव शतानि षष्ठ्यधिकानि भवन्ति, इदं च सम्भवमात्रमाश्रित्य सङ्ख्याविशेषप्रदर्शनमतोऽन्यथाऽपि यथा नव शतान्यधिकानि भवन्ति तथा कार्यं, 'परिहारविसुद्धियस्से'त्यादौ 'उक्कोसेणं सत्त'त्ति, कथम् ?, एकत्र भवे तेषां त्रयाणामुक्तत्वात् भवत्रयस्य च तस्याभिधानादेकत्र भवे त्रयं द्वितीये द्वयं तृतीये द्वयमित्यादिविकल्पतः सप्ताकर्षाः परिहारविशुद्धिकस्येति, 'सुहुमसंपरायस्से'त्यादौ 'उक्कोसेणं नव'त्ति, कथं ?, सूक्ष्मसम्परायस्यैकत्र भवे आकर्षचतुष्कस्योक्तत्वाद्भवत्रयस्य च तस्याभिधानादेकत्र चत्वारो द्वितीयेऽपि चत्वारस्तृतीये चैक इत्येवं नवेति। 'अहक्खाए' इत्यादौ 'उक्कोसेणं पंच'त्ति, कथं ?, यथाख्यातसंयतस्यैकत्र भवे द्वावाकर्षौ द्वितीये च द्वावेकत्र चैक इत्येवं पञ्चेति ॥ कालद्वारे—

सामाइयसंजए णं भंते ! कालओ केवचिरं होइ ?, गोयमा ! जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं देसूणएहिं नवहिं वासेहिं ऊणिया पुव्वकोडी, एवं छेदोवट्ठावणिएवि, परिहारविसुद्धिए जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं देसूणएहिं एकूणतीसाए वासेहिं ऊणिया पुव्वकोडी, सुहुमसंपराए जहा नियंठे, अहक्खाए जहा सामाइयसंजए। ॥९१६॥
सामाइयसंजया णं भंते ! कालओ केवचिरं होइ ?, गोयमा ! सव्वद्धा, छेदोवट्ठावणिएसु पुच्छा, गोयमा ! जहन्नेणं अड्ढाइज्जाइं वाससयाइं उक्को० पन्नासं सागरोवमकोडिसयसहस्साइं, परिहारविसुद्धीए पुच्छा,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संयत, तस्य स्वरुपम्, सामायिकसंयत आदि पञ्च-भेदा:, संयतस्य विविध-वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [७९८]

दीप अनुक्रम [९५३]

गोयमा ! जहन्नेणं देसूणाइं दो वाससयाइं उक्को० देसूणाओ दो पुवकोडीओ, सुहुमसंपरागसंजया णं भंते ! पुच्छा, गोयमा ! जह० एक्कं समयं उक्कोसेणं अंतोमुहुत्तं, अहक्खायसंजया जहा सामाइयसंजया २९ ॥ सामाइयसंजयस्स २णं भंते ! केवतियं कालं अंतरं होइ ?, गोयमा ! जहन्नेणं जहा पुलागस्स एवं जाव अहक्खायसंजयस्स, सामाइयसं० भंते ! पुच्छा, गोयमा ! नत्थि अंतरं, छेदोवट्ठावणिय पुच्छा, गोयमा ! जहन्नेणं तेवट्ठिं वाससहस्साइं उक्कोसेणं अट्ठारस सागरोवमकोडाकाडीओ, परिहारविसुद्धियस्स पुच्छा, गोयमा ! जहन्नेणं चउरासीइं वाससहस्साइं उक्कोसेणं अट्ठारस सागरोवमकोडाकोडीओ, सुहुमसंपरायाणं जहा नियंठाणं, अहक्खायाणं जहा सामाइयसंजयाणं ३० ॥ सामाइयसंजयस्स णं भंते ! कति समुग्घाया पन्नत्ता ?, गोयमा ! छ समुग्घाया पन्नत्ता, तं जहाकसायकुसीलस्स, एवं छेदोवट्ठावणियस्सवि, परिहारविसुद्धियस्स जहा पुलागस्स, सुहुमसंपरागस्स जहा नियंठस्स, अहक्खायस्स जहा सिणायस्स ३१ ॥ सामाइयसंजए णं भंते ! लोगस्स किं संखेज्जइभागे होज्जा असंखेज्जइभागे पुच्छा, गोयमा ! नो संखेज्जइ जहा पुलाए, एवं जाव सुहुमसंपराए । अहक्खायसंजए जहा सिणाए ३२ ॥ सामाइयसंजए णं भंते ! लोगस्स किं संखेज्जइभागं फुसइ जहेव होज्जा तहेव फुसइ ३३ ॥ सामाइयसंजए णं भंते ! कयरंमि भावे होज्जा ?, गोयमा ! उवसमिए भावे होज्जा, एवं जाव सुहुमसंपराए, अहक्खायसंपराए पुच्छा, गोयमा ! उवसमिए वा खइए वा भावे होज्जा ३४ । सामाइयसंजयाणं भंते ! एगसमएणं केवतिया होज्जा ?, गोयमा ! पडिवज्जमाणए य पडुच्च जहा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संयत, तस्य स्वरुपम्, सामायिकसंयत आदि पञ्च-भेदा:, संयतस्य विविध-वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [७९८]

दीप अनुक्रम [९५३]

कसायकुसीला तहेव निरवसेसं, छेदोवट्ठावणिया पुच्छा, गोयमा ! पडिवज्जमाणए पडुच्च सिय अत्थि सिय नत्थि, जइ अत्थि जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं सयपुहुत्तं, पुव्वपडिवन्नए पडुच्च सिय अत्थि सिय नत्थि, जइ अत्थि जहन्नेणं कोडिसयपुहुत्तं उक्कोसेणवि कोडिसयपुहुत्तं, परिहारविसुद्धिया जहा पुलागा, सुहुमसंपराया जहा नियंठा, अहक्खायसंजयाणं पुच्छा, गोयमा ! पडिवज्जमाणए पडुच्च सिय अत्थि सिय नत्थि, जइ अत्थि जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं बावट्ठसयं अट्ठुत्तरसयं खवगाणं चउप्पन्नं उवसामगाणं, पुव्वपडिवन्नए पडुच्च जहन्नेणं कोडिपुहुत्तं उक्कोसेणवि कोडिपुहुत्तं ॥ एएसि णं भंते ! सामाइयछेओवट्ठावणियपरिहारविसुद्धियसुहुमसंपरायअहक्खायसंजयाणं कयरे २ जाव विसेसाहिया ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा सुहुमसंपरायसंजया परिहारविसुद्धियसंजया संखेज्जगुणा अहक्खायसंजया संखे० छेओवट्ठावणियसंजया संखे० सामाइयसंजया संखेज्जगुणा ३६ ॥ (सूत्रं ७९८)

'सामाइय' इत्यादौ सामायिकप्रतिपत्तिसमयसमनन्तरमेव मरणादेकः समयः, 'उक्कोसेणं देसूणएहिं नवहिं वासेहिं ऊणिया पुव्वकोडी'त्ति यदुक्तं तद्गर्भसमयादारभ्यावसेयम्, अन्यथा जन्मदिनापेक्षयाऽष्टवर्षोनिकैव सा भवतीति, 'परिहारविसुद्धिए जहन्नेणं एक्कं समयं'ति मरणापेक्षमेतत्, 'उक्कोसेणं देसूणएहिं'ति, अस्यायमर्थः–देशोननववर्षजन्मपर्यायेण केनापि पूर्वकोट्यायुषा प्रव्रज्या प्रतिपन्ना, तस्य च विंशतिवर्षप्रव्रज्यापर्यायस्य दृष्टिवादोऽनुज्ञातस्ततश्चासौ परिहारविशुद्धिकं प्रतिपन्नः, तच्चाष्टादशमासमानमप्यविच्छिन्नतत्परिणामेन तेनाजन्म पालितमित्येवमेकोनत्रिंशद्वर्षोनां पूर्वकोटिं ॥९१७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संयत, तस्य स्वरुपम्, सामायिकसंयत आदि पञ्च-भेदा:, संयतस्य विविध-वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [७९८]

दीप अनुक्रम [९५३]

यावत्तत्स्यादिति, 'अहक्खाए जहा सामाइयसंजए'त्ति तत्र जघन्यत एकं समयं उपशमावस्थायां मरणात्, उत्कर्षतो देशोना पूर्वकोटी, स्नातकयथाख्यातापेक्षयेति। पृथक्त्वेन कालचिन्तायां 'छेओवट्ठावणिए' इत्यादि, तत्रोत्सर्प्पिण्यामादितीर्थकरस्य तीर्थं यावच्छेदोपस्थापनीयं भवतीति, तीर्थं च तस्य सार्द्धे द्वे वर्षशते भवतीत्यत उक्तं—'अड्ढाइज्जाइं' इत्यादि, तथाऽवसर्प्पिण्यामादितीर्थकरस्य तीर्थं यावच्छेदोपस्थापनीयं प्रवर्त्तते तच्च पञ्चाशत्सागरोपमकोटीलक्षा इत्यतः 'उक्कोसेणं पन्नास'मित्याद्युक्तमिति। परिहारविशुद्धिककालो जघन्येन 'देसूणाइं दो वाससयाइं'ति, कथम् ?, उत्सर्प्पिण्यामाद्यस्य जिनस्य समीपे कश्चिद्वर्षशतायुः परिहारविशुद्धिकं प्रतिपन्नस्तस्यान्तिके तज्जीवितान्तेऽन्यो वर्षशतायुरेव ततः परतो न तस्य प्रतिपत्तिरस्तीत्येवं द्वे वर्षशते, तयोश्च प्रत्येकमेकोनत्रिंशति वर्षेषु गतेषु तत्प्रतिपत्तिरित्येवमष्टपञ्चाशता वर्षैर्न्यूने ते इति देशोने इत्युक्तं, एतच्च टीकाकारव्याख्यानं, चूर्णिकारव्याख्यानमप्येवमेव, किन्त्ववसर्प्पिण्यन्तिमजिनापेक्षमिति विशेषः, 'उक्कोसेणं देसूणाओ दो पुव्वकोडीओ'त्ति, कथम् ?, अवसर्प्पिण्यामादितीर्थकरस्यान्तिके पूर्वकोट्यायुः कश्चित्परिहारविशुद्धिकं प्रतिपन्नस्तस्यान्तिके तज्जीवितान्तेऽन्यस्तादृश एव तत्प्रतिपन्न इत्येवं पूर्वकोटीद्वयं तथैव देशोनं परिहारविशुद्धिकसंयतत्वं स्यादिति ॥ अन्तरद्वारे—'छेओवट्ठावणिए'त्यादौ 'जहन्नेणं तेवट्ठिं वाससहस्साइं'ति, कथम् ?, अवसर्प्पिण्यां दुष्षमां यावच्छेदोपस्थापनीयं प्रवर्त्तते ततस्तस्या एवैकविंशतिवर्षसहस्रमानायामेकान्तदुष्षमायामुत्सर्प्पिण्याश्चैकान्तदुष्षमायां च तत्प्रमाणायामेव तदभावः स्यात् एवं चैकविंशतिवर्षसहस्रमानत्रयेण त्रिषष्टिवर्षसहस्राणामन्तरमिति, 'उक्कोसेणं अट्ठारस सागरोवमकोडाकोडीओ'त्ति किलोत्सर्प्पिण्यां चतुर्विंशतितमजिनतीर्थे छेदोपस्थापनीयं प्रवर्त्तते

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संयत, तस्य स्वरुपम्, सामायिकसंयत आदि पञ्च-भेदाः, संयतस्य विविध-वक्तव्यता

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [७९८]

दीप अनुक्रम [९५३]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः२ ॥९१८॥

२५ शतके उद्देशः ७ सामायिकादिसंयताः

ततश्च सुषमदुष्षमादिसमात्रये क्रमेण द्वित्रिचतुःसागरोपमकोटीकोटीप्रमाणे अतीते अवसर्प्पिण्याश्चैकान्तसुषमादित्रये क्रमेण चतुस्त्रिद्विसागरोपमकोटीरप्रमाणे अतीतप्राये प्रथमजिनतीर्थे छेदोपस्थापनीयं प्रवर्त्तत इत्येवं यथोक्तं छेदोपस्थापनीयस्यान्तरं भवति, यच्चेह किञ्चिन्न पूर्यते यच्च पूर्वसूत्रेऽतिरिच्यते तदल्पत्वान्न विवक्षितमि त, 'परिहारविसुद्धियस्से'-त्यादि, परिहारविशुद्धिकसंयतस्यान्तरं जघन्यं चतुरशीतिवर्षसहस्राणि, कथम् ?, अवसर्प्पिण्या दुष्षमैकान्तदुष्षमयोरुत्सर्प्पिण्याश्चैकान्तदुष्षमादुष्षमयोः प्रत्येकमेकविंशतिवर्षसहस्रप्रमाणत्वेन चतुरशीतिर्वर्षसहस्राणां भवति तत्र च परिहारविशुद्धिकं न भवतीतिकृत्वा जघन्यमन्तरं तस्य यथोक्तं स्यात्, यश्चेहान्तिमजिनानन्तरो दुष्षमायां परिहारविशुद्धिककालो यश्चोत्सर्प्पिण्यास्तृतीयसमायां परिहारविशुद्धिकप्रतिपत्तिकालात्पूर्वः कालो नासौ विवक्षितोऽल्पत्वादिति, 'उक्कोसेणं अट्ठारस सागरोवमकोडाकोडीओ'त्ति छेदोपस्थापनीयोत्कृष्टान्तरवदस्य भावना कार्येति ॥ परिणामद्वारे 'छेदोवट्ठावणिये' इत्यादौ 'जहन्नेणं कोडिसयपुहुत्तं उक्कोसेणवि कोडिसयपुहुत्तं'त्ति, इहोत्कृष्टं छेदोपस्थापनीयसंयतपरिमाणमादितीर्थकरतीर्थान्याश्रित्य संभवति, जघन्यं तु तत्सम्यग् नावगम्यते, यतो दुष्षमान्ते भरतादिषु दशसु क्षेत्रेषु प्रत्येकं तद्द्वयस्य भावाद्विंशतिरेव तेषां श्रूयते, केचित्पुनराहुः—इदंमप्यादितीर्थकराणां यत्तीर्थकालस्तदपेक्षयैव समवसेयं, कोटीशतपृथक्त्वं च जघन्यमल्पतरमुत्कृष्टं च बहुतरमिति ॥ अल्पबहुत्वद्वारे–'सव्वत्थोवा सुहुमसंपरायसंजय'त्ति स्तोकत्वात्तत्कालस्य निर्ग्रन्थतुल्यत्वेन च शतपृथक्त्वप्रमाणत्वात्तेषां, 'परिहारविसुद्धियसंजया संखेज्जगुण'त्ति तत्कालस्य बहुत्वात् पुलाकतुल्यत्वेन च सहस्रपृथक्त्वमानत्वात्तेषाम्, 'अहक्खायसंजया संखेज्जगुण'त्ति कोटीपृथक्त्व- ॥९१८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संयत, तस्य स्वरुपम्, सामायिकसंयत आदि पञ्च-भेदा:, संयतस्य विविध-वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [७९८]

दीप अनुक्रम [९५३]

मानत्वात्तेषां, 'छेदोवट्ठावणियसंजया संखेज्जगुण'त्ति कोटीशतपृथक्त्वमानतया तेषामुक्तत्वात्, 'सामाइयसंजया संखेज्जगुण'त्ति कषायकुशीलतुल्यतया कोटीसहस्रपृथक्त्वमानत्वेनोक्तत्वात्तेषामिति ॥ अनन्तरं संयता उक्तास्तेषां च केचित्प्रतिसेवावन्तो भवन्तीति प्रतिसेवाभेदान् प्रतिसेवा च निर्दोषमालोचयितव्येति आलोचनादोषान् आलोचनासम्बन्धादालोचकगुणान् गुरुगुणांश्च दर्शयन्नाह—

पडिसेवण दोसालोयणा य आलोयणारिहे चेव । तत्तो सामायारी पायच्छित्ते तवे चेव ॥ १ ॥ कइविहा णं भंते ! पडिसेवणा पन्नत्ता ?, गोयमा ! दसविहा पडिसेवणा पं०, तं०—द्प्प १ प्पमाद २ ऽणाभोगे ३, आउरे ४ आवती ५ ति य । संकिन्ने ६ सहसक्कारे, ७ भय ८ प्पओसा ९ य वीमंसा १० ॥ १ ॥ दस आलोयणादोसा पन्नत्ता, तंजहा—आकंपइत्ता १ अणुमाणइत्ता २ जं दिट्ठं ३ बायरं च ४ सुहुमं वा ५ । छन्नं ६ सद्दाउलयं ७ बहुजण ८ अव्वत्त ९ तस्सेवी १० ॥ २ ॥ दसहिं ठाणेहिं संपन्ने अणगारे अरिहति अत्तदोसं आलोइत्तए, तंजहा—जातिसंपन्ने १ कुलसंपन्ने २ विणयसंपन्ने ३ णाणसंपन्ने ४ दंसणसंपन्ने ५ चरित्तसंपन्ने ६ खंते ७ दंते ८ अमायी ९ अपच्छाणुतावी १० । अट्ठहिं ठाणेहिं संपन्ने अणगारे अरिहति आलोयणं पडिच्छित्तए, तंजहा—आयारवं १ आहारवं २ ववहारवं ३ उव्वीलए ४ पकुव्वए ५ अपरिस्सावी ६ निज्जवए ७ अवायदंसी ८ ॥ (सूत्रं ७९९)

'दसविहे'त्यादि, 'दप्पप्पमायऽणाभोगे'त्ति, इह सप्तमी प्रत्येकं दृश्या, तेन दर्पे सति प्रतिसेवा भवति, दर्पश्च—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७९९] + गाथा:

दीप अनुक्रम [९५४-९५९]

वल्गनादिः, तथा प्रमादे सति, प्रमादश्च मद्यविकथादिः, तथाऽनाभोगे सति, अनाभोगश्चाज्ञानम्, 'आतुरे'त्ति आतुरत्वे सति, आतुरश्च बुभुक्षापिपासादिवाधितः, 'आवईय'त्ति आपदि सत्यां, आपच्च द्रव्यादिभेदेन चतुर्विधा, तत्र द्रव्यापत् प्रासुकादिद्रव्यालाभः, क्षेत्रापत् कान्तारक्षेत्रपतितत्वं, कालापत् दुर्भिक्षकालप्राप्तिः, भावापद् ग्लानत्वमिति, 'संकिण्णे'त्ति सङ्कीर्णे स्वपक्षपरपक्षव्याकुले क्षेत्रे सति, 'संकिय'त्ति क्वचित्पाठस्तत्र च शङ्किते–आधाकर्म्मादित्वेन शङ्कितभक्तादिविषये, निशीथपाठे तु 'तिंतिण' इत्यभिधीयते, तत्र च तिन्तिणत्वे सति, तच्चाहाराद्यलाभे सखेदं वचनं, 'सहसक्कारे'त्ति सहसाकारे सति–आकस्मिकक्रियायां, तथा च—"पुंविं अपासिऊणं पाए छूढंमि जं पुणो पासे। न तरइ नियत्तेउं पायं सहसाकरणमेयं ॥ १ ॥" इति, 'भयप्पओसा य'त्ति भयात्–सिंहादिभयेन प्रतिसेवा भवति, तथा प्रद्वेषाच्च, प्रद्वेषश्च–क्रोधादिः, 'वीमंस'त्ति विमर्शात्–शिक्षकादिपरीक्षणादिति, एवं कारणभेदेन दश प्रतिसेवाभेदा भवन्ति ॥ 'आकंपइत्ता'गाहा, आकम्प्य–आवर्जितः सन्नाचार्यः स्तोकं प्रायश्चित्तं मे दास्यतीतिबुद्ध्याऽऽलोचनाऽऽचार्यं वैयावृत्त्यकरणादिनाऽऽवर्ज्य यदालोचनमसावालोचनादोषः 'अणुमाणइत्त'त्ति अनुमान्य–अनुमानं कृत्वा लघुतरापराधनिवेदनेन मृदुदण्डादित्वमाचार्यस्याकालय्य यदालोचनमसौ तद्दोषः, एवं 'जं दिट्ठं'त्ति यदाचार्यादिना दृष्टमपराधजातं तदेवालोचयति 'बायरं व'त्ति बादरमेवातिचारजातमालोचयति न सूक्ष्मं तत्रावज्ञापरत्वात्, 'सुहुमं व'त्ति सूक्ष्ममेवातिचारजातमालोचयति, यः किल सूक्ष्मं तदालोचयति स कथं बादरं तन्नालोचयतीत्येवंरूपभावसम्पादनायाऽऽचार्यस्येति, 'छन्नं'ति छन्न–

१ पूर्वमदृष्ट्वा पादे त्यक्ते (प्रसारिते) यत्पुनः पश्यति न च पादं निवर्त्तयितुं शक्नोति एतत्सहसाकरणम् ॥ १ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रतिच्छन्नं प्रच्छन्नं–अतिलज्जालुतयाऽव्यक्तवचनं यथा भवति, एवमालोचयति यथाऽऽत्मनैव शृणोति, 'सद्दाउलयं'ति शब्दाकुलं–बृहच्छब्दं यथा भवत्येवमालोचयति, अगीतार्थान् श्रावयन्नित्यर्थः, 'बहुजण'त्ति बहवो जना–आलोचनागुरवो यत्रालोचने तद्बहुजनं यथा भवत्येवमालोचयति, एकस्याप्यपराधस्य बहुभ्यो निवेदनमित्यर्थः, 'अवत्त'त्ति अव्यक्तः— अगीतार्थस्तस्मै आचार्याय यदालोचनं तदप्यव्यक्तमित्युच्यते, 'तस्सेवि'त्ति यमपराधमालोचयिष्यति तमेवासेवते यो गुरुः स तत्सेवी तस्मै यदालोचनं तदपि तत्सेवीति, यतः समानशीलाय गुरवे सुखेनैव विवक्षितापराधो निवेदयितुं शक्यत इति तत्सेविने निवेदयतीति ॥ 'जाइसंपन्ने' इत्यादि, नन्वेतावान् गुणसमुदाय आलोचकस्य कस्मादन्विष्यते ? इति, उच्यते, जातिसम्पन्नः प्रायोऽकृत्यं न करोत्येव कृतं च सम्यगालोचयतीति, कुलसम्पन्नोऽङ्गीकृतप्रायश्चित्तस्य वोढा भवति, विनयसम्पन्नो वन्दनादिकाया आलोचनासामाचार्याः प्रयोक्ता भवतीति, ज्ञानसम्पन्नः कृत्याकृत्यविभागं जानाति, दर्शनसम्पन्नः प्रायश्चित्ताच्छुद्धिं श्रद्धत्ते, चारित्रसम्पन्नः प्रायश्चित्तमङ्गीकरोति, क्षान्तो–गुरुभिरुपालम्भितो न कुप्यति, दान्तो—दान्तेन्द्रियतया शुद्धिं सम्यग् वहति, अमायी–अगोपयन्नपराधमालोचयति, अपश्चात्तापी आलोचितेऽपराधे पश्चात्तापमकुर्वन्निर्जराभागी भवतीति ॥ 'आयारव' मित्यादि, तत्र 'आचारवान्' ज्ञानादिपञ्चप्रकाराचारयुक्तः 'आहा-रवं'ति आलोचितापराधानामवधारणावान् 'ववहारवं'ति आगमश्रुतादिपञ्चप्रकारव्यवहाराणामन्यतमयुक्तः 'उव्वीलए'त्ति अपव्रीडकः–लज्जयाऽतीचारान् गोपायन्तं विचित्रवचनैर्विलज्जीकृत्य सम्यगालोचनां कारयतीत्यर्थः 'पकुव्वए'त्ति आलो-चितेष्वपराधेषु प्रायश्चित्तदानतो विशुद्धिं कारयितुं समर्थः 'अपरिस्सावि'त्ति आलोचकेनालोचितान् दोषान् योऽन्यस्मै

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७९९--८०१] + गाथा: दीप अनुक्रम [९५४--९६२]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥९२०॥

न कथयत्यसावपरिश्रावी 'निज्जवए'त्ति 'निर्य्यापकः' असमर्थस्य प्रायश्चित्तिनः प्रायश्चित्तस्य खण्डशः करणेन निर्वाहकः 'अवायदंसि'त्ति आलोचनाया अदाने पारलौकिकापायदर्शनशील इति ॥ अनन्तरमालोचनाचार्य उक्तः, स च सामाचार्याः प्रवर्त्तको भवतीति तां प्रदर्शयन्नाह—

दसविहा सामायारी पं० तं०—इच्छा १ मिच्छा २ तहक्कारे ३, आवस्सिया य ४ निसीहिया ५। आपुच्छणा य ६ पडिपुच्छा ७, छंदणा य ८ निमंतणा ९ ॥ १॥ उवसंपया १० य काले, सामायारी भवे दसहा ॥ (सूत्रं ८००) दसविहे पायच्छित्ते पं० तं०–आलोयणारिहे पडिक्कमणारिहे तदुभयारिहे विवेगारिहे विउसग्गारिहे तवारिहे छेदारिहे मूलारिहे अणवट्ठप्पारिहे पारंचियारिहे। (सूत्रं ८०१)

'दसविहा सामायारी'त्यादि, प्रतीता चेयं, नवरमापृच्छा–कार्ये प्रश्न इति, प्रतिपृच्छा तु पूर्वनिषिद्धे कार्य एव, तथा छन्दना–पूर्वगृहीतेन भक्तादिना निमन्त्रणा त्वगृहीतेन, उपसम्पच्च–ज्ञानादिनिमित्तमाचार्यान्तराश्रयणमिति ॥ अथ सामाचारीविशेषत्वात्प्रायश्चित्तस्य तदभिधातुमाह—'दसविहे'त्यादि, इह प्रायश्चित्तशब्दोऽपराधे तच्छुद्धौ च दृश्यते तदिहापराधे दृश्यः, तत्र 'आलोयणारिहे'त्ति आलोचना–निवेदना तल्लक्षणां शुद्धिं यदर्हत्यतिचारजातं तदालोचनार्हं, एवमन्यान्यपि, केवलं प्रतिक्रमणं–मिथ्यादुष्कृतं तदुभयं आलोचनामिथ्यादुष्कृते, विवेकः–अशुद्धभक्तादित्यागः, व्युत्सर्गः–कायोत्सर्गः तपो–निर्विकृतिकादि, छेदः–प्रव्रज्यापर्यायह्रस्वीकरणं मूलं–महाव्रतारोपणं अनवस्थाप्यं–कृततपसो व्रतारोपणं पाराञ्चिकं–लिङ्गादिभेदमिति ॥ प्रायश्चित्तं च तप उक्तं, अथ तप एव भेदत आह—

२५ शतके उद्देशः ७ सामाचार्यः प्रायश्चित्तानि सू८००-८०१

॥९२०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सामाचारी, तस्य अर्थ, भेदा:

प्रत सूत्रांक [८०२--८०४] + गाथा:

दीप अनुक्रम [९६३--९६९]

दुविहे तवे पन्नत्ते, तंजहा—बाहिरिए य अब्भिंतरए य, से किं तं बाहिरए तवे ?, बाहिरए तवे छव्विहे प०, तं०—अणसण ऊणोयरिया भिक्खायरिया य रसपरिचाओ। कायकिलेसो पडिसंलीणया बज्झो (तवो होइ) ॥ १ ॥ से किं तं अणसणे ?, अ० २ दुविहे पं०, तं०—इत्तरिए य आवकहिए य, से किं तं इत्तरिए ?, २ अणेगविहे पन्नत्ते, तंजहा—चउत्थे भत्ते छट्ठे भत्ते अट्ठमे भत्ते दसमे भत्ते दुवालसमे भत्ते चोदसमे भत्ते अद्धमासिए भत्ते मासिए भत्ते दोमासिए भत्ते तेमासिए भत्ते जाव छम्मासिए भत्ते, सेत्तं इत्तरिए। से किं तं आवकहिए ?, आवक० २ दुविहे पं०, तं०—पाओवगमणे य भत्तपच्चक्खाणे य, से किं तं पाओवगमणे ?, पा० २ दुविहे० पं०, तं०—नीहारिमे य अणीहारिमे य नियमं अपडिकम्मे, से तं पाओवगमणे, से किं तं भत्तपच्चक्खाणे ?, भत्त० २ दुविहे पं०, तं०—नीहारिमे य अनीहारिमे य नियमं सपडिकम्मे, सेत्तं भत्तपच्चक्खाणे, सेत्तं आवकहिए, सेत्तं अणसणे। से किं तं ओमोयरिया ?, ओमोयरिया दुविहा पं०, तं०—दव्वोमोयरिया य भावोमोयरिया य, से किं तं दव्वोमोयरिया ?, २ दुविहा प०, तं०—उवगरणदव्वोमोयरिया य भत्तपाणदव्वोमोयरिया य, से किं तं उवगरणदव्वोमोयरिया ?, २ एगे वत्थे एगे पादे चियत्तोवगरणसातिज्जणया, सेत्तं उवकरणदव्वोमोय०, से किं तं भत्तपाणदव्वोमोयरिया ?, अट्ठकुक्कुडिअंडगप्पमाणमेत्ते कवले आहारं आहारेमाणस्स अप्पाहारे दुवालस जहा सत्तमसए पढमोद्देसए जाव नो पकामरसभोतीति वत्तव्वं सिया, सेत्तं भत्तपाणदव्वोमोयरिया, सेत्तं दव्वोमोयरिया, से किं तं भावोमोयरिया ?, भावो० २ अणेगविहा पं०,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तप:, तस्य अर्थ, तस्य भेद-प्रभेदा:,

प्रत सूत्रांक [८०२-८०४] + गाथा:

दीप अनुक्रम [९६३-९६९]

तं०-अप्पकोहे जाव अप्पलोभे अप्पसद्दे अप्पझञ्झे अप्पतुमंतुमे, सेत्तं भावोमोदरिया, सेत्तं ओमोयरिया। से किं तं भिक्खा० ?, भि० २ अणेगविहा प०, तं—दव्वाभिग्गहचरए जहा उववाइए जाव सुद्धेसणिए संखादत्तिए, सेत्तं भिक्खायरिया। से किं तं रसपरिच्चाए ?, र० २ अणेगविहे पं०, तं०-निव्विगितिए पणीयरसविवज्जए जहा उववाइए जाव लूहाहारे, सेत्तं रसपरिच्चाए। से किं तं कायकिलेसे ?, कायकिलेसे अणेगविहे पं० तं०-ठाणादीए उक्कुडुयासणिए जहा उववाइए जाव सव्वगायपडिकम्मविप्पमुक्के, सेत्तं कायकिलेसे। से किं तं पडिसंलीणया ?, पडिसंलीणया चउव्विहा पं०, तं०-इंदियपडिसंलीणया कसायपडिसंलीणया जोगपडिसंलीणया विवित्तसयणासणसेवणया। से किं तं इंदियपडिसंलीणया ?, २ पंचविहा पं०, तं०-सोइंदियविसयप्पयारणिरोहो वा सोइंदियविसयप्पत्तेसु वा अत्थेसु रागदोसविणिग्गहो चक्खिंदियविसय एवं जाव फासिंदियविसयपयारणिरोहो वा फासिंदियविसयप्पत्तेसु वा अत्थेसु रागदोसविणिग्गहो, सेत्तं इंदियपडिसंलीणया, से किं तं कसायपडिसंलीणया ?, कसायपडिसंलीणया चउव्विहा पं०, तंजहा-कोहोदयनिरोहो वा उदयप्पत्तस्स वा कोहस्स विफलीकरणं एवं जाव लोभोदयनिरोहो वा उदयपत्तस्स वा लोभस्स विफलीकरणं, सेत्तं कसायपडिसंलीणया, से किं तं जोगपडिसंलीणया ?, जोगपडिसंलीणया तिविहा पन्नत्ता, तंजहा-अकुसलमणनिरोहो वा कुसलमणउदीरणं वा मणस्स वा एगत्तीभावकरणं अकुसलवइनिरोहो वा कुसलवइउदीरणं वा वइए वा एगत्तीभावकरणं, से किं तं कायपडिसंलीणया ?, २ जन्नं सुसमाहियपसंतसाहरियपाणिपाए कुम्मो इव ॥९२१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तप:, तस्य अर्थ, तस्य भेद-प्रभेदा:,

<table>
<tr><td>आगम
(०५)</td><td>[भाग-११]“भगवती”– अंगसूत्र-५ (मूलं+वृत्ति:)
शतक [२५], वर्ग्ग [-], अंतर्-शतक [–], उद्देशक [७], मूलं [८०२-८०४] + गाथा:</td></tr>
<tr><td>प्रत
सूत्रांक
[८०२-
-८०४]
+
गाथा:

दीप
अनुक्रम
[९६३-
-९६९]</td><td>पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

गुत्तिंदिए अल्लीणे पल्लीणे चिट्ठति, सेत्तं कायपडिसंलीणया, सेत्तं जोगपडिसंलीणया, से किं तं विवित्तसयणासणसेवणया ?, विवित्तसय० २जन्नं आरामेसु वा उज्जाणेसु वा जहा सोमिलुद्देसए जाव सेज्जासंथारगं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ, सेत्तं विवित्तसयणासणसेवणया, सेत्तं पडिसंलीणया, सेत्तं बाहिरए तवे १ ॥ से किं तं अब्भितरए तवे ?, २ छव्विहे पं०, तं०–पायच्छित्तं विणओ वेयावच्चं तहेव सज्झाओ। झाणं विउसग्गो। से किं तं पायच्छित्ते ?, पाय २ दसविहे पं०, तं०–आलोयणारिहे जाव पारंचियारिहे, सेत्तं पायच्छित्ते । से किं तं विणए ?, विणए सत्तविहे पन्नत्ते, तंजहा–नाणविणए दंसणविणए चरित्तविणए मणविणए वयविणए कायविणए लोगोवयारविणए, से किं तं नाणविणए ?, ना० २ पंचविहे प०, तं०–आभिणिबोहियनाणविणए जाव केवलनाणविणए, सेत्तं नाणविणए, से किं तं दंसणविणए ?, दंसणविणए दुविहे० प०, तं०–सुस्सूसणाविणए य अणच्चासादणाविणए य, से किं तं सुस्सूसणाविणए ?, सु० २ अणेगविहे पं०, तं०–सक्कारेइ वा सम्माणेइ वा जहा चोद्दसमसए ततिए उद्देसए जाव पडिसंसाहणया, सेत्तं सुस्सूसणाविणए, से किं तं अणच्चासायणाविणए ?, अ० २ पणयालीसइविहे पं०, तं०–अरिहंताणं अणच्चासादणया अरिहंतपन्नत्तस्स धम्मस्स अणच्चासादणया आयरियाणं अणच्चासादणया उवज्झायाणं अणच्चासादणया थेराणं अणच्चासादणया कुलस्स अणच्चासादणया गणस्स अणच्चासादणया संघस्स अणच्चासादणया किरियाए अणच्चासादणया संभोगस्स अणच्चासायणया आभिणिबोहियनाणस्स अणच्चासायणया जाव केवलनाणस्स अणच्चासादणया

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org</td></tr>
<tr><td></td><td>तप:, तस्य अर्थ, तस्य भेद-प्रभेदा:,</td></tr>
</table>

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

१५, एएसिं चेव भत्तिबहुमाणेणं एएसिं चेव वन्नसंजलणया, सेत्तं अणच्चासायणयाविणए, सेत्तं दंसणविणए, से किं तं चरित्तविणए ?, च २ पंचविहे पं०, तं०–सामाइयचरित्तविणए जाव अहक्खायचरित्तविणए, सेत्तं चरित्तविणए, से किं तं मणविणए ?, म० २ दुविहे पं०, तं०–पसत्थमणविणए अपसत्थमणविणए य, से किं तं पसत्थमणविणए?, पस० २ सत्तविहे प०, तंजहा–अपावए असावज्जे अकिरिए निरुवक्केसे अणण्हवकरे अच्छविकरे अभूयाभिसंकणे, सेत्तं पसत्थमणविणए, से किं तं अपसत्थमणविणए ?, अप्प० २ सत्तविहे पं०, तं–पावए सावज्जे सकिरिए सउवक्केसे अण्हवयकरे छविकरे भूयाभिसंकणे, सेत्तं अप्पसत्थमणविणए, सेत्तं मणविणए, से किं तं वइविणए?, व० २ दुविहे पं० तं०–पसत्थवइविणए अप्पसत्थवइविणए य, से किं तं पसत्थवइविणए?, प० २ सत्तविहे पं०, तं०–अपावए जाव अभूयाभिसंकणे, सेत्तं पसत्थवइविणए, से किं तं अप्पसत्थवइविणए?, अ० २ सत्तविहे पं०, तं०–पावए सावज्जे जाव भूयाभिसंकणे, सेत्तं अपसत्थवयविणए, से तं वयविणए, से किं तं कायवि० ?, २ दुविहे प०, तं०–पसत्थकायविणए य अप्पसत्थकायविणए य, से किं तं पसत्थकायवि० ?, पस० २ सत्तविहे पं० तंजहा–आउत्तं गमणं आउत्तं ठाणं आउत्तं निसीयणं आउत्तं तुयट्टणं आउत्तं उल्लंघणं आउत्तं पल्लंघणं आउत्तं सव्विंदियजोगजुंजणया, सेत्तं पसत्थकायविणए, से किं तं अप्पसत्थकायविणए ?, अ० २ सत्तविहे पन्नत्ते, तंजहा–अणाउत्तं गमणं जाव अणाउत्तं सव्विंदियजोगजुंजणया, सेत्तं अप्पसत्थकायविणए, सेसं कायविणए, से किं तं लोगोवयारविणए ?, लोगो० २ सत्तविहे पं०, तं०–

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तप:, तस्य अर्थ, तस्य भेद-प्रभेदा:,

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [८०२--८०४] + गाथा:

दीप अनुक्रम [९६३--९६९]

अब्भासवत्तियं परच्छंदाणुवत्तियं कज्जहेउं कयपडिकतिया अत्तगवेसणया देसकालण्णया सव्वत्थेसु अप्पडिलोमया, सेत्तं लोगोवयारविणए, सेत्तं विणए। से किं तं वेयावच्चे?, वे० २ दसविहे पं० तं०-आयरियवेयावच्चे उवज्झायवेयावच्चे थेरवेयावच्चे तवस्सीवेया० गिलाणवेया० सेहवेया० कुलवेया० गणवेया० संघवेया० साहम्मियवेयावच्चे, सेत्तं वेयावच्चे। से किं तं सज्झाए?, सज्झाए पंचविहे पन्नत्ते, तं०-वायणा पडिपुच्छणा परियट्टणा अणुप्पेहा धम्मकहा, सेत्तं सज्झाए॥ (सूत्रं ८०२) से किं तं झाणे?, झाणे चउव्विहे पन्नत्ते, तंजहा-अट्टे झाणे रोद्दे झाणे धम्मे झाणे सुक्के झाणे, अट्टे झाणे चउव्विहे पन्नत्ते, तंजहा—अमणुन्नसंपयोगसंपउत्ते तस्स विप्पयोगसतिसमन्नागए यावि भवइ १ मणुन्नसंपओगसंपउत्ते तस्स अविप्पयोगसतिसमन्नागए यावि भवइ २ आयंकसंपयोगसंपउत्ते तस्स विप्पयोगसतिसमन्नागए यावि भवइ ३ परिज्झुसियकामभोगसंपयोगसंपउत्ते तस्स अविप्पयोगसंतिसमन्नागए यावि भवइ ४, अट्टस्स णं झाणस्स चत्तारि लक्खणा पं० तं०—कंदणया सोयणया तिप्पणया परिदेवणया १। रोद्दज्झाणे चउव्विहे पं०, तं०-हिंसाणुबंधी मोसाणुबंधी तेयाणुबंधी सारक्खणाणुबंधी, रोद्दस्स णं झाणस्स चत्तारि लक्खणा पं०, तं०-ओस्सन्नदोसे बहुलदोसे अण्णाणदोसे आमरणांतदोसे २। धम्मे झाणे चउव्विहे चउप्पडोयारे पं०, तं०—आणाविजए अवायविजए विवागविजए संठाणविजए, धम्मस्स णं झाणस्स चत्तारि लक्खणा पं०, तं०-आणारुयी निसग्गरुयी सुत्तरुयी ओगाढरुयी, धम्मस्स णं झाणस्स चत्तारि आलंबणा प० तं—वायणा पडिपुच्छणा परियट्टणा धम्मकहा, धम्मस्स णं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तप:, तस्य अर्थ, तस्य भेद-प्रभेदा:,

आगम (०५)	[भाग-११]“भगवती”– अंगसूत्र-५ (मूलं+वृत्ति:) शतक [२५], वर्ग्ग [-], अंतर्-शतक [–], उद्देशक [७], मूलं [८०२-८०४] + गाथा:
प्रत सूत्रांक [८०२--८०४] + गाथा: दीप अनुक्रम [९६३--९६९]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥९२३॥

झाणस्स चत्तारि अणुप्पेहाओ पं० तं०—एगत्ताणुप्पेहा अणिच्चाणुप्पेहा असरणाणुप्पेहा संसाराणुप्पेहा ३। सुक्के झाणे चउव्विहे चउप्पडोयारे पं० तं०—पुहुत्तवियक्के सवियारी १ एगंतवियक्के अवियारी २ सुहुमकिरिए अनियट्टी ३ समोच्छिन्नकिरिए अप्पडिवायी ४, सुक्कस्स णं झाणस्स चत्तारि लक्खणा पं०, तं०—खंती मुत्ती अज्जवे मद्दवे, सुक्कस्स णं झाणस्स चत्तारि आलंबणा पं० तं०—अव्वहे असंमोहे विवेगे विउसग्गे, सुक्कस्स णं झाणस्स चत्तारि अणुप्पेहाओ पं० तं०—अणंतवत्तियाणुप्पेहा विप्परिणामाणुप्पेहा असुभाणुप्पेहा अवायाणुप्पेहा ४, सेत्तं झाणे ॥ (सूत्रं ८०३) से किं तं विउसग्गे ?, विउसग्गे दुविहे पं०, तं०—दव्वविउसग्गे य भावविउसग्गे य, से किं तं दव्वविउसग्गे ?, दव्वविउसग्गे चउव्विहे पं०, तं०—गणविउसग्गे सरीरविउसग्गे उवहिविउसग्गे भत्तपाणविउसग्गे, सेत्तं दव्वविउसग्गे, से किं तं भावविउसग्गे ?, भावविउसग्गे तिविहे पं०, तं०—कसायविउसग्गो संसारविउसग्गो कम्मविउसग्गो, से किं तं कसायविउसग्गे ?, कसायविउसग्गे चउव्विहे पं०, तंजहा—कोहविउसग्गे माणविउसग्गे मायाविउसग्गे लोभविउसग्गे, सेत्तं कसायविउसग्गे, से किं तं संसारविउसग्गे ?, संसारविउसग्गे चउव्विहे पन्नत्ते, तंजहा—नेरइयसंसारविउसग्गे जाव देवसंसारविउसग्गे, सेत्तं संसारविउसग्गे, से किं तं कम्मविउसग्गे ?, कम्मविउसग्गे अट्ठविहे प०, तंजहा—णाणावरणिज्जकम्मविउसग्गे जाव अंतराइयकम्मविउसग्गे, सेत्तं कम्मविउसग्गे, सेत्तं भावविउसग्गे, सेत्तं अब्भिंतरिए तवे। सेवं भंते २ त्ति (सूत्रं ८०४) ॥ पंचविंसतितमसए सत्तमो उद्देसओ समत्तो ॥ २५–७ ॥

२५ शतके उद्देशः ७ ध्यानानि व्युत्सर्गः सू ८०३-८०४

॥९२३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तप:, तस्य अर्थ, तस्य भेद-प्रभेदा:,

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [८०२--८०४] + गाथा:

दीप अनुक्रम [९६३--९६९]

‘दुविहे’त्यादि, ‘बाहिरिए य’त्ति बाह्यं-बाह्यस्यापि शरीरस्य तापनात् मिथ्यादृष्टिभिरपि तपस्तयाऽभ्युपगमाच्च ‘अब्भिंतरिए य’त्ति आभ्यन्तरम्-अभ्यन्तरस्यैव कार्म्मणाभिधानशरीरस्य प्रायस्तापनात्सम्यग्दृष्टिभिरेव प्रायस्तपस्तयाऽभ्युपगमाच्चेति ‘ओमोयरिए’त्ति अवमस्य-ऊनस्योदरस्य करणमवमोदरिका, व्युत्पत्तिमात्रमेतदितिकृत्वोपकरणादेरपि न्यूनताकरणं सोच्यते, ‘इत्तरिए य’त्ति अल्पकालीनं ‘आवकहिए य’त्ति यावत्कथिकं-यावज्जीविकं, ‘पाओवगमणे’त्ति पादपवन्निस्पन्दतयाऽवस्थानं, ‘नीहारिमे’त्ति यदाश्रयस्यैकदेशे विधीयते, तत्र हि कडेवरमाश्रयान्निर्हरणीयं स्यादितिकृत्वा निर्हारिमं, ‘अणीहारिमे य’त्ति अनिर्हारिमं यद् गिरिकन्दरादौ प्रतिपद्यते, ‘चियत्तोवगरणसाइज्जणय’त्ति ‘चियत्तस्स’त्ति लक्षणोपेततया संयतस्यैव ‘साइज्जणय’त्ति स्वदनता परिभोजनमिति, चूर्ण्यां तूक्तं-‘जं वत्थाइ धारेइ तंमिवि ममत्तं नत्थि, जइ कोइ मग्गइ तस्स देइ’ त्ति, ‘अप्पकोहे’त्ति अल्पक्रोधः पुरुषोऽवमोदरिको भवत्यभेदोपचारादिति ‘अप्पसद्दे’त्ति अल्पशब्दो रात्र्यादावसंयतजागरणभयात् ‘अप्पझंझे’त्ति इह झञ्झा-विप्रकीर्णा कोपविशेषाद्वचनपद्धतिः, चूर्ण्यां तूक्तं-‘झंझा अणत्थयबहुप्पलावित्तं’ ‘अप्पतुमंतुमे’त्ति तुमन्तुमो-हृदयस्थः कोपविशेष एव, ‘दव्वाभिग्गहचरए’त्ति भिक्षाचर्यायास्तद्वतश्चाभेदविवक्षणाद्द्रव्याभिग्रहचरको भिक्षाचर्येत्युच्यते, द्रव्याभिग्रहाश्च लेपकृतादिद्रव्यविषयाः ‘जहा उववाइए’त्ति, अनेनेदं सूचितं-‘खेत्ताभिग्गहचरए कालाभिग्गहचरए भावाभिग्गहचरए’ इत्यादि, ‘सुद्धेसणिए’त्ति शुद्धैषणा-शङ्कितादिदोषपरिहारतः पिण्डग्रहस्तद्वांश्च शुद्धैषणिकः ‘संखादत्तिए’त्ति सङ्ख्याप्रधानाः पञ्चषादयो दत्तयो-भिक्षाविशेषा यस्य स तथा, ‘जहा उववाइए’त्ति अनेनेदं सूचितम्-‘आयंबिलिए आयामसित्थभोई अरसाहारे’ इत्यादि,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तपः, तस्य अर्थ, तस्य भेद-प्रभेदाः,

प्रत सूत्रांक [८०२-८०४] + गाथा:

दीप अनुक्रम [९६३-९६९]

'ठाणाइए' त्ति स्थानं–कायोत्सर्गादिकमतिशयेन ददाति गच्छतीति वा स्थानातिदः स्थानातिगो वा, 'जहा उववाइए'त्ति, अनेनेदं सूचितं-'पडिमट्ठाई वीरासणिए नेसज्जिए' इत्यादि, इह च प्रतिमाः–मासिक्यादयः, वीरासनं च-सिंहासननिविष्टस्य भून्यस्तपादस्य सिंहासनेऽपनीते यादृशमवस्थानं, निषद्या च-पुताभ्यां भूमावुपवेशनं, 'सोइंदियविसयप्पयारनिरोहो व'त्ति श्रोत्रेन्द्रियस्य यो विषयेषु–इष्टानिष्टशब्देषु प्रचारः–श्रवणलक्षणा प्रवृत्तिस्तस्य यो निरोधो–निषेधः स तथा शब्दानां श्रवणवर्जनमित्यर्थः 'सोइंदियविसए'इत्यादि श्रोत्रेन्द्रियविषयेषु प्राप्तेषु च 'अर्थेषु' इष्टानिष्टशब्देषु रागद्वेषविनिग्रहो-रागद्वेषनिरोधः 'मणस्स वा एगत्तीभावकरणं' मनसो वा 'एगत्त'त्ति विशिष्टैकाग्रत्वेनैकता तद्रूपस्य भावस्य करणमेकताभावकरणं, आत्मना वा सह यैकता-निरालम्बनत्वं तद्रूपो भावस्तस्य करणं यत्तत्तथा 'वईए वा एगत्तीभावकरणं'ति वाचो वा विशिष्टैकाग्रत्वेनैकतारूपभावकरणमिति 'सुसमाहियपसंतसाहरियपाणिपाए'त्ति सुष्ठु समाहितः–समाधिप्राप्तो बहिर्वृत्त्या स चासौ प्रशान्तश्चान्तर्वृत्त्या यः स तथा संहृतं–अविक्षिप्ततया धृतं पाणिपादं येन स तथा ततः कर्म्मधारयः 'कुम्मो इव गुत्तिंदिए'त्ति गुप्तेन्द्रियो गुप्त इत्यर्थः, क इव?-कूर्म्म इव, कस्यामवस्थायामित्यत एवाह–'अल्लीणे पल्लीणे'त्ति आलीनः–ईषल्लीनः पूर्वं प्रलीनः पश्चात् प्रकर्षेण लीनस्ततः कर्म्मधारयः, 'सोमिलुद्देसए'त्ति अष्टादशशतस्य दशमोद्देशके, एतेन च यत्सूचितं तत्तत एवावधार्यम् ॥ 'पायच्छित्ते'त्ति इह प्रायश्चित्तशब्देनापराधशुद्धिरुच्यते, 'वेयावच्चं'ति वैयावृत्त्यं-भक्तपानादिभिरुपष्टम्भः 'नाणविणए'त्ति ज्ञानविनयो–मत्यादिज्ञानानां श्रद्धानभक्तिबहुमानतद्दृष्टार्थभावनाविधिग्रहणाभ्यासरूपः 'दंसणविणए'त्ति दर्शनविनयः–सम्यग्दर्शनगुणाधिकेषु शुश्रूषादिरूपः 'चरित्त-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

***अत्र मूल संपादने सूत्र-क्रमांकन-सुचने एका स्खलना दृश्यते, सू. ८०२-८०४ स्थाने ८०३-८०४ मुद्रितं

तपः, तस्य अर्थ, तस्य भेद-प्रभेदाः,

प्रत सूत्रांक [८०२--८०४] + गाथा: दीप अनुक्रम [९६३--९६९]	 विणए'त्ति सामायिकादिचारित्राणां सम्यक्श्रद्धानकरणप्ररूपणानि 'लोगोवयारविणए'त्ति लोकानामुपचारो–व्यवहारः पूजा वा तद्रूपो यो विनयः स तथा 'सुस्सूसणाविणए'त्ति शुश्रूषणा–सेवा सैव विनयः शुश्रूषणाविनयः 'अणच्चासायणाविणए'त्ति अत्याशातना–आशातना तन्निषेधरूपो विनयोऽनत्याशातनाविनयः 'किरियाए अणच्चासायणाए'त्ति इह क्रिया—अस्ति परलोकोऽस्त्यात्माऽस्ति च सकलक्लेशाकलङ्कितं मुक्तिपदमित्यादिप्ररूपणात्मिका गृह्यते 'संभोगस्स अणच्चासायणाए'त्ति सम्भोगस्य–समानधार्म्मिकाणां परस्परेण भक्तादिदानग्रहणरूपस्यानत्याशातना–विपर्यासवत्करणपरिवर्जनं 'भत्तिबहुमाणेणं'ति इह णंकारो वाक्यालङ्कारे भक्त्या सह बहुमानो भक्तिबहुमानः भक्तिश्च इह बाह्या परिजुष्टिः बहुमानश्च–आन्तरः प्रीतियोगः 'वन्नसंजलणय'त्ति सद्भूतगुणवर्णनेन यशोदीपनं 'पसत्थमणविणए'त्ति प्रशस्तमन एव प्रवर्त्तनद्वारेण विनयः–कर्म्मापनयनोपायः प्रशस्तमनोविनयः, अप्रशस्तमन एव निवर्त्तनद्वारेण विनयोऽप्रशस्तमनोविनयः 'अपावए'त्ति सामान्येन पापवर्जितं विशेषतः पुनरसावद्यं–क्रोधाद्यवद्यवर्जितं 'अकिरिए'त्ति कायिक्यादिक्रियाऽभिष्वङ्गवर्जितं 'निरुवक्केसं'ति स्वगतशोकाद्युपक्लेशवियुक्तं 'अणण्हयकरे'त्ति अनाश्रवकरं प्राणातिपाताद्याश्रवकरणरहितमित्यर्थः 'अच्छविकरे'त्ति क्षपिः–स्वपरयोरायासो यत् तत्करणशीलं न भवति तदक्षपिकरं 'अभूयाभिसंकणे'त्ति यतो भूतान्यभिशङ्कन्ते–बिभ्यति तस्माद्यदन्यत्तदभूताभिशङ्कनं, प्रशस्तवाग्विनयसूत्रे 'अपावए'त्ति अपापवाक्प्रवर्त्तनरूपो वाग्विनयोऽपापक इति, एवमन्येऽपि, 'आउत्तं'ति आगुप्तस्य–संयतस्य सम्बन्धि यत्तदागुप्तमेव 'उल्लंघणं'ति ऊर्द्ध्वं लङ्घनं द्वारार्गलावरण्डकादेः 'पल्लंघणं'ति प्रलङ्घनं–प्रकृष्टं लङ्घनं विस्तीर्णभूखातादेः 'सव्विंदियजोगजुंजण'त्ति सर्वेषामिन्द्रिय- Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org
	तपः, तस्य अर्थ, तस्य भेद-प्रभेदाः,

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [८०२--८०४] + गाथा:

दीप अनुक्रम [९६३--९६९]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥९२५॥

२५ शतके उद्देशः ७ ध्यानानि व्युत्सर्गः सू ८०३-८०४

व्यापाराणां प्रयोग इत्यर्थः 'अब्भासवत्तियं'ति अभ्यासो–गौरव्यस्य समीपं तत्र वर्त्तितुं शीलमस्येत्यभ्यासवर्त्ती तद्भावोऽभ्यासवर्त्तित्वं, अभ्यासे वा प्रीतिकं–प्रेम, 'परछंदाणुवत्तियं'ति परस्य—आराध्यस्य छन्दः-अभिप्रायस्तमनुवर्त्तयतीत्येवंशीलः परच्छन्दानुवर्त्ती तद्भावः परच्छन्दानुवर्त्तित्वं 'कज्जहेउं'ति कार्यहेतोः–ज्ञानादिनिमित्तं भक्तादिदानमिति गम्यं 'कयपडिकइय'त्ति कृतप्रतिकृ(ति)ता नाम विनयात्प्रसादिता गुरवः श्रुतं दास्यन्तीत्यभिप्रायेणाशनादिदानप्रयत्नः 'अत्तगवेसणय'त्ति आर्त्त–ग्लानीभूतं गवेषयति भैषज्यादिना योऽसावार्त्तगवेषणस्तद्भाव आर्त्तगवेषणता 'देसकालण्णय'त्ति प्रस्तावज्ञता-अवसरोचितार्थसम्पादनमित्यर्थः 'सव्वत्थेसु अपडिलोमय'त्ति सर्वप्रयोजनेष्वाराध्यसम्बन्धिष्वानुकूल्यमिति । वैयावृत्त्यस्वाध्यायभेदाः प्रतीता एव, नवरं 'थेरवेयावच्चे'त्ति इह स्थविरो जन्मादिभिः 'तवस्सिवेयावच्चे'त्ति तपस्वी चाष्टमादिक्षपकः ॥ ध्यानसूत्रे—'अमणुन्नसंपओगसंपउत्ते तस्स विप्पओगसइसमन्नागए यावि भवइ'त्ति अमनोज्ञः-अनिष्टो यः शब्दादिस्तस्य यः सम्प्रयोगो-योगस्तेन सम्प्रयुक्तो यः स तथा स च तथाविधः सन् तस्यामनोज्ञस्य शब्दादेर्विप्रयोगस्मृतिसमन्वागतश्चापि भवति-विप्रयोगचिन्तानुगतः स्यात्, चापीत्युत्तरवाक्यापेक्षया समुच्चयार्थः, असावार्त्तध्यानं स्यादिति शेषः, धर्म्मधर्म्मिणोरभेदादिति १ 'मणुन्नसंपओगसंपउत्ते तस्स अविप्पओगसइसमन्नागए यावि भवइ'त्ति प्राग्वन्नवरं मनोज्ञं-धनादि 'तस्स'त्ति मनोज्ञस्य धनादेः २ 'आयंकसंपओ' इत्यादि, इहातङ्को–रोगः ३ 'परिज्झुसियकामभोगसंपओगसंपउत्ते तस्स अविप्पओगसइसमन्नागए यावि भवइ'त्ति व्यक्तं नवरं 'परिज्झुसिय'त्ति 'जुषी प्रीतिसेवनयोः' इतिवचनात् सेवितः प्रीतो वा यः कामभोगः–शब्दादिभोगो मदनसेवा वा 'तस्स'त्ति तस्य कामभोग-

॥९२५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

***अत्र मूल संपादने सूत्र-क्रमांकन-सुचने एका स्खलना दृश्यते, सू. ८०२-८०४ स्थाने ८०३-८०४ मुद्रितं

तप:, तस्य अर्थ, तस्य भेद-प्रभेदा:,

प्रत सूत्रांक [८०२-८०४] + गाथा:

दीप अनुक्रम [९६३-९६९]

स्येति ४। 'कंदणय'त्ति महता शब्देन विरवणं 'सोयणय'त्ति दीनता 'तिप्पणय'त्ति तेपनता तिपः क्षरणार्थत्वादश्रुविमोचनं 'परिदेवणय'त्ति परिदेवनता–पुनः पुनः क्लिष्टभाषणतेति। 'हिंसाणुबंधि'त्ति हिंसा–सत्त्वानां वधबन्धवन्धनादिभिः प्रकारैः पीडामनुबध्नाति–सततप्रवृत्तां करोतीत्येवंशीलं यत्प्रणिधानं हिंसानुबंधो वा यत्रास्ति तद्धिंसानुबन्धि 'मोसाणुबंधि'त्ति मृषा–असत्यं तदनुबध्नाति पिशुनासत्यासद्भूतादिभिर्वचनभेदैस्तन्मृषानुबन्धि 'तेयाणुबंधि'त्ति स्तेनस्य-चौरस्य कर्म स्तेयं तीव्रक्रोधाद्याकुलतया तदनुबन्धवत् स्तेयानुबन्धि 'सारक्खणाणुबंधि'त्ति संरक्षणे–सर्वोपायैः परित्राणे विषयसाधनस्य धनस्यानुबन्धो यत्र तत्संरक्षणानुबन्धि, 'ओस्सन्नदोसे'त्ति 'ओस्सन्नं'ति बाहुल्येन—अनुपरतत्वेन दोषो-हिंसाऽनृतादत्तादानसंरक्षणानामन्यतम ओसन्नदोषः 'बहुदोसे'त्ति बहुष्वपि-सर्वेष्वपि हिंसादिषु ४ दोषः—प्रवृत्तिलक्षणो बहुदोषः 'अन्नाणदोसे'त्ति अज्ञानात्–कुशास्त्रसंस्कारात् हिंसादिषु अधर्म्मस्वरूपेषु धर्मबुद्ध्या या प्रवृत्तिस्तल्लक्षणो दोषोऽज्ञानदोषः 'आमरणंतदोसे'त्ति मरणमेवान्तो मरणान्तः आमरणान्ताद्–आमरणान्तमसंजातानुतापस्य कालकशौकरिकादेरिव या हिंसादिप्रवृत्तिः सैव दोषः आमरणान्तदोषः 'चउप्पडोयारे'त्ति चतुर्षु भेदलक्षणालम्बनानुप्रेक्षा ४ लक्षणेषु पदार्थेषु प्रत्यवतारः–समवतारो विचारणीयत्वेन यस्य तच्चतुष्प्रत्यवतारं, चतुर्विधशब्दस्यैव पर्यायो वाऽयम्, 'आणाविजये'त्ति आज्ञा–जिनप्रवचनं तस्या विचयो-निर्णयो यत्र तदाज्ञाविचयं प्राकृतत्वाच्च 'आणाविजए'त्ति, एवं शेषपदान्यपि, नवरमपाया–रागद्वेषादिजन्या अनर्थाः विपाकः–कर्म्मफलं संस्थानानि–लोकद्वीपसमुद्राद्याकृतयः 'आणारुइ'त्ति आज्ञा–सूत्रस्य व्याख्यानं निर्युक्त्यादि तत्र तया वा रुचिः–श्रद्धानं साऽऽज्ञारुचिः 'निसग्गरुइ'त्ति स्वभावत एव तत्त्वश्रद्धानं 'सुत्त-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तपः, तस्य अर्थ, तस्य भेद-प्रभेदाः,

प्रत सूत्रांक [८०२-८०४] + गाथा:

दीप अनुक्रम [९६३-९६९]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥९२६॥

रुइ'त्ति आगमात्तत्त्वश्रद्धानम् 'ओगाढरुइ'त्ति अवगाढनमवगाढं–द्वादशाङ्गावगाहो विस्ताराधिगमस्तेन रुचिः अथवा 'ओगाढ'त्ति साधुप्रत्यासन्नीभूतस्तस्य साधूपदेशाद् रुचिरवगाढरुचिः, 'आलंबण'त्ति धर्म्मध्यानसौधशिखरारोहणार्थं यान्यालम्ब्यन्ते तान्यालम्बनानि–वाचनादीनि, 'अणुप्पेह'त्ति धर्म्मध्यानस्य पश्चात्प्रेक्षणानि–पर्यालोचनान्यनुप्रेक्षाः, 'पुहुत्तवियक्के सवियारे'त्ति पृथक्त्वेन–एकद्रव्याश्रितानामुत्पादादिपर्यायाणां भेदेन वितर्को–विकल्पः पूर्वगतश्रुतालम्बनो नानानयानुसरणलक्षणो यत्र तत्पृथक्त्ववितर्कं, तथा विचारः–अर्थाद्व्यञ्जने व्यञ्जनादर्थे मनःप्रभृतियोगानां चान्यस्मादन्यस्मिन् विचरणं सह विचारेण यत्तत्सविचारि, सर्वधनादित्वादिन् समासान्तः १ 'एगत्तवियक्के अवियार'त्ति एकत्वेन–अभेदेनोत्पादादिपर्यायाणामन्यतमैकपर्यायालम्बनतयेत्यर्थः वितर्कः–पूर्वगतश्रुताश्रयो व्यञ्जनरूपोऽर्थरूपो वा यस्य तदेकत्ववितर्कं, तथा न विद्यते विचारोऽर्थव्यञ्जनयोरितरस्मादितरत्र तथा मनःप्रभृतीनामन्यस्मादन्यत्र यस्य तदविचारीति २ 'सुहुमकिरिए अणियट्टि'त्ति सूक्ष्मा क्रिया यत्र निरुद्धवाग्मनोयोगत्वे सत्यर्द्धनिरुद्धकाययोगत्वात्तत्सूक्ष्मक्रियं न निवर्त्तत इत्यनिवर्त्ति वर्द्धमानपरिणामत्वात्, एतच्च निर्वाणगमनकाले केवलिन एव स्यादिति ३ 'समुच्छिन्नकिरिए अप्पडिवाइ'त्ति समुच्छिन्ना क्रिया–कायिक्यादिका शैलेशीकरणनिरुद्धयोगत्वेन यस्मिंस्तत्तथा अप्रतिपाति–अनुपरतस्वभावम्, 'अवहे'त्ति देवाद्युपसर्गजनितं भयं चलनं वा व्यथा तदभावोऽव्यथम् 'असंमोहे'त्ति देवादिकृतमायाजनितस्य सूक्ष्मपदार्थविषयस्य च संमोहस्य–मूढताया निषेधोऽसंमोहः 'विवेगे'त्ति देहादात्मनः आत्मनो वा सर्वसंयोगानां विवेचनं–बुद्ध्या पृथक्करणं विवेकः ४ 'विउसग्गे'त्ति व्युत्सर्गो–निस्सङ्गतया देहोपधित्यागः 'अणंतवत्तियाणुप्पेह'त्ति भवसन्तान-

२५ शतके उद्देशः ७ ध्यानानि व्युत्सर्गः सू ८०३-८०४

॥९२६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

***अत्र मूल संपादने सूत्र-क्रमांकन-सुचने एका स्खलना दृश्यते, सू. ८०२-८०४ स्थाने ८०३-८०४ मुद्रितं

तप:, तस्य अर्थ, तस्य भेद-प्रभेदा:,

प्रत सूत्रांक [८०२--८०४] + गाथा:

दीप अनुक्रम [९६३--९६९]

स्यानन्तवृत्तिताऽनुचिन्तनं ‘विप्परिणामाणुप्पेह’त्ति वस्तूनां प्रतिक्षणं विविधपरिणामगमनानुचिन्तनम् ‘असुभाणुप्पेह’त्ति संसाराशुभत्वानुचिन्तनम् ‘अवायाणुप्पेह’त्ति अपायानां–प्राणातिपाताद्याश्रवद्वारजन्यानर्थानामनुप्रेक्षा–अनुचिन्तनमपायानुप्रेक्षा, इह च यत्तपोऽधिकारे प्रशस्ताप्रशस्तध्यानवर्णनं तदप्रशस्तस्य वर्जने प्रशस्तस्य च तस्यासेवने तपो भवतीतिकृत्वेति ॥ व्युत्सर्गसूत्रे—‘संसारविउसग्गो’त्ति नारकायुष्कादिहेतूनां मिथ्यादृष्टित्वादीनां त्यागः ‘कम्मविउसग्गो’त्ति ज्ञानावरणादिकर्म्मबन्धहेतूनां ज्ञानप्रत्यनीकत्वादीनां त्याग इति ॥ पञ्चविंशतितमशते सप्तमः ॥ २५।७ ॥

सप्तमोद्देशके संयता भेदत उक्तास्तद्विपक्षभूताश्चासंयता भवन्ति ते च नारकादयस्तेषां च यथोत्पादो भवति तथाऽष्टमेऽभिधीयते इत्येवंसम्बन्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

रायगिहे जाव एवं वयासी–नेरइया णं भंते ! कहं उववज्जंति ?, से जहानामए–पवए पवमाणे अज्झवसाणनिव्वत्तिएणं करणोवाएणं सेयकाले तं ठाणं विप्पजहित्ता पुरिमं ठाणं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ एवामेव एएवि जीवा पवओविव पवमाणा अज्झवसाणनिव्वत्तिएणं करणोवाएणं सेयकाले तं भवं विप्पजहित्ता पुरिमं भवं उवसंपज्जित्ताणं विहरन्ति । तेसि णं भंते ! जीवाणं कहं सीहा गती कहं सीहे गतिविसए प० ?, गोयमा ! से जहानामए–केइ पुरिसे तरुणे बलवं एवं जहा चोद्दसमसए पढमुद्देसए जाव तिसमएण वा विग्गहेणं उववज्जंति, तेसि णं जीवाणं तहा सीहा गई तहा सीहे गतिविसए प० । ते णं भंते ! जीवा कहं परभवियाउयं पकरेंति ?, गोयमा ! अज्झवसाणजोगनिव्वत्तिएणं करणोवाएणं एवं खलु ते जीवा परभवि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र पञ्चविंशतितमे शतके सप्तम-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ पञ्चविंशतितमे शतके अष्टमात् द्वादशम् पर्यन्ता: उद्देशका: आरभ्यते

तप:, तस्य अर्थ, तस्य भेद-प्रभेदा:,

प्रत सूत्रांक [८०५-८०९] दीप अनुक्रम [९७०-९७४]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥९२७॥

२५ शतके उद्देशः ८-९-१०-११-१२ नारकभव्यादीनामुत्पत्तिरीतिः सू ८०५-८०९

याउयं पकरेन्ति, तेसि णं भंते! जीवाणं कहं गती पवत्तइ?, गोयमा! आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइक्खएणं, एवं खलु तेसिं जीवाणं गती पवत्तति, ते णं भंते! जीवा किं आयड्ढीए उववज्जंति परिड्ढीए उवव०?, गोयमा! आइड्ढीए उवव० नो परिड्ढीए उवव०। ते णं भंते! जीवा किं आयकम्मुणा उवव० परकम्मुणा उवव० ?, गोयमा! आयकम्मुणा उवव० नो परकम्मुणा उवव०, ! ते णं भंते ! जीवा किं आयप्पयोगेणं उवव० परप्पयोगेणं उवव०?, गोयमा! आयप्पयोगेणं उववज्जंति नो परप्पयोगेणं उवव० । असुरकुमारा णं भंते! कहं उववज्जंति?, जहा नेरतिया तहेव निरवसेसं जाव नो परप्पयोगेणं उववज्जंति एवं एगिंदियवज्जा जाव वेमाणिया, एगिंदिया तं चेव नवरं चउसमइओ विग्गहो, सेसं तं चेव, सेवं भंते! २ त्ति जाव विहरइ ॥ (सूत्रं ८०५) ॥ पंचवीसंइमस्स अट्ठमो ॥ २५ । ८ ॥ भवसिद्धियनेरइया णं भंते! कहं उवव० ?, गोयमा! से जहानामए पवए पवमाणे अवसेसं तं चेव जाव वेमाणिए, सेवं भंते! २ त्ति ॥ (सूत्रं ८०६) ॥ २५ । ९ ॥ अभवसिद्धियनेरइया णं भंते! कहं उवव०?, गोयमा! से जहानामए पवए पवमाणे अवसेसं तं चेव एवं जाव वेमाणिए, सेवं भंते २ त्ति ॥ (सूत्रं ८०७) ॥ २५।१० ॥ सम्मदिट्ठिनेरइया णं भंते! कहं उवव०?, गोयमा! से जहानामए पवए पवमाणे अवसेसं तं चेव एवं एगिंदियवज्जं जाव वेमाणिया, सेवं भंते! २ त्ति ॥ (सूत्रं ८०८) ॥ २५ । ११ ॥ मिच्छदिट्ठिनेरइया णं भंते! कहं उवव०?, गोयमा! से जहानामए–पवए पवमाणे अवसेसं तं चेव एवं जाव वेमाणिए, सेवं भंते २ त्ति ॥ (सूत्रं ८०९) ॥ २५ । १२ ॥ पंचवीसतिमं सयं सम्मत्तं ॥ २५ ॥

॥९२७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [८०५-८०९]

दीप अनुक्रम [९७०-९७४]

'रायगिहे'इत्यादि 'पवए'त्ति प्लवकः–उत्प्लवनकारी 'पवमाणे'त्ति प्लवमानः–उत्प्लुतिं कुर्वन् 'अज्झवसाणनिवत्तिएणं'ति उत्प्लोतव्यं मयेत्येवंरूपाध्यवसायनिर्वर्तितेन 'करणोपायेणं'ति उत्प्लवनलक्षणं यत्करणं–क्रियाविशेषः स एवोपायः–स्थानान्तरप्राप्तौ हेतुः करणोपायस्तेन 'सेयकाले'त्ति एष्यति काले विहरतीति योगः, किं कृत्वा? इत्याह–'तं ठाणं'ति यत्र स्थाने स्थितस्तत्स्थानं 'विप्रजहाय' प्लवनतस्त्यक्त्वा 'पुरिमं'ति पुरोवर्त्तिस्थानम् 'उपसम्पद्य' विहरतीति योगः 'एवामेव ते जीव'त्ति दार्ष्टान्तिकयोजनार्थः, किमुक्तं भवति? इत्याह–'पवओविव पवमाण'त्ति, 'अज्झवसाणनिवत्तिएणं'ति तथाविधाध्यवसायनिर्वर्त्तितेन 'करणोवाएणं'ति क्रियते विविधाऽवस्था जीवस्यानेन क्रियते वा तदिति करणं–कर्म्म प्लवनक्रियाविशेषो वा करणं करणमिव करणं–स्थानान्तरप्राप्तिहेतुतासाधर्म्यात्कर्म्मैव तदेवोपायः करणोपायस्तेन 'तं भवं'ति मनुष्यादिभवं 'पुरिमं भवं'ति प्राप्तव्यं नारकभवमित्यर्थः 'अज्झवसाणजोगनिवत्तिएणं'ति अध्यवसानं–जीवपरिणामो योगश्च–मनःप्रभृतिव्यापारस्ताभ्यां निर्वर्त्तितो यः स तथा तेन 'करणोवाएणं'ति करणोपायेन–मिथ्यात्वादिना कर्म्मबन्धहेतुनेति ॥ पञ्चविंशतितमशतेऽष्टमः ॥ २५।८ ॥ एवं नवमदशमैकादशद्वादशाः ॥ २५।९।१०।११।१२ ॥ पञ्चविंशतितमं शतं वृत्तितः परिसमाप्तमिति ॥ २५ ॥

क्वचिट्टीकावाक्यं क्वचिदपि वचश्चौर्णमनघं, क्वचिच्छान्दीं वृत्तिं क्वचिदपि गमं वाच्यविषयम् ।
क्वचिद्विद्वद्वाचं क्वचिदपि महाशास्त्रमपरं, समाश्रित्य व्याख्या शत इह कृता दुर्गमगिराम् ॥ १ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ पञ्चविंशतितमे शतके अष्टमात् द्वादशम् पर्यन्ता: उद्देशका: परिसमाप्ता:

प्रत सूत्रांक [८१०-८११]

दीप अनुक्रम [९७५-९७७]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥ ९२८ ॥

॥ अथ षड्विंशतितमं शतकम् ॥

व्याख्यातं पञ्चविंशतितमं शतम्, अथ षड्विंशतितममारभ्यते, अस्य चायमभिसबन्धः–अनन्तरशते नारकादिजीवानामुत्पत्तिरभिहिता सा च कर्म्मबन्धपूर्विकेतिषड्विंशतितमशते मोहकर्मबन्धोऽपि विचार्यते इत्येवंसम्बन्धस्यास्यैकादशोद्देशकप्रमाणस्य प्रत्युद्देशकं द्वारनिरूपणाय तावद्गाथामाह—

नमो सुयदेवयाए भगवईए। जीवा १ य लेस्स २ पक्खिय ३ दिट्ठी ४ अन्नाण ५ नाण ६ सन्नाओ ७। वेय ८ कसाए ९ उवओग १० जोग ११ एक्कारवि ठाणा ॥ १ ॥ तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे जाव एवं वयासी–जीवे णं भंते! पावं कम्मं किं बंधी बंधइ बंधिस्सइ १ बंधी बंधइ ण बंधिस्सइ २ बंधी न बंधइ बंधिस्सइ ३ बंधी न बंधइ न बंधिस्सइ ४?, गोयमा! अत्थेगतिए बंधी बंधइ बंधिस्सइ १ अत्थेगतिए बंधी बंधइ ण बंधिस्सइ २ अत्थेगतिए बंधी ण बंधइ बंधिस्सइ ३ अत्थेगतिए बंधी ण बंधइ ण बंधिस्सइ ४–१ ॥ सलेस्से णं भंते! जीवे पावं कम्मं किं बंधी बंधइ बंधिस्सइ १ बंधी बंधइ ण बंधिस्सइ? पुच्छा, गोयमा! अत्थेगतिए बंधी बंधइ बंधिस्सइ १ अत्थेगतिए एवं चउभंगो। कण्हलेसे णं भंते! जीवे पावं कम्मं किं बंधी पुच्छा, गोयमा! अत्थेगतिए बंधी बंधइ बंधिस्सइ अत्थेगतिए बंधी बंधइ न बंधिस्सइ एवं जाव पम्हलेसे सव्वत्थ पढमबितियभंगा, सुक्कलेस्से जहा सलेस्से तहेव चउभंगो। अलेस्से णं भंते! जीवे पावं कम्मं किं बंधी पुच्छा,

२६ शतके उद्देशः १ जीवादीनां पापबन्धादि सू ८१०-८११

॥ ९२८ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ षड्विंशतितमे शतकं आरभ्यते

अथ षड्विंशतितमे शतके प्रथम-उद्देशक: आरभ्यते

प्रत सूत्रांक [८१०-८११]

दीप अनुक्रम [९७५-९७७]

गोयमा! बंधी न बंधइ न बंधिस्सइ २ ॥ कण्हपक्खिए णं भंते ! जीवे पावं कम्मं पुच्छा, गोयमा! अत्थेगतिए बंधी पढमबितिया भंगा। सुक्कपक्खिए णं भंते! जीवे पुच्छा, गोयमा! चउभंगो भाणियव्वो ॥ (सूत्रं ८१०)

सम्मदिट्ठीणं चत्तारि भंगा, मिच्छादिट्ठीणं पढमबितिया भंगा, सम्मामिच्छादिट्ठीणं एवं चेव। नाणीणं-चत्तारि भंगा, आभिणिबोहियणाणीणं जाव मणपज्जवणाणीणं चत्तारि भंगा, केवलनाणीणं चरमो भंगो जहा अलेस्साणं ५, अन्नाणीणं पढमबितिया, एवं मइअन्नाणीणं सुयअन्नाणीणं विभंगणाणीणवि ६। आहारसन्नोवउत्ताणं जाव परिग्गहसन्नोवउत्ताणं पढमबितिया नोसन्नोवउत्ताणं चत्तारि ७। सवेदगाणं पढमबितिया, एवं इत्थिवेदगा पुरिसवेदगा नपुंसगवेदगावि, अवेदगाणं चत्तारि ॥ सकसाईणं चत्तारि, कोहकसायीणं पढमबितिया भंगा, एवं माणकसायिस्सवि मायाकसायिस्सवि लोभकसायिस्सवि चत्तारि भंगा, अकसायी णं भंते! जीवे पावं कम्मं किं बंधी? पुच्छा, गोयमा! अत्थेगतिए बंधी न बंधइ बंधिस्सइ ३ अत्थेगतिए बंधी ण बंधइ ण बंधिस्सइ ४। सजोगिस्स चउभंगो, एवं मणजोगस्सवि वइजोगस्सवि कायजोगस्सवि, अजोगिस्स चरिमो, सागारोवउत्ते चत्तारि, अणागारोवउत्तेवि चत्तारि भंगा ११ ॥ (सूत्रं ८११)

'जीवा य' इत्यादि, 'जीवा य'त्ति जीवाः प्रत्युद्देशकं बन्धवक्तव्यतायाः स्थानं, ततो लेश्याः पाक्षिकाः दृष्टयः अज्ञानं ज्ञानं सञ्ज्ञा वेदः कषाया योग उपयोगश्च बन्धवक्तव्यतास्थानं, तदेवमेतान्येकादशापि स्थानानीति गाथार्थः ॥ तत्रानन्तरोत्पन्नादिविशेषविरहितं जीवमाश्रित्यैकादशभिरुक्तरूपैर्द्वारैर्बन्धवक्तव्यतां प्रथमोद्देशकेऽभिधातुमाह–'तेण'मित्यादि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [८१०-८११]

दीप अनुक्रम [९७५-९७७]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥९२९॥

२६ शतके उद्देशः १ जीवादीनां पापबन्धादि सू ८१०-८११

'पावं कम्मं'ति अशुभं कर्म 'बंधी'ति बद्धवान् 'बंधइ'त्ति वर्त्तमाने 'बंधिस्सइ'त्ति अनागते इत्येवं चत्वारो भङ्गा बद्धवानित्येतत्पदलब्धाः, 'न बंधी'त्येतत्पदलभ्यास्त्विह न भवन्ति, अतीतकालेऽबन्धकस्य जीवस्यासम्भवात्, तत्र च बद्धवान् बध्नाति भन्त्स्यति चेत्येष प्रथमोऽभव्यमाश्रित्य, बद्धवान् बध्नाति न भन्त्स्यतीति द्वितीयः प्राप्तव्यक्षपकत्वं भव्यविशेषमाश्रित्य, बद्धवान् न बध्नाति भन्त्स्यतीत्येष तृतीयो मोहोपशमे वर्त्तमानं भव्यविशेषमाश्रित्य, ततः प्रतिपतितस्य तस्य पापकर्मणोऽवश्यं बन्धनात्, बद्धवान् न बध्नाति न भन्त्स्यतीति चतुर्थः क्षीणमोहमाश्रित्येति ॥ लेश्याद्वारे–सलेश्यजीवस्य चत्वारोऽपि स्युर्यस्माच्छुक्ललेश्यस्य पापकर्म्मणो बन्धकत्वमप्यस्तीति, कृष्णलेश्यादिपञ्चकयुक्तस्य त्वाद्यमेव भङ्गकद्वयं, तस्य हि वर्त्तमानकालिको मोहलक्षणपापकर्मण उपशमः क्षयो वा नास्तीत्येवमन्त्यद्वयाभावः, द्वितीयस्तु तस्य संभवति, कृष्णादिलेश्यावतः कालान्तरे क्षपकत्वप्राप्तौ न भन्त्स्यतीत्येतस्य सम्भवादिति, अलेश्यः–अयोगिकेवली तस्य च चतुर्थ एव, लेश्याभावे बन्धकत्वाभावादिति ॥ पाक्षिकद्वारे–कृष्णपाक्षिकस्याद्यमेव भङ्गकद्वयं, वर्त्तमाने बन्धाभावस्य तस्याभावात्, शुक्लपाक्षिकस्य तु चत्वारोऽपि, स हि बद्धवान् बध्नाति भन्त्स्यति च प्रश्नसमयापेक्षयाऽनन्तरे भविष्यति समये १ तथा बद्धवान् बध्नाति न भन्त्स्यति क्षपकत्वप्राप्तौ २ तथा बद्धवान् न बध्नाति चोपशमे भन्त्स्यति च तत्प्रतिपाते ३ तथा बद्धवान्न बध्नाति न च भन्त्स्यति क्षपकत्व इति ४, अत एव आह–'चउभंगो भाणियव्वो'त्ति, ननु यदि कृष्णपाक्षिकस्य न भन्त्स्यतीत्यस्यासम्भवाद्द्वितीयो भङ्गक इष्टस्तदा शुक्लपाक्षिकस्यावश्यं सम्भवात्कथं तत्प्रथमभङ्गकः? इति, अत्रोच्यते, पृच्छानन्तरे भविष्यत्कालेऽबन्धकत्वस्याभावात्, उक्तं च वृद्धैरिह

॥९२९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [८१०-८११]

दीप अनुक्रम [९७५-९७७]

साक्षेपपरिहारं–“बंधिसयबीयभंगो जुज्जइ जइ कण्हपक्खियाईणं । तो सुक्कपक्खियाणं पढमो भंगो कहं गेज्झो ? ॥ १ ॥ उच्यते–पुच्छाणंतरकालं पइ पढमो सुक्कपक्खियाईणं । इयरेसिं अवसिट्ठं कालं पइ बीयओ भंगो ॥ २ ॥”त्ति [बन्धिशते यदि कृष्णपाक्षिकाणां द्वितीयो भङ्गो युज्यते तदा शुक्लपाक्षिकाणां प्रथमो भङ्गः कथं ग्राह्यः? ॥ १ ॥ पृच्छानन्तरकालं प्रतीत्य प्रथमः शुक्लपाक्षिकादीनाम् । इतरेषामवशिष्टं कालं प्रतीत्य द्वितीयो भङ्गः ॥ २ ॥] दृष्टिद्वारे–सम्यग्दृष्टेश्चत्वारोऽपि भङ्गाः शुक्लपाक्षिकस्येव भावनीयाः, मिथ्यादृष्टिमिश्रदृष्टीनामाद्यौ द्वावेव, वर्त्तमानकाले मोहलक्षणपापकर्मणो बन्धभावेनान्त्यद्वयाभावात् , अत एवाह–'मिच्छे'त्यादि । ज्ञानद्वारे–'केवलनाणीणं चरमो भंगो'त्ति वर्त्तमाने एष्यत्काले च बन्धाभावात् 'अन्नाणीणं पढमबीय'त्ति, अज्ञाने मोहलक्षणपापकर्म्मणः क्षपणोपशमनाभावात् । सञ्ज्ञाद्वारे–'पढमबीय'त्तिं आहारादिसञ्ज्ञोपयोगकाले क्षपकत्वोपशमकत्वाभावात्, 'नोसन्नोवउत्ताणं चत्तारि'त्ति नोसञ्ज्ञोपयुक्ता–आहारादिषु गृद्धिवर्जितास्तेषां च चत्वारोऽपि क्षपणोपशमसम्भवादिति । वेदद्वारे–'सवेयगाणं पढमबीय'त्ति वेदोदये हि क्षपणोपशमौ न स्यातामित्याद्यद्वयम् 'अवेदगाणं चत्तारि'त्ति स्वकीये वेदे उपशान्ते बध्नाति भन्त्स्यति च मोहलक्षणं पापं कर्म्म यावत्सूक्ष्मसम्परायो न भवति प्रतिपतितो वा भन्त्स्यतीत्येवं प्रथमः, तथा वेदे क्षीणे बध्नाति सूक्ष्मसंपरायाद्यवस्थायां च न भन्त्स्यतीत्येवं द्वितीयः, तथोपशान्तवेदः सूक्ष्मसम्परायादौ न बध्नाति प्रतिपतितस्तु भन्त्स्यतीति तृतीयः, तथा क्षीणे वेदे सूक्ष्मसम्परायादिषु न बध्नाति न चोत्तरकालं भन्त्स्यतीत्येवं चतुर्थः, बद्धवानिति च सर्वत्र प्रतीतमेवेतिकृत्वा न प्रदर्शितमिति ॥ कषायद्वारे–'सकसाईणं चत्तारि'त्ति तत्राद्योऽभव्यस्य द्वितीयो भव्यस्य प्राप्तव्यमोहक्षयस्य

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [८१०-८११] दीप अनुक्रम [९७५-९७७]	

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्याप्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः२ ॥९३०॥

२६ शतके उद्देशः १ नारदीनां पापज्ञानावबन्धित्वादि सू ८१२-८१३

तृतीय उपशमकसूक्ष्मसम्परायस्य चतुर्थः क्षपकसूक्ष्मसम्परायस्य, एवं लोभकषायिणामपि वाच्यं, 'कोहकसाईणं पढमबीय'त्ति इहाभव्यस्य प्रथमो द्वितीयो भव्यविशेषस्य तृतीयचतुर्थौ त्विह न स्तो वर्त्तमानेऽबन्धकत्वस्याभावात् 'अकसाईण'मित्यादि, तत्र 'बंधी न बंधइ बंधिस्सइ'त्ति उपशमकमाश्रित्य, 'बंधी न बंधइ न बंधिस्सइ'त्ति क्षपकमाश्रित्येति, योगद्वारे–'सजोगिस्स चउभंगो'त्ति अभव्यभव्यविशेषोपशमकक्षपकाणां क्रमेण चत्वारोऽप्यवसेयाः, 'अजोगिस्स चरमो'त्ति बध्यमानभन्त्स्यमानत्वयोस्तस्याभावादिति ॥

नेरइए णं भंते! पावं कम्मं किं बंधी बंधइ बंधिस्सइ?, गोयमा! अत्थेगतिए बंधी पढमबितिया १, सलेस्से णं भंते! नेरतिए पावं कम्मं चेव, एवं कण्हलेस्सेवि नीललेस्सेवि काउलेसेवि, एवं कण्हपक्खिए सुक्कपक्खिए, सम्मदिट्ठी मिच्छादिट्ठी सम्मामिच्छादिट्ठी, णाणी आभिणिबोहियनाणी सुयनाणी ओहिणाणी अन्नाणी मइअन्नाणी सुयअन्नाणी विभंगनाणी आहारसन्नोवउत्ते जाव परिग्गहसन्नोवउत्ते, सवेदए नपुंसकवेदए, सकसायी जाव लोभकसायी, सजोगी मणजोगी वयजोगी कायजोगी, सागारोवउत्ते अणागारोवउत्ते, एएसु सवेसु पदेसु पढमबितिया भंगा भाणियवा, एवं असुरकुमारस्सवि वत्तवया भाणियवा नवरं तेउलेस्सा इत्थिवेयगपुरिसवेयगा य अब्भहिया नपुंसगवेदगा न भन्नंति सेसं तं चेव सवत्थ पढमबितिया भंगा, एवं जाव थणियकुमारस्स, एवं पुढविकाइयस्सवि आउकाइयस्सवि जाव पंचिंदियतिरिक्खजोणियस्सवि सवत्थवि पढमबितिया भंगा नवरं जस्स जा लेस्सा, दिट्ठी णाणं अन्नाणं वेदो जोगो य जं जस्स अत्थि तं तस्स भाणि-

॥९३०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नारक-आदिनाम् पाप-कर्मन: आदि बन्ध:

प्रत सूत्रांक [८१२-८१३]

दीप अनुक्रम [९७८-९७९]

यद्धं सेसं तहेव, मणूसस्स जच्चेव जीवपदे वत्तव्वया सच्चेव निरवसेसा भाणियव्वा, वाणमंतरस्स जहा असुरकुमारस्स, जोइसियस्स वेमाणियस्स एवं चेव नवरं लेस्साओ जाणियव्वाओ, सेसं तहेव भाणियव्वं ॥ (सूत्रं ८१२) जीवे णं भंते ! नाणा० कम्मं किं बंधी बंधइ बंधिस्सइ एवं जहेच पावकम्मस्स वत्तव्वया तहेव नाणावरणिज्जस्सवि भा० नवरं जीवपदे मणुस्सपदे य सकसाई जाव लोभकसाइंमि य पढमबितिया भंगा अवसेसं तं० जाव वेमा०, एवं दरिसणावरणिज्जेणवि दंडगो भाणियव्वो निरवसेसो ॥ जीवे णं भंते ! वेयणिज्जं कम्मं किं बंधी पुच्छा, गोयमा ! अत्थेगतिए बंधी बंधइ बंधिस्सइ १ अत्थेगतिए बंधी बंधइ न बंधिस्सइ २ अत्थेगतिए बंधी न बंधइ न बंधिस्सइ ४, सलेस्सेवि एवं चेव ततियविहूणा भंगा, कण्हलेस्से जाव पम्हलेस्से पढमबितिया भंगा, सुक्कलेस्से ततियविहूणा भंगा, अलेस्से चरिमो भंगो, कण्हपक्खिए पढमबितिया भंगा, सुक्कपक्खिया ततियविहूणा, एवं सम्मदिट्ठिस्सवि, मिच्छादिट्ठिस्स सम्मामिच्छादिट्ठिस्स य पढमबितिया, णाणस्स ततियविहूणा आभिणिबोहियनाणी जाव मणपज्जवणाणी पढमबितिया केवलनाणी ततियविहूणा, एवं नोसन्नोवउत्ते अवेदए अकसायी सागारोवउत्ते अणागारोवउत्ते एएसु ततियविहूणा, अजोगिम्मि य चरिमो, सेसेसु पढमबितिया । नेरइए णं भंते ! वेयणिज्जं कम्मं बंधी बंधइ एवं नेरतिया जाव वेमाणियत्ति जस्स जं अत्थि सव्वत्थवि पढमबितिया, नवरं मणुस्से

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नारक-आदिनाम् पाप-कर्मन: आदि बन्ध:

प्रत सूत्रांक [८१२-८१३]

दीप अनुक्रम [९७८-९७९]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥९३१॥

२६ शतके उद्देशः १ नारदीनां पापज्ञानावबन्धित्वादि सू ८१२-८१३

जहा जीवो, जीवे णं भंते ! मोहणिज्जं कम्मं किं बंधइ ?, जहेव पावं कम्मं तहेव मोहणिज्जंपि निरवसेसं जाव वेमाणिए (सूत्रं ८१३) ॥

'नेरइए ण'मित्यादि, 'पढमबीय'त्ति नारकत्वादौ श्रेणीद्वयाभावात् प्रथमद्वितीयावेव, एवं सलेश्यादि–[ग्रन्थाग्रम् १८०००] विशेषितं नारकपदं वाच्यं, एवमसुरकुमारादिपदमपि । 'मणूसस्से'त्यादि, या जीवस्य निर्विशेषणस्य सलेश्यादिपदविशेषितस्य च चतुर्भङ्ग्यादिवक्तव्यतोक्ता सा मनुष्यस्य तथैव निरवशेषा वाच्या, जीवमनुष्ययोः समानधर्म्मत्वादिति ॥ तदेवं सर्वेऽपि पञ्चविंशतिर्दण्डकाः पापकर्म्माश्रित्योक्ताः, एवं ज्ञानावरणीयमप्याश्रित्य पञ्चविंशतिर्दण्डका वाच्याः, एतदेवाह—'जीवे णं भंते !'इत्यादि, एतच्च समस्तमपि पूर्ववदेव भावनीयं, यः पुनरत्र विशेषस्तत्प्रतिपादनार्थमाह—'नवर'मित्यादि । पापकर्म्मदण्डके जीवपदे मनुष्यपदे च यत्सकषायिपदं लोभकषायिपदं च तत्र सूक्ष्मसम्परायस्य मोहलक्षणपापकर्म्माबन्धकत्वेन चत्वारो भङ्गा उक्ता इह त्वाद्यावेव वाच्यौ, अवीतरागस्य ज्ञानावरणीयबन्धकत्वादिति, एवं दर्शनावरणीयदण्डकाः ॥ वेदनीयदण्डके—प्रथमे भङ्गेऽभव्यो द्वितीये भव्यो यो निर्वास्यति तृतीयो न संभवति वेदनीयमबध्ध्वा पुनस्तद्बन्धनस्यासम्भवात्, चतुर्थे त्वयोगी, 'सलेस्सेवि एवं चेव तइयविहूणा भंग'त्ति, इह तृतीयस्याभावः पूर्वोक्तयुक्तेरवसेयः, चतुर्थः पुनरिहाभ्युपेतोऽपि सम्यग् नावगम्यते, यतः 'बंधी न बंधइ न बंधिस्सइ' इत्येतदयोगिन एव संभवति, स च सलेश्यो न भवतीति, केचित्पुनराहुः–अत एव वचनादयोगिताप्रथमसमये घण्टालालान्यायेन परमशुक्ललेश्याऽस्तीति सलेश्यस्य चतुर्भङ्गकः संभवति, तत्त्वं तु बहुश्रुतगम्यमिति, कृष्णलेश्यादिपञ्चकेऽयोगि-

॥९३१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नारक-आदिनाम् पाप-कर्मन: आदि बन्ध:

प्रत सूत्रांक [८१२-८१३]

दीप अनुक्रम [९७८-९७९]

त्वस्याभावादाद्यावेव, शुक्लेश्ये जीवे सलेश्यभाविता भङ्गा वाच्याः, एतदेवाह—'सुक्कलेसे'त्यादि, अलेश्यः—शैलेशीगतः सिद्धश्च, तस्य च बद्धवान्न बध्नाति न भन्त्स्यतीत्येक एवेति, एतदेवाह—'अलेस्से चरमो'त्ति । 'कण्हपक्खिए पढमबीय'त्ति कृष्णपाक्षिकस्यायोगित्वाभावात्, 'सुक्कपक्खिए तईयविहूण'त्ति शुक्लपाक्षिको यस्मादयोग्यपि स्यादतस्तृतीयविहीनाः शेषास्तस्य स्युरिति । 'एवं सम्मदिट्ठिस्सवि'त्ति तस्याप्ययोगित्वसम्भवेन बन्धासम्भवान्मिथ्यादृष्टिमिश्रदृष्ट्योश्चायोगित्वाभावेन वेदनीयाबन्धकत्वं नास्तीत्याद्यावेव स्यातामत एवाह—'मिच्छदिट्ठी'त्यादि, ज्ञानिनः केवलिनश्चायोगित्वेऽन्तिमोऽस्ति, आभिनिबोधिकादिष्वयोगित्वाभावान्नान्तिम इत्यत आह—'नाणस्से'त्यादि, एवं सर्वत्र यत्रायोगित्वं संभवति तत्र चरमो यत्र तु तन्नास्ति तत्राद्यौ द्वावेवेति भावनीयाविति ॥ आयुष्कर्मदण्डके—

जीवे णं भंते ! आउयं कम्मं किं बंधी बंधइ ? पुच्छा, गोयमा ! अत्थेगतिए बंधी चउभंगो सलेस्से जाव सुक्कलेस्से चत्तारि भंगा अलेस्से चरिमो भंगो । कण्हपक्खिए णं पुच्छा, गोयमा ! अत्थेगतिए बंधी बंधइ बंधिस्सइ अत्थेगतिए बंधी न बंधइ बंधिस्सइ, सुक्कपक्खिए सम्मदिट्ठी मिच्छादिट्ठी चत्तारि भंगा, सम्मामिच्छादिट्ठीपुच्छा, गोयमा ! अत्थेगतिए बंधी न बंधइ बंधिस्सइ अत्थेगतिए बंधी न बंधइ न बंधिस्सइ, नाणी जाव ओहिनाणी चत्तारि भंगा, मणपज्जवनाणीपुच्छा, गोयमा ! अत्थेगतिए बंधी बंधइ बंधिस्सइ, अत्थेगतिए बंधी न बंधइ बंधिस्सइ, अत्थेगतिए बंधी न बंधइ न बंधिस्सइ, केवलनाणे चरमो भंगो, एवं एएणं कमेणं नोसन्नोवउत्ते

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नारक-आदिनाम् पाप-कर्मन: आदि बन्ध:

प्रत सूत्रांक [८१४..] दीप अनुक्रम [९८०]

बितियविहूणा जहेव मणपज्जवनाणे, अवेदए अकसाई य ततियचउत्था जहेव सम्मामिच्छत्ते, अजोगिम्मि चरिमो, सेसेसु पदेसु चत्तारि भंगा जाव अणागारोवउत्ते ॥

'चउभंगो'त्ति तत्र प्रथमोऽभव्यस्य द्वितीयो यश्चरमशरीरो भविष्यति तस्य, तृतीयः पुनरुपशमकस्य, स ह्यायुर्बद्धवान् पूर्वं उपशमकाले न बध्नाति तत्प्रतिपतितस्तु भन्त्स्यति, चतुर्थस्तु क्षपकस्य, स ह्यायुर्बद्धवान् न बध्नाति न च भन्त्स्यतीति । 'सलेस्से' इह यावत्करणात् कृष्णलेश्यादिग्रहस्तत्र यो न निर्वास्यति तस्य प्रथमः, यस्तु चरमशरीरतयोत्पत्स्यते तस्य द्वितीयः, अबन्धकाले तृतीयः, चरमशरीरस्य च चतुर्थः, एवमन्यत्रापि । 'अलेस्से चरमो'त्ति अलेश्यः– शैलेशीगतः सिद्धश्च, तस्य च वर्त्तमानभविष्यत्कालयोरायुषोऽबन्धकत्वाच्चरमो भङ्गः । कृष्णपाक्षिकस्य प्रथमस्तृतीयश्च संभवति, तत्र च प्रथमः प्रतीत एव, तृतीयस्त्वायुष्काबन्धकाले न बध्नात्येव उत्तरकालं तु तद् भन्त्स्यतीत्येवं स्यात्, द्वितीयचतुर्थौ तु तस्य नाभ्युपगम्येते, कृष्णपाक्षिकत्वे सति सर्वथा तदभन्त्स्यमानताया अभाव इति विवक्षणात्, शुक्लपाक्षिकस्य सम्यग्दृष्टेश्चत्वारः, तत्र बद्धवान् पूर्वं बध्नाति च बन्धकाले भन्त्स्यति चाबन्धकालस्योपरीत्येकः १ बद्धवान् बध्नाति न भन्त्स्यति च चरमशरीरत्वे इति द्वितीयः २ तथा बद्धवान् न बध्नात्यबन्धकाले उपशमावस्थायां वा भन्त्स्यति च पुनर्बन्धकाले प्रतिपतितो वेति तृतीयः ३ चतुर्थस्तु क्षपकस्येति ४ । मिथ्यादृष्टिस्तु द्वितीयभङ्गके न भन्त्स्यति चरमशरीरप्राप्तौ, तृतीये न बध्नात्यबन्धकाले चतुर्थे न बध्नात्यबन्धकाले न भन्त्स्यति चरमशरीरप्राप्ताविति, 'सम्मामिच्छे'त्यादि, सम्यग्मिथ्यादृष्टिरायुर्न बध्नाति, चरमशरीरत्वे च कश्चिन्न भन्त्स्यत्यपीतिकृत्वाऽन्त्यावेवेति, ज्ञानिनां

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नारक-आदिनाम् पाप-कर्मन: आदि बन्ध:

प्रत सूत्रांक [८१४..]

दीप अनुक्रम [९८०]

चत्वारः प्राग्वद्भावयितव्याः, मनःपर्यायज्ञानिनो द्वितीयवर्जास्तत्रासौ पूर्वमायुर्बद्धवान् इदानीं तु देवायुर्बध्नाति ततो मनुष्यायुर्भन्त्स्यतीति प्रथमः, बध्नाति न भन्त्स्यतीति न संभवति, अवश्यं देवत्वे मनुष्यायुषो बन्धनादितिकृत्वा द्वितीयो नास्ति, तृतीय उपशमकस्य, स हि न बध्नाति प्रतिपतितश्च भन्त्स्यति, क्षपकस्य चतुर्थः, एतदेव दर्शयति—'मणपज्जवे'त्यादि, 'केवलनाणे चरमो'त्ति केवली ह्यायुर्न बध्नाति न च भन्त्स्यतीतिकृत्वा, नोसञ्ज्ञोपयुक्तस्य भङ्गकत्रयं द्वितीयवर्जं मनःपर्यायवद्भावनीयं, एतदेवाह—'एएण'मित्यादि, 'अवेदए'इत्यादि, अवेदकोऽकषायी च क्षपक उपशमको वा तयोश्च वर्त्तमानबन्धो नास्त्यायुषः उपशमकश्च प्रतिपतितो भन्त्स्यति क्षपकस्तु नैवं भन्त्स्यतीतिकृत्वा तयोस्तृतीयचतुर्थौ, 'सेसेसु'त्ति शेषपदेषु—उक्तव्यतिरिक्तेषु अज्ञान १ मत्यज्ञानादि ३ सञ्ज्ञोपयुक्ताहारादिसञ्ज्ञोपयुक्त ४ सवेद १ स्त्रीवेदादि ३ सकषाय १ क्रोधादिकषाय ४ सयोगि १ मनोयोग्यादि २ साकारोपयुक्तानाकारोपयुक्तलक्षणेषु चत्वार एवेति ।

नेरइए णं भंते ! आउयं कम्मं किं बंधी पुच्छा, गोयमा ! अत्थेगतिए चत्तारि भंगा एवं सव्वत्थवि नेरइयाणं चत्तारि भंगा नवरं कण्हलेस्से कण्हपक्खिए य पढमततिया भंगा, सम्मामिच्छत्ते ततियचउत्था, असुरकुमारे एवं चेव, नवरं कण्हलेस्सेवि चत्तारि भंगा भाणियव्वा सेसं जहा नेरइयाणं एवं जाव थणियकुमाराणं, पुढविक्काइयाणं सव्वत्थवि चत्तारि भंगा, नवरं कण्हपक्खिए पढमततिया भंगा, तेऊलेस्से पुच्छा, गोयमा ! बंधी न बंधइ बंधिस्सइ सेसेसु सव्वत्थ चत्तारि भंगा, एवं आउक्काइयवणस्सइकाइयाणवि निरव-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नारक-आदिनाम् पाप-कर्मन: आदि बन्ध:

प्रत सूत्रांक [..८१४]

दीप अनुक्रम [९८०]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥९३३॥

२६ शतके उद्देशः १ जीवानामायुःकर्मबन्धित्वादि सू ८१४

सेसं, तेउकाइयवाउकाइयाणं सव्वत्थवि पढमततिया भंगा, बेइंदियतेइंदियचउरिंदियाणंपि सव्वत्थवि पढमततिया भंगा, नवरं सम्मत्ते नाणे आभिणिबोहियनाणे सुयनाणे ततिओ भंगो। पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं कण्हपक्खिए पढमततिया भंगा, सम्मामिच्छत्ते ततियचउत्थो भंगो, सम्मत्ते नाणे आभिणिबोहियनाणे सुयनाणे ओहिनाणे एएसु पंचसुवि पदेसु बितियविहूणा भंगा, सेसेसु चत्तारि भंगा, मणुस्साणं जहा जीवाणं, नवरं सम्मत्ते ओहिए नाणे आभिणिबोहियनाणे सुयनाणे ओहिनाणे एएसु बितियविहूणा भंगा, सेसं तं चेव, वाणमंतरजोइसियवेमाणिया जहा असुरकुमारा, नामं गोयं अंतरायं च एयाणि जहा नाणावरणिज्जं। सेवं भंते! २ त्ति जाव विहरति॥ (सूत्रं ८१४)॥ बंधिसयस्स पढमो उद्देसओ॥ २६-१॥

नारकदण्डके—'चत्तारि भंग'त्ति, तत्र नारक आयुर्बद्धवान् बध्नाति बन्धकाले भन्त्स्यति भवान्तर इत्येकः १, प्राप्तव्यसिद्धिकस्य द्वितीयः, बन्धकालाभावं भाविबन्धकालं चापेक्ष्य तृतीयः, बद्धपरभविकायुषोऽनन्तरं प्राप्तव्यचरमभवस्य चतुर्थः, एवं सर्वत्र, विशेषमाह—'नवर'मित्यादि, लेश्यापदे कृष्णलेश्येषु नारकेषु प्रथमतृतीयौ, तथाहि—कृष्णलेश्यो नारको बद्धवान् बध्नाति भन्त्स्यति चेति प्रथमः प्रतीत एव, द्वितीयस्तु नास्ति, यतः कृष्णलेश्यो नारकस्तिर्यक्षूत्पद्यते मनुष्येषु चाचरमशरीरेषु, कृष्णलेश्या हि पञ्चमनरकपृथिव्यादिषु भवति न च तत उद्वृत्तः सिद्ध्यतीति, तदेवमसौ नारकस्तिर्यगाद्यायुर्बद्ध्वा पुनर्भन्त्स्यति अचरमशरीरत्वादिति। तथा कृष्णलेश्यो नारक आयुष्काबन्धकाले तन्न बध्नाति बन्धकाले तु भन्त्स्यतीति तृतीयः, चतुर्थस्तु तस्य नास्ति आयुरबन्धकत्वस्याभावादिति। तथा कृष्णपाक्षिकनारकस्य ॥९३३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नारक-आदिनाम् पाप-कर्मन: आदि बन्ध:

प्रत सूत्रांक [..८१४] दीप अनुक्रम [९८०]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रथमः प्रतीत एव, द्वितीयो नास्ति, यतः कृष्णपाक्षिको नारक आयुर्बद्ध्वा पुनर्न भन्त्स्यतीत्येतन्नास्ति, तस्य चरमभवाभावात्, तृतीयस्तु स्यात्, चतुर्थोऽपि न उक्तयुक्तेरेवेति। 'सम्मामिच्छत्त तइयचउत्थ'त्ति सम्यग्मिथ्यादृष्टेरायुषो बन्धाभावादिति। असुरकुमारदण्डके 'कण्हलेसेवि चत्तारि भंग'त्ति नारकदण्डके कृष्णलेश्यनारकस्य किल प्रथमतृतीयावुक्तौ, असुरकुमारस्य तु कृष्णलेश्यस्यापि चत्वार एव, तस्य हि मनुष्यगत्यवाप्तौ सिद्धिसम्भवेन द्वितीयचतुर्थयोरपि भावादिति। पृथिवीकायिकदण्डके 'कण्हपक्खिए पढमतइया भंग'त्ति, इह युक्तिः पूर्वोक्तैवानुसरणीया॥ तेजोलेश्यापदे तृतीयो भङ्गः, कथं?, कश्चिद्देवस्तेजोलेश्यः पृथिवीकायिकेषूत्पन्नः स चापर्याप्तकावस्थायां तेजोलेश्यो भवति, तेजोलेश्याद्धायां चापगतायामायुर्बध्नाति तस्मात्तेजोलेश्यः पृथिवीकायिक आयुर्बद्धवान् देवत्वे न बध्नाति तेजोलेश्यावस्थायां भन्त्स्यति च तस्यामपगतायामित्येवं तृतीयः, 'एवं आउक्काइयवणस्सइकाइयाणवि'त्ति उक्तन्यायेन कृष्णपाक्षिकेषु प्रथमतृतीयौ भङ्गौ, तेजोलेश्यायां च तृतीयभङ्गसम्भवस्तेष्वित्यर्थः, अन्यत्र तु चत्वारः, 'तेऊक्काइए'इत्यादि, तेजस्कायिकवायुकायिकानां सर्वत्र एकादशस्वपि स्थानकेष्वित्यर्थः प्रथमतृतीयभङ्गौ भवतस्तत उद्वृत्तानामनन्तरं मनुष्येष्वनुत्पत्त्या सिद्धिगमनाभावेन द्वितीयचतुर्थासम्भवाद्, मनुष्येषु अनुत्पत्तिश्चैतेषां "सत्तममहिनेरइया तेउवाऊ अणंतरुवट्टा। न य पावे माणुस्सं तहेवऽसंखाउआ सव्वे॥ १॥" [सप्तममहीनारकास्तेजोवायवोऽनन्तरोद्वृत्ताः मानुष्यं न प्राप्नुवन्ति तथैव सर्वे स्युरसङ्ख्यातायुषः॥ १॥] इति वचनादिति। 'बेइंदिए'इत्यादि, विकलेन्द्रियाणां सर्वत्र प्रथमतृतीयभङ्गौ, यतस्तत उद्वृत्तानामानन्तर्येण सत्यपि मानुषत्वे निर्वाणाभावस्तस्मादवश्यं पुनस्तेषामायुषो बन्ध इति, यदुक्तं विकलेन्द्रि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नारक-आदिनाम् पाप-कर्मनः आदि बन्धः

प्रत सूत्रांक [..८१४]

दीप अनुक्रम [९८०]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥९३४॥

याणां सर्वत्र प्रथमतृतीयभङ्गाविति तदपवादमाह—'नवरं सम्मत्ते'इत्यादि, सम्यक्त्वे ज्ञाने आभिनिबोधिके श्रुते च विकलेन्द्रियाणां तृतीय एव, यतः सम्यक्त्वादीनि तेषां सासादनभावेनापर्याप्तकावस्थायामेव, तेषु चापगतेष्वायुषो बन्ध इत्यतः पूर्वभवे बद्धवन्तः सम्यक्त्वाद्यवस्थायां च न बध्नन्ति तदनन्तरं च भन्त्स्यंतीति तृतीय इति। 'पंचिंदियतिरिक्खे'त्यादि, पञ्चेन्द्रियतिरश्चां कृष्णपाक्षिकपदे प्रथमतृतीयौ, कृष्णपाक्षिको ह्यायुर्बद्धाऽबद्धा वा तदबन्धकोऽनन्तरमेव भवति तस्य सिद्धिगमनायोग्यत्वादिति। 'सम्मामिच्छत्ते तईयचउत्थ'त्ति सम्यग्मिथ्यादृष्टेरायुषो बन्धाभावात्तृतीयचतुर्थावेव, भावितं चैतत्प्रागेवेति। 'सम्मत्ते'इत्यादि, पञ्चेन्द्रियतिरश्चां सम्यक्त्वादिषु पञ्चसु द्वितीयवर्जा भङ्गा भवन्ति, कथं?, यदा सम्यग्दृष्ट्यादिः पञ्चेन्द्रियतिर्यगायुर्भवति तदा देवेष्वेव स च पुनरपि भन्त्स्यतीति न द्वितीयसम्भवः, प्रथमतृतीयौ तु प्रतीतावेव, चतुर्थः पुनरेवं–यथा मनुष्येषु बद्धायुरसौ सम्यक्त्वादि प्रतिपद्यते अनन्तरं च प्राप्तस्य चरमभवस्तदैवेति। 'मणुस्साणं जहा जीवाणं'ति, इह विशेषमाह—'नवर'मित्यादि, सम्यक्त्वसामान्यज्ञानादिषु पञ्चसु पदेषु मनुष्या द्वितीयविहीनाः, भावना चेह पञ्चेन्द्रियतिर्यक्सूत्रवदवसेयेति॥ षड्विंशतितमशते प्रथमः॥ २६–१॥

२६ शतके उद्देशः १ जीवानामायुःकर्मबन्धित्वादि सू ८१४

प्रथमोद्देशके जीवादिद्वारे एकादशकप्रतिबद्धैर्नवभिः पापकर्मादिप्रकरणैर्जीवादीनि पञ्चविंशतिजीवस्थानानि निरूपितानि द्वितीयेऽपि तथैव तानि चतुर्विंशतिर्निरूप्यन्त इत्येवंसम्बद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

अणंतरोववन्नए णं भंते! नेरइए पावं कम्मं किं बंधी? पुच्छा तहेव, गोयमा! अत्थेगतिए बंधी पढम- ॥९३४॥

Jain Education International | For Personal & Private Use Only | www.jainelibrary.org

अथ षड्विंशतितमे शतके प्रथम-उद्देशक: परिसमाप्तं

अथ षड्विंशतितमे शतके द्विवतीय-उद्देशक: आरब्ध:

नारक-आदिनाम् पाप-कर्मन: आदि बन्ध:

प्रत सूत्रांक [८१५]

दीप अनुक्रम [९८१]

बितिया भंगा। सलेस्से णं भंते ! अणंतरोववन्नए नेरइए पावं कम्मं किं बंधी पुच्छा, गोयमा ! पढमबितिया भंगा, एवं खलु सव्वत्थ पढमबितिया भंगा, नवरं सम्मामिच्छत्तं मणजोगो वइजोगो य न पुच्छिज्जइ, एवं जाव थणियकुमाराणं, बेइंदियतेइंदियचउरिंदियाणं वयजोगो न भन्नइ, पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणंपि सम्मामिच्छत्तं ओहिनाणं विभंगनाणं मणजोगो वयजोगो एयाणि पंच पदाणि ण भन्नंति। मणुस्साणं अलेस्ससम्मामिच्छत्तमणपज्जवणाणकेवलनाणविभंगनाणनोसन्नोवउत्तअवेदगअकसायीमणजोगवयजोगअजोगिएयाणि एक्कारस पदाणि ण भन्नंति, वाणमंतरजोइसियवेमाणियाणं जहा नेरइयाणं तहेव ते तिन्नि न भन्नंति सव्वेसिं, जाणि सेसाणि ठाणाणि सव्वत्थ पढमबितिया भंगा, एगिंदियाणं सव्वत्थ पढमबितिया भंगा, जहा पावे एवं नाणावरणिज्जेणवि दंडओ, एवं आउयवज्जेसु जाव अंतराइए दंडओ॥ अणंतरोववन्नए णं भंते ! नेरइए आउयं कम्मं किं बंधी पुच्छा, गोयमा ! बंधी न बंधइ बंधिस्सइ। सलेस्से णं भंते ! अणंतरोववन्नए नेरइए आउयं कम्मं किं बंधी ?, एवं चेव ततिओ भंगो, एवं जाव अणागारोवउत्ते, सव्वत्थवि ततिओ भंगो, एवं मणुस्सवज्जं जाव वेमाणियाणं, मणुस्साणं सव्वत्थ ततियचउत्था भंगा, नवरं कण्हपक्खिएसु ततिओ भंगो, सव्वेसिं नाणत्ताइं ताइं चेव। सेवं भंते ! २ त्ति॥ (सूत्रं ८१५)॥ बंधिसयस्स बितिओ॥ २६-२॥

'अणंतरोववन्नए ण'मित्यादि, इहाद्यावेव भङ्गौ अनन्तरोपपन्ननारकस्य मोहलक्षणपापकर्म्माबन्धकत्वासम्भवात्, तद्धि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नारक-आदिनाम् पाप-कर्मन: आदि बन्ध:

प्रत सूत्रांक [८१५] दीप अनुक्रम [९८१]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥ ९३५ ॥

सूक्ष्मसम्परायादिषु भवति, तानि च तस्य न संभवन्तीति । 'सव्वत्थ'त्ति लेश्यादिपदेषु, एतेषु च लेश्यादिपदेषु सामान्यतो नारकादीनां संभवन्त्यपि, यानि पदान्यनन्तरोत्पन्ननारकादीनामपर्याप्तकत्वेन न सन्ति तानि तेषां न प्रच्छनीयानीति दर्शयन्नाह—'नवर'मित्यादि, तत्र सम्यग्मिथ्यात्वाद्युक्तत्रयं यद्यपि नारकाणामस्ति तथाऽपीहानन्तरोत्पन्नतया तेषां तन्नास्तीति न पृच्छनीयं, एवमुत्तरत्रापि ॥ आयुष्कर्म्मदण्डके—'मणुस्साणं सव्वत्थ तईयचउत्थ'त्ति यतोऽनन्तरोत्पन्नो मनुष्यो नायुर्बध्नाति भन्त्स्यति पुनः चरमशरीरस्त्वसौ न बध्नाति न च भन्त्स्यतीति । 'कण्हपक्खिएसु तइओ'त्ति कृष्णपाक्षिकत्वेन न भन्त्स्यतीत्येतस्य पदस्यासम्भवात्तृतीय एव, 'सव्वेसिं नाणत्ताइं ताइं चेव'त्ति सर्वेषां नारकादिजीवानां यानि पापकर्मदण्डकेऽभिहितानि नानात्वानि तान्येवायुर्दण्डकेऽपीति ॥ षड्विंशतितमशते द्वितीयः ॥ २६–२ ॥

२६ शतके उद्देशः २ अनन्तरोत्पन्नानां उद्देशः ३ परम्परोत्पन्नानां पापबन्धित्वादि सू ८१६

द्वितीयोद्देशकोऽनन्तरोपपन्नकान्नारकादीनाश्रित्योक्तस्तृतीयस्तु परम्परोपपन्नकानाश्रित्योच्यते इत्येवंसम्बद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

परंपरोववन्नए णं भंते ! नेरइए पावं कम्मं किं बंधी पुच्छा, गोयमा ! अत्थेगतिए पढमबितिया, एवं जहेव पढमो उद्देसओ तहेव परंपरोववन्नएहिवि उद्देसओ भाणियव्वो नेरइयाइओ तहेव नवदंडगसहिओ, अट्ठण्हवि कम्मप्पगडीणं जा जस्स कम्मस्स वत्तव्वया सा तस्स अहीणमतिरित्ता नेयव्वा जाव वेमाणिया अणागारोवउत्ता । सेवं भंते ! २ त्ति ॥ (सूत्रं ८१६) ॥ २६–३ ॥

॥ ९३५ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ षड्विंशतितमे शतके द्वितीय-उद्देशक: परिसमाप्तं

अथ षड्विंशतितमे शतके तृतीय-उद्देशक: आरब्ध:

नारक-आदिनाम् पाप-कर्मन: आदि बन्ध:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत
सूत्रांक
[८१६]

दीप
अनुक्रम
[९८२]

'परंपरोववन्नए ण'मित्यादि, 'जहेव पढमो उद्देसओ'त्ति जीवनारकादिविषयः, केवलं तत्र जीवनारकादिपञ्चविंशतिः पदान्यभिहितानि इह तु नारकादीनि चतुर्विंशतिरेवेति, एतदेवाह–'नेरइयाइओ'त्ति नारकादयोऽत्र वाच्या इत्यर्थः, 'तहेव नवदंडगसंगहिओ'त्ति पापकर्मज्ञानावरणादिप्रतिबद्धा ये नव दण्डकाः प्रागुक्तास्तैः सङ्गृहीतो–युक्तो य उद्देशकः स तथा ॥ षड्विंशतितमशते तृतीयः ॥ २६–३ ॥

अणंतरोगाढए णं भंते ! नेरइए पावं कम्मं किं बंधी ? पुच्छा, गोयमा ! अत्थेगतिए० एवं जहेव अणंतरोववन्नएहिं नवदंडगसंगहिओ उद्देसो भणिओ तहेव अणंतरोगाढएहिवि अहीणमतिरित्तो भाणियव्वो नेरइयादीए जाव वेमाणिए । सेवं भंते ! २ ॥ २६–४ ॥ परंपरोगाढए णं भंते ! नेरइए पावं कम्मं किं बंधी जहेव परंपरोववन्नएहिं उद्देसो सो चेव निरवसेसो भाणियव्वो । सेवं भंते ! २ ॥ २६–५ ॥ अणंतराहारए णं भंते ! नेरतिए पावं कम्मं किं बंधी ? पुच्छा, एवं जहेव अणंतरोववन्नएहिं उद्देसो तहेव निरवसेसं । सेवं भंते ! २ ॥२६–६॥ परंपराहारए णं भंते ! नेरइए पावं कम्मं किं बंधी पुच्छा, गोयमा ! एवं जहेव परंपरोववन्नएहिं उद्देसो तहेव निरवसेसो भाणियव्वो । सेवं भंते ! सेवं भंते ! ॥ २६–७ ॥ अणंतरपज्जत्तए णं भंते ! नेरइए पावं कम्मं किं बंधी ? पुच्छा, गोयमा ! जहेव अणंतरोववन्नएहिं उद्देसो तहेव निरवसेसं । सेवं भंते २ ॥ २६–८ ॥ परंपरपज्जत्तए णं भंते ! नेरइए पावं कम्मं किं बंधी ? पुच्छा, गोयमा ! एवं जहेव परंपरोववन्नएहिं उद्देसो तहेव निर-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ षड्विंशतितमे शतके तृतीय-उद्देशक: परिसमाप्तं

अथ षड्विंशतितमे शतके चतुर्थात् एकादशं पर्यन्त: उद्देशका: आरब्धा:

नारक-आदिनाम् पाप-कर्मन: आदि बन्ध:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [८१७]

दीप अनुक्रम [९८२--९९०]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः२

॥९३६॥

वसेसो भाणियव्वो। सेवं ! २ जाव विहरइ ॥ २६-९ ॥ चरिमे णं भंते ! नेरइए पावं कम्मं किं बंधी ? पुच्छा, गोयमा ! एवं जहेव परंपरोववन्नएहिं उद्देसो तहेव चरिमेहिं निरवसेसो। सेवं भंते ! २ जाव विहरति ॥ २६-१० ॥ अचरिमे णं भंते ! नेरइए पावं कम्मं किं बंधी ? पुच्छा, गोयमा ! अत्थेगइए एवं जहेव पढमोद्देसए पढमबितिया भंगा भाणियव्वा सव्वत्थ जाव पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं। अचरिमे णं भंते ! मणुस्से पावं कम्मं किं बंधी ? पुच्छा, गोयमा ! अत्थेगतिए बंधी बंधइ बंधिस्सइ अत्थे० बंधी बंधइ न बंधिस्सइ अत्थेगतिए बंधी न बंधइ बंधिस्सइ। सलेस्से णं भंते ! अचरिमे मणूसे पावं कम्मं किं बंधी ?, एवं चेव तिन्नि भंगा चरमविहूणा भाणियव्वा एवं जहेव पढमुद्देसे, नवरं जेसु तत्थ वीससु चत्तारि भंगा तेसु इह आदिल्ला तिन्नि भंगा भाणियव्वा चरिमभंगवज्जा, अलेस्से केवलनाणी य अजोगीय एए तिन्निवि न पुच्छिज्जंति, सेसं तहेव, वाणमंतरजोइ० वेमा० जहा नेरइए। अचरिमे णं भंते ! नेरइए नाणावरणिज्जं कम्मं किं बंधी पुच्छा, गोयमा ! एवं जहेव पावं नवरं मणुस्सेसु सकसाईसु लोभकसाईसु य पढमबितिया भंगा सेसा अट्ठारस चरमविहूणा सेसं तहेव जाव वेमाणियाणं, दरिसणावरणिज्जंपि एवं चेव निरवसेसं, वेयणिज्जे सव्वत्थवि पढमबितिया भंगा जाव वेमाणियाणं नवरं मणुस्सेसु अलेस्से केवली अजोगी य नत्थि। अचरिमे णं भंते ! नेरइए मोहणिज्जं कम्मं किं बंधी ? पुच्छा, गोयमा ! जहेव पावं तहेव निरवसेसं जाव वेमाणिए ॥ अचरिमे णं भंते ! नेरइए आउयं कम्मं किं बंधी ? पुच्छा, गोयमा ! पढमबितिया भंगा, एवं सव्वपदेसुवि, नेरइयाणं

२६ शतके उद्देशः ४-५-६-७-८-९-१०-११-१२ अनन्तरावगाढादीनां पापबन्धित्वादि सू ८१७

॥९३६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नारक-आदिनाम् पाप-कर्मनः आदि बन्धः

प्रत सूत्रांक [८१७]

दीप अनुक्रम [९८२-९९०]

पढमततिया भंगा नवरं सम्मामिच्छत्ते ततिओ भंगो, एवं जाव थणियकुमाराणं, पुढविक्काइयआउक्काइयवणस्सइकाइयाणं तेउलेस्साए ततिओ भंगो सेसेसु पदेसु सवत्थ पढमततिया भंगा, तेउकाइयवाउक्काइयाणं सवत्थ पढमततिया भंगा, बेइंदियतेइंदियचउ० एवं चेव नवरं सम्मत्ते ओहिनाणे आभिणिबोहियनाणे सुयनाणे एएसु चउसुवि ठाणेसु ततिओ भंगो, पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं सम्मामिच्छत्ते ततिओ भंगो, सेसेसु पदेसु सवत्थ पढमततिया भंगा, मणुस्साणं सम्मामिच्छत्ते अवेदए अकसाइम्मि य ततिओ भंगो, अलेस्स केवलनाण अजोगी य न पुच्छिज्जंति, सेसपदेसु सवत्थ पढमततिया भंगा, वाणमंतरजोइसियवेमाणिया जहा नेरइया। नामं गोयं अंतराइयं च जहेव नानावरणिज्जं तहेव निरवसेसं। सेवं भंते! २ जाव विहरइ ॥ (सूत्रं ८१७) ॥ २६-११ उद्देसो ॥ बंधिसयं सम्मत्तं ॥ २६ ॥

एवं चतुर्थादय एकादशान्ताः, नवरम् 'अणंतरोगाढे'त्ति उत्पत्तिसमयापेक्षयाऽत्रानन्तरावगाढत्वमवसेयं, अन्यथाऽनन्तरोत्पन्नानन्तरावगाढयोर्निर्विशेषता न स्यात्, उक्ता चासौ 'जहेवाणंतरोववन्नएही'त्यादिना, एवं परम्परावगाढोऽपि, 'अनंतराहारए'त्ति आहारकत्वप्रथमसमयवर्त्ती परम्पराहारकस्त्वाहारकत्वस्य द्वितीयादिसमयवर्ती, 'अणंतरपज्जत्त'त्ति पर्याप्तकत्वप्रथमसमयवर्त्ती, स च पर्याप्तिसिद्धावपि तत उत्तरकालमेव पापकर्माद्यबन्धलक्षणकार्यकारी भवतीत्यसावनन्तरोपपन्नवद्व्यपदिश्यते, अत एवाह—'एवं जहेव अणंतरोववन्नएही'त्यादि। तथा—'चरमे णं भंते! नेरइए'त्ति, इह चरमो यः पुनस्तं भवं न प्राप्स्यति, 'एवं जहेवे'त्यादि, इह च यद्यप्यविशेषेणातिदेशः कृतस्तथाऽपि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नारक-आदिनाम् पाप-कर्मन: आदि बन्ध:

प्रत सूत्रांक [८१७]

दीप अनुक्रम [९८२-९९०]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥९३७॥

२६ शतके उद्दे. ४-११ बन्ध्यादि सू ८१७

विशेषोऽवगन्तव्यः, तथाहि–चरमोद्देशकः परम्परोद्देशकवद्वाच्य इत्युक्तं, परम्परोद्देशकश्च प्रथमोद्देशकवत्, तत्र च मनुष्यपदे आयुष्कापेक्षया सामान्यतश्चत्वारो भङ्गा उक्ताः, तेषु च चरममनुष्यस्यायुष्ककर्म्मबन्धमाश्रित्य चतुर्थ एव घटते, यतो यश्चरमोऽसावायुर्बद्धवान् न बध्नाति न च भन्त्स्यतीति, अन्यथा चरमत्वमेव न स्यादिति, एवमन्यत्रापि विशेषोऽवगन्तव्य इति, अचरमो यस्तं भवं पुनः प्राप्स्यति, तत्राचरमोद्देशके पञ्चेन्द्रियतिर्यगन्तेषु पदेषु पापं कर्म्माश्रित्याद्यौ भङ्गकौ, मनुष्याणां तु चरमभङ्गकवर्जास्त्रयो, यतश्चतुर्थश्चरमस्येति, एतदेव दर्शयति—'अचरिमे णं भंते ! मणूसे'इत्यादि, 'बीससु पएसु'त्ति, तानि चैतानि–जीव १ सलेश्य २ शुक्लेश्य ३ शुक्लपाक्षिक ४ सम्यग्दृष्टि ५ ज्ञानि ६ मतिज्ञानादिचतुष्टय-१० नोसञ्ज्ञोपयुक्त ११ वेद १२ सकषाय १३ लोभकषाय १४ सयोगि १५ मनोयोग्यादित्रय १८ साकारोपयुक्ता १९-नाकारोपयुक्त २० लक्षणानि, एतेषु च सामान्येन भङ्गकचतुष्कसम्भवेऽप्यचरमत्वान्मनुष्यपदे चतुर्थो नास्ति, चरमस्यैव तद्भावादिति । 'अलेस्से'इत्यादि, अलेश्यादयस्त्रयश्चरमा एव भवन्तीतिकृत्वेह न प्रष्टव्याः । ज्ञानावरणीयदण्डकोऽप्येवं, नवरं विशेषोऽयं–पापकर्मदण्डके सकषायलोभकषायादिष्वाद्यास्त्रयो भङ्गका उक्ता इह त्वाद्यौ द्वावेव, यत एते ज्ञानावरणीयमबद्ध्वा पुनर्बन्धका न भवन्ति, कषायिणां सदैव ज्ञानावरणबन्धकत्वात्, चतुर्थस्त्वचरमत्वादेव न भवतीति, 'वेयणिज्जे सव्वत्थ पढमबीय'त्ति, तृतीयचतुर्थयोरसम्भवात्, एतयोर्हि प्रथमः प्रागुक्तयुक्तेर्न संभवति द्वितीयस्त्वयोगित्व एव भवतीति ॥ आयुर्दण्डके–'अचरिमे णं भंते ! नेरइए'इत्यादि, 'पढमततिया भंग'त्ति, तत्र प्रथमः प्रतीत एव द्वितीयस्त्वचरमत्वान्नास्ति, अचरमस्य हि आयुर्बन्धोऽवश्यं भविष्यत्यन्यथाऽचरमत्वमेव न स्यात्,

॥९३७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नारक-आदिनाम् पाप-कर्मन: आदि बन्ध:

प्रत सूत्रांक [८१७]

दीप अनुक्रम [९८२-९९०]

एवं चतुर्थोऽपि, तृतीये तु न बध्नात्यायुस्तदबन्धकाले पुनर्भन्त्स्यत्यचरमत्वादिति, शेषपदानां तु भावना पूर्वोक्तानुसारेण कर्त्तव्येति ॥ 'बंधिसयं'ति प्रत्युद्देशकं बन्धीतिशब्देनोपलक्षितं शतं बन्धिशतम् ॥ षड्विंशं शतं वृत्तितः परिसमाप्तमिति ॥ २६ ॥

येषां गौरिव गौः सदर्थपयसां दात्री पवित्रात्मिका, सालङ्कारसुविग्रहा शुभपदक्षेपा सुवर्णान्विता ।
निर्गत्यास्यगृहाङ्गणाद्बुधसभाग्रामाजिरं राजयेद्, ये चास्यां विवृतौ निमित्तमभवन्नन्दन्तु ते सूरयः ॥ १ ॥

॥ अथ सप्तविंशतितमं शतकम् ॥

व्याख्यातं षड्विंशं शतं, अथ सप्तविंशमारभ्यते, अस्य चायमभिसम्बन्धः—अनन्तरशते जीवस्य कर्मबन्धनक्रिया भूतादिकालविशेषेणोक्ता सप्तविंशशते तु जीवस्य तथाविधैव कर्म्मकरणक्रियोच्यत इत्येवंसम्बद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

जीवे णं भंते! पावं कम्मं किं करिंसु करेन्ति करिस्संति १? करिंसु करेंति न करिस्संति २? करिंसु न करेंति करिस्संति ३? करिंसु न करेंति न करेस्संति ४?, गोयमा! अत्थेगतिए करिंसु करेंति करिस्संति १ अत्थे० करिंसु करेंति न करिस्संति २ अत्थे० करिंसु न करेंति करेस्संति ३ अत्थेगतिए करिंसु न करेंति न करेस्संति । सलेस्से णं भंते! जीवे पावं कम्मं एवं एएणं अभिलावेणं जच्चेव बंधिसए वत्तव्वया सच्चेव निरवसे-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ षड्विंशतितमे शतके चतुर्थात् एकादशं पर्यन्ता: उद्देशका:परिसमाप्तं

तत् समाप्ते षड्विंशतिः शतकं अपि परिसमाप्तं

अथ सप्तविंशतितमं शतकं (उद्देशका: १-११) आरब्धं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [८१८]

दीप अनुक्रम [९९१]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥९३८॥

सा भाणियव्वा,तहेव नवदंडगसंगहिया एक्कारस उद्देसगा भाणियव्वा॥करिंसुगसयं सम्मत्तं॥२७।१-११॥(सूत्रं८१८)

२७ शतके उद्दे. १-११ करणाधिकारः सू८१८

'जीवे ण'मित्यादि, ननु बन्धस्य करणस्य च कः प्रतिविशेषः?, उच्यते, न कश्चित्, तर्हि किमिति भेदेनोपन्यासः?, उच्यते, येयं जीवस्य कर्म्मबन्धक्रिया सा जीवकर्तृका न त्वीश्वरादिकृतेत्यस्यार्थस्योपदर्शनार्थं, अथवा बन्धः सामान्यतः करणं त्ववश्यं विपाकदायित्वेन निष्पादनं निधत्तादिस्वरूपमिति ॥ 'करिंसुयसयं'ति 'करिंसु'इत्यनेन शब्देनोपलक्षितं शतं प्राकृतभाषया 'करिंसुयसयं'ति ॥ सप्तविंशं शतं वृत्तितः परिसमाप्तमिति ॥ २७ ॥

व्याख्यातशतसमानं शतमिदमित्यस्य नो कृता विवृतिः । दृष्टसमाने मार्गे किं कुरुतादृर्शकस्तस्य ? ॥ १ ॥

व्याख्यातं कर्म्मवक्तव्यताऽनुगतं सप्तविंशं शतम्, अथ क्रमायातं तथाविधमेवाष्टाविंशं व्याख्यायते, तत्र चैकादशोद्देशका जीवाद्येकादशद्वारानुगतपापकर्मादिदण्डकनवकोपेता भवन्ति, तत्र चाद्योद्देशकस्येदमादिसूत्रम्—

जीवा णं भंते! पावं कम्मं कहिं समज्जिणिंसु कहिं समायरिंसु?, गोयमा! सव्वेवि ताव तिरिक्खजोणिएसु होज्जा १ अहवा तिरिक्खजोणिएसु य नेरइएसु य होज्जा २ अहवा तिरिक्खजोणिएसु य मणुस्सेसु य होज्जा ३ अहवा तिरिक्खजोणिएसु य देवेसु य होज्जा ४ अहवा तिरिक्खजोणिएसु य मणुस्सेसु देवेसु य होज्जा ५ अहवा तिरिक्खजोणिएसु य नेरइएसु य देवेसु य होज्जा ६ अहवा तिरिक्खजोणिएसु य मणुस्सेसु देवेसु य होज्जा ७ अहवा तिरिक्ख० नेरइएसु य मणुस्सेसु देवेसु य होज्जा ८। सलेस्सा णं भंते! जीवा पावं

॥९३८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ सप्तविंशतितमं शतकं (उद्देशका: १-११) परिसमाप्तं

अथ अष्टविंशतितमं शतकं आरब्धं तद् अन्तर्गत् प्रथम-उद्देशक: अत्र वर्तते

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [८१९]

दीप अनुक्रम [९९२]

कम्मं कहं समज्जिणिंसु कहिं समायरिंसु?, एवं चेव, एवं कण्हलेस्सा जाव अलेस्सा, कण्हपक्खिया सुक्कपक्खिया एवं जाव अणागारोवउत्ता। नेरइया णं भंते! पावं कम्मं कहिं समज्जिणिंसु कहिं समायरिंसु?, गोयमा! सव्वेवि ताव तिरिक्खजोणिएसु होज्जत्ति एवं चेव अट्ठ भंगा भाणियव्वा, एवं सव्वत्थ अट्ठ भंगा, एवं जाव अणागारोवउत्तावि, एवं जाव वेमाणियाणं, एवं नाणावरणिज्जेणवि दंडओ, एवं जाव अंतराइएणं, एवं एए जीवादीया वेमाणियपज्जवसाणा नव दंडगा भवंति। सेवं भंते! २ जाव विहरइ (सूत्रं ८१९)॥ २८।१॥

'जीवा णं भंते!' इत्यादि, 'कहिं समज्जिणंसु'त्ति कस्यां गतौ वर्त्तमानाः 'समर्जितवन्तः'? गृहीतवन्तः 'कहिं समायरिंसु'त्ति कस्यां समाचरितवन्तः? पापकर्महेतुसमाचरणेन, तद्विपाकानुभवनेनेति वृद्धाः, अथवा पर्यायशब्दावेताविति, 'सव्वेवि ताव तिरिक्खजोणिएसु होज्ज'त्ति, इह तिर्यग्योनिः सर्वजीवानां मातृस्थानीया बहुत्वात् ततश्च सर्वेऽपि तिर्यग्भ्योऽन्ये नारकादयस्तिर्यग्भ्य आगत्योत्पन्नाः कदाचिद् भवेयुस्ततस्ते सर्वेऽपि तिर्यग्योनिकेष्वभूवन्निति व्यपदिश्यन्ते, अयमभिप्रायः-ये विवक्षितसमये नारकादयोऽभूवंस्तेऽल्पत्वेन समस्ता अपि सिद्धिगमनेन तिर्यग्गतिप्रवेशेन च निर्लेपतयोद्वृत्तास्ततश्च तिर्यग्गतेरनन्तत्वेनानिर्लेपनीयत्वात्तत उद्वृत्तास्तिर्यञ्चस्तत्स्थानेषु नारकादित्वेनोत्पन्नास्ततस्ते तिर्यग्गतौ नरकगत्यादिहेतुभूतं पापं कर्म समर्जितवन्त इत्युच्यत इत्येकः, 'अहवा तिरिक्खजोणिएसु नेरइएसु होज्ज'त्ति विवक्षितसमये ये मनुष्यदेवा अभूवंस्ते निर्लेपतया तथैवोद्वृत्ताः तत्स्थानेषु च तिर्यङ्नारकेभ्य आगत्योत्पन्नाः, ते चैवं व्यपदिश्यन्ते-तिर्यङ्नैरयिकेष्वभूवन्नेते, ये च यत्राभूवंस्ते तत्रैव कर्मोपार्जितवन्त इत्यर्थो लभ्यत इति द्वितीयः, 'अहवा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [८१९]

दीप अनुक्रम [९९२]

॥ ९३९॥

तिरिक्खजोणिएसु य मणुएसु य होज्ज'त्ति विवक्षितसमये ये नैरयिकदेवास्ते तथैव निर्लेपतयोद्वृत्ताः तत्स्थानेषु च तिर्यग्मनुष्येभ्य आगत्योत्पन्नाः, ते चैवं व्यपदिश्यन्ते–तिर्यग्मनुष्येष्वभूवन्नेते, ये च यत्राभूवंस्ते तत्रैव कर्मोपार्जितवन्त इति सामर्थ्यगम्यमिति तृतीयः, तदेवमनया भावनयाऽष्टावेते भङ्गाः, तत्रैकस्तिर्यग्गत्यैव, अन्ये तु तिर्यग्नैरयिकाभ्यां तिर्यग्मनुष्याभ्यां तिर्यग्देवाभ्यामिति त्रयो द्विकसंयोगाः, तथा तिर्यग्नैरयिकमनुष्यैस्तिर्यग्नैरयिकदेवैस्तिर्यग्मनुष्यदेवैरिति त्रयस्त्रिकसंयोगा एकश्चतुष्कसंयोग इति । 'एवं सव्वत्थ'त्ति सलेश्यादिपदेषु 'नव दंडगा भवंति'त्ति पापकर्मादिभेदेन पूर्वोक्तेनेति ॥ ॥ अष्टाविंशतिशते प्रथमः ॥ २८।१ ॥

अणंतरोववन्नगा णं भंते ! नेरइया पावं कम्मं कहिं समज्जिणिंसु कहिं समायरिंसु?, गोयमा! सव्वेवि ताव तिरिक्खजोणिएसु होज्जा, एवं एत्थवि अट्ठ भंगा, एवं अणंतरोववन्नगाणं नेरइयाईणं जस्स जं अत्थि लेसादीयं अणागारोवओगपज्जवसाणं तं सव्वं एयाए भयणाए भाणियव्वं जाव वेमाणियाणं, नवरं अणंतरेसु जे परिहरियव्वा ते जहा बंधिसए तहा इहंपि, एवं नाणावरणिज्जेणवि दंडओ एवं जाव अंतराइएणं निरवसेसं एसोवि नवदंडगसंगहिओ उद्देसओ भाणियव्वो। सेवं भंते! २ त्ति ॥ (सूत्रं ८२०)॥ २८।२ ॥ एवं एएणं कमेणं जहेव बंधिसए उद्देसगाणं परिवाडी तहेव इहंपि अट्ठसु भंगेसु नेयव्वा नवरं जाणियव्वं जं जस्स अत्थि तं तस्स भाणियव्वं जाव अचरिमुद्देसो। सव्वेवि एए एक्कारस उद्देसगा। सेवं भंते ! २ इति जाव विहरइ ॥(सूत्रं ८२१)॥ कम्मसमज्जणणसयं सम्मत्तं ॥ २८ ॥

२८ शतके उद्देशः १ पापस्यार्जनाचारौ सू ८१९ अनन्तरोत्पन्नादीनां च तौ सू ८२०

॥ ९३९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र अष्टाविंशतितमं शतके प्रथम-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ अष्टविंशतितमं शतके २-११ उद्देशका: आरब्धा:

प्रत सूत्रांक [८२०-८२१]

दीप अनुक्रम [९९३-९९४]

'अणंतरोववन्नगा ण'मित्यादिर्द्वितीयस्तत्र च 'अणंतरेसु जे परिहरियव्वा ते जहा बंधिसए तहा इहंपि'त्ति, अनन्तरोपपन्ननारकादिषु यानि सम्यग्मिथ्यात्वमनोयोगवाग्योगादीनि पदानि 'परिहरियव्व'त्ति असम्भवान्न प्रच्छनीयानि तानि यथा बन्धिशते तथेहापीति । ननु प्रथमभङ्गके सर्वे तिर्यग्भ्य उत्पन्नाः कथं संभवन्ति, आनतादिदेवानां तीर्थङ्करादिमनुष्यविशेषाणां च तेभ्य आगतानामनुत्पत्तेः?, एवं द्वितीयादिभङ्गकेष्वपि भावनीयं, सत्यं, किन्तु बाहुल्यमाश्रित्यैते भङ्गा ग्राह्याः, इदं च वृद्धवचनेन दर्शयिष्यामः । 'कम्मसमज्जणणसयं'ति कर्मसमर्जनलक्षणार्थप्रतिपादकं शतं कर्म्मसमर्जनशतम् ॥ अष्टाविंशं शतं वृत्तितः परिसमाप्तमिति ॥ २८ ॥

इति चूर्णिवचनरचनाकुञ्चिकयोद्घाटितं मयाऽप्येतत् । अष्टाविंशतितमशतमन्दिरमनघं महार्घचयम् ॥ १ ॥

व्याख्यातं पापकर्मादिवक्तव्यताऽनुगतमष्टाविंशं शतम्, अथ क्रमायातं तथाविधमेवैकोनत्रिंशं व्याख्यायते, तत्र च तथैवैकादशोद्देशका भवन्ति, तेषु चाद्योद्देशकस्येदमादिसूत्रम्—

जीवा णं भंते! पावं कम्मं किं समायं पट्ठविंसु समायं निट्ठविंसु १? समायं पट्ठविंसु विसमायं निट्ठविंसु २? विसमायं पट्ठविंसु समायं निट्ठविंसु ३? विसमायं पट्ठविंसु विसमायं निट्ठविंसु?, गोयमा! अत्थेगइया समायं पट्ठविंसु समायं निट्ठविंसु जाव अत्थेगइया विसमायं पट्ठविंसु विसमायं निट्ठविंसु, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ अत्थेगइया समायं पट्ठविंसु समायं निट्ठविंसु ? तं चेव, गोयमा! जीवा चउव्विहा पन्नत्ता, तंजहा—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र अष्टाविंशतितमं शतके २-११ उद्देशकाः परिसमाप्ताः

तत् समाप्ते अष्टाविंशतितमं शतकं अपि परिसमाप्तं

अथ एकोनत्रिंशतम् शतकं आरब्धं तद् अन्तर्गत् प्रथम-उद्देशकः अत्र वर्तते

प्रत सूत्रांक [८२२]

दीप अनुक्रम [९९५]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥९४०॥

अत्थेगइया समाउया समोववन्नगा १ अत्थेगइया समाउया विसमोववन्नगा २ अत्थेगइया विसमाउया समोववन्नगा ३ अत्थेगइया विसमाउया विसमोववन्नगा ४, तत्थ णं जे ते समाउया समोववन्नगा ते णं पावं कम्मं समायं पट्ठविंसु समायं निट्ठविंसु, तत्थ णं जे ते समाउया विसमोववन्नगा ते णं पावं कम्मं समायं पट्ठविंसु विसमायं निट्ठविंसु, तत्थ णं जे ते विसमाउया समोववन्नगा ते णं पावं कम्मं विसमायं पट्ठविंसु समायं निट्ठविंसु, तत्थ णं जे ते विसमाउया विसमोववन्नगा ते णं पावं कम्मं विसमायं पट्ठविंसु विसमायं णिट्ठविंसु, से तेणट्ठेणं गोयमा! तं चेव। सलेस्सा णं भंते! जीवा पावं कम्मं एवं चेव, एवं सव्वट्ठाणेसुवि जाव अणागारोवउत्ता, एए सव्वेवि पया एयाए वत्तव्वयाए भाणियव्वा। नेरइया णं भंते! पावं कम्मं किं समायं पट्ठविंसु समायं निट्ठविंसु? पुच्छा, गोयमा! अत्थेगइया समायं पट्ठविंसु एवं जहेव जीवाणं तहेव भाणियव्वं जाव अणागारोवउत्ता, एवं जाव वेमाणियाणं जस्स जं अत्थि तं एएणं चेव कमेणं भाणियव्वं जहा पावेण दंडओ, एएणं कमेणं अट्ठसुवि कम्मप्पगडीसु अट्ठ दंडगा भाणियव्वा जीवादीया वेमाणियपज्जवसाणा एसो नवदंडगसंगहिओ पढमो उद्देसो भाणियव्वो। सेवं भंते! २ इति॥ (सूत्रं ८२२)॥ २९।१॥

'जीवा णं भंते! पाव'मित्यादि, 'समायं'ति समकं बहवो जीवा युगपदित्यर्थः 'पट्ठविंसु'त्ति प्रस्थापितवन्तः-प्रथमतया वेदयितुमारब्धवन्तः, तथा समकमेव 'निट्ठविंसु'त्ति 'निष्ठापितवन्तः' निष्ठां नीतवन्त इत्येकः, तथा समकं प्रस्थापितवन्तः 'विसम'त्ति विषमं यथा भवति विषमतयेत्यर्थः निष्ठापितवन्त इति द्वितीयः, एवमन्यौ द्वौ। 'अत्थेग-

२९ शतके उद्देशः १ समविषम-प्रस्थापन-निष्ठापने सू ८२२

॥९४०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [८२२]

दीप अनुक्रम [९९५]

इया समाउया'इत्यादि चतुर्भङ्गी, तत्र 'समाउय'त्ति समायुषः उदयापेक्षया समकालायुष्कोदया इत्यर्थः 'समोववन्नग'-त्ति विवक्षितायुषः क्षये समकमेव भवान्तरे उपपन्नाः समोपपन्नकाः, ये चैवंविधास्ते समकमेव प्रस्थापितवन्तः समकमेव च निष्ठापितवन्तः, नन्वायुःकर्मैवाश्रित्यैवमुपपन्नं भवति न तु पापं कर्म्म, तद्धि नायुष्कोदयापेक्षं प्रस्थाप्यते निष्ठाप्यते चेति, नैवं, यतो भवापेक्षः कर्म्मणामुदयः क्षयश्चेष्यते, उक्तञ्च–"उदयक्खयक्खओवसमे"त्यादि, अत एवाह–'तत्थ णं जे ते समाउया समोववन्नया ते णं पावं कम्मं समायं पट्ठविंसु समायं निट्ठविंसु'त्ति प्रथमः, तथा 'तत्थ णं जे ते समाउया विसमोववन्नग'त्ति समकालायुष्कोदया विषमतया परभवोत्पन्ना मरणकालवैषम्यात् 'ते समायं पट्ठविंसु'त्ति आयुष्क-विशेषोदयसम्पाद्यत्वात्पापकर्म्मवेदनविशेषस्य 'विसमायं निट्ठविंसु'त्ति मरणवैषम्येण पापकर्मवेदनविशेषस्य विषमतया निष्ठासम्भवादिति द्वितीयः, तथा 'विसमाउया समोववन्नग'त्ति विषमकालायुष्कोदयाः समकालभवान्तरोत्पत्तयः 'ते णं पावं कम्मं विसमायं पट्ठविंसु समायं निट्ठविंसु'त्ति तृतीयः, चतुर्थः सुज्ञात एवेति, इह चैतान् भङ्गकान् प्राक्तन-शतभङ्गकांश्चाश्रित्य वृद्धैरुक्तम्–"पट्ठवणसए किहणु हु समाउउववन्नएसु चउभंगो। किह व समज्जणसए गमणिज्जा अत्थओ भंगा? ॥ १॥ पट्ठवणसए भंगा पुच्छाभंगाणुलोमओ वच्चा। यथा पृच्छाभङ्गाः समकप्रस्थापनादयो न बध्यन्ते तथेह समायुष्कादयः अन्यत्रान्यथाव्याख्याता अपि व्याख्येया इत्यर्थः। "कम्मसमज्जणसए बाहुल्लाओ समाउज्जा ॥ २॥" [प्रस्थापनशते समायुरुत्पन्नेषु चतुर्भङ्गी कथं नु कथं वा समर्जनशते भङ्गा अर्थतो गम्याः ? ॥ १॥ प्रस्थापनशते

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत
सूत्रांक
[८२२]

दीप
अनुक्रम
[९९५]

व्याख्या-
प्रज्ञप्तिः
अभयदेवी-
या वृत्तिः २

॥९४१॥

भङ्गानां पृच्छा भङ्गानुलोम्यतो वाच्या । कर्मसमर्जनशते बाहुल्यात्समायोजयेत् ॥ १ ॥] इति ॥ एकोनत्रिंशशते प्रथम उद्देशकः ॥ २९ । १ ॥

२९ शतके
उद्दे.२-११
अनन्तरो-
त्पन्नादीनां
पापसमप्र-
स्थापनादि
सू ८२३

अणंतरोववन्नगा णं भंते! नेरइया पावं कम्मं किं समायं पट्ठविंसु समायं निट्ठविंसु? पुच्छा, गोयमा! अत्थेगइया समायं पट्ठविंसु समायं निट्ठविंसु अत्थेगइया समायं पट्ठविंसु विसमायं निट्ठविंसु, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ अत्थेगइया समायं पट्ठविंसु? तं चेव, गोयमा! अणंतरोववन्नगा नेर० दुविहा पं० तं०- अत्थेगइया समाउया समोववन्नगा अत्थेगइया समाउया विसमोववन्नगा०, तत्थ णं जे ते समाउया समोववन्नगा ते णं पावं कम्मं समायं पट्ठविंसु समायं निट्ठविंसु, तत्थ णं जे ते समाउया विसमोववन्नगा ते णं पावं कम्मं समायं पट्ठविंसु विसमायं निट्ठविंसु, से तेण० तं चेव। सलेस्सा णं भंते! अणंतरो० नेर० पावं एवं चेव, एवं जाव अणागारोव०, एवं असुरकु० एवं जाव वेमा० नवरं जं जस्स अत्थि तं तस्स भाणि०, एवं नाणावरणिज्जेणवि दंडओ, एवं निरवसेसं जाव अंतराइएणं। सेवं भंते! २ त्ति जाव विहरति ॥ २९।२ ॥

एवं एएणं गमएणं जच्चेव बंधिसए उद्देसगपरिवाडी सच्चेव इहवि भा० जाव अचरिमोत्ति, अणंतरउद्देसगाणं चउण्हवि एक्का वत्तव्वया सेसाणं सत्तण्हं एक्का (सूत्रं ८२३) ॥ कम्मपट्ठवणसयं सम्मत्तं ॥ २९ । ११ ॥

'अणंतरोववन्नगा ण'मित्यादिर्द्वितीयः,तत्र चानन्तरोपपन्नका द्विविधाः 'समाउया समोववन्नग'त्ति अनन्तरोपपन्नानां सम एवायुरुदयो भवति तद्वैषम्येऽनन्तरोपपन्नत्वमेव न स्यादायुःप्रथमसमयवर्त्तित्वात्तेषां 'समोववन्नग'त्ति ॥९४१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र एकोनत्रिंशतितमे शतके प्रथम-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ एकोनत्रिंशतितमे शतके २-११ उद्देशका: आरब्धा:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [८२३]

दीप अनुक्रम [९९६-९९७]

मरणानन्तरं परभवोत्पत्तिमाश्रित्य, ते च मरणकाले भूतपूर्वगत्याऽनन्तरोपपन्नका उच्यन्ते, 'समाउया विसमोववन्नग'त्ति विषमोपपन्नकत्वमिहापि मरणवैषम्यादिति, तृतीयचतुर्थभङ्गावनन्तरोपपन्नेषु न संभवतः, अनन्तरोपपन्नत्वादेवेति द्वितीयः, एवं शेषा अपि, नवरम् 'अणंतरोद्देसगाणं चउण्हवि'त्ति अनन्तरोपपन्नानन्तरावगाढानन्तराहारकानन्तरपर्याप्तकोद्देशकानाम् ॥ 'कम्मपट्ठवणसयं'ति कर्म्मप्रस्थापनाद्यर्थप्रतिपादनपरं शतं कर्म्मप्रस्थापनशतम् ॥ एकोनत्रिंशं शतं वृत्तितः समाप्तम् ॥ २९ ॥

अनुसृत्य मया टीकां टीकेयं टिप्पिता प्रपटुनेव। अप्रकटपाटवोऽपि हि पटूयते पटुगमेनाटन् ॥ १ ॥

व्याख्यातमेकोनत्रिंशं शतम्, अथ त्रिंशमारभ्यते, अस्य चायं पूर्वेण सहाभिसम्बन्धः–प्राक्तनशते कर्म्मप्रस्थापनाद्याश्रित्य जीवा विचारिताः इह तु कर्म्मबन्धादिहेतुभूतवस्तुवादमाश्रित्य त एव विचार्यन्ते इत्येवंसम्बद्धस्यास्यैकादशोद्देशकात्मकस्येदं प्रथमोद्देशकादिसूत्रम्—

कइ णं भंते! समोसरणा पन्नत्ता?, गोयमा! चत्तारि समोसरणा पन्नत्ता, तंजहा—किरियावादी अकिरियावादी अन्नाणियवाई वेणइयवाई, जीवा णं भंते! किं किरियावादी अकिरियावादी अन्नाणियवादी वेणइयवादी?, गोयमा! जीवा किरियावादीवि अकिरियावादीवि अन्नाणियवादीवि वेणइयवादीवि, सलेस्सा णं भंते! जीवा किं किरियावादी? पुच्छा, गोयमा! किरियावादीवि अकिरियावादीवि अन्नाणियवादीवि वेण-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र एकोनत्रिंशतितमे शतके २-११ उद्देशकाः परिसमाप्ताः

तत् समाप्ते एकोनत्रिंशतितमं शतकं अपि परिसमाप्तं

अथ त्रिंशतम् शतकं आरब्धं तद् अन्तर्गत् प्रथम-उद्देशकः अत्र वर्तते

समवसरण, तस्य क्रियावादि आदि चत्वारः भेदाः एवं प्रत्येक-भेदस्य वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [८२४]

दीप अनुक्रम [९९८]

इयवादीवि, एवं जाव सुक्कलेस्सा, अलेस्सा णं भंते! जीवा पुच्छा, गोयमा! किरियावादी नो अकिरियावादी नो अन्नाणियवादी नो वेणइयवादी। कण्हपक्खिया णं भंते! जीवा किं किरियावादी? पुच्छा, गोयमा! नो किरियावादी अकिरियावादी अन्नाणियवादीवि वेणइयवादीवि, सुक्कपक्खिया जहा सलेस्सा, सम्मदिट्ठी जहा अलेस्सा, मिच्छादिट्ठी जहा कण्हपक्खिया, सम्मामिच्छादिट्ठीणं पुच्छा, गोयमा! नो किरियावादी नो अकिरियावादी अन्नाणियवादीवि वेणइयवादीवि, णाणी जाव केवलनाणी जहा अलेस्से, अन्नाणी जाव विभंगनाणी जहा कण्हपक्खिया, आहारसन्नोवउत्ता जाव परिग्गहसन्नोवउत्ता जहा सलेस्सा, नोसन्नोवउत्ता जहा अलेस्सा, सवेदगा जाव नपुंसगवेदगा जहा सलेस्सा, अवेदगा जहा अलेस्सा, सकसायी जाव लोभकसायी जहा सलेस्सा, अकसायी जहा अलेस्सा, सजोगी जाव काययोगी जहा सलेस्सा, अजोगी जहा अलेस्सा, सागारोवउत्ता अणागारोवउत्ता जहा सलेस्सा। नेरइया णं भंते! किं किरियावादी? पुच्छा, गोयमा! किरियावादीवि जाव वेणइयवादीवि, सलेस्सा णं भंते! नेरइया किं किरियावादी? एवं चेव, एवं जाव काउलेस्सा कण्हपक्खिया किरियाविवज्जिया, एवं एएणं कमेणं जच्चेव जीवाणं वत्तवया सच्चेव नेरइयाणं वत्तव्वयावि जाव अणागारोवउत्ता नवरं जं अत्थि तं भाणियव्वं सेसं न भण्णति, जहा नेरइया एवं जाव थणियकुमारा॥ पुढविकाइया णं भंते! किं किरियावादी? पुच्छा, गोयमा! नो किरियावादी अकिरियावादीवि अन्नाणियवादीवि नो वेणइयवादी, एवं पुढविकाइयाणं जं अत्थि तत्थ सव्वत्थवि एयाइं दो मज्झि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समवसरण, तस्य क्रियावादि आदि चत्वार: भेदा: एवं प्रत्येक-भेदस्य वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [८२४]

दीप अनुक्रम [९९८]

ल्लाइं समोसरणाइं जाव अणागारोवउत्तावि, एवं जाव चउरिंदियाणं सवट्ठाणेसु एयाइं चेव मज्झिल्लगाइं दो समोसरणाइं, सम्मत्तनाणेहिवि एयाणि चेव मज्झिल्लगाइं दो समोसरणाइं, पंचिंदियतिरिक्खजोणिया जहा जीवा नवरं जं अत्थि तं भाणियवं, मणुस्सा जहा जीवा तहेव निरवसेसं, वाणमंतरजोइसियवेमाणिया जहा असुरकुमारा ॥ किरियावादी णं भंते! जीवा किं नेरइयाउयं पकरेइ तिरिक्खजोणियाउयं पकरेइ मणुस्साउयं पकरेइ देवाउयं पकरेइ?, गोयमा! नो नेरइयाउयं पकरेइ नो तिरिक्खजोणियाउयं पकरेइ मणुस्साउयंपि पकरेइ देवाउयंपि पकरेइ, जइ देवाउयं पकरेइ किं भवणवासिदेवाउयं पकरेइ जाव वेमाणियदेवाउयं पक०?, गोयमा! नो भवणवासीदेवाउयं प० नो वाणमंतरदेवाउयं पक० नो जोइसियदेवाउयं पकरेइ वेमाणियदेवाउयं पकरेइ । अकिरियावादी णं भंते! जीवा किं नेरइयाउयं पकरेइ ? तिरिक्ख० पुच्छा, गोयमा! नेरइयाउयंपि पकरेइ जाव देवाउयंपि पकरेइ, एवं अन्नाणियवादीवि वेणइयवादीवि। सलेस्सा णं भंते! जीवा किरियावादी किं नेरइयाउयं पकरेइ? पुच्छा, गोयमा! नो नेरइयाउयं एवं जहेव जीवा तहेव सलेस्सावि चउहिवि समोसरणेहिं भाणियवा, कण्हलेस्सा णं भंते! जीवा किरियावादी किं नेरइयाउयं पकरेइ? पुच्छा, गोयमा! नो नेरइयाउयं पकरेइ नो तिरिक्खजोणियाउयं पकरेइ मणुस्साउयं पकरेइ नो देवाउयं पकरेइ, अकिरिय० अन्नाणियवेणइयवादी य चत्तारिवि आउयाइं पकरेइ, एवं नीललेस्सावि, तेउलेस्सा णं भंते! जीवा किरियावादी किं नेरइयाउयं पकरेइ? पुच्छा, गोयमा! नो नेरइयाउयं पकरेइ नो तिरिक्ख०

व्या. १५८

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समवसरण, तस्य क्रियावादि आदि चत्वार: भेदा: एवं प्रत्येक-भेदस्य वक्तव्यता

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [८२४]

दीप अनुक्रम [९९८]

मणुस्साउयं प० देवाउयंपि पकरेइ, जइ देवाउयं पकरेइ तहेव, तेउलेस्सा णं भंते ! जीवा अकिरियावादी किं नेरइयाउयं पुच्छा, गोयमा ! नो नेरइयाउयं पकरेइ मणुस्साउयंपि पकरेइ तिरिक्खजोणियाउयंपि पकरेइ देवाउयंपि पकरेइ, एवं अन्नाणियवादीवि वेणइयवादीवि, जहा तेउलेस्सा एवं पम्हलेस्सावि सुक्कलेस्सावि नेयव्वा ॥ अलेस्सा णं भंते ! जाव किरियावादी किं णेरइयाउयं पुच्छा, गोयमा ! नेरइयाउयंपि पकरेइ एवं चउविहंपि, एवं अन्नाणियवादीवि वेणइयवादीवि, सुक्कपक्खिया जहा सलेस्सा, सम्मदिट्ठी णं भंते ! जीवा किरियावादी किं नेरइयाउयं पुच्छा, गोयमा ! नो नेरइयाउयं पकरेइ नो तिरिक्ख० मणुस्साउयं पकरेइ देवाउयंपि पकरेइ, मिच्छादिट्ठी जहा कण्हपक्खिया, सम्मामिच्छादिट्ठी णं भंते ! जीवा अन्नाणियवादी किं नेरइयाउयं जहा अलेस्सा, एवं वेणइयवादीवि, णाणी आभिणिबोहियनाणी य सुयनाणी य ओहिनाणी य जहा सम्मदिट्ठी, मणपज्जवणाणी णं भंते ! पुच्छा, गोयमा ! नो नेरइयाउयं पकरेइ नो तिरिक्ख० नो मणुस्स० देवाउयं पकरेइ, जइ देवाउयं पकरेइ किं भवणवासि० पुच्छा, गोयमा ! नो भवणवासिदेवाउयं पकरेइ नो वाणमंतर० नो जोइसिय० वेमाणियदेवाउयं, केवलनाणी जहा अलेस्सा, अन्नाणी जाव विभंगनाणी जहा कण्हपक्खिया, सन्नासु चउसुवि जहा सलेस्सा, नोसन्नोवउत्ता जहा मणपज्जवनाणी, सवेदगा जाव नपुंसगवेदगा जहा सलेस्सा, अवेदगा जहा अलेस्सा, सकसायी जाव लोभकसायी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समवसरण, तस्य क्रियावादि आदि चत्वार: भेदा: एवं प्रत्येक-भेदस्य वक्तव्यता

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [८२४]

दीप अनुक्रम [९९८]

जहा सलेस्सा, अकसायी जहा अलेस्सा, सयोगी जाव काययोगी जहा सलेस्सा, अजोगी जहा अलेस्सा, सागारोवउत्ता य अणागारोवउत्ता य जहा सलेस्सा (सूत्रं ८२४) ॥

'कइ ण'मित्यादि, '**समोसरण**'त्ति समवसरन्ति नानापरिणामा जीवाः कथञ्चित्तुल्यतया येषु मतेषु तानि समवसरणानि, समवसृतयो वाऽन्योन्यभिन्नेषु क्रियावादादिमतेषु कथञ्चित्तुल्यत्वेन क्वचित्केषाञ्चिद्वादिनामवताराः समवसरणानि, '**किरियावाइ**'त्ति क्रिया कर्त्तारं विना न संभवति सा चात्मसमवायिनीति वदन्ति तच्छीलाश्च ये ते क्रियावादिनः, अन्ये त्वाहुः –क्रियावादिनो ये ब्रुवते क्रिया प्रधानं किं ज्ञानेन?, अन्ये तु व्याख्यान्ति–क्रियां जीवादिपदार्थोऽस्तीत्यादिकां वदितुं शीलं येषां ते क्रियावादिनस्ते चात्मादिपदार्थास्तित्वप्रतिपत्तिलक्षणा अशीत्यधिकशतसङ्ख्याः स्थानान्तरादवसेयाः, ततश्च क्रियावादिसम्बन्धात्समवसरणमपि क्रियावादि, समवसरणसमवसरणवतां चाभेदोपचारात् क्रियावादिन एव समवसरणमिति, एवमन्यत्रापि, '**अकिरियावाइ**'त्ति अक्रियां–क्रियाया अभावं न हि कस्यचिदप्यनवस्थितस्य पदार्थस्य क्रिया समस्ति तद्भावे चानवस्थितेरभावादित्येवं ये वदन्ति तेऽक्रियावादिनः, तथा चाहुरेके–"क्षणिकाः सर्वसंस्कारा, अस्थितानां कुतः क्रिया? । भूतिर्येषां क्रिया सैव, कारकं सैव चोच्यते ॥ १ ॥" इत्यादि, अन्ये त्वाहुः–अक्रियावादिनो ये ब्रुवते किं क्रियया चित्तशुद्धिरेव कार्या ते च बौद्धा इति, अन्ये तु व्याख्यान्ति—अक्रियां–जीवादिपदार्थो नास्तीत्यादिकां वदितुं शीलं येषां तेऽक्रियावादिनः, ते चात्मादिपदार्थनास्तित्वप्रतिपत्तिलक्षणाश्चतुरशीतिविकल्पाः स्थानान्तरादवसेयाः, '**अन्नाणियवाइ**'त्ति कुत्सितं ज्ञानमज्ञानं तद्येषामस्ति तेऽज्ञानिकास्ते च ते वादिनश्चेत्य-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समवसरण, तस्य क्रियावादि आदि चत्वार: भेदा: एवं प्रत्येक-भेदस्य वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [८२४]

दीप अनुक्रम [९९८]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥९४४॥

३० शतके उद्देशः १ क्रियावाद्यदीनि समवसरणानि सू ८२४

ज्ञानिकवादिनः, ते चाज्ञानमेव श्रेयोऽसञ्चिन्त्यकृतकर्मबन्धवैफल्यात्, तथा न ज्ञानं कस्यापि क्वचिदपि वस्तुन्यस्ति प्रमाणानामसम्पूर्णवस्तुविषयत्वात् इत्याद्यभ्युपगमवन्तः सप्तषष्टिसङ्ख्याः स्थानान्तरादवसेयाः, 'वेणइयवाइ'त्ति विनयेन चरन्ति स वा प्रयोजनमेषामिति वैनयिकास्ते च ते वादिनश्चेति वैनयिकवादिनः विनय एव वा वैनयिकं तदेव ये स्वर्गादिहेतुतया वदन्तीत्येवंशीलाश्च ते वैनयिकवादिनः, एते चानवधृतलिङ्गाचारशास्त्रा विनयप्रतिपत्तिलक्षणा द्वात्रिंशद्विधाः स्थानान्तरादवसेयाः, इह चार्थे गाथा—"अत्थित्ति किरियवाई वयंति नत्थित्तिऽकिरियवाईओ । अन्नाणिय अन्नाणं वेणइया विणयवायंति ॥ १ ॥" [अस्तीति क्रियावादिनो वदन्ति नास्तीत्यक्रियावादिनः । अज्ञानिका अज्ञानं वैनयिका विनयवादमिति ॥ १ ॥] एते च सर्वेऽप्यन्यत्र यद्यपि मिथ्यादृष्टयोऽभिहितास्तथापीहाद्याः सम्यग्दृष्टयो ग्राह्याः, सम्यगस्तित्ववादिनामेव तेषां समाश्रयणादिति ॥ 'जीवा ण'मित्यादि तत्र जीवाश्चतुर्विधा अपि, तथास्वभावत्वात्, 'अलेस्सा ण'मित्यादि, 'अलेश्याः' अयोगिनः सिद्धाश्च ते च क्रियावादिन एव क्रियावादहेतुभूतयथाऽवस्थितद्रव्यपर्यायरूपार्थपरिच्छेदयुक्तत्वात्, इह च यानि सम्यग्दृष्टिस्थानानि–अलेश्यत्वसम्यग्दर्शनज्ञानिनोसञ्ज्ञोपयुक्तत्वावेदकत्वादीनि तानि नियमात् क्रियावादे क्षिप्यन्ते, मिथ्यादृष्टिस्थानानि तु मिथ्यात्वाज्ञानादीनि शेषसमवसरणत्रये, 'सम्मामिच्छादिट्ठी ण'मित्यादि, सम्यग्मिथ्यादृष्टयो हि साधारणपरिणामत्वान्नो आस्तिका नापि नास्तिकाः किन्तु अज्ञानविनयवादिन एव स्युरिति ॥ 'पुढविकाइया ण'मित्यादि, 'नो किरियावाई'ति मिथ्यादृष्टित्वात्तेषामक्रियावादिनोऽज्ञानिकवादिनश्च ते भवन्ति, वादाभावेऽपि तद्वादयोग्यजीवपरिणामसद्भावात्, वैनयिकवादिनस्तु ते न भवन्ति तथाविध- ॥९४४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समवसरण, तस्य क्रियावादि आदि चत्वार: भेदा: एवं प्रत्येक-भेदस्य वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [८२४]

दीप अनुक्रम [९९८]

परिणामादिति, 'पुढविकाइयाणं जं अत्थि'इत्यादि, पृथिवीकायिकानां यदस्ति सलेश्यकृष्णनीलकापोततेजोलेश्यकृष्णपाक्षिकत्वादि तत्र सर्वत्रापि मध्यमं समवसरणद्वयं वाच्यमिति, 'एवं जाव चउरिंदियाण'मित्यादि, ननु द्वीन्द्रियादीनां सासादनभावेन सम्यक्त्वं ज्ञानं चेष्यते तत्र क्रियावादित्वं युक्तं तत्स्वभावत्वादित्याशङ्क्याह–'सम्मत्तनाणेहिवी'त्यादि, क्रियावादविनयवादौ हि विशिष्टतरे सम्यक्त्वादिपरिणामे स्यातां न सासादनरूपे इति भावः, 'जं अत्थि तं भाणियव्वं'ति, पञ्चेन्द्रियतिरश्चामलेश्याकषायित्वादि न प्रष्टव्यमसम्भवादिति भावः ॥ जीवादिषु पञ्चविंशतौ पदेषु यद्यत्र समवसरणमस्ति तत्तत्रोक्तम्, अथ तेष्वेवायुर्बन्धनिरूपणायाह—'किरिये'त्यादि, 'मणुस्साउयंपि पकरेइ देवाउयंपि पकरेति'त्ति, तत्र ये देवा नारका वा क्रियावादिनस्ते मनुष्यायुः प्रकुर्वन्ति ये तु मनुष्याः पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चो वा ते देवायुरिति । 'कण्हलेस्सा णं भंते! जीवा'इत्यादौ 'मणुस्साउयं पकरेंति'त्ति यदुक्तं तन्नारकासुरकुमारादीनाश्रित्यावसेयं, यतो ये सम्यग्दृष्टयो मनुष्याः पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चश्च ते मनुष्यायुर्न बध्नन्त्येव वैमानिकायुर्बन्धकत्वात्तेषामिति ॥ 'अलेस्सा णं भंते! जीवा किरियावाई'त्यादि, अलेश्याः–सिद्धा अयोगिनश्च, ते चतुर्विधमप्यायुर्न बध्नन्तीति, सम्यग्मिथ्यादृष्टिपदे 'जहा अलेस्स'त्ति समस्तायूंषि न बध्नन्तीत्यर्थः ॥ नारकदण्डके—

किरियावादी णं भंते! नेरइया किं नेरइयाउयं पुच्छा, गोयमा! नो नेरइयाउयं नो तिरिक्ख० मणुस्साउयं पकरेइ नो देवाउयं पकरेइ, अकिरियावादी णं भंते! नेरइया पुच्छा, गोयमा! नो नेरइयाउयं तिरिक्खजोणियाउयं पकरेइ मणुस्साउयंपि पकरेइ नो देवाउयं पकरेइ, एवं अन्नाणियवादी वि वेणइयवादीवि।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समवसरण, तस्य क्रियावादि आदि चत्वार: भेदा: एवं प्रत्येक-भेदस्य वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [८२५]

दीप अनुक्रम [९९९]

॥ ९४५ ॥

सलेस्सा णं भंते! नेरइया किरियावादी किं नेरइयाउयं, एवं सव्वेवि नेरइया जे किरियावादी ते मणुस्साउयं एगं पकरेइ, जे अकिरियावादी अन्नाणियवादी वेणइयवादी ते सव्वट्ठाणेसुवि नो नेरइयाउयं पकरेइ तिरिक्खजोणियाउयंपि पकरेइ मणुस्साउयंपि पकरेइ नो देवाउयं पकरेइ, नवरं सम्मामिच्छत्ते उवरिल्लेहिं दोहिवि समोसरणेहिं न किंचिवि पकरेइ जहेव जीवपदे, एवं जाव थणियकुमारा जहेव नेरइया । अकिरियावादी णं भंते! पुढविकाइया पुच्छा, गोयमा! नो नेरइयाउयं पकरेइ तिरिक्खजोणियाउयं० मणुस्साउयं० नो देवाउयं पकरेइ, एवं अन्नाणियवादीवि । सलेस्सा णं भंते! एवं जं जं पदं अत्थि पुढविकाइयाणं तहिं २ मज्झिमेसु दोसु समोसरणेसु एवं चेव दुविहं आउयं पकरेइ नवरं तेउलेस्साए न किंपि पकरेइ, एवं आउकाइयाणवि, वणस्सइकाइ०, तेउका० वाउका० सव्वट्ठाणेसु मज्झिमेसु दोसु समोसरणेसु नो नेरइयाउयं पक० तिरिक्खजो० पक० नो मणु० नो देवाउ० पक०, बेइंदियतेइंदियचउरिंदियाणं जहा पुढविकाइयाणं नवरं सम्मत्तनाणेसु न एक्कंपि आउयं पकरेइ ॥ किरियावादी णं भंते! पंचिं० तिरि० किं नेरइयाउयं पकरेइ पुच्छा, गोयमा! जहा मणपज्जवनाणी, अकिरियावादी अन्नाणियवादी वेणइयवादी य चउव्विहंपि पकरेइ, जहा ओहिया तहा सलेस्सावि । कण्हलेस्सा णं भंते! किरियावादी पंचिंदियतिरिक्ख० किं नेरइयाउयं पुच्छा, गोयमा? नो नेरइयाउयं पकरेइ णो तिरिक्ख० नो मणुस्साउयं नो देवाउयं पकरेइ, अकिरियावादी अन्नाणियवादी वेणइयवाई चउव्विहंपि पकरेइ, जहा कण्हलेस्सा एवं नीललेस्सावि काउलेस्सावि, तेउलेस्सा जहा

॥ ९४५ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समवसरण, तस्य क्रियावादि आदि चत्वार: भेदा: एवं प्रत्येक-भेदस्य वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [८२५]

दीप अनुक्रम [९९९]

सलेस्सा, नवरं अकिरियावादी अन्नाणियवादी वेणइयवादी य णो नेरइयाउयं पकरेइ देवाउयंपि पकरेइ तिरिक्खजोणियाउयंपि पकरेइ मणुस्साउयंपि पकरेइ, एवं पम्हलेस्सावि०, एवं सुक्कलेस्सावि भाणियव्वा, कण्हपक्खिया तिहिं समोसरणेहिं चउव्विहंपि आउयं पकरेइ, सुक्कपक्खिया जहा सलेस्सा, सम्मदिट्ठी जहा मणपज्जवनाणी तहेव वेमाणियाउयं पकरेइ, मिच्छदिट्ठी जहा कण्हपक्खिया, सम्मामिच्छादिट्ठी ण य एक्कंपि पकरेइ जहेव नेरइया, णाणी जाव ओहिनाणी जहा सम्मदिट्ठी, अन्नाणी जाव विभंगनाणी जहा कण्हपक्खिया, सेसा जाव अणागारोवउत्ता सव्वे जहा सलेस्सा तहा चेव भाणियव्वा, जहा पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं वत्तव्वया भणिया एवं मणुस्साणवि भाणियव्वा, नवरं मणपज्जवनाणी नोसन्नोवउत्ता य जहा सम्मदिट्ठी तिरिक्खजोणिया तहेव भाणियव्वा, अलेस्सा केवलनाणी अवेदगा अकसायी अयोगी य एए न एगंपि आउयं पकरेइ जहा ओहिया जीवा सेसं तहेव, वाणमंतरजोइसियवेमाणिया जहा असुरकुमारा ॥ किरियावादी णं भंते! जीवा किं भवसिद्धीया अभवसिद्धीया?, गोयमा! भवसिद्धीया नो अभवसिद्धीया । अकिरियावादी णं भंते! जीवा किं भवसिद्धीया पुच्छा, गोयमा! भवसिद्धीयावि अभवसिद्धीयावि, एवं अन्नाणियवादीवि, वेणइयवादीवि । सलेस्सा णं भंते! जीवा किरियावादी किं भव० पुच्छा, गोयमा ! भवसिद्धीया नो अभवसिद्धीया । सलेस्सा णं भंते! जीवा अकिरियावादी किं भव० पुच्छा, गोयमा ! भवसिद्धीयावि अभवसिद्धीयावि, एवं अन्नाणियवादीवि वेणइयवादीवि जहा सलेस्सा, एवं जाव सुक्कलेस्सा, अलेस्सा णं भंते! जीवा किरि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समवसरण, तस्य क्रियावादि आदि चत्वार: भेदा: एवं प्रत्येक-भेदस्य वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [८२५] दीप अनुक्रम [९९९]

यावादी किं भव० पुच्छा, गोयमा ! भवसिद्धीया नो अभवसिद्धीया, एवं एएणं अभिलावेणं कण्हपक्खिया तिसुवि समोसरणेसु भयणाए, सुक्कपक्खिया चउसुवि समोसरणेसु भवसिद्धीया नो अभवसिद्धीया, सम्मदिट्ठी जहा अलेस्सा, मिच्छादिट्ठी जहा कण्हपक्खिया, सम्मामिच्छादिट्ठी दोसुवि समोसरणेसु जहा अलेस्सा, नाणी जाव केवलनाणी भवसिद्धीया नो अभवसिद्धीया, अन्नाणी जाव विभंगनाणी जहा कण्हपक्खिया, सन्नासु चउसुवि जहा सलेस्सा, नोसन्नोवउत्ता जहा सम्मदिट्ठी, सवेदगा जाव नपुंसगवेदगा जहा सलेस्सा, अवेदगा जहा सम्मदिट्ठी, सकसायी जाव लोभकसायी जहा सलेस्सा, अकसायी जहा सम्मदिट्ठी, सयोगी जाव कायजोगी जहा सलेस्सा, अयोगी जहा सम्मदिट्ठी, सागारोवउत्ता अणागारोवउत्ता जहा सलेस्सा, एवं नेरइयावि भाणियव्वा नवरं नायव्वं जं अत्थि, एवं असुरकुमारावि जाव थणियकुमारा, पुढविक्काइया सव्वट्ठाणेसुवि मज्झिल्लेसु दोसुवि समवसरणेसु भवसिद्धीयावि अभवसिद्धीयावि एवं जाव वणस्सइकाइया, बेइंदियतेइंदियचउरिंदिया एवं चेव नवरं संमत्ते ओहिनाणे आभिणिबोहियनाणे सुयनाणे एएसु चेव दोसु मज्झिमेसु समोसरणेसु भवसिद्धिया नो अभवसिद्धिया, सेसं तं चेव, पंचिंदियतिरिक्खजोणिया जहा नेरइया नवरं नायव्वं जं अत्थि, मणुस्सा जहा ओहिया जीवा, वाणमंतरजोइसियवेमाणिया जहा असुरकुमारा। सेवं भंते! २ ॥ (सूत्रं ८२५) ॥ ३०।१ ॥

'किरियावाई ण'मित्यादौ यन्नैरयिकायुर्देवायुश्च न प्रकुर्वन्ति क्रियावादिनारकास्तन्नारकभवानुभावादेव, यच्च तिर्यगा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समवसरण, तस्य क्रियावादि आदि चत्वार: भेदा: एवं प्रत्येक-भेदस्य वक्तव्यता

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [८२५]

दीप अनुक्रम [९९९]

युर्न प्रकुर्वन्ति तत्क्रियावादानुभावादित्यवसेयं, अक्रियावादादिसमवसरणत्रये तु नारकाणां सर्वपदेषु तिर्यग्मनुष्यायुषी एव भवतः, सम्यग्मिथ्यात्वे पुनर्विशेषोऽस्तीति तद्दर्शनायाह–'नवरं सम्मे'त्यादि, सम्यग्मिथ्यादृष्टिनारकाणां द्वे एवान्तिमे समवसरणे स्तः, तेषां चायुर्बन्धो नास्त्येव गुणस्थानकस्वभावादतस्ते तयोर्न किञ्चिदप्यायुः प्रकुर्वन्तीति । 'पुढविकाइये'त्यादौ 'दुविहं आउयं'ति मनुष्यायुस्तिर्यगायुश्चेति, 'तेउलेस्साए न किंपि पकरेंति'त्ति अपर्याप्तकावस्थायामेव पृथिवीकायिकानां तद्भावात्तद्विगम एव चायुषो बन्धादिति, 'सम्मत्तनाणेसु न एक्कंपि आउयं पकरेंति'त्ति, द्वीन्द्रियादीनां सम्यक्त्वज्ञानकालात्यय एवायुर्बन्धो भवत्यल्पत्वात्तत्कालस्येति नैकमप्यायुर्बध्नन्ति तयोस्ते इति ॥ पञ्चेन्द्रियस्तिर्यग्योनिकदण्डके—'कण्हलेसा ण'मित्यादि, यदा पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चः सम्यग्दृष्टयः कृष्णलेश्यादिपरिणता भवन्ति तदाऽऽयुरेकमपि न बध्नन्ति, सम्यग्दृशां वैमानिकायुर्बन्धकत्वेन तेजोलेश्यादित्रयबन्धनादिति । 'तेउलेसा जहा सलेस'त्ति, अनेन च क्रियावादिनो वैमानिकायुरेव इतरे तु त्रयश्चतुर्विधमप्यायुः प्रकुर्वन्तीति प्राप्तं, सलेश्यानामेवंविधस्वरूपतयोक्तत्वात्, इह तु यदनभिमतं तन्निषेधनायाह–'नवरं अकिरियावाई'त्यादि, शेषं तु प्रतीतार्थत्वान्न व्याख्यातमिति ॥ त्रिंशत्तमशते प्रथमः ॥ ३०।१ ॥

अणंतरोववन्नगा णं भंते! नेरइया किं किरियावादी? पुच्छा, गोयमा! किरियावादीवि जाव वेणइयवादीवि, सलेस्सा णं भंते! अणंतरोववन्नगा नेरइया किं किरियावादी एवं चेव, एवं जहेव पढमुद्देसे नेरइयाणं वत्तव्वया तहेव इहवि भाणियव्वा, नवरं जं जस्स अत्थि अणंतरोववन्नगाणं नेरइयाणं तं तस्स भाणि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समवसरण, तस्य क्रियावादि आदि चत्वार: भेदा: एवं प्रत्येक-भेदस्य वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [८२६-८२८]

दीप अनुक्रम [१०००-१००२]

यवं, एवं सव्वजीवाणं जाव वेमाणियाणं, नवरं अणंतरोववन्नगाणं जं जहिं अत्थि तं तहिं भाणियवं। किरियावाई णं भंते! अणंतरोववन्नगा नेरइया किं नेरइयाउयं पकरेइ? पुच्छा, गोयमा! नो नेरइयाउयं पकरेंति नो तिरि० नो मणु० नो देवाउयं पकरेइ, एवं अकिरियावादीवि अन्नाणियवादीवि वेणइयवादीवि। सलेस्सा णं भंते! किरियावादी अणंतरोववन्नगा नेरइया किं नेरइयाउयं पुच्छा, गोयमा! नो नेरइयाउयं पकरेइ जाव नो देवाउयं पकरेइ एवं जाव वेमाणिया, एवं सवट्ठाणेसुवि अणंतरोववन्नगा नेरइया न किंचिवि आउयं पकरेइ जाव अणागारोवउत्तत्ति, एवं जाव वेमाणिया नवरं जं जस्स अत्थि तं तस्स भाणियवं। किरियावादी णं भंते! अणंतरोववन्नगा नेरइया किं भवसिद्धिया अभवसिद्धिया?, गोयमा! भवसिद्धिया नो अभवसिद्धिया। अकिरियावादी णं पुच्छा, गोयमा! भवसिद्धियावि अभवसिद्धियावि, एवं अन्नाणियवादीवि वेणइयवादीवि। सलेस्सा णं भंते! किरियावादी अणंतरोववन्नगा नेरइया किं भवसिद्धिया अभवसिद्धिया?, गोयमा! भवसिद्धिया नो अभवसिद्धिया, एवं एएणं अभिलावेणं जहेव ओहिए उद्देसए नेरइयाणं वत्तवया भणिया तहेव इहवि भाणियवा जाव अणागारोवउत्तत्ति एवं जाव वेमाणियाणं नवरं जं जस्स अत्थि तं तस्स भाणियवं, इमं से लक्खणं–जे किरियावादी सुक्कपक्खिया सम्मामिच्छदिट्ठीया एए सवे भवसिद्धिया नो अभवसिद्धीया, सेसा सवे भवसिद्धीयावि अभवसिद्धीयावि। सेवं भंते! इति ॥ (सूत्रं ८२६) ॥ ३०।२॥ परंपरोववन्नगा णं भंते! नेरइया किरियावादी एवं जहेव ओहिओ उद्देसओ तहेव परंपरोववन्नएसुवि नेरइयादीओ ॥९४७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [८२६--८२८]

दीप अनुक्रम [१०००--१००२]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

तहेव निरवसेसं भाणियव्वं तहेव तियदंडगसंगहिओ। सेवं भंते! २ जाव विहरइ ॥ (सूत्रम् ८२७) ॥३०।३॥ एवं एएणं कमेणं जच्चेव बंधिसए उद्देसगाणं परिवाडी सच्चेव इहंपि जाव अचरिमो उद्देसो, नवरं अणंतरा चत्तारिवि एक्कगमगा, परंपरा चत्तारिवि एक्कगमएणं, एवं चरिमावि, अचरिमावि एवं चेव नवरं अलेस्सो केवली अजोगी न भन्नइ, सेसं तहेव। सेवं भंते! २ त्ति। एए एक्कारसवि उद्देसगा (सूत्रं ८२८) समवसरणसयं सम्मत्तं ॥३०॥

एवं द्वितीयादय एकादशान्ता उद्देशका व्याख्येयाः, नवरं द्वितीयोद्देशके 'इमं से लक्खणं' ति 'से' भव्यत्वस्येदं लक्षणं–क्रियावादी शुक्लपाक्षिकः सम्यग्मिथ्यादृष्टिश्च भव्य एव भवति नाभव्यः, शेषास्तु भव्या अभव्याश्चेति, अलेश्य-सम्यग्दृष्टिज्ञान्यवेदाकषाययोगिनां भव्यत्वं प्रसिद्धमेवेति नोक्तमिति। तृतीयोद्देशके तु 'तियदंडगसंगहिओ'त्ति, इह दण्डकत्रयं नैरयिकादिपदेषु–क्रियावाद्यादिप्ररूपणादण्डकः १ आयुर्बन्धदण्डको २ भव्याभव्यदण्डक ३ श्चेत्येवमिति। एकादशोद्देशके तु 'अलेस्सो केवली अजोगी य न भण्णति'त्ति, अचरमाणामलेश्यत्वादीनामसम्भवादिति ॥ त्रिंशत्तमशतं वृत्तितः परिसमाप्तम् ॥ ३० ॥

यद्वाङ्महामन्दरमन्थनेन, शास्त्रार्णवादुच्छलितान्यतुच्छम् ।
भावार्थरत्नानि ममापि दृष्टौ, यातानि ते वृत्तिकृतो जयन्ति ॥ १ ॥

त्रिंशत्तमशते चत्वारि समवसरणान्युक्तानीति चतुष्टयसाधर्म्याच्चतुर्युग्मवक्तव्यतानुगतमष्टाविंशत्युद्देशकयुक्तमेकत्रिंशं शतं व्याख्यायते, तस्य चेदमादिसूत्रम्—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र त्रिंशत्तमे शतके २-११ उद्देशका: परिसमाप्ता:

तत् समाप्ते त्रिंशत्तमं शतकं अपि परिसमाप्तं

अथ एकत्रिंशत्तं शतकं आरभ्यते

प्रत सूत्रांक [८२९--८४१] दीप अनुक्रम [१००३--१०१५]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः२ ॥९४८॥

रायगिहे जाव एवं वयासी–कति णं भंते! खुड्डा जुम्मा पन्नत्ता?, गोयमा! चत्तारि खुड्डा जुम्मा प० तं०-कडजुम्मे १ तेयोए २ दावरजुम्मे ३ कलिओए ४, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ चत्तारि खुड्डा जुम्मा० प० तं०–कडजुम्मे जाव कलियोगे?, गोयमा! जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे चउपज्जवसिए सेत्तं खुड्डागकडजुम्मे, जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे तिपज्जवसिए सेत्तं खुड्डागतेयोगे, जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे दुपज्जवसिए सेत्तं खुड्डागदावरजुम्मे, जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे एगपज्जवसिए सेत्तं खुड्डागकलियोगे, से तेणट्ठेणं जाव कलियोगे। खुड्डागकडजुम्मनेरइया णं भंते! कओ उववज्जंति? किं नेरइएहिंतो उववज्जंति? तिरिक्ख० पुच्छा, गोयमा! नो नेरइएहिंतो उववज्जंति एवं नेरइयाणं उववाओ जहा वक्कंतीए तहा भाणियव्वो। ते णं भंते! जीवा एगसमएणं केवइया उववज्जंति?, गोयमा! चत्तारि वा अट्ठ वा बारस वा सोलस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा उववज्जंति। ते णं भंते! जीवा कहं उववज्जंति?, गोयमा! से जहानामए पवए पवमाणे अज्झवसाण एवं जहा पंचविंसतिमे सए अट्ठमुद्देसए नेरइयाणं वत्तवया तहेव इहवि भाणियव्वा जाव आयप्पओगेणं उववज्जंति नो परप्पयोगेणं उववज्जंति। रयणप्पभापुढविखुड्डागकडजुम्मनेरइया णं भंते! कओ उववज्जंति?, एवं जहा ओहियनेरइयाणं वत्तवया सच्चेव रयणप्पभाएवि भाणियव्वा जाव नो परप्पयोगेणं उववज्जंति, एवं सक्करप्पभाएवि जाव अहेसत्तमाए, एवं उववाओ जहा वक्कंतीए, अस्सन्नी खलु पढमं दोच्चं व सरीसवा तइय पक्खी। गाहाए उववाएयव्वा, सेसं तहेव।

३१ शतके उद्दे. १-२८ क्षुल्लकयुग्मादीनामुत्पादः सू ८२९-८४१

॥९४८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र एकत्रिंशत्तमे शतके १-२८ उद्देशका: आरब्धा:

प्रत सूत्रांक [८२९--८४१]

दीप अनुक्रम [१००३--१०१५]

खुड्डागतेयोगनेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति किं नेरइएहिंतो ? उववाओ जहा वक्कंतीए, ते णं भंते ! जीवा एगसमएणं केवइया उववज्जंति?, गोयमा! तिन्नि वा सत्त वा एक्कारस वा पन्नरस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा उववज्जंति सेसं जहा कडजुम्मस्स, एवं जाव अहेसत्तमाए। खुड्डागदावरजुम्मनेरइया णं भंते! कओ उववज्जंति?, एवं जहेव खुड्डागकडजुम्मे नवरं परिमाणं दो वा छ वा दस वा चोद्दस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा सेसं तं चेव जाव अहे सत्तमाए । खुड्डागकलिओगनेरइया णं भंते! कओ उववज्जंति?, एवं जहेव खुड्डागकडजुम्मे नवरं परिमाणं एक्को वा पंच वा नव वा तेरस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा उववज्जंति सेसं तं चेव एवं जाव अहेसत्तमाए। सेवं भंते ! २ जाव विहरति ॥ (सूत्रं ८२९) ॥ ३१।१ ॥ कण्हलेस्सखुड्डागकडजुम्मनेरइया णं भंते! कओ उववज्जंति ?, एवं चेव जहा ओहियगमो जाव नो परप्पयोगेणं उववज्जंति, नवरं उववाओ जहा वक्कंतीए, धूमप्पभापुढविनेरइया णं सेसं तं चेव, धूमप्पभापुढविकण्हलेस्सखुड्डागकडजुम्मनेरइया णं भंते! कओ उववज्जंति ?, एवं चेव निरवसेसं, एवं तमाएवि अहेसत्तमाएवि, नवरं उववाओ सवत्थ जहा वक्कंतीए। कण्हलेस्सखुड्डागतेओगनेरइया णं भंते! कओ उवव० ?, एवं चेव नवरं तिन्नि वा सत्त वा एक्कारस वा पन्नरस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा सेसं तं चेव एवं जाव अहेसत्तमाएवि। कण्हलेस्सखुड्डागदावरजुम्मनेरइया णं भंते! कओ उववज्जंति?, एवं चेव नवरं दो वा छ वा दस वा चोद्दस वा सेसं तं चेव, धूमप्पभाएवि जाव अहेसत्तमाए । कण्हलेस्सखुड्डागकलियोगनेरइया णं भंते ! कओ उवव-

व्या. १५९

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [८२९--८४१]

दीप अनुक्रम [१००३--१०१५]

ज्ञंति ?, एवं चेव नवरं एक्को वा पंच वा नव वा तेरस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा सेसं तं चेव, एवं धूमप्पभाएवि तमाएवि अहे सत्तमाएवि। सेवं भंते! २ त्ति ॥ (सूत्रं ८३०) ॥ ३१। २ ॥ नीललेस्सखुड्डागकडजुम्मनेरइया णं भंते! कओ उववज्जंति, एवं जहेव कण्हलेस्सखुड्डागकडजुम्मा नवरं उववाओ जो वालुयप्पभाए सेसं तं चेव, वालुयप्पभापुढविनीललेस्सखुड्डागकडजुम्मनेरइया एवं चेव, एवं पंकप्पभाएवि, एवं धूमप्पभाएवि, एवं चउसुवि जुम्मेसु नवरं परिमाणं जाणियव्वं, परिमाणं जहा कण्हलेस्सउद्देसए। सेसं तहेव। सेवं भंते! सेवं भंतेत्ति ॥ (सूत्रं ८३१) ॥ ३१।३ ॥ काउलेस्सखुड्डागकडजुम्मनेरइया णं भंते! कओ उववज्जंति ?, एवं जहेव कण्हलेस्सखुड्डागकडजुम्म० नवरं उववाओ जो रयणप्पभाए सेसं तं चेव। रयणप्पभापुढविकाउलेस्सखुड्डागकडजुम्मनेरइया णं भंते! कओ उवव० ?, एवं चेव, एवं सक्करप्पभाएवि, एवं वालुयप्पभाएवि, एवं चउसुवि जुम्मेसु, नवरं परिमाणं जाणियव्वं, परिमाणं जहा कण्हलेस्सउद्देसए सेसं तं चेव सेवं भंते! २ त्ति ॥ (सूत्रं ८३२) ॥ ३१।४ ॥ भवसिद्धीयखुड्डागकडजुम्मनेरइया णं भंते! कओ उवव० ?, किं नेरइए० ?, एवं जहेव ओहिओ गमओ तहेव निरवसेसं जाव नो परप्पयोगेणं उवव०। रयणप्पभापुढविभवसिद्धीयखुड्डागकडजुम्मनेरइया णं भंते! एवं चेव निरवसेसं, एवं जाव अहेसत्तमाए, एवं भवसिद्धियखुड्डागतेयोगनेरइयावि एवं जाव कलियोगत्ति, नवरं परिमाणं जाणियव्वं, परिमाणं पुव्वभणियं जहा पढमुद्देसए। सेवं भंते! २ त्ति ॥ (सूत्रं ८३३) ॥ ३१।५ ॥ कण्हलेस्सभवसिद्धियखुड्डागकडजुम्मनेरइया णं भंते! कओ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [८२९--८४१]

दीप अनुक्रम [१०००--१०१५]

उववज्जंति ?, एवं जहेव ओहिओ कण्हलेस्सउद्देसओ तहेव निरवसेसं चउसुवि जुम्मेसु भाणियव्वो जाव अहेसत्तमपुढविकण्हलेस्सखुड्डागकलियोगनेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?, तहेव । सेवं भंते ! २ त्ति ॥ (सूत्रं ८३४) ॥ ३१।६ ॥ नीललेस्सभवसिद्धिया चउसुवि जुम्मेसु तहेव भाणियव्वा जहा ओहिए नीललेस्सउद्देसए । सेवं भंते ! सेवं भंते ! जाव विहरइ ॥ (सूत्रं ८३५) ॥ ३१।७ ॥ काउलेस्साभवसिद्धिया चउसुवि जुम्मेसु तहेव उववाएयव्वा जहेव ओहिए काउलेस्सउद्देसए । सेवं भंते ! २ जाव विहरइ ॥ (सूत्रं ८३६) ॥ ३१।८ ॥ जहा भवसिद्धिएहिं चत्तारि उद्देसया भणिया एवं अभवसिद्धीएहिवि चत्तारि उद्देसगा भाणियव्वा जाव काउलेस्साउद्देसओत्ति । सेवं भंते ! २ त्ति ॥ (सूत्रं ८३७) ॥ ३१।१२ ॥ एवं सम्मदिट्ठीहिवि लेस्सासंजुत्तेहिं चत्तारि उद्देसगा कायव्वा, नवरं सम्मदिट्ठी पढमबितिएसुवि दोसुवि उद्देसएसु अहेसत्तमापुढवीए न उववाएयव्वो, सेसं तं चेव । सेवं भंते सेवं भंतेत्ति ! (सूत्रं ८३८) ॥ ३१।१६ ॥ मिच्छादिट्ठीहिवि चत्तारि उद्देसगा कायव्वा जहा भवसिद्धियाणं । सेवं भंते ! २ त्ति (सूत्रं ८३९) ॥ ३१।२० ॥ एवं कण्हपक्खिएहिवि लेस्सासंजुत्तेहिं चत्तारि उद्देसगा कायव्वा जहेव भवसिद्धीएहिं । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति (सूत्रं ८४०) ॥ ३१।२४ ॥ सुक्कपक्खिएहिं एवं चेव चत्तारि उद्देसगा भाणियव्वा जाव वालुयप्पभापुढविकाउलेस्ससुक्कपक्खियखुड्डागकलिओगनेरइया णं भंते ! कओ उवव० ?, तहेव जाव नो परप्पयोगेणं उवव० । सेवं भंते २ त्ति ॥ (सूत्रं ८४१) ॥ ३१ ॥ २८ ॥ सव्वेवि एए अट्ठावीस उद्देसगा ॥ उववायसयं सम्मत्तं ॥ ३१ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [८२९--८४१]

दीप अनुक्रम [१०००--१०१५]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥९५०॥

३१ शतके उद्दे.१-२८ क्षुल्लकयुग्मादीनामुत्पादः सू ८२९-८४१

‘रायगिहे’इत्यादि, ‘खुड्डा जुम्म’त्ति युग्मानि–वक्ष्यमाणा राशिविशेषास्ते च महान्तोऽपि सन्त्यतः क्षुल्लकशब्देन विशेषिताः, तत्र चत्वारोऽष्टौ द्वादशेत्यादिसङ्ख्यावान् राशिः क्षुल्लकः कृतयुग्मोऽभिधीयते, एवं त्रिसप्तैकादशादिको क्षुल्लकत्र्योजः, द्विषट्प्रभृतिकः क्षुल्लकद्वापरः, एकपञ्चकप्रभृतिकस्तु क्षुल्लककल्योज इति । ‘जहा वक्कंतीए’त्ति प्रज्ञापनाषष्ठपदे, अर्थतश्चैवं–पञ्चेन्द्रियतिर्यग्भ्यो गर्भजमनुष्येभ्यश्च नारका उत्पद्यन्त इति, विशेषस्तु ‘अस्सन्नी खलु पढम’मित्यादिगाथाभ्यामवसेयः, ‘अज्झवसाण’त्ति अनेन ‘अज्झवसाणनिव्वत्तिएणं करणोवाएणं’ति सूचितम् ॥ एकत्रिंशशते प्रथमः ॥ ३१।१ ॥ द्वितीयस्तु कृष्णलेश्याश्रयः, सा च पञ्चमीषष्ठीसप्तमीष्वेव पृथिवीषु भवतीतिकृत्वा सामान्यदण्डकस्तद्दण्डकत्रयं चात्र भवतीति ‘उववाओ जहा वक्कंतीए धूमप्पभापुढविनेरइयाणं’ति, इह कृष्णलेश्या प्रक्रान्ता सा च धूमप्रभायां भवतीति तत्र ये जीवा उत्पद्यन्ते तेषामेवोत्पादो वाच्यः, ते चासञ्ज्ञिसरीसृपपक्षिसिंहवर्जा इति ॥ ३१।२ ॥ तृतीयस्तु नीललेश्याश्रयः, सा च तृतीयाचतुर्थीपञ्चमीष्वेव पृथिवीषु भवतीतिकृत्वा सामान्यदण्डकस्तद्दण्डकत्रयं चात्र भवतीति ‘उववाओ जो वालुयप्पभाए’त्ति, इह नीललेश्या प्रक्रान्ता सा च वालुकाप्रभायां भवतीति तत्र ये जीवा उत्पद्यन्ते तेषामेवोत्पादो वाच्यः, ते चासञ्ज्ञिसरीसृपवर्जा इति । ‘परिमाणं जाणियव्वं’ति, चतुरष्टद्वादशप्रभृतिक्षुल्लककृतयुग्मादिस्वरूपं ज्ञातव्यमित्यर्थः ॥ ३१।३ ॥ चतुर्थस्तु कापोतलेश्याश्रयः, सा च प्रथमाद्वितीयातृतीयास्वेव पृथिवीष्वितिकृत्वा सामान्यदण्डको रत्नप्रभादिदण्डकत्रयं चात्र भवतीति ‘उववाओ जो रयणप्पभाए’त्ति सामान्यदण्डके रत्नप्रभावदुपपातो वाच्यः । शेषं सूत्रसिद्धम् ॥ एकत्रिंशं शतं वृत्तितः समाप्तम् ॥ ३१ ॥

॥९५०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [८२९-८४१, ८४२-८४३]

दीप अनुक्रम [१०००-१०१५, १०१६-१०१७]

शतमेतद्भगवत्या भगवत्या भावितं मया वाण्याः । यदनुग्रहेण निरवग्रहेण सदनुग्रहेण तथा ॥ १ ॥

एकत्रिंशे शते नारकाणामुत्पादोऽभिहितो द्वात्रिंशे तु तेषामेवोद्वर्त्तनोच्यते इत्येवंसम्बन्धमष्टाविंशत्युद्देशकमानमिदं व्याख्यायते, तस्य चेदमादिसूत्रम्—

खुड्डागकडजुम्मनेरइया णं भंते! अणंतरं उव्वट्टित्ता कहिं गच्छंति ? कहिं उववज्जंति ? किं नेरइएसु उववज्जंति तिरिक्खजोणिएसु उवव० उव्वट्टणा जहा वक्कंतीए। ते णं भंते! जीवा एगसमएणं केवइया उव्वट्टंति ?, गोयमा! चत्तारि वा अट्ठ वा बारस वा सोलस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा उव्वट्टंति, ते णं भंते! जीवा कहं उव्वट्टंति ?, गोयमा! से जहा नामए पवए एवं तहेव, एवं सो चेव गमओ जाव आयप्पयोगेणं उव्वट्टंति नो परप्पयोगेणं उव्वट्टंति, रयणप्पभापुढविनेरइए खुड्डागकड० एवं रयणप्पभाएवि एवं जाव अहेसत्तमाए, एवं खुड्डागतेयोगखुड्डागदावरजुम्मखुड्डागकलियोगा नवरं परिमाणं जाणियव्वं, सेसं तं चेव । सेवं भंते ! २ त्ति ॥ (सूत्रं ८४२) ॥ ३२ । १ ॥ कण्हलेस्सकडजुम्मनेरइया एवं एएणं कमेणं जहेव उववायसए अट्ठावीसं उद्देसगा भणिया तहेव उवट्टणासएवि अट्ठावीसं उद्देसगा भाणियव्वा निरवसेसा नवरं उव्वट्टंतित्ति अभिलाओ भाणियव्वो, सेसं तं चेव। सेवं भंते सेवं भंते त्ति जाव विहरइ ॥ (सूत्रं ८४३) उववट्टणासयं सम्मत्तं ॥ ३२ ॥

'खुड्डागे'त्यादि, 'उवट्टणा जहा वक्कंतीए'त्ति, सा चैवमर्थतः–'नरगाओ उवट्टा गब्भे पज्जत्तसंखजीवीसु 'त्ति ॥ द्वात्रिंशं शतं वृत्तितः समाप्तम् ॥ ३२ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र एकत्रिंशत्तमे शतके १-२८ उद्देशका: परिसमाप्ता:

तत् समाप्ते एकत्रिंशत्तमं शतकं अपि परिसमाप्तं

अथ द्वात्रिंशत्तं शतकं आरभ्यते

प्रत सूत्रांक [८४२-८४३, ८४४, ८४९]

दीप अनुक्रम [१०१६-१०१७, १०१८-१०३२]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥९५१॥

व्याख्याते प्राक्शते व्याख्या, कृतैवास्य समत्वतः। एकत्र तोयचन्द्रे हि, दृष्टे दृष्टाः परेऽपि ते ॥ ॥ १ ॥

———

द्वात्रिंशे शते नारकोद्वर्त्तनोक्ता, नारकाश्चोद्वृत्ता एकेन्द्रियादिषु नोत्पद्यन्ते, के च ते ? इत्यस्यामाशङ्कायां ते प्ररूपयितव्या भवन्ति, तेषु चैकेन्द्रियास्तावत्प्ररूपणीया इत्येकेन्द्रियप्ररूपणपरं त्रयस्त्रिंशं शतं द्वादशावान्तरशतोपेतं व्याख्यायते, तस्य चेदमादिसूत्रम्—

कतिविहा णं भंते! एगिंदिया पन्नत्ता?, गोयमा! पंचविहा एगिंदिया प० तं०—पुढविक्काइया जाव वणस्सइकाइया, पुढविक्काइया णं भंते! कतिविहा प०?, गोयमा! दुविहा प० तं०—सुहुमपुढविकाइया य बायरपुढविकाइया य, सुहुमपुढविकाइया णं भंते! कतिविहा प०?, गोयमा! दुविहा पन्नत्ता, तंजहा—पज्जत्ता सुहुमपुढविकाइया य अपज्जत्ता सुहुमपुढविकाइया य, बायरपुढविकाइया णं भंते! कतिविहा प०?, गो० एवं चेव, एवं आउकाइयावि चउक्कएणं भेदेणं भाणियव्वा एवं जाव वणस्सइकाइया। अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइया णं भंते! कति कम्मप्पगडीओ प०?, गोयमा! अट्ठ कम्मप्पगडी पं०, तं०—नाणावरणिज्जं जाव अंतराइयं, पज्जत्तसुहुमपुढविकाइयाणं भंते! कति कम्मप्पगडीओ प०?, गोयमा! अट्ठ कम्मप्पगडीओ प०, तंजहा—नाणावरणिज्जं जाव अंतराइयं। अपज्जत्तबायरपुढविकाइयाणं भंते! कति कम्मप्पगडीओ प०?, गोयमा! एवं चेव ८, पज्जत्तबायरपुढविकाइयाणं भंते! कति कम्मप्पगडीओ एवं चेव ८, एवं एएणं कमेणं जाव बायर-

३२ शतके उद्दे. २८ उद्वर्त्तना सू ८४१-८४२ ३३ शतके अवान्तर शत. १२ एकेन्द्रिय-भेदादि सू ८४३-८४८

॥९५१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र द्वात्रिंशत्तमे शतके १-२८ उद्देशका: परिसमाप्ता:

तत् समाप्ते द्वात्रिंशत्तमं शतकं अपि परिसमाप्तं

अथ त्रयोत्रिंशत्तं शतकं आरभ्यते

प्रत सूत्रांक [८४४, ८४९]

दीप अनुक्रम [१०१८- -१०३२]

वणस्सइकाइयाणं पज्जत्तगाणंति। अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइया णं भंते! कति कम्मप्पगडीओ बंधंति?, गोयमा! सत्तविहबंधगावि अट्ठविहबंधगावि सत्त० बंधमाणा आउयवज्जाओ सत्त कम्मप्पगडीओ बंधंति अट्ठ बंधमाणा पडिपुन्नाओ अट्ठ कम्मप्पगडीओ बंधंति, पज्जत्तसुहुमपुढविकाइया णं भंते! कति कम्म० ?, एवं चेव, एवं सव्वे जाव पज्जत्तबायरवणस्सइकाइया णं भंते! कति कम्मप्पगडीओ बंधंति ?, एवं चेव। अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइयाणं भंते ! कति कम्मप्पगडीओ वेदेंति ?, गोयमा ! चोद्दस कम्मप्पगडीओ वेदेंति, तं०–नाणावरणिज्जं जाव अंतराइयं, सोइंदियवज्झं चक्खिंदियवज्झं घाणिंदियवज्झं जिब्भिंदियवज्झं इत्थिवेदवज्झं पुरिसवेदवज्झं, एवं चउक्कएणं भेदेणं जाव पज्जत्तबायरवणस्सइकाइया णं भंते ! कति कम्मप्पगडीओ वेदेंति ?, गोयमा! एवं चेव चोद्दस कम्मप्पगडीओ वेदेंति । सेवं भंते ! २ त्ति ॥ (सूत्रं ८४४)॥ ॥३३।१॥ कइविहा णं भंते! अणंतरोववन्नगा एगिंदिया प०?, गोयमा! पंचविहा अणंतरोववन्नगा एगिंदिया प० तं०–पुढविक्का० जाव वणस्सइकाइया, अणंतरोववन्नगा णं भंते! पुढविक्काइया कतिविहा पं० ?, गोयमा! दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–सुहुमपुढविकाइया य बायरपुढविकाइया य, एवं दुपएणं भेदेणं जाव वणस्सइकाइया । अणंतरोववन्नगसुहुमपुढविकाइयाणं भंते! कति कम्मप्पगडीओ प०?, गोयमा! अट्ठ कम्मप्पगडीओ प० तं०–नाणावरणिज्जं जाव अंतराइयं, अणंतरोववन्नगबादरपुढविकाइयाणं भंते! कति कम्मप्पगडीओ प०?, गोयमा! अट्ठ कम्मप्पयडीओ प० तं०–नाणावरणिज्जं जाव अंतराइयं, एवं जाव अणंतरोववन्नगबादरवण-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [८४४, ८४९]

दीप अनुक्रम [१०१८-१०३२]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥ ९५२ ॥

स्सइकाइयाणंति, अणंतरोववन्नगसुहुमपुढविकाइया णं भंते! कति कम्मप्पगडीओ बंधंति?, गोयमा! आउयवज्जाओ सत्त कम्मप्पगडीओ बंधंति, एवं जाव अणंतरोववन्नगबादरवणस्सइकाइयत्ति। अणंतरोववन्नगसुहुमपुढविकाइया णं भंते! कइ कम्मप्पगडीओ वेदेंति?, गोयमा! चउद्दस कम्मप्पगडीओ वेदेंति, तं०–नाणावरणिज्जं तहेव जाव पुरिसवेदवज्जं, एवं जाव अणंतरोववन्नगबादरवणस्सइकाइयत्ति। सेवं भंते! सेवं भंतेत्ति ॥ (सूत्रं ८४५) ॥ ३३।२ ॥ कतिविहा णं भंते! परंपरोववन्नगा एगिंदिया प० ?, गोयमा! पंचविहा परंपरोववन्नगा एगिंदिया प० तं०–पुढविक्काइया एवं चउक्कओ भेदो जहा ओहिउद्देसए। परंपरोववन्नगअपज्जत्तसुहुमपुढविकाइयाणं भंते! कइ कम्मप्पगडीओ प० ?, एवं एएणं अभिलावेणं जहा ओहिउद्देसए तहेव निरवसेसं भाणियव्वं जाव चउद्दस वेदेंति। सेवं भंते! २ त्ति ॥ (सूत्रं ८४६) ३३।३ ॥ अणंतरोगाढा जहा अणंतरोववन्नगा ४ ॥ परंपरोगाढा जहा परंपरोववन्नगा ५ ॥ अणंतराहारगा जहा अणंतरोववन्नगा ६ ॥ परंपराहारगा जहा परंपरोववन्नगा ७ ॥ अणंतरपज्जत्तगा जहा अणंतरोववन्नगा ८ ॥ परंपरपज्जत्तगा जहा परंपरोववन्नगा ९ ॥ चरिमावि जहा परंपरोववन्नगा तहेव १० ॥ एवं अचरिमावि ११ ॥ एवं एए एक्कारस उद्देसगा। सेवं भंते! २ जाव विहरइ ॥ (सूत्रं ८४७) पढमं एगिंदियसयं सम्मत्तं ॥ ३३।१ ॥ कइविहा णं भंते! कण्हलेस्सा एगिंदिया प० ?, गोयमा! पंचविहा कण्हलेस्साएगिंदिया प०, तं०–पुढविकाइया जाव वणस्सइकाइया। कण्हलेस्सा णं भंते! पुढविकाइया कइविहा प० ?, गोयमा! दुविहा पं० तं०–सुहुमपुढवि-

३२ शतके उद्दे. २८ उद्वर्त्तना सू ८४१-८४२
३३ शतके अवान्तर शत. १२ एकेन्द्रिय-भेदादि सू ८४३-८४८

॥ ९५२ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [८४४, ८४९] दीप अनुक्रम [१०१८--१०३२]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

काइया य बादरपुढविकाइया य, कण्हलेस्सा णं भंते! सुहुमपुढविकाइया कइविहा प० ?, गोयमा! एवं एएणं अभिलावेणं चउक्कभेदो जहेव ओहिउद्देसए जाव वणस्सइकाइयत्ति, कण्हलेस्सअपज्जत्तसुहुमपुढविकाइयाणं भंते! कइ कम्मप्पगडीओ प०?, एवं चेव एएणं अभिलावेणं जहेव ओहिउद्देसए तहेव पन्नत्ताओ तहेव बंधंति तहेव वेदेंति। सेवं भंते! २ त्ति ॥ कइविहा णं भंते ! अणंतरोववन्नगकण्हलेस्सएगिंदिया पन्नत्ता?, गोयमा! पंचविहा अणंतरोववन्नगा कण्हलेस्सा एगिंदिया एवं एएणं अभिलावेणं तहेव दुयओ भेदो जाव वणस्सइकाइयत्ति, अणंतरोववन्नगकण्हलेस्ससुहुमपुढविकाइयाणं भंते ! कइ कम्मप्पगडीओ प० ?, एवं एएणं अभिलावेणं जहा ओहिओ अणंतरोववन्नगाणं उद्देसओ तहेव जाव वेदेंति। सेवं भंते! सेवं भंते! त्ति॥ कइविहा णं भंते! परंपरोववन्नगा कण्हलेस्सा एगिंदिया प० ?, गोयमा! पंचविहा परंपरोववन्नगा कण्ह० एगिंदिया पन्नत्ता, तंजहा–पुढविकाइया एवं एएणं अभिलावेणं तहेव चउक्कओ भेदो जाव वणस्सइकाइयत्ति, परंपरोववन्नगकण्हलेस्सअपज्जत्तसुहुमपुढविकाइयाणं भंते ! कइ कम्मप्पगडीओ प० ?, एवं एएणं अभिलावेणं जहेव ओहिओ परंपरोववन्नगउद्देसओ तहेव जाव वेदेंति, एवं एएणं अभिलावेणं जहेव ओहिएगिंदियसए एक्कारस उद्देसगा भणिया तहेव कण्हलेस्ससतेवि भाणियव्वा जाव अचरिमचरिमकण्हलेस्साएगिंदिया ॥ (सूत्रं ८४८)॥ बितियं एगिंदियसयं सम्मत्तं ॥ २ ॥ जहा कण्हलेस्सेहिं भणियं एवं नीललेस्सेहिवि सयं भाणियवं। सेवं भंते! २ त्ति ॥ ततियं एगिंदियसयं सम्मत्तं ॥ ३ ॥ एवं काउलेस्सेहिवि सयं भाणियव्वं नवरं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [८४४, ८४९] दीप अनुक्रम [१०१८-१०३२]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥९५३॥

काउलेस्सेति अभिलावो भाणियव्वो ॥ चउत्थं एगिंदियसयं सम्मत्तं ॥ ४ ॥ कइविहा णं भंते ! भवसिद्धीया एगिंदिया प० ?, गोयमा ! पंचविहा भवसिद्धिया एगिंदिया प०, तं०–पुढविकाइया जाव वणस्सइकाइया भेदो चउक्कओ जाव वणस्सइकाइयत्ति । भवसिद्धियअपज्जत्तसुहुमपुढविकाइयाणं भंते ! कति कम्मप्पगडीओ प० ?, एवं एएणं अभिलावेणं जहेव पढमिल्लगं एगिंदियसयं तहेव भवसिद्धियसयंपि भाणियव्वं, उद्देसगपरिवाडी तहेव जाव अचरिमोत्ति । सेवं भंते ! २ त्ति ॥ पंचमं एगिंदियसयं सम्मत्तं ॥ ५ ॥ कइविहा णं भंते ! कण्हलेस्सा भवसिद्धिया एगिंदिया प० ?, गोयमा ! पंचविहा कण्हलेस्सा भवसिद्धिया एगिंदिया प०, पुढविकाइया जाव वणस्सइकाइया, कण्हलेस्सभवसिद्धीयपुढविकाइया णं भंते ! कतिविहा प० ?, गोयमा ! दुविहा प०, तं०–सुहुमपुढविकाइया य बायरपुढविकाइया य, कण्हलेस्सभवसिद्धीयसुहुमपुढविकाइया णं भंते ! कइविहा प० ?, गोयमा ! दुविहा पं० तंजहा–पज्जत्तगा य अपज्जत्तगा य, एवं बायरावि, एएणं अभिलावेणं तहेव चउक्कओ भेदो भा०, कण्हलेस्सभवसिद्धीयअपज्जत्तसुहुमपुढविकाइयाणं भंते ! कइ कम्मप्पगडीओ प०, एवं एएणं अभिलावेणं जहेव ओहिउद्देसए तहेव जाव वेदेंति । कइविहा णं भंते ! अणंतरोववन्नगा कण्हलेस्सा भवसिद्धिया एगिंदिया प० ?, गोयमा ! पंचविहा अणंतरोववन्नगा जाव वणस्सइकाइया, अणंतरोववन्नगकण्हलेस्सभवसिद्धीयपुढविकाइया णं भंते ! कतिविहा प० ?, गोयमा ! दुविहा प०, तं०–सुहुमपुढविका० एवं दुयओ भेदो । अणंतरोववन्नगकण्हलेस्सभवसिद्धीयसुहुमपुढविकाइयाणं भंते ! कइ क-

३२ शतके उद्दे. २८ उद्वर्त्तना सू ८४१-८४२ ३३ शतके अवान्तर शत. १२ एकेन्द्रिय-भेदादि सू. ८४३-८४८

॥९५३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [८४४, ८४९]

दीप अनुक्रम [१०१८-१०३२]

म्मपगडीओ प० ?, एवं एएणं अभिलावेणं जहेव ओहिओ अणंतरोववन्नउद्देसओ तहेव जाव वेदेंति, एवं एएणं अभिलावेणं एक्कारसवि उद्देसगा तहेव भाणियव्वा जहा ओहियसए जाव अचरिमोत्ति ॥ छट्ठं एगिंदियसयं सम्मत्तं ॥६॥ [ग्रन्थाग्रम् १५०००] जहा कण्हलेस्सभवसिद्धिएहिं सयं भणियं एवं नीललेस्सभवसिद्धिएहिवि सयं भाणियव्वं ॥ सत्तमं एगिंदियसयं सम्मत्तं ॥७॥ एवं काउलेस्सभवसिद्धीएहिवि सयं ॥ अट्ठमं एगिंदियसयं सम्मत्तं ॥८॥ कइविहा णं भंते ! अभवसिद्धीया एगिंदिया प० ?, गोयमा ! पंचविहा अभवसिद्धिया० प० तं०–पुढविक्काइया जाव वणस्सइकाइया एवं जहेव भवसिद्धीयसयं भणियं नवरं नव उद्देसगा चरमअचरमउद्देसगवज्जा सेसं तहेव ॥ नवमं एगिंदियसयं सम्मत्तं ॥ ९ ॥ एवं कण्हलेस्सअभवसिद्धीयएगिंदियसयंपि ॥ दसमं एगिंदियसयं सम्मत्तं ॥ १० ॥ नीललेस्सअभवसिद्धीयएगिंदिएहिवि सयं ॥ ११ ॥ काउलेस्सअभवसिद्धीयसयं, एवं चत्तारिवि अभवसिद्धीयसयाणि णव २ उद्देसगा भवंति, एवं एयाणि बारस एगिंदियसयाणि भवंति ॥ (सूत्रं ८४९) ॥ तेत्तीसइमं सयं सम्मत्तं ॥ ३३ ॥

'कइविहा ण'मित्यादि, 'चोद्दस कम्मपयडीओ'त्ति, तत्राष्टौ ज्ञानावरणादिकास्तदन्याः षट् तद्विशेषभूताः 'सोइंदियवज्झं'ति श्रोत्रेन्द्रियं वध्यं–हननीयं यस्य तत्तथा मतिज्ञानावरणविशेष इत्यर्थः, एवमन्यान्यपि, स्पर्शनेन्द्रियवध्यं तु तेषां नास्ति, तद्भावे एकेन्द्रियत्वहानिप्रसङ्गादिति। 'इत्थिवेयवज्झं'ति यदुदयात्स्त्रीवेदो न लभ्यते तत्स्त्रीवेदवध्यम् , एवं पुंवेदवध्यमपि, नपुंसकवेदवध्यं तु तेषां नास्ति नपुंसकवेदवर्त्तित्वादिति । शेषं सूत्रसिद्धं, नवरम् 'एवं दुपएणं भेदे-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [८४४, ८४९]

दीप अनुक्रम [१०१८- -१०३२]

एणं'ति अनन्तरोपपन्नकानामेकेन्द्रियाणां पर्याप्तकापर्याप्तकभेदयोरभावेन चतुर्विधभेदस्यासम्भवाद् द्विपदेन भेदेनेत्युक्तम्। तथा 'चरमअचरमउद्देसगवज्जं'ति, अभवसिद्धिकानामचरमत्वेन चरमाचरमविभागो नास्तीतिकृत्वेति ॥ त्रयस्त्रिंशं शतं वृत्तितः समाप्तमिति ॥ ३३ ॥

व्याख्येयमिह स्तोकं स्तोका व्याख्या तदस्य विहितेयम्। न ह्योदनमात्रायामतिमात्रं व्यञ्जनं युक्तम् ॥ १ ॥

त्रयस्त्रिंशशते एकेन्द्रियाः प्ररूपिताश्चतुस्त्रिंशच्छतेऽपि भङ्ग्यन्तरेण त एव प्ररूप्यन्ते इत्येवंसंबन्धेनायातस्य च द्वादशशतोपेतस्यास्येदमादिसूत्रम्—

कइविहा णं भंते! एगिंदिया प० ?, गोयमा! पंचविहा एगिंदिया प० तं०–पुढविक्काइया जाव वणस्सइकाइया, एवं एतेणं चेव चउक्कएणं भेदेणं भाणियव्वा जाव वणस्सइकाइया, अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइए णं भंते! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पुरच्छिमिल्ले चरिमंते समोहए समोहइत्ता जे भविए इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पच्चच्छिमिल्ले चरिमंते अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइयत्ताए उववज्जित्तए, से णं भंते! कइसमएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा ?, गोयमा! एगसमइएण वा दुसमइएण वा तिसमइएण वा विग्गहेणं उववज्जेज्जा, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ एगसमइएण वा दुसमइएण वा जाव उववज्जेज्जा ?, एवं खलु गोयमा! मए सत्त सेढीओ प०, तं०–उज्जुयायता सेढी एगयओवंका दुहओवंका एगयओखहा दुहओखहा चक्कवाला अद्धचक्कवाला ७, उज्जु-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र त्रयोत्रिंशत्तमे शतके १-१२ अन्तर्-शतका परिसमाप्ता:

तत् समाप्ते त्रयोत्रिंशत्तमं शतकं अपि परिसमाप्तं

अथ चतुस्त्रिंशत्तं शतकं आरभ्यते

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

आयताए सेढीए उववज्जमाणे एगसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा, एगओवंकाए सेढीए उववज्जमाणे दुसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेजा, दुहओवंकाए सेढीए उववज्जमाणे तिसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा, से तेणट्ठेणं गोयमा! जाव उववज्जेज्जा। अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइए णं भंते! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पुरच्छिमिल्ले चरिमंते समोहए समो २ जे भविए इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पच्चच्छिमिल्ले चरिमंते पज्जत्तसुहुमपुढविकाइयत्ताए उववज्जित्तए से णं भंते! कइसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा?, गोयमा! एगसमइएण वा सेसं तं चेव जाव से तेणट्ठेणं जाव विग्गहेणं उववज्जेज्जा, एवं अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइओ पुरच्छिमिल्ले चरिमंते समोहणावेत्ता पच्चच्छिमिल्ले चरिमंते बादरपुढविकाइएसु अपज्जत्तएसु उववाएयव्वो, ताहे तेसु चेव पज्जत्तएसु ४, एवं आउकाइएसु चत्तारि आलावगा सुहुमेहिं अपज्जत्तएहिं ताहे पज्जत्तएहिं बायरेहिं अपज्जत्तएहिं ताहे पज्जत्तएहिं उववाएयव्वो ४, एवं चेव सुहुमतेउकाएहिवि अपज्जत्तएहिं १ ताहे पज्जत्तएहिं उववाएयव्वो २, अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइए णं भंते! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पुरच्छिमिल्ले चरिमंते समोहए समोहइत्ता जे भविए मणुस्सखेत्ते अपज्जत्तबादरतेउकाइयत्ताए उववज्जित्तए से णं भंते! कइसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा?, सेसं तं चेव, एवं पज्जत्तबायरतेउक्काइयत्ताए उववाएयव्वो ४, वाउक्काइए सुहुमबायरेसु जहा आउक्काइएसु उववाओ तहा उववाएयव्वो ४, एवं वणस्सइकाइएसुवि २०, पज्जत्तसुहुमपुढविकाइए णं भंते! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए एवं पज्जत्तसुहुमपुढविकाइओवि पुरच्छिमिल्ले चरिमंते समोहणावेत्ता एएणं चेव कमेणं एएसु चेव वीससु

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ठाणेसु उववाएयव्वो जाव बादरवणस्सइकाइएसु पज्जत्तएसुवि ४०, एवं अपज्जत्तबादरपुढविकाइओवि ६०, एवं पज्जत्तबादरपुढविकाइओवि ८०, एवं आउकाइओवि चउसुवि गमएसु पुरच्छिमिल्ले चरिमंते समोहए एयाए चेव वत्तव्वयाए एएसु चेव वीसइठाणेसु उववाएयव्वो १६०, सुहुमतेउकाइओवि अपज्जत्तओ पज्जत्तओ य एएसु चेव वीसाए ठाणेसु उववाएयव्वो, अपज्जत्तबायरतेउक्काइए णं भंते! मणुस्सखेत्ते समोहए २ जे भविए इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पच्चच्छिमिल्ले चरिमंते अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइयत्ताए उववज्जित्तए से णं भंते! कइसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा सेसं तहेव जाव से तेणट्ठेणं० एवं पुढविकाइएसु चउविहेसुवि उववाएयव्वो, एवं आउकाइएसु चउविहेसुवि, तेउकाइएसु सुहुमेसु अपज्जत्तएसु पज्जत्तएसु य एवं चेव उववाएयव्वो, अपज्जत्तबायरतेउक्काइए णं भंते ! मणुस्सखेत्ते समोहए समो० २ जे भविए मणुस्सखेत्ते अपज्जत्तबायरतेउक्काइयत्ताए उववज्जित्तए से णं भंते! कतिसम० ?, सेसं तं चेव, एवं पज्जत्तबायरतेउक्काइयत्ताएवि उववाएयव्वो, वाउकाइयत्ताए य वणस्सइकाइयत्ताए य जहा पुढविकाइएसु तहेव चउक्कएणं भेदेणं उववाएयव्वो, एवं पज्जत्तबायरतेउकाइओऽवि समयखेत्ते समोहणावेत्ता एएसु चेव वीसाए ठाणेसु उववाएयव्वो जहेव अपज्जत्तओ उववाइओ, एवं सव्वत्थवि बायरतेउकाइया अपज्जत्तगा य पज्जत्तगा य समयखेत्ते उववाएयव्वा समोहणावेयव्वावि २४०, वाउक्काइया वणस्सकाइया य जहा पुढविकाइया तहेव चउक्कएणं भेदेणं उववाएयव्वा जाव पज्जत्ता ४००॥ बायरवणस्सइकाइए णं भंते! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पुरच्छिमिल्ले चरिमंते समोहए समोहएत्ता ॥९५५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जे भविए इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पचच्छिमिल्ले चरिमंते पज्जत्तबायरवणस्सइकाइयत्ताए उववज्जित्तए से णं भंते! कतिसम० सेसं तहेव जाव से तेणट्ठेणं०, अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइएसु णं भंते! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पचच्छिमिल्ले चरिमंते समोहए समोह० २ जे भविए इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पुरच्छिमिल्ले चरिमंते अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइयत्ताए उववज्जित्तए से णं भंते! कइसमएणं?, सेसं तहेव निरवसेसं, एवं जहेव पुरच्छिमिल्ले चरिमंते सव्वपदेसुवि समोहया पचच्छिमिल्ले चरिमंते समयखेत्ते य उववाइया जे य समयखेत्ते समोहया पचच्छिमिल्ले चरिमंते समयखेत्ते य उववाइया एवं एएणं चेव कमेणं पचच्छिमिल्ले चरिमंते समयखेत्ते य समोहया पुरच्छिमिल्ले चरिमंते समयखेत्ते य उववाएयव्वा तेणेव गमएणं, एवं एएणं गमएणं दाहिणिल्ले चरिमंते समोहयाणं उत्तरिल्ले चरिमंते समयखेत्ते य उववाओ एवं चेव उत्तरिल्ले चरिमंते समयखेत्ते य समोहया दाहिणिल्ले चरिमंते समयखेत्ते य उववाएयव्वा तेणेव गमएणं, अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइए णं भंते! सक्करप्पभाए पुढवीए पुरच्छिमिल्ले चरिमंते समोहए २ जे भविए सक्करप्पभाए पुढवीए पचच्छिमिल्ले चरिमंते अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइयत्ताए उववज्जइ एवं जहेव रयणप्पभाए जाव से तेणट्ठेणं एवं एएणं कमेणं जाव पज्जत्तएसु सुहुमतेउकाइएसु, अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइए णं भंते! सक्करप्पभाए पुढवीए पुरच्छिमिल्ले चरिमंते समोहए समोहइत्ता जे भविए समयखेत्ते अपज्जत्तबायरतेउकाइयत्ताए उववज्जित्तए से णं भंते! कतिसमय० पुच्छा, गोयमा! दुसमइएण वा तिसमइएण वा विग्गहेण उववज्जिज्जा, से केणट्ठेणं?, एवं खलु

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥९५६॥

गोयमा! मए सत्त सेढीओ पं० तं०–उज्जुयायता जाव अद्धचक्कवाला, एगओवंकाए सेढीए उववज्जमाणे दुसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा दुहओवंकाए सेढीए उववज्जमाणे तिसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा से तेणट्ठेणं०, एवं पज्जत्तएसुवि बायरतेउक्काइएसु, सेसं जहा रयणप्पभाए, जेऽवि बायरतेउकाइया अपज्जत्तगा य पज्जत्तगा य समयखेत्ते समोहणित्ता दोचाए पुढवीए पच्चच्छिमिल्ले चरिमंते पुढविकाइएसु चउविहेसु आउक्काइएसु चउविहेसु तेउकाइएसु दुविहेसु वाउकाइएसु चउविहेसु वणस्सइकाइएसु चउविहेसु उववज्जंति तेऽवि एवं चेव दुसमइएण वा तिसमइएण वा विग्गहेण उववाएयव्वा, बायरतेउक्काइया अपज्जत्तगा य पज्जत्तगा य जाहे तेसु चेव उववज्जंति ताहे जहेव रयणप्पभाए तहेव एगसमइयदुसमइयतिसमइयविग्गहा भाणियव्वा सेसं जहेव रयणप्पभाए तहेव निरवसेसं, जहा सक्करप्पभाए वत्तव्वया भणिया एवं जाव अहे सत्तमाएवि भाणियव्वा ॥ (सूत्रं ८५०) ॥

३४ शतके उद्दे. १ पृथ्व्यादी-नामुत्पादः सू ८५०

'कइविहे'इत्यादि, इदं च लोकनाडीं प्रस्तीर्य भावनीयं, 'एगसमइएण व'त्ति एकः समयो यत्रास्त्यसावेकसामयिकस्तेन 'विग्गहेणं'ति विग्रहे–वक्रगतौ च तस्य सम्भवाद्गतिरेव विग्रहः विशिष्टो वा ग्रहो–विशिष्टस्थानप्राप्तिहेतुभूता गतिर्विग्रहस्तेन, तत्र 'उज्जुआययाए'त्ति यदा मरणस्थानापेक्षयोत्पत्तिस्थानं समश्रेण्यां भवति तदा ऋज्वायता श्रेणिर्भवति, तया च गच्छत एकसामयिकी गतिः स्यादित्यत उच्यते–'एगसमइएण'मित्यादि, यदा पुनर्मरणस्थानादुत्पत्तिस्थानमेकप्रतरे विश्रेण्यां वर्त्तते तदैकतोवक्रा श्रेणिः स्यात् समयद्वयेन चोत्पत्तिस्थानप्राप्तिः स्यादित्यत उच्यते—'एगओवंकाए

॥९५६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सेढीए उववज्जमाणे दुसमइएणं विग्गहेण'मित्यादि, यदा तु मरणस्थानादुत्पत्तिस्थानमधस्तने उपरितने वा प्रतरे विश्रेण्यां स्यात्तदा द्विवक्राश्रेणिः स्यात् समयत्रयेण चोत्पत्तिस्थानावाप्तिः स्यादित्यत उच्यते-'दुहओवंकाए'इत्यादि, 'एवं आउकाइएसुवि चत्तारि आलावगा'इत्येतस्य विवरणं 'सुहुमेही'त्यादि । बादरस्तेजस्कायिकसूत्रे रत्नप्रभाप्रक्रमेऽपि यदुक्तं 'जे भविए मणुस्सखेत्ते'त्ति तद्बादरतेजसामन्यत्रोत्पादासम्भवादिति । 'वीससु ठाणेसु'त्ति, पृथिव्यादयः पञ्च सूक्ष्मबादरभेदाद् द्विधेति दश, ते च प्रत्येकं पर्याप्तकापर्याप्तकभेदाद्विंशतिरिति । इह चैकैकस्मिन् जीवस्थाने विंशतिर्गमा भवन्ति, तदेवं पूर्वान्तगमानां चत्वारि शतानि, एवं पश्चिमान्तादिगमानामपि, ततश्चैव रत्नप्रभाप्रकरणे सर्वाणि षोडश शतानि गमानामिति । शर्कराप्रभाप्रकरणे बादरतेजस्कायिकसूत्रे 'दुसमइएण वे'त्यादि, इह शर्कराप्रभापूर्वचरमान्तान्मनुष्यक्षेत्रे उत्पद्यमानस्य समश्रेणिर्नास्तीति 'एगसमइएण'मितीह नोक्तं, 'दुसमइएण'मित्यादि त्वेकवक्रस्य द्वयोर्वा सम्भवादुक्तमिति ॥ अथ सामान्येनाधःक्षेत्रमूर्ध्वक्षेत्रं चाश्रित्याह—

अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइए णं भंते! अहोलोयखेत्तनालीए बाहिरिल्ले खेत्ते समोहए २ जे भविए उड्ढलोयखेत्तनालीए बाहिरिल्ले खेत्ते अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइयत्ताए उववज्जित्तए से णं भंते! कइसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा?, गोयमा! तिसमइएण वा चउसमइएण वा विग्गहेणं उववज्जेज्जा?, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ तिसमइएण वा चउसमइएण वा विग्गहेणं उववज्जेज्जा?, गोयमा! अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइए णं अहोलोयखेत्तनालीए बाहिरिल्ले खेत्ते समोहए स० २ जे भविए उड्ढलोयखेत्तनालीए बाहिरिल्ले खेत्ते अपज्जत्त-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सुहुमपुढविकाइयत्ताए एगपयरंमि अणुसेढीए उववज्जित्तए से णं तिसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा जे भविए विसेढीए उववज्जित्तए से णं चउसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा से तेणट्ठेणं जाव उववज्जेज्जा, एवं पज्जत्तसुहुमपुढविकाइयत्ताएऽवि, एवं जाव पज्जत्तसुहुमतेउकाइयत्ताए, अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइए णं भंते! अहेलोग जाव समोहणित्ता जे भविए समयखेत्ते अपज्जत्तबायरतेउकाइयत्ताए उववज्जित्तए से णं भंते!, कइसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा?, गोयमा! दुसमइएण वा तिसमइएण वा विग्गहेणं उववज्जेज्जा, से केणट्ठेणं?, एवं खलु गोयमा! मए सत्त सेढीओ प०, तं०–उज्जुआयता जाव अद्धचक्कवाला, एगओवंकाए सेढीए उववज्जमाणे दुसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा दुहओवंकाए सेढीए उववज्जमाणे तिसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा से तेणट्ठेणं०, एवं पज्जत्तएसुवि बायरतेउकाइएसुवि उववाएयव्वो, वाउक्काइयवणस्सइकाइयत्ताए चउक्कएणं भेदेणं जहा आउक्काइयत्ताए तहेव उववाएयव्वो २०, एवं जहा अपज्जत्तसुहुमपुढविक्काइयस्स गमओ भणिओ एवं पज्जत्तसुहुमपुढविकाइयस्सवि भाणियव्वो तहेव वीसाए ठाणेसु उववाएयव्वो ४०, अहोलोयखेत्तनालीए बाहिरिल्ले खेत्ते समोहए समोहएत्ता एवं बायरपुढविकाइयस्सवि अपज्जत्तगस्स पज्जत्तगस्स य भाणियव्वं ८०, एवं आउक्काइयस्स चउव्विहस्सवि भाणियव्वं १६०, सुहुमतेउक्काइयस्स दुविहस्सवि एवं चेव २००, अपज्जत्तबायरतेउक्काइए णं भंते! समयखेत्ते समोहए स० २ जे भविए उड्ढलोगखेत्तनालीए बाहिरिल्ले खेत्ते अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइयत्ताए उववज्जित्तए से णं भंते! कइसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा?, गोयमा! दुस- ॥ ९५७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मइएण वा तिसमइएण वा चउसमइएण वा विग्गहेणं उववज्जेज्जा, से केणंट्ठेणं० अट्ठो जहेव रयणप्पभाए तहेव सत्त सेढीओ एवं जाव अपज्जत्तबायरतेउकाइए णं भंते! समयखेत्ते समोहए समो २ जे भविए उड्ढलोगखेत्तनालीए बाहिरिल्ले खेत्ते पज्जत्तसुहुमतेउकाइयत्ताए उववज्जित्तए से णं भंते! सेसं तं चेव, अपज्जत्तबायरतेउकाइए णं भंते! समयखेत्ते समोहए स० २ जे भविए समयखेत्ते अपज्जत्तबायरतेउकाइयत्ताए उववज्जित्तए से णं भंते! कइसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा?, गोयमा! एगसमइएण वा दुसमइएण वा तिसमइएण वा विग्गहेणं उववज्जेज्जा, से केणट्ठेणं? अट्ठो जहेव रयणप्पभाए तहेव सत्त सेढीओ, एवं पज्जत्तबायरतेउकाइत्ताएवि, वाउयकाइएसु वणस्सइकाइएसु य जहा पुढविकाइएसु उववाइओ तहेव चउक्कएणं भेदेणं उववाएयव्वो, एवं पज्जत्तबायरतेउकाइओवि एएसु चेव ठाणेसु उववाएयव्वो, वाउकाइयवणस्सइकाइयाणं जहेव पुढविकाइयत्ते उववाओ तहेव भाणियव्वो। अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइए णं भंते! उड्ढलोगखेत्तनालीए बाहिरिल्ले खेत्ते समोहए समोहणित्ता जे भविए अहेलोगखेत्तनालीए बाहिरिल्ले खेत्ते अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइयत्ताए उववज्जित्तए से णं भंते! कइस०?, एवं उड्ढलोगखेत्तनालीए बाहिरिल्ले खेत्ते समोहयाणं अहेलोगखेत्तनालीए बाहिरिल्ले खेत्ते उववज्जयाणं सो चेव गमओ निरवसेसो भाणियव्वो जाव बायरवणस्सइकाइओ पज्जत्तओ बायरवणस्सइकाइएसु पज्जत्तएसु उववाइओ। अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइए णं भंते! लोगस्स पुरच्छिमिल्ले चरिमंते समोहए समो २ जे भविए लोगस्स पुरच्छिमिल्ले चेव चरिमंते अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइयत्ताए उवव-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥ ९५८ ॥

ज्ज्ञित्तए से णं भंते! कइसमइएणं विग्गहेणं उववज्जंति?, गोयमा! एगसमइएण वा दुसमइएण वा तिसम-
इएण वा चउसमइएण वा विग्गहेणं उववज्जंति, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ एगसमइएण वा जाव उवव-
ज्जेज्जा?, एवं खलु गोयमा! मए सत्त सेढीओ प०, तंजहा—उज्जुआयता जाव अद्धचक्कवाला, उज्जुआययाए
सेढीए उववज्जमाणे एगसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा एगओवंकाए सेढीए उववज्जमाणे दुसमइएणं विग्गहेणं
उववज्जेज्जा दुहओवंकाए सेढीए उववज्जमाणे जे भविए एगपयरंसि अणुसेढी उववज्जित्तए से णं तिसमइएणं
विग्गहेणं उववज्जेज्जा जे भविए विसेढिं उववज्जित्तए से णं चउसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा, से तेणट्ठेणं
जाव उववज्जेज्जा, एवं अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइओ लोगस्स पुरच्छिमिल्ले चरिमंते समोहए २ लोगस्स पुर-
च्छिमिल्ले चेव चरिमंते अपज्जत्तएसु पज्जत्तएसु य सुहुमपुढविकाइएसु सुहुमआउकाइएसु अपज्जत्तएसु पज्ज-
त्तएसु सुहुमतेउक्काइएसु अपज्जत्तएसु पज्जत्तएसु य सुहुमवाउकाइएसु अपज्जत्तएसु पज्जत्तएसु बायरवाउ-
काइएसु अपज्जत्तएसु पज्जत्तपसु सुहुमवणस्सइकाइएसु अपज्जत्तएसु पज्जत्तएसु य बारससुवि ठाणेसु एएणं
चेव कमेणं भाणियव्वो, सुहुमपुढविकाइओ अपज्जत्तओ एवं चेव निरवसेसो बारससुवि ठाणेसु उववाएयव्वो
२४, एवं एएणं गमएणं जाव सुहुमवणस्सइकाइओ पज्जत्तओ सुहुमवणस्सइकाइएसु पज्जत्तएसु चेव भाणि-
यव्वो ॥ अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइए णं भंते! लोगस्स पुरच्छिमिल्ले चरिमंते समो० २ जे भविए लोगस्स
दाहिणिल्ले चरिमंते अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइएसु उववज्जित्तए से णं भंते!, कइसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा?,

३४ शतके उद्दे.१अधः पृथ्व्यादीनामूर्ध्वादावुत्पादः सू. ८५१

॥ ९५८ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोयमा! दुसमइएण वा तिसमइएण वा चउसमइएण वा विग्गहेणं उववज्जइ, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ?, एवं खलु गोयमा! मए सत्त सेढीओ पन्नत्ता, तंजहा—उज्जुआयता जाव अद्धचक्कवाला, एगओवंकाए सेढीए उववज्जमाणे दुसमइएणं विग्गहेणं उववज्जइ दुहओवंकाए सेढीए उववज्जमाणे जे भविए एगपयरंमि अणुसेढीओ उववज्जित्तए से णं तिसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा जे भविए विसेढिं उववज्जित्तए से णं चउसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा से तेणट्ठेणं गोयमा०, एवं एएणं गमएणं पुरच्छिमिल्ले चरिमंते समोहए दाहिणिल्ले चरिमंते उववाएयव्वो, जाव सुहुमवणस्सइकाइओ पज्जत्तओ सुहुमवणस्सइकाइएसु पज्जत्तएसु चेव, सव्वेसिं दुसमइओ तिसमइओ चउसमइओ विग्गहो भाणियव्वो। अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइए णं भंते! लोगस्स पुरच्छिमिल्ले चरिमंते समोहए २ जे भविए लोगस्स पच्चच्छिमिल्ले चरिमंते अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइयत्ताए उववज्जित्तए से णं भंते! कइसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा?, गोयमा! एगसमइएण वा दुसमइएण वा तिसमइएण वा चउसमइएण वा विग्गहेणं उववज्जेज्जा, से केणट्ठेणं?, एवं जहेव पुरच्छिमिल्ले चरिमंते समोहया पुरच्छिमिल्ले चेव चरिमंते उववाइया तहेव पुरच्छिमिल्ले चरिमंते समोहया पच्चच्छिमिल्ले चरिमंते उववाएयव्वा सव्वे, अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइए णं भंते! लोगस्स पुरच्छिमिल्ले चरिमंते समोहए २ जे भविए लोगस्स उत्तरिल्ले चरिमंते अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइयत्ताए उवव० से णं भंते! एवं जहा पुरच्छिमिल्ले चरिमंते समोहओ दाहिणिल्ले चरिमंते उववाइओ तहा पुरच्छिमिल्ले० समोहओ उत्तरिल्ले चरिमंते उववाएयव्वो, अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णं भंते! लोगस्स दाहिणिल्ले चरिमंते समोहए समोहणित्ता जे भविए लोगस्स दाहिणिल्ले चेव चरिमंते अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइयत्ताए उववज्जित्तए एवं जहा पुरच्छिमिल्ले समोहओ पुरच्छिमिल्ले चेव उववाइओ तहेव दाहिणिल्ले समोहए दाहिणिल्ले चेव उववाएयव्वो, तहेव निरवसेसं जाव सुहुमवणस्सइकाइओ पज्जत्तओ सुहुमवणस्सइकाइएसु चेव पज्जत्तएसु दाहिणिल्ले चरिमंते उववाइओ एवं दाहिणिल्ले समोहओ पच्चच्छिमिल्ले चरिमंते उववाएयव्वो नवरं दुसमइयतिसमइयचउसमइयविग्गहो सेसं तहेव, दाहिणिल्ले समोहओ उत्तरिल्ले चरिमंते उववाएयव्वो जहेव सट्ठाणे तहेव एगसमइयदुसमइयतिसमइयचउसमइयविग्गहो, पुरच्छिमिल्ले जहा पच्चच्छिमिल्ले तहेव दुसमइयतिसमइयचउसमय०, पच्चच्छिमिल्ले य चरिमंते समोहयाणं पच्चच्छिमिल्ले चेव उववज्जमाणाणं जहा सट्ठाणे, उत्तरिल्ले उववज्जमाणाणं एगसमइओ विग्गहो नत्थि, सेसं तहेव, पुरच्छिमिल्ले जहा सट्ठाणे, दाहिणिल्ले एगसमइओ विग्गहो नत्थि, सेसं तं चेव, उत्तरिल्ले समोहयाणं उत्तरिल्ले चेव उववज्जमाणाणं जहेव सट्ठाणे, उत्तरिल्ले समोहयाणं पुरच्छिमिल्ले उववज्जमाणाणं एवं चेव, नवरं एगसमइओ विग्गहो नत्थि, उत्तरिल्ले समोहयाणं दाहिणिल्ले उववज्जमाणाणं जहा सट्ठाणे, उत्तरिल्ले समोहयाणं पच्चच्छिमिल्ले उववज्जमाणाणं एगसमइओ विग्गहो नत्थि, सेसं तहेव जाव सुहुमवणस्सइकाइओ पज्जत्तओ सुहुमवणस्सइकाइएसु पज्जत्तएसु चेव ॥ कहिन्नं भंते! बायरपुढविकाइयाणं पज्जत्तगाणं ठाणा प०?, गोयमा! सट्ठाणेणं अट्ठसु पुढवीसु जहा ठाणपदे जाव सुहुमवणस्सइकाइया जे य पज्जत्तगा जे य अपज्जत्तगा ते सव्वे ॥९५९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

एगविहा अविसेसमणाणत्ता सव्वलोगपरियावन्ना प० समणाउसो! । अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइयाणं भंते! कति कम्मप्पगडीओ पन्नत्ताओ?, गोयमा! अट्ठ कम्मप्पगडीओ प०, तं०—नाणावरणिज्जं जाव अंतराइयं, एवं चउक्कएणं भेदेणं जहेव एगिंदियसएसु जाव बायरवणस्सइकाइयाणं पज्जत्तगाणं, अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइया णं भंते! कति कम्मप्पगडीओ बंधंति?, गोयमा! सत्तविहबंधगावि अट्ठविहबंधगावि जहा एगिंदियसएसु जाव पज्जत्ता बायरवणस्सइकाइया। अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइया णं भंते! कति कम्मप्पगडीओ वेदेंति? गोयमा! चोद्दस कम्मप्पगडीओ वेदेंति तंजहा—नाणावरणिज्जं जहा एगिंदियसएसु जाव पुरिसवेदवज्झं एवं जाव बादरवणस्सइकाइयाणं पज्जत्तगाणं, एगिंदिया णं भंते! कओ उववज्जंति किं नेरइएहिंतो उववज्जंति? जहा वक्कंतीए पुढविक्काइयाणं उववाओ, एगिंदियाणं भंते! कइ समुग्घाया प०?, गोयमा! चत्तारि समुग्घाया पं० तंजहा—वेदणासमुग्घाए जाव वेउव्वियसमुग्घाए ॥ एगिंदिया णं भंते! किं तुल्लट्ठितीया तुल्लविसेसाहियं कम्मं पकरेंति?, तुल्लट्ठितीया वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरेंति? वेमायट्ठितीया तुल्लविसेसाहियं कम्मं पकरेंति? वेमायट्ठितीया वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरेंति?, गोयमा! अत्थेगइया तुल्लट्ठितीया तुल्लविसेसाहियं कम्मं पकरेंति अत्थेगइया तुल्लट्ठितीया वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरेंति अत्थेगइया वेमायट्ठितीया तुल्लविसेसाहियं कम्मं पकरेंति अत्थेगइया वेमायट्ठितीया वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरेंति, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ अत्थेगइया तुल्लट्ठितीया जाव वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरेंति?, गोयमा! एगिंदिया चउव्विहा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः२

॥९६०॥

पन्नत्ता, तंजहा–अत्थेगइया समाउया समोववन्नगा १ अत्थेगइया समाउया विसमोववन्नगा २ अत्थेगइया विसमाउया समोववन्नगा ३ अत्थेगइया विसमाउया विसमोववन्नगा ४, तत्थ णं जे ते समाउया समोववन्नगा ते णं तुल्लट्ठितीया तुल्लविसेसाहियं कम्मं पकरेंति १ तत्थ णं जे ते समाउया विसमोववन्नगा ते णं तुल्लट्ठितीया वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरेंति २ तत्थ णं जे ते विसमाउया समोववन्नगा ते णं वेमायट्ठितीया तुल्लविसेसाहियं कम्मं पकरेंति ३ तत्थ णं जे ते विसमाउया विसमोववन्नगा ते णं वेमायट्ठिइया वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरेंति ४, से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरेंति ॥ सेवं भंते ! २ जाव विहरति ॥ (सूत्रं ८५१) ॥ ३४।१ ॥

३४ शतके उद्दे.१अधः पृथ्व्यादीनामूर्ध्वादावुत्पादः सू ८५१

'अपज्जत्तसुहुमे'त्यादि, 'अहोलोयखेत्तनालीए'त्ति अधोलोकलक्षणे क्षेत्रे या नाडी–त्रसनाडी साऽधोलोकक्षेत्रनाडी तस्याः, एवमूर्ध्वलोकक्षेत्रनाड्यपीति, 'तिसमइएण व'त्ति, अधोलोकक्षेत्रे नाड्या बहिः पूर्वादिदिशि मृत्वैकेन नाडीमध्ये प्रविष्टो द्वितीये समये ऊर्द्ध्वं गतस्तत एकप्रतरे पूर्वस्यां पश्चिमायां वा यदोत्पत्तिर्भवति तदाऽनुश्रेण्यां गत्वा तृतीयसमये उत्पद्यत इति, 'चउसमइएण व'त्ति यदा नाड्या बहिर्वायव्यादिविदिशि मृतस्तदैकेन समयेन पश्चिमायामुत्तरस्यां वा गतो द्वितीयेन नाड्यां प्रविष्टस्तृतीये ऊर्द्ध्वं गतश्चतुर्थेऽनुश्रेण्यां गत्वा पूर्वादिदिश्युत्पद्यत इति, इदं च प्रायोवृत्तिमङ्गीकृत्योक्तं, अन्यथा पञ्चसामयिक्यपि गतिः सम्भवति, यदाऽधोलोककोणादूर्ध्वलोककोण एवोत्पत्तव्यं भवतीति, भवन्ति चात्र गाथाः—"सुत्ते चउसमयाओ नत्थि गई उ परा विणिद्दिट्ठा । जुज्जइ य पंचसमया जीवस्स इमा गई

॥९६०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

लोए ॥ १ ॥ जो तमतमविदिसाए समोहओ बंभलोगविदिसाए। उववज्जइ गईए सो नियमा पंचसमयाए ॥ २ ॥ उज्जुयायतेगवंका दुहओवंका गई विणिद्दिट्ठा । जुज्जइ य तिचउवंकावि नाम चउपंचसमयाए ॥ ३ ॥ उववायाभावाओ न पंचसमयऽहवा न संतावि । भणिया जह चउसमया महल्लबंधे न संतावि ॥ ४ ॥” [सूत्रे समयचतुष्कात्परा गतिर्न विनिर्दिष्टा । युज्यते च जीवस्येयं पञ्चसमया लोके गतिः ॥ १ ॥ यस्तमस्तमोविदिशि समवहतो ब्रह्मलोकविदिश्युत्पद्यते स नियमात्पञ्चसमयया गत्या ॥२॥ ऋज्वायतैकवक्रा द्विधावक्रा च गतिर्विनिर्दिष्टा । युज्यते च नाम त्रिचतुर्वक्राऽपि चतुष्पञ्चसमयतया ॥३॥ उपपाताभावान्न पञ्चसमयाऽथवा सत्यपि यथा महद्बन्धे न चतुःसमयोक्ता तथा न भणिताऽल्पत्वादिना ॥ ४ ॥] ‘अपज्जत्ताबायरतेउक्काइए ण’मित्यादौ, ‘दुसमइएण वा तिसमइएण वा विग्गहेणं उववज्जेज्ज’त्ति, एतस्येयं भावना—समयक्षेत्रादेकेन समयेनोर्ध्वं गतौ द्वितीयेन तु नाड्या बहिर्दिग्व्यवस्थितमुत्पत्तिस्थानमिति, तथा समयक्षेत्रादेकेनोर्द्ध्वं याति द्वितीयेन तु नाड्या बहिः पूर्वादिदिशि तृतीयेन तु विदिग्व्यवस्थितमुत्पत्तिस्थानमिति ॥ अथ लोकचरमान्तमाश्रित्याह—‘अपज्जत्तासुहुमपुढविकाइए णं भंते! लोगस्से’त्यादि, इह च लोकचरमान्ते बादराः पृथ्वीकायिकाप्कायिकतेजोवनस्पतयो न सन्ति सूक्ष्मास्तु पञ्चापि सन्ति बादरवायुकायिकाश्चेति पर्याप्तापर्याप्तभेदेन द्वादश स्थानान्यनुसर्तव्यानीति, इह च लोकस्य पूर्वचरमान्तात्पूर्वचरमान्ते उत्पद्यमानस्यैकसमयादिका चतुःसमयान्ता गतिः संभवति, अनुश्रेणिविश्रेणिसम्भवात्, पूर्वचरमान्तात्पुनर्दक्षिणचरमान्ते उत्पद्यमानस्य द्व्यादिसामयिक्येव गतिरनुश्रेणेरभावात्, एवमन्यत्रापि विश्रेणिगमन इति ॥ एवमुत्पादमधिकृत्यैकेन्द्रियप्ररूपणा कृता, अथ तेषामेव स्थानादिप्ररूपणायाह—‘कहिं ण’मित्यादि, ‘सट्ठाणेणं’ति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

स्वस्थानं यत्रास्ते बादरपृथिवीकायिकस्तेन स्वस्थानेन स्वस्थानमाश्रित्येत्यर्थः 'जहा ठाणपदे'त्ति स्थानपदं च प्रज्ञापनाया द्वितीयं पदं, तच्चैवं—'तंजहा–रयणप्पभाए सक्करप्पभाए वालुयप्पभाए' इत्यादि, 'एगविह'त्ति एकप्रकारा एव प्रकृतस्वस्थानादिविचारमधिकृत्यौघतः 'अविसेसमणाणत्त'त्ति अविशेषाः–विशेषरहिता यथा पर्याप्तकास्तथैवेतरेऽपि 'अणाणत्त'त्ति अनानात्वाः–नानात्ववर्जिताः येष्वेवाधारभूताकाशप्रदेशेष्वेके तेष्वेवेतरेऽपीत्यर्थः 'सव्वलोयपरियावन्न'त्ति उपपातसमुद्घातस्वस्थानैः सर्वलोके वर्त्तन्त इति भावना, तत्रोपपात–उपपाताभिमुख्यं समुद्घात इह मारणान्तिकादि स्वस्थानं तु यत्र ते आसते। समुद्घातसूत्रे 'वेउव्वियसमुग्घाए'त्ति यदुक्तं तद्वायुकायिकानाश्रित्येति ॥ एकेन्द्रियानेव भङ्ग्यन्तरेण प्रतिपादयन्नाह—'एगिंदिया णं'मित्यादि, 'तुल्लट्ठिइय'त्ति तुल्यस्थितिकाः परस्परापेक्षया समानायुष्का इत्यर्थः 'तुल्लविसेसाहियं कम्मं पकरेंति'त्ति परस्परापेक्षया तुल्यत्वेन विशेषेण—असङ्ख्येयभागादिनाऽधिकं–पूर्वकालबद्धकर्मापेक्षयाऽधिकतरं तुल्यविशेषाधिकं 'कर्म' ज्ञानावरणादि 'प्रकुर्वन्ति' बध्नन्ति १ तथा तुल्यस्थितयः 'वेमायविसेसाहियं'ति विमात्रः–अन्योऽन्यापेक्षया विषमपरिमाणः कस्याप्यसङ्ख्येयभागरूपोऽन्यस्य सङ्ख्येयभागरूपो यो विशेषस्तेनाधिकं पूर्वकालबद्धकर्म्मापेक्षया यत्तत्तथा २ तथा 'वेमायट्ठिइय'त्ति विमात्रा–विषममात्रा स्थितिः–आयुर्येषां ते विमात्रस्थितयो विषमायुष्का इत्यर्थः 'तुल्लविसेसाहिय'त्ति तथैव, एवं चतुर्थोऽपि, 'तत्थ णं जे ते'इत्यादि, 'समाउया समोववन्नग'त्ति समस्थितयः समकमेवोत्पन्ना इत्यर्थः, एते च तुल्यस्थितयः समोत्पन्नत्वेन परस्परेण समानयोगत्वात्समानमेव कर्म्म कुर्वन्ति, ते च पूर्वकर्म्मापेक्षया समं वा हीनं वाऽधिकं वा कर्म्म कुर्वन्ति, यद्यधिकं तदा विशेषाधिकमपि तच्च पर-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

स्परतस्तुल्यविशेषाधिकं न तु विशेषाधिकमेवेत्यत उच्यते तुल्यविशेषाधिकमिति, तथा ये समायुषो विषमोपपन्नकास्ते तुल्यस्थितयः विषमोपपन्नत्वेन च योगवैषम्याद्विमात्रविशेषाधिकं कर्म्म कुर्वन्तीति २, तथा ये विषमायुषः समोपपन्नकास्ते विमात्रस्थितयः समोत्पन्नत्वेन च समानयोगत्वात् तुल्यविशेषाधिकं कर्म्म कुर्वन्तीति ३, तथा ये विषमायुषो विषमोपपन्नकास्ते विमात्रस्थितयो विषमोत्पन्नत्वाच्च योगवैषम्येण विमात्रविशेषाधिकं कर्म्म कुर्वन्तीति ॥ चतुस्त्रिंशच्छते प्रथमः ॥३४।१॥

अथ द्वितीयः, तत्र च—

कइविहा णं भंते! अणंतरोववन्नगा एगिंदिया पन्नत्ता?, गोयमा! पंचविहा अणंतरोववन्नगा एगिंदिया पन्नत्ता, तंजहा–पुढविकाइया दुयाभेदो जहा एगिंदियसएसु जाव बायरवणस्सइकाइया य, कहिन्नं भंते! अणंतरोववन्नगाणं बायरपुढविकाइयाणं ठाणा पन्नत्ता?, गोयमा! सट्ठाणेणं अट्ठसु पुढवीसु, तं०–रयणप्पभाए जहा ठाणपदे जाव दीवेसु समुद्देसु एत्थ णं अणंतरोववन्नगाणं बायरपुढविकाइयाणं ठाणा प०, उववाएणं सव्वलोए समुग्घाएणं सव्वलोए सट्ठाणेणं लोगस्स असंखेज्जइभागे, अणंतरोववन्नगसुहुमपुढविकाइया एगविहा अविसेसमणाणत्ता सव्वलोए परियावन्ना पन्नत्ता समणाउसो!, एवं एएणं कमेणं सव्वे एगिंदिया भाणियव्वा, सट्ठाणाइं सव्वेसिं जहा ठाणपदे तेसिं पज्जत्तगाणं बायराणं उववायसमुग्घायसट्ठाणाणि जहा तेसिं चेव अपज्जत्तगाणं, बायराणं सुहुमाणं सव्वेसिं जहा पुढविकाइयाणं भणिया तहेव भाणियव्वा जाव वणस्सइकाइयत्ति। अणंतरोववन्नगासुहुमपुढविकाइयाणं भंते! कइ कम्मप्पगडीओ प०?, गोयमा! अट्ठ कम्मप्प-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र चतुस्त्रिंशत्-शतके प्रथम-उद्देशक: परिसमाप्तं

अथ चतुस्त्रिंशत्-शतके २-११ उद्देशका: आरब्धा:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥९६२॥

३४ शतके एकेन्द्रिय-शतानि १२ उद्दे० ११ सू ८५२-८५४

गडीओ पन्नत्ताओ एवं जहा एगिंदियसएसु अणंतरोववन्नगउद्देसए तहेव पन्नत्ताओ तहेव बंधंति तहेव वेदेंति जाव अणंतरोववन्नगा बायरवणस्सइकाइया । अणंतरोववन्नगएगिंदिया णं भंते! कओ उववज्जंति? जहेव ओहिए उद्देसओ भणिओ तहेव। अणंतरोववन्नगएगिंदियाणं भंते! कति समुग्घाया पन्नत्ता?, गोयमा! दोन्नि समुग्घाया प०, तं०–वेदणासमुग्घाए य कसायसमुग्घाए य । अणंतरोववन्नगएगिंदियाणं भंते! किं तुल्लट्ठितीया तुल्लविसेसाहियं कम्मं पकरेंति? पुच्छा तहेव, गोयमा! अत्थेगइया तुल्लट्ठितीया तुल्लविसेसाहियं कम्मं पकरेंति अत्थेगइया तुल्लट्ठितीया वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरेंति, से केणट्ठेणं जाव वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरेंति?, गोयमा! अणंतरोववन्नगा एगिंदिया दुविहा प० तं०–अत्थेगइया समाउया समोववन्नगा अत्थेगइया समाउया विसमोववन्नगा तत्थ णं जे ते समाउया समोववन्नगा ते णं तुल्लट्ठितीया तुल्लविसेसाहियं कम्मं पकरेंति तत्थ णं जे ते समाउया विसमोववन्नगा ते णं तुल्लट्ठितीया वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरेंति, से तेणट्ठेणं जाव वेमायविसेसाहियं० पकरेंति। सेवं भंते! २ त्ति ॥ (सूत्रं ८५२) ॥ ३४।२ ॥

कइविहा णं भंते! परंपरोववन्नगा एगिंदिया पन्नत्ता?, गोयमा! पंचविहा परंपरोववन्नगा एगिंदिया प०, तं०–पुढविक्काइया भेदो चउक्कओ जाव वणस्सइकाइयत्ति । परंपरोववन्नगअपज्जत्तसुहुमपुढविकाइए णं भंते! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पुरच्छिमिल्ले चरिमंते समोहए २ जे भविए इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए जाव पच्चच्छिमिल्ले चरिमंते अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइयत्ताए उवव० एवं एएणं अभिलावेणं जहेव पढमो उद्देसओ

॥९६२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जाव लोगचरिमंतोत्ति। कहिन्नं भंते! परंपरोववन्नगबायरपुढविकाइयाणं ठाणा प० ?, गोयमा! सट्ठाणेणं अट्ठसु पुढवीसु एवं एएणं अभिलावेणं जहा पढमे उद्देसए जाव तुल्लट्ठितीयत्ति। सेवं भंते! २ त्ति ॥ ३४।३ ॥ एवं सेसावि अट्ठ उद्देसगा जाव अचरमोत्ति, नवरं अणंतरा अणंतरसरिसा परंपरा परंपरसरिसा चरमा य अचरमा य एवं चेव, एवं एते एक्कारस उद्देसगा ॥ (सूत्रं ८५३) ॥३४।४॥ पढमं एगिंदियसेढीसयं सम्मत्तं ॥ कइविहा णं भंते! कण्हलेस्सा एगिंदिया प० ?, गोयमा! पंचविहा कण्हलेस्सा एगिंदिया प० भेदो चउक्कओ जहा कण्हलेस्सएगिंदियसए जाव वणस्सइकाइयत्ति। कण्हलेस्सअपज्जत्तासुहुमपुढविकाइए णं भंते! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पुरच्छिमिल्ले एवं एएणं अभिलावेणं जहेव ओहिउद्देसओ जाव लोगचरिमंतेत्ति सव्वत्थ कण्हलेस्सेसु चेव उववाएयव्वो। कहिन्नं भंते! कण्हलेस्सअपज्जत्तबायरपुढविकाइयाणं ठाणा प० एवं एएणं अभिलावेणं जहा ओहिउद्देसओ जाव तुल्लट्ठिइयत्ति। सेवं भंते! २ त्ति ॥ एवं एएणं अभिलावेणं जहेव पढमं सेढिसयं तहेव एक्कारस उद्देसगा भाणियव्वा ३४-११ ॥ बितियं एगिंदियसेढिसयं सम्मत्तं ॥ एवं नीललेस्सेहिवि तइयं सयं। काउलेस्सेहिवि सयं, एवं चेव चउत्थं सयं। भवसिद्धियएहिवि सयं पंचमं सम्मत्तं ॥ कइविहा णं भंते! अणंतरोववन्ना कण्हलेस्सा भवसिद्धिया एगिंदिया प० जहेव अणंतरोववन्नउद्देसओ ओहिओ तहेव ॥ कइविहा णं भंते! परंपरोववन्ना कण्हलेस्सभवसिद्धिया एगिंदिया प० ?, गोयमा! पंचविहा परंपरोववन्ना कण्हलेस्सभवसिद्धियएगिंदिया पं० ओहिओ भेदो चउक्कओ जाव वणस्सइकाइयत्ति। परंपरोववन्नकण्हलेस्स-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥९६३॥

३४ शतके एकेन्द्रिय-शतानि१२ उद्दे०११सू ८५२-८५४

भवसिद्धियअपज्जत्तसुहुमपुढविकाइए णं भंते! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए एवं एएणं अभिलावेणं जहेव ओहिओ उद्देसओ जाव लोयचरमंतेत्ति, सव्वत्थ कण्हलेस्सेसु भवसिद्धिएसु उववाएयव्वो। कहिन्नं भंते! परंपरोववन्नकण्हलेस्सभवसिद्धियपज्जत्तबायरपुढविकाइयाणं ठाणा प० एवं एएणं अभिलावेणं जहेव ओहिओ उद्देसओ जाव तुल्लट्ठिइयत्ति, एवं एएणं अभिलावेणं कण्हलेस्सभवसिद्धियएगिंदिएहिवि तहेव एक्कारसउद्देसगसंजुत्तं सतं, छट्ठं सतं सम्मत्तं॥ नीललेस्सभवसिद्धियएगिंदिएसु सयं सत्तमं सम्मत्तं। एवं काउलेस्सभवसिद्धियएगिंदियेहिवि सयं अट्ठमं सयं। जहा भवसिद्धिएहिं चत्तारि सयाणि एवं अभवसिद्धिएहिवि चत्तारि सयाणि भाणियव्वाणि, नवरं चरमअचरमवज्जा नव उद्देसगा भाणियव्वा, सेसं तं चेव, एवं एयाइं बारस एगिंदियसेढीसयाइं। सेवं भंते! २ त्ति जाव विहरइ॥ (सूत्रं ८५४) एगिंदियसेढीसयाइं सम्मत्ताइं॥ एगिंदियसेढिसयं चउतीसइमं सम्मत्तं॥ ३४॥

'दुया भेदो'त्ति, अनन्तरोपपन्नैकेन्द्रियाधिकारादनन्तरोपपन्नानां च पर्याप्तकत्वाभावादपर्याप्तकानां सतां सूक्ष्मा बादराश्चेति द्विपदो भेदः, 'उववाएणं सव्वलोए समुग्घाएणं सव्वलोए'त्ति, कथम्?, 'उपपातेन' उपपाताभिमुख्येनापान्तरालगतिवृत्त्येत्यर्थः समुद्घातेन-मारणान्तिकेनेति, ते हि ताभ्यामतिबहुत्वात्सर्वलोकमपि व्याप्य वर्त्तन्ते, इह चैवंभूतया स्थापनया भावना कार्या—

अत्र च प्रथमवक्रं यदैवैके संहरन्ति तदैव तद्वक्रदेशमन्ये पूरयन्ति, एवं द्वितीयवक्रसंहरणेऽपि अवक्रोत्पत्तावपि प्रवाहतो भावनीयम्, अनन्तरोपपन्नकत्वं चेह भाविभवापेक्षं ग्राह्यमपान्तराले

॥९६३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तस्य साक्षादभावात्, मारणान्तिकसमुद्घातश्च प्राक्तनभवापेक्षयाऽनन्तरोपपन्नकावस्थायां तस्यासम्भवादिति । 'सट्ठाणेणं लोगस्स असंखेज्जइभागे'त्ति, रत्नप्रभादिपृथिवीनां विमानानां च लोकस्यासंख्येयभागवर्त्तित्वात्, पृथिव्यादीनां च पृथिवीकायिकानां स्वस्थानत्वादिति, 'सट्ठाणाइं सवेसिं जहा ठाणपए तेसिं पज्जत्तगाणं बायराणं'ति, इह तेषामिति पृथिवीकायिकादीनां, स्वस्थानानि चैवं बादरपृथिवीकायिकानां 'अट्ठसु पुढवीसु तंजहा–रयणप्पभाए' इत्यादि, बादराप्कायिकानां तु 'सत्तसु घणोदहीसु' इत्यादि, बादरतेजस्कायिकानां तु 'अंतोमणुस्सखेत्ते'इत्यादि, बादरवायुकायिकानां पुनः 'सत्तसु घणवायवलएसु'इत्यादि, बादरवनस्पतीनां तु 'सत्तसु घणोदहीसु'इत्यादि । 'उववायसमुग्घायसट्ठाणाणि जहा तेसिं चेव अपज्जत्तगाणं बायराणं'ति, इह 'तेसिं चेव'त्ति पृथिवीकायिकादीनां, तानि चैवं–'जत्थेव बायरपुढविकाइयाणं पज्जत्तगाणं ठाणा तत्थेव बायरपुढविकाइयाणं अपज्जत्तगाणं ठाणा पन्नत्ता उववाएणं सव्वलोए समुग्घाएणं सव्वलोए सट्ठाणेणं लोगस्स असंखेज्जइभागे'इत्यादि, समुद्घातसूत्रे–'दोन्नि समुग्घाय'त्ति, अनन्तरोपपन्नत्वेन मारणान्तिकादिसमुद्घातानामसम्भवादिति ॥ 'अणंतरोववन्नगएगिंदिया णं भंते! किं तुल्लट्ठिईए'इत्यादौ, 'जे ते समाउया समोववन्नगा ते णं तुल्लट्ठिईया तुल्लविसेसाहियं कम्मं पकरेति'त्ति ये समायुषः अनन्तरोपपन्नकत्वपर्यायमाश्रित्य समयमात्रस्थितिकास्तत्परतः परम्परोपपन्नकव्यपदेशात् समोपपन्नकाः एकत्रैव समये उत्पत्तिस्थानं प्राप्तास्ते तुल्यस्थितयः समोपपन्नकत्वेन समयोगत्वात् तुल्यविशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्ति 'तत्थ णं जे ते समाउया विसमोववन्नगा ते णं तुल्लट्ठिइया वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरेंति'त्ति ये तु समायुषस्तथैव विषमोपपन्नका विग्रहगत्या समयादिभेदेनोत्पत्ति-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥ ९६४॥

स्थानं प्राप्तास्ते तुल्यस्थितयः आयुष्कोदयवैषम्येणोत्पत्तिस्थानप्राप्तिकालवैषम्यात् विग्रहेऽपि च बन्धकत्वाद् विमात्रविशेषाधिकं कर्म्म प्रकुर्वन्ति, विषमस्थितिकसम्बन्धि त्वन्तिमभङ्गद्वयमनन्तरोपपन्नकानां न संभवत्यनन्तरोपपन्नकत्वे विषमस्थितेरभावात्, एतच्च गमनिकामात्रमेवेति, शेषं सूत्रसिद्धं, नवरं 'सेढिसयं'ति ऋज्वायतश्रेणीप्रधानं शतं श्रेणीशतमिति ॥ चतुस्त्रिंशं शतं वृत्तितः समाप्तम् ॥ ३४ ॥

३५ शतके महायुम्मा सू० ८५५

यद्दीदीपशिखेव खण्डिततमा गम्भीरगेहोपमग्रन्थार्थप्रचयप्रकाशनपरा सद्दृष्टिमोदावहा ।
तेषां ज्ञप्तिविनिर्जितामरगुरुप्रज्ञाश्रियां श्रेयसां, सूरीणामनुभावतः शतमिदं व्याख्यातमेवं मया ॥ १ ॥

चतुस्त्रिंशशते एकेन्द्रियाः श्रेणीप्रक्रमेण प्रायः प्ररूपिताः, पञ्चत्रिंशे तु त एव राशिप्रक्रमेण प्ररूप्यन्ते इत्येवंसम्बन्धस्यास्य द्वादशावान्तरशतस्येदमादिसूत्रम्—

कइ णं भंते! महाजुम्मा पन्नत्ता? गोयमा! सोलस महाजुम्मा पं तं०—कडजुम्मकडजुम्मे १ कडजुम्मतेओगे २ कडजुम्मदावरजुम्मे ३ कडजुम्मकलियोगे ४ तेओगकडजुम्मे ५ तेओगतेओगे ६ तेओगदावरजुम्मे ७ तेओगकलिओए ८ दावरजुम्मकडजुम्मे ९ दावरजुम्मतेओए १० दावरजुम्मदावरजुम्मे ११ दावरजुम्मकलियोगे १२ कलिओगकडजुम्मे १३ कलियोगतेओगे १४ कलियोगदावरजुम्मे १५ कलियोगकलिओगे १६, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ सोलस महाजुम्मा प० तं०—कडजुम्मकडजुम्मे जाव कलियोगकलियोगे?, गोयमा! जे णं

॥ ९६४ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र चतुस्त्रिंशत्-शतके १-१२ अन्तर्-शतकानि सउद्देशका: परिसमाप्ता:

अथ पञ्चत्रिंशक-शतकं आरभ्यते

अथ पञ्चत्रिंशके शतके प्रथम-अंतरशतकं आरब्ध:, तद् अन्तर्गत् उद्देशका: १ से ११ अपि वर्तते

रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे चउपज्जवसिए जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया तेऽवि कडजुम्मा सेत्तं कडजुम्मकडजुम्मे, जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे तिपज्जवसिए जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया कडजुम्मा सेत्तं कडजुम्मतेयोए २, जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे दुपज्जवसिए जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया कडजुम्मा सेत्तं कडजुम्मदावरजुम्मे ३ जे णं रासीचउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे एगपज्जवसिए जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया कडजुम्मा सेत्तं कडजुम्मकलियोगे ४। जे णं रासीचउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे चउपज्जवसिए जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया तेयोगा सेत्तं तेओगकडजुम्मे १ जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे तिपज्जवसिए जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया तेओगा सेत्तं तेओगतेओगे २ जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे दोपज्जवसिए जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया तेयोया सेत्तं तेओयदावरजुम्मे ३ जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे एगपज्जवसिए जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया तेओया सेत्तं तेयोयकलियोगे ४। जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे चउपज्जवसिए जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया दावरजुम्मा सेत्तं दावरजुम्मकडजुम्मे १ जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे तिपज्जवसिए जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया दावरजुम्मा सेत्तं दावरजुम्मतेयोए २ जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे दुपज्जवसिए जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया दावरजुम्मा सेत्तं दावरजुम्मदावरजुम्मे ३ जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥९६५॥

३५ शतके महायुग्मा सू० ८५५

अवहीरमाणे एगपज्जवसिए जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया दावरजुम्मा सेत्तं दावरजुम्मकलियोए ४, जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे चउपज्जवसिए जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया कलियोगा सेत्तं कलिओगकडजुम्मे १ जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे तिपज्जवसिए जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया कलियोगा सेत्तं कलियोगतेयोए २ जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे दुपज्जवसिए जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया कलियोगा सेत्तं कलियोगदावरजुम्मे ३ जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे एगपज्जवसिए जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया कलियोगा सेत्तं कलियोगकलिओगे ४, से तेणट्ठेणं जाव कलिओगकलिओगे ॥ (सूत्रं ८५५) ॥

'कइ णं भंते!' इत्यादि, इह युग्मशब्देन राशिविशेषा उच्यन्ते ते च क्षुल्लका अपि भवन्ति यथा प्राक् प्ररूपिताः अतस्तद्व्यवच्छेदाय विशेषणमुच्यते महान्ति च तानि युग्मानि च महायुग्मानि, 'कडजुम्मकडजुम्मे'त्ति यो राशिः सामयिकेन चतुष्कापहारेणापह्रियमाणश्चतुष्पर्यवसितो भवति अपहारसमया अपि चतुष्कापहारेण चतुष्पर्यवसिता एव असौ राशिः कृतयुग्मकृतयुग्म इत्यभिधीयते, अपह्रियमाणद्रव्यापेक्षया तत्समयापेक्षया चेति द्विधा कृतयुग्मत्वात्, एवमन्यत्रापि शब्दार्थो योजनीयः, स च किल जघन्यतः षोडशात्मकः, एषां हि चतुष्कापहारतश्चतुरग्रत्वात्, समयानां च चतुःसङ्ख्यत्वादिति १, 'कडजुम्मतेओए'त्ति, यो राशिः प्रतिसमयं चतुष्कापहारेणापह्रियमाणस्त्रिपर्यवसानो भवति तत्समयाश्चतुष्पर्यवसिता एवासावपह्रियमाणापेक्षया त्र्योजः अपहारसमयापेक्षया तु कृतयुग्म एवेति कृतयुग्मत्र्योज इत्युच्यते, तच्च

॥९६५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

जघन्यत एकोनविंशतिः, तत्र हि चतुष्कापहारे त्रयोऽवशिष्यन्ते तत्समयाश्चत्वार एवेति २, एवं राशिभेदसूत्राणि तद्विवरणसूत्रेभ्योऽवसेयानि, इह च सर्वत्राप्यपहारकसमयापेक्षमाद्यं पदं अपह्रियमाणद्रव्यापेक्षं तु द्वितीयमिति, इह च तृतीयादारभ्योदाहरणानि–कृतयुग्मद्वापरे राशावष्टादशादयः, कृतयुग्मकल्योजे सप्तदशादयः त्र्योजःकृतयुग्मे द्वादशादयः, एषां हि चतुष्कापहारे चतुरग्रत्वात्तत्समयानां च त्रित्वादिति, त्र्योजत्र्योजराशौ तु पञ्चदशादयः त्र्योजद्वापरे तु चतुर्दशादयः त्र्योजकल्योजे त्रयोदशादयः द्वापरकृतयुग्मेऽष्टादयः द्वापरत्र्योजराशावेकादशादयः द्वापरद्वापरे दशादयः द्वापरकल्योजे नवादयः कल्योजकृतयुग्मे चतुरादयः कल्योजत्र्योजराशौ सप्तादयः कल्योजद्वापरे षडादयः कल्योजकल्योजे तु पञ्चादय इति ॥

कडजुम्मकडजुम्मएगिंदिया णं भंते! कओ उववज्जंति किं नेरइएहिंतो जहा उप्पलुद्देसए तहा उववाओ। ते णं भंते! जीवा एगसमएणं केवइया उववज्जंति?, गोयमा! सोलस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति, ते णं भंते! जीवा समए समए पुच्छा, गोयमा! ते णं अणंता समए समए अवहीरमाणा २ अणंताहिं उस्सप्पिणीअवसप्पिणीहिं अवहीरंति णो चेव णं अवहरिया सिया, उच्चत्तं जहा उप्पलुद्देसए, ते णं भंते! जीवा नाणावरणिज्जस्स कम्मस्स किं बंधगा अबंधगा?, गोयमा! बंधगा नो अबंधगा एवं सव्वेसिं आउयवज्जाणं, आउयस्स बंधगा वा अबंधगा वा, ते णं भंते! जीवा नाणावरणिज्जस्स पुच्छा, गोयमा! वेदगा नो अवेदगा, एवं सव्वेसिं, ते णं भंते! जीवा किं सातावेदगा असातावेदगा? पुच्छा, गोयमा!

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उवट्टणा जहा उप्पलुद्देसए, अह भंते! सव्वपाणा जाव सव्वसत्ता कडजुम्म२एगिंदियत्ताए उववन्नपुव्वा?, हंता गोयमा! असइं अदुवा अणंतखुत्तो, कडजुम्मतेओयएगिंदिया णं भंते! कओ उववज्जंति?, उववाओ तहेव, ते णं भंते! जीवा एगसमए पुच्छा, गोयमा! एकूणवीसा वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति, सेसं जहा कडजुम्मकडजुम्माणं जाव अणंतखुत्तो, कडजुम्मदावरजुम्मएगिंदिया णं भंते! कओहिंतो उववज्जंति?, उववाओ तहेव, ते णं भंते! जीवा एगसमएणं पुच्छा, गोयमा! अट्ठारस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उवव० सेसं तहेव जाव अणंतखुत्तो, कडजुम्मकलियोगएगिंदिया णं भंते! कओ उवव० उववाओ तहेव परिमाणं सत्तरस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा सेसं तहेव जाव अणंतखुत्तो, तेयोगकडजुम्मएगिंदिया णं भंते! कओ उवव०?, उववाओ तहेव परिमाणं बारस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उवव० सेसं तहेव जाव अणंतखुत्तो, तेयोयतेयोयएगिंदिया णं भंते! कओ उवव०?, उववाओ तहेव परिमाणं पन्नरस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा सेसं तहेव जाव अणंतखुत्तो, एवं एएसु सोलससु महाजुम्मेसु एक्को गमओ नवरं परिमाणे नाणत्तं तेयोयदावरजुम्मेसु परिमाणं चोद्दस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति तेयोगकलियोगेसु तेरस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उवव० दावरजुम्मकडजुम्मेसु अट्ठ वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति दावरजुम्मतेयोगेसु एक्कारस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति दावरजुम्मदावरजुम्मेसु दस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उवट्टणा जहा उप्पलुद्देसए, अह भंते! सवपाणा जाव सवसत्ता कडजुम्म२एगिंदियत्ताए उववन्नपुवा?, हंता गोयमा! असइं अदुवा अणंतखुत्तो, कडजुम्मतेओयएगिंदिया णं भंते! कओ उववज्जंति?, उववाओ तहेव, ते णं भंते! जीवा एगसमए पुच्छा, गोयमा! एकूणवीसा वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति, सेसं जहा कडजुम्मकडजुम्माणं जाव अणंतखुत्तो, कडजुम्मदावरजुम्मएगिंदिया णं भंते! कओहिंतो उववज्जंति?, उववाओ तहेव, ते णं भंते! जीवा एगसमएणं पुच्छा, गोयमा! अट्ठारस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उवव० सेसं तहेव जाव अणंतखुत्तो, कडजुम्मकलियोगएगिंदिया णं भंते! कओ उवव० उववाओ तहेव परिमाणं सत्तरस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा सेसं तहेव जाव अणंतखुत्तो, तेयोगकडजुम्मएगिंदिया णं भंते! कओ उवव०?, उववाओ तहेव परिमाणं बारस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उवव० सेसं तहेव जाव अणंतखुत्तो, तेयोयतेयोयएगिंदिया णं भंते! कओ उवव०?, उववाओ तहेव परिमाणं पन्नरस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा सेसं तहेव जाव अणंतखुत्तो, एवं एएसु सोलससु महाजुम्मेसु एक्को गमओ नवरं परिमाणे नाणत्तं तेयोयदावरजुम्मेसु परिमाणं चोद्दस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति तेयोगकलियोगेसु तेरस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उवव० दावरजुम्मकडजुम्मेसु अट्ठ वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति दावरजुम्मतेयोगेसु एक्कारस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति दावरजुम्मदावरजुम्मेसु दस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥९६७॥

३५ शतके उद्दे. १ एकेन्द्रियाः सू. ८५६

अणंता वा दावरजुम्मकलियोगेसु नव वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अनंता वा उवव० कलियोगकडजुम्मे चत्तारि वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उवव० कलियोगतेयोगेसु सत्त वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उवव० कलियोगदावरजुम्मेसु छ वा संखे० असंखेज्जा वा अणंता वा उवव० कलियोगकलियोगएगिंदिया णं भंते! कओ उवव०?, उववाओ तहेव परिमाणं पंच वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति सेसं तहेव जाव अणंतखुत्तो । सेवं भंते! सेवं भंते! त्ति ॥ (सूत्रं ८५६) ॥ ३५ ॥ पणतीसइमे पढमो उद्देसो ॥

'कडजुम्मकडजुम्मएगिंदिय'त्ति, ये एकेन्द्रियाश्चतुष्कापहारे चतुष्पर्यवसिता यदपहारसमयाश्चतुष्पर्यवसानास्ते कृतयुग्मकृतयुग्मैकेन्द्रिया इत्येवं सर्वत्रेति । 'जहा उप्पलुद्देसए'त्ति उत्पलोद्देशकः-एकादशशते प्रथमः, इह च यत्र क्वचित्पदे उत्पलोद्देशकातिदेशः क्रियते तत्तत एवावधार्यं, 'संवेहो न भन्नइ'त्ति, उत्पलोद्देशके उत्पलजीवस्योत्पादो विवक्षितस्तत्र च पृथिवीकायिकादिकायान्तरापेक्षया संवेधः संभवति इह त्वेकेन्द्रियाणां कृतयुग्मकृतयुग्मविशेषणानामुत्पादोऽधिकृतस्ते च वस्तुतोऽनन्ता एवोत्पद्यन्ते तेषां चोद्वृत्तेरसम्भवात्संवेधो न संभवति, यश्च षोडशादीनामेकेन्द्रियेषूत्पादोऽभिहितोऽसौ त्रसकायिकेभ्यो ये तेषूत्पद्यन्ते तदपेक्ष एव न पुनः पारमार्थिकः अनन्तानां प्रतिसमयं तेषूत्पादादिति ॥ पञ्चत्रिंशशते प्रथमः ॥ ३५।१ ॥

अथ द्वितीयस्तत्र च—

॥९६७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र ३५-शतके प्रथम-अन्तरशतके प्रथम-उद्देशक: परिसमाप्तं

अथ ३५-शतके प्रथम-अन्तरशतके २-११ उद्देशका: आरब्धा:

पढमसमयकडजुम्म२एगिंदिया णं भंते! कओ उववज्जंति?, गोयमा! तहेव एवं जहेव पढमो उद्देसओ तहेव सोलसखुत्तो बितिओवि भाणियव्वो, तहेव सव्वं, नवरं इमाणि य दस नाणत्ताणि–ओगाहणा जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणवि अंगुलस्स असंखेज्जइ० आउयकम्मस्स नो बंधगा अबंधगा आउयस्स नो उदीरगा अणुदीरगा नो उस्सासगा नो निस्सासगा नो उस्सासनिस्सासगा सत्तविहबंधगा नो अट्ठविहबंधगा, ते णं भंते! पढमसमयकडजुम्म२एगिंदियत्ति कालओ केवचिरं होइ?, गोयमा! एक्कं समयं, एवं ठितीएवि, समुग्घाया आदिल्ला दोन्नि, समोहया न पुच्छिज्जंति उव्वट्टणा न पुच्छिज्जइ, सेसं तहेव सव्वं निरवसेसं, सोलसुवि गमएसु जाव अणंतखुत्तो। सेवं भंते! २ त्ति (सूत्रं ८५७) ॥ ३५।२ ॥ अपढमसमयकडजुम्म२एगिंदिया णं भंते! कओ उववज्जंति?, एसो जहा पढमुद्देसो सोलसहिवि जुम्मेसु तहेव नेयव्वो जाव कलियोगकलियोगत्ताए जाव अणंतखुत्तो । सेवं भंते! २ त्ति ॥ ३५।३ ॥ चरमसमयकडजुम्म२एगिंदिया णं भंते! कओहिंतो उववज्जंति?, एवं जहेव पढमसमयउद्देसओ नवरं देवा न उववज्जंति तेउलेस्सा न पुच्छिज्जति, सेसं तहेव। सेवं भंते! सेवं भंतेत्ति ॥ ३५।४ ॥ अचरमसमयकडजुम्म२एगिंदिया णं भंते! कओ उववज्जंति जहा अपढमसमयउद्देसो तहेव निरवसेसो भाणियव्वो। सेवं भंते! २ त्ति ॥ ३५।५ ॥ पढमसमयकडजुम्मकडजुम्मएगिंदिया णं भंते! कओहिंतो उववज्जंति?, जहा पढमसमयउद्देसओ तहेव निरवसेसं। सेवं भंते! २ त्ति जाव विहरइ ॥ ३५।६ ॥ पढमअपढमसमयकडजुम्म २ एगिंदिया णं भंते! कओ उवव-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥९६८॥

३५ शतके उद्दे. २-११ प्रथमसमयाद्येकेन्द्रियाः सू ८५७-८५८

ज्जंति? जहा पढमसमयउद्देसो तहेव भाणियव्वो। सेवं भंते! २ त्ति ॥ ३५।७ ॥ पढमचरमसमयकडजुम्म २-एगिंदिया णं भंते! कओ उववज्जंति?, जहा चरमुद्देसओ तहेव निरवसेसं। सेवं भंते! २ त्ति ॥ ३५।८ ॥ पढमअचरमसमयकडजुम्म२एगिंदिया णं भंते! कओ उवव०?, जहा बीओ उद्देसओ तहेव निरवसेसं। सेवं भंते! २ त्ति जाव विहरइ ॥ ३५।९ ॥ चरम२समयकडजुम्म२एगिंदिया णं भंते! कओ उवव०?, जहा चउत्थो उद्देसओ तहेव? सेवं भंते सेवं भंते! त्ति ॥३५।१०॥ चरमअचरमसमयकडजुम्म२एगिंदिया णं भंते! कओ उवव०?, जहा पढमसमयउद्देसओ तहेव निरवसेसं। सेवं भंते! २ जाव विहरति ॥३५।११॥ एवं एए एक्कारस उद्देसगा, पढमो ततिओ पंचमओ य सरिसगमा सेसा अट्ठ सरिसगमगा, नवरं चउत्थे छट्ठे अट्ठमे दसमे य देवा न उववज्जंति तेउलेस्सा नत्थि॥३५॥ (सूत्रं ८५८) ॥ पढमं एगिंदियमहाजुम्मसयं सम्मत्तं ॥१॥

'पढमसमयकडजुम्म२एगिंदिय'त्ति, एकेन्द्रियत्वेनोत्पत्तौ प्रथमः समयो येषां ते तथा ते च ते कृतयुग्मकृतयुग्माश्चेति प्रथमसमयकृतयुग्मकृतयुग्मास्ते च ते एकेन्द्रियाश्चेति समासोऽतस्ते 'सोलसखुत्तो'त्ति षोडशकृत्वः-पूर्वोक्तान् षोडश राशिभेदानाश्रित्येत्यर्थः, 'नाणत्ताइं'ति पूर्वोक्तस्य विलक्षणत्वस्थानानि, ये पूर्वोक्ता भावास्ते केचित् प्रथमसमयोत्पन्नानां न संभवन्तीतिकृत्वा, तत्रावगाहनाद्योद्देशके बादरवनस्पत्यपेक्षया महत्युक्ताऽभूत् इह तु प्रथमसमयोत्पन्नत्वेन साऽल्पेति नानात्वम्, एवमन्यान्यपि स्वधियोह्यानीति॥ पंचत्रिंशे शते द्वितीयः ॥ ३५।२ ॥ तृतीयोद्देशके तु— ॥९६८॥
'अपढमसमयकडजुम्म२एगिंदिय'त्ति, इहाप्रथमः समयो येषामेकेन्द्रियत्वेनोत्पन्नानां द्व्यादयः समयाः, विग्रहश्च

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूर्ववत्, एते च यथा सामान्येनैकेन्द्रियास्तया भवन्तीत्यत एवोक्तम्–'एसो जहा पढमुद्देसो'इत्यादीति ॥ चतुर्थे तु—'चरमसमयकडजुम्मएगिंदिय'त्ति, इह चरमसमयशब्देनैकेन्द्रियाणां मरणसमयो विवक्षितः स च परभवायुषः प्रथमसमय एव तत्र च वर्त्तमानाश्चरमसमयाः सङ्ख्यया च कृतयुग्मकृतयुग्मा ये एकेन्द्रियास्ते तथा 'एवं जहा पढमसमयउद्देसओ'त्ति यथा प्रथमसमय एकेन्द्रियोद्देशकस्तथा चरमसमयएकेन्द्रियोद्देशकोऽपि वाच्यः, तत्र हि औधिकोद्देशकापेक्षया दश नानात्वान्युक्तानि इहापि तानि तथैव समानस्वरूपत्वात्, प्रथमसमयचरमसमयानां यः पुनरिह विशेषस्तं दर्शयितुमाह—'नवरं देवा न उववज्जंती'त्यादि, देवोत्पादेनैवैकेन्द्रियेषु तेजोलेश्या भवति न चेह देवोत्पादः सम्भवतीति तेजोलेश्या एकेन्द्रिया न पृच्छयन्त इति ॥ ३५।४ ॥ पंचमे तु—'अचरमसमयकडजुम्मएगिंदिय'त्ति न विद्यते चरमसमय उक्तलक्षणो येषां तेऽचरमसमयास्ते च ते कृतयुग्मकृतयुग्मैकेन्द्रियाश्चेति समासः ॥ ५ ॥ षष्ठे तु—'पढमपढमसमयकडजुम्मएगिंदिय'त्ति, एकेन्द्रियोत्पादस्य प्रथमसमययोगाद्ये प्रथमाः प्रथमश्च समयः कृतयुग्मकृतयुग्मत्वानुभूतेर्येषामेकेन्द्रियाणां ते प्रथमप्रथमसमयकृतयुग्मकृतयुग्मैकेन्द्रियाः ॥ ६ ॥ सप्तमे तु—'पढमअपढमसमयकडजुम्मएगिंदिय'त्ति, प्रथमास्तथैव येऽप्रथमश्च समयः कृतयुग्मकृतयुग्मत्वानुभूतेर्येषामेकेन्द्रियाणां ते प्रथमाप्रथमसमयकृतयुग्मकृतयुग्मैकेन्द्रियाः, इह चैकेन्द्रियत्वोत्पादप्रथमसमयवर्त्तित्वे तेषां यद्विवक्षितसङ्ख्यानुभूतेरप्रथमसमयवर्त्तित्वं तत्प्राग्भवसम्बन्धिनीं तामाश्रित्येत्यवसेयम्, एवमुत्तरत्रापीति ॥ अष्टमे तु—'पढमचरमसमयकडजुम्मएगिंदिय'त्ति, प्रथमाश्च ते विवक्षितसङ्ख्यानुभूतेः प्रथमसमयवर्त्तित्वात् चरमसमयाश्च–मरणसमयवर्त्तिनः परि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शादस्था इति प्रथमचरमसमयास्ते च ते कृतयुग्मकृतयुग्मैकेन्द्रियाश्चेति विग्रहः ॥ ८ ॥ नवमे तु—‘पढमअचरमसमयकडजुम्म२एगिंदिय’त्ति, प्रथमास्तथैव अचरमसमयास्त्वेकेन्द्रियोत्पादापेक्षया प्रथमसमयवर्त्तिन इह विवक्षिताश्चरमत्वनिषेधस्य तेषु विद्यमानत्वात्, अन्यथा हि द्वितीयोद्देशकोक्तानामवगाहनादीनां यदिह समत्वमुक्तं तन्न स्यात् ततः कर्म्मधारयः, शेषं तु तथैव ॥ ९ ॥ दशमे तु—‘चरम२समयकडजुम्म२एगिंदिय’त्ति, चरमाश्च ते विवक्षितसङ्ख्यानुभूतेश्चरमसमयवर्त्तित्वात् चरमसमयाश्च प्रागुक्तस्वरूपा इति चरमचरमसमयाः शेषं प्राग्वत् ॥ १० ॥ एकादशे तु—‘चरमसमयकडजुम्म२एगिंदिय’त्ति, चरमास्तथैव अचरमसमयाश्च प्रागुक्तयुक्तेरेकेन्द्रियोत्पादापेक्षया प्रथमसमयवर्त्तिनो ये ते चरमाचरमसमयास्ते च ते कृतयुग्मकृतयुग्मैकेन्द्रियाश्चेति विग्रहः, उद्देशकानां स्वरूपनिर्धारणायाह—‘पढमो तइओ पंचमो य सरिसगमय’त्ति, कथम्?, यतः प्रथमापेक्षया द्वितीये यानि नानात्वान्यवगाहनादीनि दश भवन्ति न तान्येतेष्विति, ‘सेसा अट्ठ सरिसगमग’त्ति, द्वितीयचतुर्थषष्ठादयः परस्परेण सदृशगमाः-पूर्वोक्तेभ्यो विलक्षणगमा-द्वितीयसमानगमा इत्यर्थः, विशेषं त्वाह—‘नवरं चउत्थे’इत्यादि ॥ कृष्णलेश्याशते—

कण्हलेस्सकडजुम्मे२एगिंदिया णं भंते! कओ उववज्जंति?, गोयमा! उववाओ तहेव एवं जहा ओहिउद्देसए नवरं इमं नाणत्तं ते णं भंते! जीवा कण्हलेस्सा?, हंता कण्हलेस्सा, ते णं भंते! कण्हलेस्सकडजुम्म२एगिंदियेत्ति कालओ केवचिरं होइ?, गोयमा! जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं अंतोमुहुत्तं, एवं ठितीएवि, सेसं तहेव जाव अणंतखुत्तो, एवं सोलसवि जुम्मा भाणियव्वा। सेवं भंते! २ त्ति ॥२।१॥ पढमसमय- ॥ ९६९ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र ३५-शतके प्रथमं अन्तरशतकं (स-उद्देशका:) परिसमाप्तं

अथ ३५-शतके २-१२-अन्तरशतकानि (स-उद्देशका:) आरब्धानि

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

कण्हलेस्सकडजुम्म२एगिंदिया णं भंते! कओ उवव०?, जहा पढमसमयउद्देसओ नवरं ते णं भंते! जीवा कण्हलेस्सा?, हंता कण्हलेस्सा, सेसं तं चेव। सेवं भंते सेवं भंते! त्ति ॥ २।२ ॥ एवं जहा ओहियसए एक्कारस उद्देसगा भणिया तहा कण्हलेस्ससएवि एक्कारस उद्देसगा भाणियव्वा, पढमो तइओ पंचमो य सरिसगमा सेसा अट्ठवि सरिसगमा नवरं चउत्थछट्ठअट्ठमदसमेसु उववाओ नत्थि देवस्स। सेवं भंते! २त्ति ॥ ॥ ३५ सए बितियं एगिंदियमहाजुम्मसयं सम्मत्तं ॥ एवं नीललेस्सेहिवि सयं कण्हलेस्ससयसरिसं एक्कारस उद्देसगा तहेव। सेवं भंते! २ ॥ ततियं एगिंदियमहाजुम्मसयं सम्मत्तं ॥ एवं काउलेस्सेहिवि सयं कण्हलेस्ससयसरिसं। सेवं भंते! २ त्ति ॥ चउत्थं एगिंदियमहाजुम्मसयं ॥ भवसिद्धियकडजुम्म२एगिंदिया णं भंते! कओ उवव०?, जहा ओहियसयं तहेव नवरं एक्कारससुवि उद्देसएसु, अह भंते! सव्वपाणा जाव सव्वसत्ता भवसिद्धियकडजुम्म२एगिंदियत्ताए उववन्नपुव्वा?, गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे, सेसं तहेव। सेवं भंते! २ त्ति ॥ पंचमं एगिंदियमहाजुम्मसयं सम्मत्तं ॥ ५ ॥ कण्हलेस्सभवसिद्धियकडजुम्म२एगिंदिया णं भंते! कओहिंतो उवव०?, एवं कण्हलेस्सभवसिद्धियएगिंदिएहिवि सयं बितियसयकण्हलेस्ससरिसं भाणियव्वं। सेवं भंते! सेवं भंते! त्ति ॥ छट्ठं एगिंदियमहाजुम्मसयं सम्मत्तं ॥ ६ ॥ एवं नीललेस्सभवसिद्धियएगिंदिएहिवि सयं। सेवं भंते! सेवं भंते! त्ति ॥ सत्तमं एगिंदियमहाजुम्मसयं सम्मत्तं ॥ ७ ॥ एवं काउलेस्सभवसिद्धियएगिंदिएहिवि तहेव एक्कारसउद्देसगसंजुत्तं सयं, एवं एयाणि चत्तारि भवसिद्धि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥ ९७० ॥

३५ शतके उद्दे. २-१२ कृष्णलेश्यै-केन्द्रियादि सू ८५९

याणि सयाणि, चउसुवि सएसु सव्वपाणा जाव उववन्नपुव्वा?, नो इणट्ठे समट्ठे । सेवं भंते! सेवं भंते! त्ति ॥ अट्ठमं एगिंदियमहाजुम्मसयं सम्मत्तं॥८॥जहा भवसिद्धिएहिं चत्तारि सयाइं भणियाइं एवं अभवसिद्धिएहिवि चत्तारि सयाणि लेस्सासंजुत्ताणि भाणियव्वाणि, सव्वे पाणा तहेव नो इणट्ठे समट्ठे, एवं एयाइं बारस एगिंदियमहाजुम्मसयाइं भवंति । सेवं भंते! सेवं भंते! त्ति ॥ पंचतीसइमं सयं सम्मत्तं ॥३५॥ (सूत्रं ८५९) ॥

'जहन्नेणं एक्कं समयं'त्ति - जघन्यत एकसमयानन्तरं सङ्ख्यान्तरं भवतीत्यत एकं समयं कृष्णलेश्यकृतयुग्मकृतयुग्मैकेन्द्रिया भवन्तीति । 'एवं ठिईवि'त्ति कृष्णलेश्यावतां स्थितिः कृष्णलेश्याकालवद्वसेयेत्यर्थ इति ॥ पञ्चत्रिंशं शतं वृत्तितः समाप्तम् ॥ ३५ ॥

व्याख्या शतस्यास्य कृता सकष्टं, टीकाऽल्पिका येन न चास्ति चूर्णिः । मन्दैकनेत्रो बत पश्यताद्धा, दृश्यान्यकष्टं कथमुद्यतोऽपि ॥ १ ॥

पञ्चत्रिंशे शते सङ्ख्यापदैरेकेन्द्रियाः प्ररूपिताः, षट्त्रिंशे तु तैरेव द्वीन्द्रियाः प्ररूप्यन्त इत्येवंसम्बन्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

कडजुम्मर बेंदिया णं भंते! कओ उववज्जंति?, उववाओ जहा वक्कंतीए, परिमाणं सोलस वा संखेज्जा वा उवव० असंखेज्जा वा उवव०, अवहारो जहा उप्पलुद्देसए, ओगाहणा जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणं बारस जोयणाइं, एवं जहा एगिंदियमहाजुम्माणं पढमुद्देसए तहेव नवरं तिन्नि लेस्साओ देवा ॥ ९७० ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र ३५-शतके २-११ अन्तरशतकानि (स-उद्देशका:) परिसमाप्तानि

अथ षड्त्रिंशत् शतकं आरभ्यते

अथ ३६-शतके १-१२-अन्तरशतकानि (स-उद्देशका: १-११) आरब्धा:

न उवव० सम्मदिट्ठी वॉ मिच्छदिट्ठी वा नो सम्मामिच्छादिट्ठी नाणी वा अन्नाणी वा नो मणयोगी वययोगी वा कायजोगी वा, ते णं भंते! कडजुम्म२बेंदिया कालओ केव०?, गोयमा! जहन्नेणं एकं समयं उक्कोसेणं संखेज्जं कालं ठिती जहन्नेणं एकं समयं उक्कोसेणं बारस संवच्छराइं, आहारो नियमं छद्दिसिं, तिन्नि समुग्घाया सेसं तहेव जाव अणंतखुत्तो, एवं सोलससुवि जुम्मेसु। सेवं भंते! २ त्ति ॥ बेंदियमहाजुम्मसए पढमो उद्देसओ सम्मत्तो ॥ ३६।१ ॥ पढमसमयकडजुम्म२बेंदिया णं भंते! कओ उवव०?, एवं जहा एगिंदियमहाजुम्माणं पढमसमयउद्देसए दस नाणत्ताइं ताइं चेव दस इहवि, एक्कारसमं इमं नाणत्तं–नो मणयोगी-नो वइयोगी काययोगी सेसं जहा बेंदियाणं चेव पढमुद्देसए। सेवं भंते! २ त्ति ॥ एवं एएवि जहा एगिंदियमहाजुम्मेसु एक्कारस उद्देसगा तहेव भाणियव्वा नवरं चउत्थछट्ठअट्ठमदसमेसु सम्मत्तनाणाणि न भवंति, जहेव एगिंदिएसु पढमो तइओ पंचमो य एक्कगमा सेसा अट्ठ एक्कगमा। पढमं बेइंदियमहाजुम्मसयं सम्मत्तं ॥ १ ॥ कण्हलेस्सकडजुम्म२बेइंदिया णं भंते! कओ उववज्जंति?, एवं चेव कण्हलेस्सेसुवि एक्कारसउद्देसगसंजुत्तं सयं, नवरं लेस्सा संचिट्ठणा ठिती जहा एगिंदियकण्हलेस्साणं ॥ बितियं बेंदियसयं सम्मत्तं ॥२॥ एवं नीललेस्सेहिवि सयं। ततियं सयं सम्मत्तं॥ ३ ॥ एवं काउलेस्सेहिवि, सयं ४ सम्मत्तं ॥ भवसिद्धियकडजुम्म२बेइंदिया णं भंते!, एवं भवसिद्धियसयावि चत्तारि तेणेव पुव्वगमएणं नेयव्वा नवरं सव्वे पाणा० णो तिणट्ठे समट्ठे, सेसं तहेव ओहियसयाणि चत्तारि। सेवं भंते सेवं भंते! त्ति ॥ छत्तीसमसए अट्ठमं सयं सम्मत्तं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥९७१॥

३६-३९ शतानि सू. ८६०-८६३

॥८॥ जहा भवसिद्धियसयाणि चत्तारि एवं अभवसिद्धियसयाणि चत्तारि भाणियव्वाणि नवरं सम्मत्तनाणाणि नत्थि, सेसं तं चेव, एवं एयाणि बारस बेइंदियमहाजुम्मसयाणि भवंति। सेवं भंते! सेवं भंते! त्ति ॥ बेंदियमहाजुम्मसया सम्मत्ता ॥ १२ ॥ (सूत्रं ८६०) ॥ छत्तीसतिमं सयं सम्मत्तं ॥ ३६ ॥

कडजुम्म२तेंदिया णं भंते! कओ उववज्जंति?, एवं तेइंदिएसुवि बारस सया कायव्वा बेइंदियसयसरिसा नवरं ओगाहणा जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणं तिन्नि गाउयाइं, ठिती जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं एकूणवन्नं राइंदियाइं सेसं तहेव। सेवं भंते! सेवं भंते! त्ति (सूत्रं ८६१) ॥ तेंदियमहाजुम्मसया सम्मत्ता ॥ १२ ॥ सत्ततीसइमं सयं सम्मत्तं ॥ ३७ ॥

चउरिंदिएहिवि एवं चेव बारस सया कायव्वा नवरं ओगाहणा जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणं चत्तारि गाउयाइं ठिती जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं छम्मासा सेसं जहा बेंदियाणं। सेवं भंते! २ त्ति ॥ (सूत्रं ८६२) ॥ चउरिंदियमहाजुम्मसया सम्मत्ता ॥ १२ ॥ अट्ठतीसइमं सयं सम्मत्तं ॥ ३८ ॥

कडजुम्म२असन्निपंचिंदिया णं भंते! कओ उवव० जहा बेन्दियाणं तहेव असन्निसुवि बारस सया कायव्वा नवरं ओगाहणा जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणं जोयणसहस्सं संचिट्ठणा जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं पुव्वकोडीपुहुत्तं ठिती जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं पुव्वकोडी सेसं जहा बेंदियाणं। सेवं भंते! २ त्ति ॥ असन्नीपंचिंदियमहाजुम्मसया सम्मत्ता ॥ १२ ॥ एगूणयालीसइमं सयं सम्मत्तं (सूत्रं ८६३) ॥ ३९ ॥ ॥९७१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र ३६-शतके १-१२-अन्तरशतकानि (स-उद्देशका: १-११) परिसमाप्ता:

अथ ३७-३९ शतके १-१२-अन्तरशतकानि (स-उद्देशका: १-११) आरब्धा: एवं परिसमाप्ता:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

'कडजुम्म२बेन्दिया णं'मित्यादि, 'जहन्नेणं एक्कं समयं'ति समयानन्तरं सङ्ख्यान्तरभावात्, एवं स्थितिरपि । इतः सर्वं सूत्रसिद्धमाशास्त्रपरिसमाप्तेः, नवरं चत्वारिंशे शते—

कडजुम्म२सन्निपंचिंदिया णं भंते! कओ उववज्जन्ति?, उववाओ चउसुवि गईसु, संखेज्जवासाउयअसंखेज्जवासाउयपज्जत्तअपज्जत्तएसु य न कओवि पडिसेहो जाव अणुत्तरविमाणत्ति, परिमाणं अवहारो ओगाहणा य जहा असन्निपंचिंदियाणं वेयणिज्जवज्जाणं सत्तण्हं पगडीणं बंधगा वा अबंधगा वा वेयणिज्जस्स बंधगा नो अबंधगा मोहणिज्जस्स वेदगा वा अवेदगा वा सेसाणं सत्तण्हवि वेदगा नो अवेयगा सायावेयगा वा असायावेयगा वा मोहणिज्जस्स उदई वा अणुदई वा सेसाणं सत्तण्हवि उदयी नो अणुदई नामस्स गोयस्स य उदीरगा नो अणुदीरगा सेसाणं छण्हवि उदीरगा वा अणुदीरगा वा कण्हलेस्सा वा जाव सुक्कलेस्सा वा सम्मदिट्ठी वा मिच्छादिट्ठी वा सम्मामिच्छादिट्ठी वा णाणी वा अन्नाणी वा मणजो० वइजो० कायजो० उवओगो वन्नमादी उस्सासगा वा नीसासगा वा आहारगा य जहा एगिंदियाणं विरया य अविरया य विरयाविरया२सकिरिया नो अकिरिया । ते णं भंते! जीवा किं सत्तविहबंधगा अट्ठविहबंधगा वा छव्विहबंधगा वा एगविहबंधगा वा?, गोयमा! सत्तविहबंधगा वा जाव एगविहबंधगा वा, ते णं भंते! जीवा किं आहारसन्नोवउत्ता जाव परिग्गहसन्नोवउत्ता वा नोसन्नोवउत्ता वा?, गोयमा! आहारसन्नोवउत्ता जाव नोसन्नोवउत्ता वा सव्वत्थ पुच्छा भाणियव्वा कोहकसायी वा जाव लोभकसायी वा अकसायी वा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ ४०-शतके प्रथम-अन्तरशतकं (स-उद्देशकाः १-११) आरब्धं

इत्थीवेदगा वा पुरिसवेदगा वा नपुंसगवेदगा वा अवेदगा वा इत्थिवेदबंधगा वा पुरिसवेदबंधगा वा नपुंसगवेदबंधगा वा अबंधगा वा, सन्नी नो असन्नी सइंदिया नो अणिंदिया संचिट्ठणा जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं सागरोपमसयपुहुत्तं सातिरेगं आहारो तहेव जाव नियमं छद्दिसिं ठिती जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं छ समुग्घाया आदिल्लगा मारणंतियसमुग्घाएणं समोहयावि मरंति असमोहयावि मरंति, उवट्टणा जहेव उववाओ न कत्थइ पडिसेहो जाव अणुत्तरविमाणत्ति, अह भंते! सव्वपाणा जाव अणंतखुत्तो, एवं सोलसुवि जुम्मेसु भाणियव्वं जाव अणंतखुत्तो, नवरं परिमाणं जहा बेइंदियाणं सेसं तहेव। सेवं भंते! २ त्ति ॥ ४०।१ ॥ पढमसमयकडजुम्म२सन्निपंचिंदिया णं भंते! कओ उववज्जन्ति?, उववाओ परिमाणं आहारो जहा एएसिं चेव पढमोद्देसए ओगाहणा बंधो वेदो वेदणा उदयी उदीरगा य जहा बेन्दियाणं पढमसमयाणं तहेव कण्हलेस्सा वा जाव सुक्कलेस्सा वा, सेसं जहा बेन्दियाणं पढमसमइयाणं जाव अणंतखुत्तो नवरं इत्थिवेदगा वा पुरिसवेदगा वा नपुंसगवेदगा वा सन्निणो असन्नीणो सेसं तहेव एवं सोलसुवि जुम्मेसु परिमाणं तहेव सव्वं। सेवं भंते! २ त्ति ॥ ४०।२ ॥ एवं एत्थवि एक्कारस उद्देसगा तहेव, पढमो तइओ पंचमो य सरिसगमा सेसा अट्ठवि सरिसगमा, चउत्थछट्ठअट्ठमदसमेसु नत्थि विसेसो कायव्वो। सेवं भंते! २ त्ति ॥ (सूत्रं ८६४) ॥ ४० सते पढमसन्निपंचिंदियमहाजुम्मसयं सम्मत्तं ॥ ॥९७२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'वेयणिज्जवज्जाणं सत्तण्हं पगडीणं बन्धगा वा अबन्धगा व'त्ति, इह वेदनीयस्य बन्धविधिं विशेषेण वक्ष्यतीति-कृत्वा वेदनीयवर्जानामित्युक्तं, तत्र चोपशान्तमोहादयः सप्तानामबन्धका एव शेषास्तु यथासम्भवं बन्धका भवन्तीति 'वेयणिज्जस्स बन्धगा नो अबन्धग'त्ति, केवलित्वादारात्सर्वेऽपि सञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियास्ते च वेदनीयस्य बन्धका एव नाबन्धकाः 'मोहणिज्जस्स वेयगा वा अवेयगा व'त्ति मोहनीयस्य वेदकाः सूक्ष्मसम्परायान्ताः, अवेदकास्तूपशान्तमोहादयः, 'सेसाणं सत्तण्हवि वेयगा नो अवेयग'त्ति ये किलोपशान्तमोहादयः सञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियास्ते सप्तानामपि वेदका नो अवेदकाः, केवलिन एव चतसृणां वेदका भवन्ति ते चेन्द्रियव्यापारातीतत्वेन न पंचेन्द्रिया इति । 'सायावेयगा वा असायावेयगा व'त्ति, सञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियाणामेवंस्वरूपत्वात्, 'मोहणिज्जस्स उदई वा अणुदई व'त्ति, तत्र सूक्ष्मसम्परायान्ता मोहनीयस्योदयिनः उपशान्तमोहादयस्त्वनुदयिनः 'सेसाणं सत्तण्हवी'त्यादि, प्राग्वत्, नवरं वेदकत्वमनुक्रमेणोदीरणाकरणेन चोदयागतानामनुभवनम् उदयस्त्वनुक्रमागतानामिति । 'नामगोयस्स उदीरगा नो अणुदीरग'त्ति, नामगोत्रयोरकषायान्ताः सञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियाः सर्वेऽप्युदीरकाः, 'सेसाणं छण्हवि उदीरगा वा अणुदीरगा व'त्ति शेषाणां षण्णामपि यथासम्भवमुदीरकाश्चानुदीरकाश्च यतोऽथमुदीरणाविधिः प्रमत्तानां सामान्येनाष्टानां, आवलिकावशेषायुष्कास्तु त एवायुर्वर्जसप्तानामुदीरकाः, अप्रमत्तादयस्तु चत्वारो वेदनीयायुर्वर्जानां षण्णां, तथा सूक्ष्मसम्पराया आवलिकायां स्वाद्धायाः शेषायां मोहनीयवेदनीयायुर्वर्जानां पञ्चानामपि, उपशान्तमोहास्तूक्तरूपाणां पञ्चानामेव क्षीणकषायाः पुनः स्वाद्धाया आवलिकायां शेषायां नामगोत्रयोरेव सयोगिनोऽप्येतयोरेव अयोगिनस्त्वनु-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दीरका एवेति। ‘संचिट्ठणा जहन्नेणं एक्कं समयं’ति, कृतयुग्मकृतयुग्मसञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियाणां जघन्येनावस्थितिरेकं समयं समयानन्तरं सङ्ख्यान्तरसद्भावात्, ‘उक्कोसेणं सागरोवमसयपुहुत्तं साइरेगं’ति यत इतः परं सञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रिया न भवन्त्येवेति, ‘छ समुग्घाया आइल्लग’त्ति सञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियाणामाद्याः षडेव समुद्घाता भवन्ति सप्तमस्तु केवलिनामेव ते चानिन्द्रिया इति ॥ कृष्णलेश्याशते—

कण्हलेस्सकडजुम्म२सन्निपंचिंदिया णं भंते! कओ उवव०?, तहेव जहा पढमुद्देसओ सन्नीणं, नवरं बन्धो वेओ उदयी उदीरणा लेस्सा बन्धगसन्ना कसायवेदबंधगा य एयाणि जहा बेंदियाणं, कण्हलेस्साणं वेदो तिविहो अवेदगा नत्थि संचिट्ठणा जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं एवं ठितीएवि नवरं ठितीए अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं न भन्नंति सेसं जहा एएसिं चेव पढमे उद्देसए जाव अणंतखुत्तो। एवं सोलससुवि जुम्मेसु। सेवं भंते! सेवं भंते! त्ति ॥ पढमसमयकण्हलेस्सकडजुम्म२सन्निपंचिंदिया णं भंते! कओ उववज्जन्ति?, जहा सन्निपंचिंदियपढमसमयउद्देसए तहेव निरवसेसं नवरं ते णं भंते! जीवा कण्हलेस्सा?, हंता कण्हलेस्सा सेसं तं चेव, एवं सोलससुवि जुम्मेसु। सेवं भंते! सेवं भंते! त्ति ॥ एवं एएवि एक्कारसवि उद्देसगा कण्हलेस्ससए, पढमततियपंचमा सरिसगमा सेसा अट्ठवि एक्कगमा। सेवं भंते! सेवं भंते! त्ति ॥ बितियं सयं सम्मत्तं ॥ २ ॥ एवं नीललेस्सेसुवि सयं, नवरं संचिट्ठणा जहन्नेणं ॥९७३॥
एक्कं समयं उक्कोसेणं दस सागरोवमाइं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागमब्भहियाइं, एवं ठितीए, एवं तिसु

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ ४०-शतके प्रथम-अन्तरशतकं (स-उद्देशका: १-११) परिसमाप्तं

अथ ४०-शतके २-२१ अन्तरशतकानि (स-उद्देशका: १-११) आरब्धानि

उद्देसएसु, सेसं तं चेव। सेवं भंते! सेवं भंते! त्ति ॥ तइयं सयं सम्मत्तं ॥ ३ ॥ एवं काउलेस्ससयंपि, नवरं संचिट्ठणा जह० एक्कं समयं उक्कोसेणं तिन्नि सागरोवमाइं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागमब्भहियाइं, एवं ठितीएवि, एवं तिसुवि उद्देसएसु, सेसं तं चेव। सेवं भंते! २ त्ति ४ ॥ चउत्थं सयं ॥ एवं तेउलेस्सेसुवि सयं, नवरं संचिट्ठणा जह० एक्कं समयं उक्कोसेणं दो सागरोवमाइं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागमब्भहियाइं एवं ठितीएवि नवरं नोसन्नोवउत्ता वा, एवं तिसुवि उद्देसएसु सेसं तं चेव। सेवं भंते! २ त्ति ॥ पंचमं सयं ॥ ५॥ जहा तेउलेस्सासतं तहा पम्हलेस्सासयंपि नवरं संचिट्ठणा जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं दस सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं, एवं ठितीएवि, नवरं अंतोमुहुत्तं न भन्नति सेसं तं चेव, एवं एएसु पंचसु सएसु जहा कण्हलेस्सासए गमओ तहा नेयव्वो जाव अणंतखुत्तो। सेवं भंते! २ त्ति ॥ ४०-छट्ठं सयं सम्मत्तं ॥ ६ ॥ सुक्कलेस्ससयं जहा ओहियसयं नवरं संचिट्ठणा ठिती य जहा कण्हलेस्ससए सेसं तहेव जाव अणंतखुत्तो। सेवं भंते! २ त्ति ॥ सत्तमं सयं सम्मत्तं । भवसिद्धियकडजुम्म२सन्निपंचिंदिया णं भंते! कओ उववज्जन्ति?, जहा पढमं सन्निसतं तहा णेयव्वं भवसिद्धियाभिलावेणं नवरं सव्वपाणा?, णो तिणट्ठे समट्ठे, सेसं तहेव, सेवं भंते! २ त्ति ॥ अट्ठमं सयं। कण्हलेस्सभवसिद्धीयकडजुम्म२सन्निपंचिंदिया णं भंते! कओ उववज्जन्ति?, एवं एएणं अभिलावेणं जहा ओहियकण्हलेस्ससयं। सेवं भंते! २ त्ति ॥ नवमं सयं ॥ एवं नीललेस्सभवसिद्धीएवि सयं। सेवं भंते! २ ॥ दसमं सयं ॥ एवं जहा ओहियाणि संन्निपंचिंदियाणं सत्त सयाणि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भणियाणि एवं भवसिद्धीएहिवि सत्त सयाणि कायव्वाणि, नवरं सत्तसुवि सएसु सव्वपाणा जाव णो तिणट्ठे समट्ठे, सेसं तं चेव । सेवं भंते! २ ॥ भवसिद्धियसया सम्मत्ता ॥ चोद्दसमं सयं सम्मत्तं ॥ १४ ॥ अभवसिद्धियकडजुम्म२सन्निपंचिंदिया णं भंते! कओ उववज्जन्ति?, उववाओ तहेव अणुत्तरविमाणवज्जो परिमाणं अवहारो उच्चत्तं बंधो वेदो वेदणं उदओ उदीरणा य जहा कण्हलेस्ससए कण्हलेस्सा वा जाव सुक्कलेस्सा वा नो सम्मदिट्ठी मिच्छादिट्ठी नो सम्मामिच्छादिट्ठी नो नाणी अन्नाणी एवं जहा कण्हलेस्ससए नवरं नो विरया अविरया नो विरया२ संचिट्ठणा ठिती य जहा ओहिउद्देसए समुग्घाया आदिल्लगा पंच उव्वट्टणा तहेव अणुत्तरविमाणवज्जं सव्वपाणा णो तिणट्ठे समट्ठे सेसं जहा कण्हलेस्ससए जाव अणंतखुत्तो, एवं सोलससुवि जुम्मेसु । सेवं भंते! २ त्ति ॥ पढमसमयअभवसिद्धियकडजुम्म२सन्निपंचिंदिया णं भंते! कओ उववज्जन्ति?, जहा सन्नीणं पढमसमयउद्देसए तहेव नवरं सम्मत्तं सम्मामिच्छत्तं नाणं च सव्वत्थ नत्थि सेसं तहेव। सेवं भंते! २ त्ति ॥ एवं एत्थवि एक्कारस उद्देसगा कायव्वा पढमतइयपंचमा एक्कगमा सेसा अट्ठवि एक्कगमा । सेवं भंते! २ त्ति ॥ पढमं अभवसिद्धियमहाजुम्मसयं सम्मत्तं ॥ चत्तालीसमसए पन्नरसमं सयं सम्मत्तं ॥ ॥ ४०।१५ ॥ कण्हलेस्सअभवसिद्धियकडजुम्म२सन्निपंचिंदिया णं भंते! कओ उववज्जन्ति?, जहा एएसिं चेव ओहियसयं तहा कण्हलेस्ससयंपि नवरं ते णं भंते! जीवा कण्हलेस्सा?, हंता कण्हलेस्सा, ठिती संचिट्ठणा य जहा कण्हलेस्सासए सेसं तं चेव । सेवं भंते! २ त्ति ॥ बितियं अभवसिद्धियमहाजुम्मसयं ॥ ॥९७४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

॥ ४०-सते सोलसमं संमत्तं ॥ १६ ॥ एवं छहिवि लेस्साहिं छ सया कायव्वा जहा कण्हलेस्ससयं नवरं संचिट्ठणा ठिती य जहेव ओहियसए तहेव भाणियव्वा, नवरं सुक्कलेस्साए उक्कोसेणं एक्कतीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं, ठिती एवं चेव नवरं अंतोमुहुत्तं नत्थि जहन्नगं तहेव सव्वत्थ सम्मत्तनाणाणि नत्थि विरई विरयाविरई अणुत्तरविमाणोववत्ति एयाणि नत्थि, सव्वपाणा० णो तिणट्ठे समट्ठे। सेवं भंते! सेवं भंतेत्ति ॥ एवं एयाणि सत्त अभवसिद्धियमहाजुम्मसया भवन्ति। सेवं भंते! सेवं भंतेत्ति ॥ एवं एयाणि एक्कवीसं सन्निमहाजुम्मसयाणि। सव्वाणिवि एक्कासीतिमहाजुम्मसया सम्मत्ता ॥ (सूत्रं ८६५)॥ चत्तालीसतिमं सयं सम्मत्तं ॥ ४० ॥

'उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं'ति, इदं कृष्णलेश्याऽवस्थानं सप्तमपृथिव्युत्कृष्टस्थितिं पूर्वभवपर्यन्तवर्त्तिनं च कृष्णलेश्यापरिणाममाश्रित्येति । नीललेश्याशते—'उक्कोसेणं दस सागरोवमाइं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागमब्भहियाइं'ति, पञ्चमपृथिव्या उपरितनप्रस्तटे दश सागरोपमाणि पल्योपमासङ्ख्येयभागाधिकान्यायुः संभवन्ति, नीललेश्या च तत्र स्यादत उक्तम्—'उक्कोसेण'मित्यादि, यच्चेह प्राक्तनभवान्तिमान्तर्मुहूर्त्तं तत्पल्योपमासङ्ख्येयभागे प्रविष्टमिति न भेदेनोक्तं, एवमन्यत्रापि, 'तिसु उद्देसएसु'त्ति प्रथमतृतीयपञ्चमेष्विति । कापोतलेश्याशते—'उक्कोसेणं तिन्नि सागरोवमाइं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागमब्भहियाइं'ति यदुक्तं तत्तृतीयपृथिव्या उपरितनप्रस्तटस्थितिमाश्रित्येति । तेजोलेश्याशते—'दो सागरोवमाइं'इत्यादि यदुक्तं तदीशानदेवपरमायुरा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥९७५॥

४१ शतके सू ८६७

श्रित्येत्यवसेयं, पद्मलेश्याशते–'उक्कोसेणं दस सागरोवमाइं' इत्यादि तु यदुक्तं तद्ब्रह्मलोकदेवायुराश्रित्येति मन्तव्यं, तत्र हि पद्मलेश्यैतावच्चायुर्भवति, अन्तर्मुहूर्त्तं च प्राक्तनभवावसानवर्त्तीति, शुक्ललेश्याशते—'संचिट्ठणा ठिई य जहा कण्हलेस्ससए'त्ति त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाणि सान्तर्मुहूर्त्तानि शुक्ललेश्याऽवस्थानमित्यर्थः, एतच्च पूर्वभवान्त्यान्तर्मुहूर्त्तमनुत्तरायुश्चाश्रित्येत्यवसेयं, स्थितिस्तु त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाणीति, 'नवरं सुक्कलेस्साए उक्कोसेणं एक्कतीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं'ति यदुक्तं तदुपरितनग्रैवेयकमाश्रित्येति मन्तव्यं, तत्र हि देवानामेतावदेवायुः शुक्ललेश्या च भवति, अभव्याश्चोत्कर्षतस्तत्रैव देवतयोत्पद्यन्ते न तु परतोऽपि, अन्तर्मुहूर्त्तं च पूर्वभवावसानसम्बन्धीति ॥ एकचत्वारिंशे शते—

कइ णं भंते! रासीजुम्मा पन्नत्ता?, गोयमा! चत्तारि रासीजुम्मा पन्नत्ता, तंजहा–कडजुम्मे जाव कलियोगे, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ चत्तारि रासीजुम्मा पन्नत्ता, तंजहा–जाव कलियोगे?, गोयमा! जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे चउपज्जवसिए सेत्तं रासीजुम्मकडजुम्मे, एवं जाव जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं एगपज्जवसिए सेत्तं रासीजुम्मकलियोगे, से तेणट्ठेणं जाव कलियोगे । रासीजुम्मकडजुम्मनेरइया णं भंते! कओ उववज्जन्ति?, उववाओ जहा वक्कंतीए, ते णं भंते! जीवा एगसमएणं केवइया उववज्जन्ति?, गोयमा! चत्तारि वा अट्ठ वा बारस वा सोलस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा उवव०, ते णं भंते! जीवा किं संतरं उववज्जन्ति निरंतरं उववज्जन्ति?, गोयमा! संतरंपि उववज्जन्ति निरंतरंपि उववज्जंति, संतरं उववज्जमाणा जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं असंखेज्जा समया अंतरं कट्टु उववज्जन्ति, निरंतरं उववज्ज- ॥९७५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

*** अत्र मूल-संपादने सूत्रक्रम-सूचने एका स्खलना दृश्यते– सू. ८६६ स्थाने ८६७ मुद्रितं (यहां सूत्रक्रम ८६६ लिखना भूल गये है, सिधा ८६७ लिखा है

अत्र ४०-शतके २-२१ अन्तरशतकानि (स-उद्देशका: १-११) परिसमाप्तानि, तत्समाप्ते चत्वारिंशम् शतकं अपि समाप्तं

अथ एकचत्वारिंशम् शतकं आरभ्यते

माणा जहन्नेणं दो समया उक्कोसेणं असंखेज्जा समया अणुसमयं अविरहियं निरंतरं उववज्जन्ति, ते णं भंते! जीवा जंसमयं कडजुम्मा तंसमयं तेयोगा जंसमयं तेयोगा तंसमयं कडजुम्मा?, णो तिणट्ठे समट्ठे, जंसमयं कडजुम्मा तंसमयं दावरजुम्मा जंसमयं दावरजुम्मा तंसमयं कडजुम्मा?, नो तिणट्ठे समट्ठे, जंसमयं कडजुम्मा तंसमयं कलियोगा जंसमयं कलियोगा तं समयं कडजुम्मा?, णो तिणट्ठे समट्ठे। ते णं भंते! जीवा कहिं उववज्जन्ति?, गोयमा! से जहा नामए पवए पवमाणे एवं जहा उववायसए जाव नो परप्पयोगेणं उववज्जन्ति । ते णं भंते! जीवा किं आयजसेणं उववज्जन्ति आयअजसेणं उववज्जन्ति?, गोयमा! नो आयजसेणं उवव० आयअजसेणं उववज्जन्ति, जइ आयअजसेणं उववज्जन्ति किं आयजसं उवजीवंति आयअजसं उवजीवंति?, गोयमा! नो आयजसं उवजीवंति आयअजसं उवजीवंति, जइ आयअजसं उवजीवंति किं सलेस्सा अलेस्सा?, गोयमा! सलेस्सा नो अलेस्सा, जइ सलेस्सा किं सकिरिया अकिरिया?, गोयमा! सकिरिया नो अकिरिया, जइ सकिरिया तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झंति जाव अंतं करेंति?, णो तिणट्ठे समट्ठे । रासीजुम्मकडजुम्मअसुरकुमारा णं भंते! कओ उववज्जन्ति?, जहेव नेरतिया तहेव निरवसेसं एवं जाव पंचिंदियतिरिक्खजोणिया नवरं वणस्सइकाइया जाव असंखेज्जा वा अणंता वा उव० सेसं एवं चेव, मणुस्सावि एवं चेव जाव नो आयजसेणं उववज्जन्ति आयअजसेणं उवव०, जइ आयअजसेणं उववज्जन्ति किं आयजसं उवजीवंति आयअजसं उवजीवंति?, गोयमा! आयजसंपि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एकचत्वारिंशम् शतके १ से १९६ उदेशका: वर्तते तद् अन्तर्गत अत्र उद्देशक: १ आरब्ध:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥ ९७६ ॥

४१ शतके सू ८६७

उवजीवंति आयअजसंपि उवजीवंति, जइ आयजसं उवजीवंति किं सलेस्सा अलेस्सा ?, गोयमा ! सलेस्सावि अलेस्सावि, जइ अलेस्सा किं सकिरिया अकिरिया ?, गोयमा ! नो सकिरिया अकिरिया, जइ अकिरिया तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झंति जाव अंतं करेंति ?, हंता सिज्झंति जाव अंतं करेन्ति, जइ सलेस्सा किं सकिरिया अकिरिया ?, गोयमा ! सकिरिया नो अकिरिया, जइ सकिरिया तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झंति जाव अंतं करेन्ति ?, गोयमा ! अत्थेगइया तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झंति जाव अंतं करेन्ति अत्थेगइया नो तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झंति जाव अंतं करेन्ति, जइ आयअजसं उवजीवंति किं सलेस्सा अलेस्सा ?, गोयमा ! सलेस्सा नो अलेस्सा, जइ सलेस्सा किं सकिरिया अकिरिया ?, गोयमा ! सकिरिया नो अकिरिया, जइ सकिरिया तेणेव भवग्गहणेवं सिज्झंति जाव अंतं करेंति ?, नो इणट्ठे समट्ठे । वाणमंतरजोइसियवेमाणिया जहा नेरइया । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥ रासीजुम्मसए पढमो उद्देसओ ॥४१।१॥ रासीजुम्मतेओयनेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?, एवं चेव उद्देसओ भाणियव्वो नवरं परिमाणं तिन्नि वा सत्त वा एक्कारस वा पन्नरस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा उवव० संतरं तहेव, ते णं भंते ! जीवा जंसमयं तेयोगा तंसमयं कडजुम्मा जंसमयं कडजुम्मा तंसमयं तेयोगा ?, णो इणट्ठे समट्ठे, जंसमयं तेयोया तंसमयं दावरजुम्मा जंसमयं दावरजुम्मा तंसमयं तेयोया ?, णो इणट्ठे समट्ठे, एवं कलियोगेणवि समं, सेसं तं चेव जाव वेमाणिया नवरं उववाओ सव्वेसिं जहा वक्कंतीए । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥ ४१।२ ॥ रासीजुम्म-

॥ ९७६ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

*** अत्र मूल-संपादने सूत्रक्रम-सूचने एका स्खलना दृश्यते– सू. ८६६ स्थाने ८६७ मुद्रितं (यहां सूत्रक्रम ८६६ लिखना भूल गये है, सिधा ८६७ लिखा है

४१ शतके १ से १९६ उदेशका: वर्तते तद् अन्तर्गत अत्र उद्देशक: १ समाप्त:, उद्देशक: २ आरब्ध: एवं समाप्त:, उद्देशक: ३ आरब्ध:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

दावरजुम्मनेरइया णं भंते! कओ उववज्जन्ति?, एवं चेव उद्देसओ नवरं परिमाणं दो वा छ वा दस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा उववज्जंति संवेहो, ते णं भंते! जीवा जंसमयं दावरजुम्मा तंसमयं कडजुम्मा जंसमयं कडजुम्मा तंसमयं दावरजुम्मा?, णो इणट्ठे समट्ठे, एवं तेयोएणवि समं, एवं कलियोगेणवि समं, सेसं जहा पढमुद्देसए जाव वेमाणिया । सेवं भंते! २ त्ति ॥ ४१।३ ॥ रासीजुम्मकलिओगनेरइया णं भंते! कओ उववज्जंति?, एवं चेव नवरं परिमाणं एक्को वा पंच वा नव वा तेरस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा उववज्जन्ति संवेहो, ते णं भंते! जीवा जंसमयं कलियोगा तंसमयं कडजुम्मा जंसमयं कडजुम्मा तंसमयं कलियोगा?, नो इणट्ठे समट्ठे, एवं तेयोएणवि समं, एवं दावरजुम्मेणवि समं, सेसं जहा पढमुद्देसए जाव वेमाणिया । सेवं भंते! २ त्ति ॥ ४१।४ ॥ कण्हलेस्सरासीजुम्मकडजुम्मनेरइया णं भंते! कओ उववज्जन्ति?, उववाओ जहा धूमप्पभाए सेसं जहा पढमुद्देसए, असुरकुमाराणं तहेव एवं जाव वाणमंतराणं मणुस्साणवि जहेव नेरइयाणं आयअजसं उवजीवंति अलेस्सा अकिरिया तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झंति एवं न भाणियवं सेसं जहा पढमुद्देसए । सेवं भंते! सेवं भंतेत्ति ॥ ४१।५ ॥ कण्हलेस्सतेयोएहिवि एवं चेव उद्देसओ, सेवं भंते! २ त्ति ॥ ४१।६ ॥ कण्हलेस्सदावरजुम्मेहिं एवं चेव उद्देसओ । सेवं भंते! २ त्ति ॥ ४१।७ ॥ कण्हलेस्सकलिओएहिवि एवं चेव उद्देसओ परिमाणं संवेहो य जहा ओहिएसु उद्देसएसु । सेवं भंते! २ त्ति ॥४१।८॥ जहा कण्हलेस्सेहिं एवं नीललेस्सेहिवि चत्तारि उद्देसगा भाणियव्वा निरवसेसा, नवरं नेरइयाणं उववाओ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

४१ शतके १ से १९६ उदेशका: वर्तते तद् अन्तर्गत अत्र उद्देशक: ३ समाप्त:, उद्देशक: ४ - ७ आरब्ध: एवं समाप्त:, उद्देशक: ८ आरब्ध:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥९७७॥

४१ शतके सू ८६७

जहा वालुयप्पभाए सेसं तं चेव। सेवं भंते! सेवं भंते! त्ति ॥४१।१२॥ काउलेस्सेहिवि एवं चेव चत्तारि उद्देसगा कायव्वा नवरं नेरइयाणं उववाओ जहा रयणप्पभाए, सेसं तं चेव। सेवं भंते! सेवं भंते! त्ति ॥४१।१६॥ तेउलेस्सरासीजुम्मकडजुम्मअसुरकुमारा णं भंते! कओ उववज्जन्ति?, एवं चेव नवरं जेसु तेउलेस्सा अत्थि तेसु भाणियव्वं, एवं एएवि कण्हलेस्सासरिसा चत्तारि उद्देसगा कायव्वा । सेवं भंते! २ ॥४१।२०॥ एवं पम्हलेस्साएवि चत्तारि उद्देसगा कायव्वा पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं मणुस्साणं वेमाणियाण य एएसिं पम्हलेस्सा सेसाणं नत्थि । सेवं भंते! २ त्ति ॥४१।२४॥ जहा पम्हलेस्साए एवं सुक्कलेस्साएवि चत्तारि उद्देसगा कायव्वा नवरं मणुस्साणं गमओ जहा ओहिउद्देसएसु सेसं तं चेव, एवं एए छसु लेस्सासु चउवीसं उद्देसगा ओहिया चत्तारि, सव्वे ते अट्ठावीसं उद्देसगा भवंति । सेवं भंते! २ त्ति ॥४१।२८॥ भवसिद्धियरासीजुम्मकडजुम्मनेरइया णं भंते! कओ उवव०? जहा ओहिया पढमगा चत्तारि उद्देसगा तहेव निरवसेसं एए चत्तारि उद्देसगा। सेवं भंते! २ त्ति ॥४१।३२॥ कण्हलेस्सभवसिद्धियरासीजुम्मकडजुम्मनेरइया णं भंते! कओ उवव०?, जहा कण्हलेस्साए चत्तारि उद्देसगा भवंति तहा इमेवि भवसिद्धियकण्हलेस्सेहिवि चत्तारि उद्देसगा कायव्वा ॥४१।३६॥ एवं नीललेस्सभवसिद्धिएहिवि चत्तारि उद्देसगा कायव्वा ॥४१।४०॥ एवं काउलेस्सेहिवि चत्तारि उद्देसगा ॥४१।४४॥ तेउलेस्सेहिवि चत्तारि उद्देसगा ओहियसरिसा ॥४१।४८॥ ॥९७७॥
पम्हलेस्सेहिवि चत्तारि उद्देसगा ॥४१।५२॥ सुक्कलेस्सेहिवि चत्तारि उद्देसगा ओहियसरिसा, एवं एएवि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

*** अत्र मूल-संपादने सूत्रक्रम-सूचने एका स्खलना दृश्यते– सू. ८६६ स्थाने ८६७ मुद्रितं (यहां सूत्रक्रम ८६६ लिखना भूल गये है, सिधा ८६७ लिखा है

४१ शतके १ से १९६ उदेशका: वर्तते तद् अन्तर्गत अत्र उद्देशक: ८ समाप्त:, उद्देशका: ९ - ५२ आरब्धा: एवं समाप्ता:, उद्देशक: ५३ आरब्धा:

भवसिद्धिएहिवि अट्ठावीसं उद्देसगा भवंति । सेवं भंते! सेवं भंते! त्ति ॥४१।५६॥ अभवसिद्धियरासीजुम्मकडजुम्मनेरइया णं कओ उववज्जन्ति जहा पढमो उद्देसगो नवरं मणुस्सा नेरइया य सरिसा भाणियव्वा, सेसं तहेव । सेवं भंते! २। एवं चउसुवि जुम्मेसु चत्तारि उद्देसगा । कण्हलेस्सअभवसिद्धियरासीजुम्मकडजुम्मनेरइया णं भंते! कओ उववज्जंति?, एवं चेव चत्तारि उद्देसगा, एवं नीललेस्सअभव० चत्तारि उद्देसगा काउलेस्सेहिवि चत्तारि उद्देसगा तेउलेस्सेहिवि चत्तारि उद्देसगा पम्हलेस्सेहिवि चत्तारि उद्देसगा सुक्कलेस्सअभवसिद्धिएवि चत्तारि उद्देसगा, एवं एएसु अट्ठावीसाएवि अभवसिद्धियउद्देसएसु मणुस्सा नेरइयगमेणं नेयव्वा । सेवं भंते! २ त्ति । एवं एएवि अट्ठावीस उद्देसगा ॥४१।८४॥ सम्मदिट्ठीरासीजुम्मकडजुम्मनेरइया णं भंते! कओ उववज्जंति?, एवं जहा पढमो उद्देसओ एवं चउसुवि जुम्मेसु चत्तारि उद्देसगा भवसिद्धियसरिसा कायव्वा । सेवं भंते! २ त्ति ॥ कण्हलेस्ससम्मदिट्ठीरासीजुम्मकडजुम्मनेरइया णं भंते! कओ उववज्जंति?, एएवि कण्हलेस्ससरिसा चत्तारिवि उद्देसगा कायव्वा, एवं सम्मदिट्ठीसुवि भवसिद्धियसरिसा अट्ठावीसं उद्देसगा कायव्वा । सेवं भंते! सेवं भंतेत्ति जाव विहरइ ॥४१।११२॥ मिच्छादिट्ठीरासीजुम्मकडजुम्मनेरइया णं भंते! कओ उववज्जंति?, एवं एत्थवि मिच्छादिट्ठिअभिलावेणं अभवसिद्धियसरिसा अट्ठावीसं उद्देसगा कायव्वा । सेवं भंते! सेवं भंतेत्ति ॥ ४१।१४०॥ कण्हपक्खियरासीजुम्मकडजुम्मनेरइया णं भंते! कओ उववज्जंति?, एवं एत्थवि अभवसिद्धियसरिसा अट्ठावीसं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

४१ शतके १ से १९६ उदेशका: वर्तते तद् अन्तर्गत अत्र उद्देशक: ५३ समाप्त:, उद्देशका: ५४ - १४० आरब्धा: एवं समाप्ता:, उद्देशक: १४१.. आरब्धा:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः२ ॥९७८॥

उद्देसगा कायव्वा। सेवं भंते! २ त्ति ॥ ४१।१६८ ॥ सुक्कपक्खियरासीजुम्मकडजुम्मनेरइया णं भंते! कओ उववज्जंति?, एवं एत्थवि भवसिद्धियसरिसा अट्ठावीसं उद्देसगा भवंति, एवं एए सव्वेवि छन्नउयं उद्देसगसयं भवन्ति रासीजुम्मसयं ॥ ४१।१९६ ॥ जाव सुक्कलेस्सा सुक्कपक्खियरासीजुम्मकलियोगवेमाणिया जाव जइ सकिरिया तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झंति जाव अंतं करेंति, णो इणट्ठे समट्ठे, सेवं भंते! २ त्ति। (सूत्रं ८६७) भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ २ त्ता वंदति नमंसति वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी–एवमेयं भंते! तहमेयं भंते! अवितहमेयं भंते! असंदिद्धमेयं भंते! इच्छियमेयं भंते! पडिच्छियमेयं भंते! इच्छियपडिच्छियमेयं भंते! सच्चे णं एसमट्ठे जे णं तुज्झे वदहत्तिकट्टु, अपूतिवयणा खलु अरिहंता भगवंतो, समणं भगवं महावीरं वंदति नमंसति वंदित्ता नमंसित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ ॥ (सूत्रं ८६८) रासीजुम्मसयं सम्मत्तं ॥ ४१ सतं ॥ सव्वाए भगवईए अट्ठतीसं सतं सयाणं १३८ उद्देसगाणं १९२५ ॥ ॥ इति श्रीमती भगवती समाप्ता ॥

४१ शतके सू० ८६७ समाप्तिः सू. ८६८

‘रासीजुम्म’त्ति युग्मशब्दो युगलवाचकोऽप्यस्त्यतोऽसाविह राशिशब्देन विशेष्यते ततो राशिरूपाणि युग्मानि न तु द्वितयरूपाणीति राशियुग्मानि, ‘रासीजुम्मकडजुम्मनेरइय’त्ति राशियुग्मानां भेदभूतेन कृतयुग्मेन ये प्रमितास्ते राशियुग्मकृतयुग्मास्ते च ते नैरयिकाश्चेति समासोऽतस्ते । ‘अणुसमय’मित्यादि, पदत्रयमेकार्थम् । ‘आयजसेणं’ति आत्मनः सम्बन्धि यशो यशोहेतुत्वाद्यशः–संयमः आत्मयशस्तेन, ‘आयजसं उवजीवंति’त्ति ‘आत्मयशः’ आत्मसंय- ॥९७८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

४१ शतके १ से १९६ उदेशका: वर्तते तद् अन्तर्गत अत्र उद्देशक: १४१.. समाप्त:, उद्देशका: १४२ - १९६ आरब्धा: एवं समाप्ता:,

शतकं एकचत्वारिंशतं परिसमाप्तं

मम् 'उपजीवन्ति' आश्रयन्ति विदधतीत्यर्थः, इह च सर्वेषामेवात्मायशसैवोत्पत्तिः उत्पत्तौ सर्वेषामप्यविरतत्वादिति ॥ इह च शतपरिमाणमिदम्—आद्यानि द्वात्रिंशच्छतान्यविद्यमानावान्तरशतानि ३२ त्रयस्त्रिंशादिषु तु सप्तसु प्रत्येकमवान्तरशतानि द्वादश ८४ चत्वारिंशे त्वेकविंशतिः २१ एकचत्वारिंशे तु नास्त्यवान्तरशतम् १, एतेषां च सर्वेषां मीलनेऽष्टत्रिंशदधिकं शतानां शतं भवति,। एवमुद्देशकपरिमाणमपि सर्वं शास्त्रमवलोक्यावसेयं, तच्चैकोनविंशतिशतानि पञ्चविंशत्यधिकानि ॥ इह शतेषु कियत्स्वपि वृत्तिकां, विहितवानहमस्मि सुशङ्कितः। विवृतिचूर्णिगिरां विरहाद्दिदृक्, कथमशङ्कमियर्त्यथवा पथि? ॥ १ ॥ एकचत्वारिंशं शतं वृत्तितः परिसमाप्तम् ॥ ४१ ॥

अथ भगवत्या व्याख्याप्रज्ञप्त्याः परिमाणाभिधित्सया गाथामाह—

चुलसीयसयसहस्सा पदाण पवरवरणाणदंसीहिं। भावाभावमणंता पन्नत्ता एत्थमंगंमि ॥ १ ॥

'चुलसी'त्यादि, चतुरशीतिः शतसहस्राणि पदानामत्राङ्गे इति सम्बन्धः, पदानि च विशिष्टसम्प्रदायगम्यानि, प्रवराणां वरं यज्ज्ञानं तेन पश्यन्तीत्येवंशीला ये ते प्रवरज्ञानदर्शिनस्तैः केवलिभिरित्यर्थः प्रज्ञप्तानीति योगः, इदमस्य सूत्रस्य स्वरूपमुक्तमथार्थस्वरूपमाह—'भावाभावमणंत'त्ति 'भावा–जीवादयः पदार्थाः अभावाश्च–त एवान्यापेक्षया भावाभावाः, अथवा भावा–विधयोऽभावा–निषेधाः प्राकृतत्वाच्चेत्थंनिर्देशः 'अनन्ताः' अपरिमाणाः अथवा भावाभावै-

१ यद्यपि संग्रहणीगाथानुसारियन्त्रकानुसारेण त्रयोविंशत्यधिकमेकोनविंशं शतमुद्देशकानां भवति परं वादान्तराभिप्रायेण विंशतितमे शतके द्वादशोद्देशकाः यतस्तत्र न प्रस्तुतवाचनायामिव षष्ठः पृथ्व्युद्देशकः पृथ्व्यब्वायुस्वरूपाभिधायां किंतूद्देशकत्रयमेव भिन्नं, अत्र तु त्रयाभिधाय्यपि पृथ्व्युपलक्षणत्वात् पृथ्व्युद्देशकत्रयाभिधाय्यप्येक एवेति।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सूत्रकार रचित उपसंहार-गाथा: एवं तस्या अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तय:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥९७१॥

विषयभूतैरनन्तानि भावाभावानन्तानि चतुरशीतिः शतसहस्राणि प्रज्ञप्तानि 'अत्र' प्रत्यक्षे पञ्चमे इत्यर्थः 'अङ्गे' प्रवचन- अन्त्यमंगलादि सू. ८६२
परमपुरुषावयव इति गाथार्थः ॥ १ ॥

अथान्त्यमङ्गलार्थं संघं समुद्ररूपकेण स्तुवन्नाह—

तवनियमविणयवेलो जयति सदा नाणविमलविपुलजलो। हेतुसतविपुलवेगो संघसमुद्दो गुणविसालो ॥२॥

'तवे'त्यादि गाथा, तपोनियमविनया एव वेला-जलवृत्तिरवसरवृद्धिसाधर्म्याद्यस्य स तथा 'जयति' जेतव्यजयेन विजयते 'सदा' सर्वदा ज्ञानमेव विमलं निर्मलं-विपुलं-विस्तीर्णं जलं यस्य स तथा अस्ति (अस्ताघ) त्वसाधर्म्यात्स तथा, हेतुशतानि-इष्टानिष्टार्थसाधननिराकरणयोर्लिङ्गशतानि तान्येव विपुलो-महान् वेगः-कल्लोलावर्त्तादिरयो यस्य विवक्षितार्थक्षेपसाधनसाधर्म्यात्स तथा 'संघसमुद्रः' जिनप्रवचनोदधिर्गाम्भीर्यसाधर्म्यात्, अथवा साधर्म्यं साक्षादेवाह—गुणैः-गाम्भीर्यादिभिर्विशालो विस्तीर्णस्तद्बहुत्वाद्यः स तथेति गाथार्थः ॥ २ ॥

णमो गोयमाईणं गणहराणं, णमो भगवईए विवाहपन्नत्तीए, णमो दुवालसंगस्स गणिपिडगस्स ॥ [कुसुम] कुम्मसुसंठियचलणा, अमलियकोरंटबेंटसंकासा। सुयदेवया भगवई मम मतितिमिरं पणासेउ ॥ १ ॥

पन्नत्तीए आइमाणं अट्ठण्हं सयाणं दो दो उद्देसगा उद्दिसिज्जन्ति णवरं चउत्थे सए पढमदिवसे अट्ठ बितियदिवसे दो उद्देसगा उद्दिसिज्जंति, नवरं नवमाओ सताओ आरद्धं जावइयं जावइयं एति तावतियं २ ॥९७२॥
एगदिवसेणं उद्दिसिज्जति उक्कोसेणं सतंपि एगदिवसेणं मज्झिमेणं दोहिं दिवसेहिं सतं जहन्नेणं तिहिं दिव-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सूत्रकार रचित उपसंहार-गाथा: एवं तस्या अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तय:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

सेहिं सतं एवं जाव वीसतिमं सतं, णवरं गोसालो एगदिवसेणं उद्दिसिज्जति जदि ठियो एगेण चेव आयंबिलेणं अणुन्नज्जिहीति अह ण ठितो आयंबिलेणं छट्ठेणं अणुण्णवति, एक्कवीसबावीसतेवीसतिमाइं सताइं एक्केक्कदिवसेणं उद्दिसिज्जन्ति, चउवीसतिमं सयं दोहिं दिवसेहिं छ छ उद्देसगा, पंचवीसतिमं दोहिं दिवसेहिं छ छ उद्देसगा, बंधिसयाइ अट्ठसयाइं एगेणं दिवसेणं सेढिसयाइं बारस एगेणं एगिंदियमहाजुम्मसयाइं बारस एगेणं एवं बेंदियाणं बारस तेइंदियाणं बारस चउरिंदियाणं बारस एगेण असन्निपंचिंदियाणं बारस सन्निपंचिंदियमहाजुम्मसयाइं एक्कवीसं एगदिवसेणं उद्दिसिज्जन्ति रासीजुम्मसतं एगदिवसेणं उद्दिसिज्जति ॥

विधसियअरविंदकरा नासियतिमिरा सुयाहिया देवी । मज्झंपि देउ मेहं बुहविबुहणमंसिया णिच्चं ॥ १ ॥

सुयदेवयाएँ पणमिमो जीए पसाएण सिक्खियं नाणं । अण्णं पवयणदेवी संतिकरी तं नमंसामि ॥ १ ॥

॥ इति श्रीभगवतीसूत्रं सम्पूर्णम् ॥

सुयदेवया य जक्खो कुंभधरो बंभसंति वेरोट्टा । विज्जा य अंतहुंडी देउ अविग्घं लिहंतस्स ॥ १ ॥

(सू० ८६९) इति श्रीविवाहपन्नत्ती पंचमं अंगं सम्मत्तं ॥ श्रेयोऽस्तु लेखकपाठकयोः ॥ ग्रं० १५७५१ ॥ श्रीरस्तु ॥

'णमो गोयमाईणं गणहराण'मित्यादयः पुस्तकलेखककृता नमस्काराः प्रकटार्थाश्चेति न व्याख्याताः ॥ इति श्रीमदभयदेवसूरिविरचिता श्रीपञ्चमाङ्गविशेषवृत्तिः परिसमाप्ता ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सूत्रकार रचित उपसंहार-गाथा: एवं तस्या अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तय:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥९८०॥

टीकाकार-प्रशस्तिः

यदुक्तमादाविह साधुयोधैः, श्रीपञ्चमाङ्गोन्नतकुञ्जरोऽयम् ।
सुखाधिगम्योऽस्त्विति पूर्वगुर्वी, प्रारभ्यते वृत्तिवरत्रिकेयम् ॥ १ ॥
समर्थितं तत्पटुबुद्धिसाधुसाहायकात्केवलमत्र सन्तः ।
सद्बुद्धिदात्र्याऽपगुणांल्लुनन्तु, सुखग्रहा येन भवत्यथैषा ॥ २ ॥
चांद्रे कुले सद्वनकक्षकल्पे, महाद्रुमो धर्म्मफलप्रदानात् ।
छायान्वितः शस्तविशालशाखः, श्रीवर्द्धमानो मुनिनायकोऽभूत् ॥ ३ ॥
तत्पुष्पकल्पौ विलसद्विहारसद्गन्धसम्पूर्णदिशौ समन्तात् ।
बभूवतुः शिष्यवरावनीचवृत्ती श्रुतज्ञानपरागवन्तौ ॥ ४ ॥
एकस्तयोः सूरिवरो जिनेश्वरः, ख्यातस्तथाऽन्यो भुवि बुद्धिसागरः ।
तयोर्विनेयेन विबुद्धिनाऽप्यलं, वृत्तिः कृतैषाऽभयदेवसूरिणा ॥ ५ ॥
तयोरेव विनेयानां, तत्पदं चानुकुर्वताम् । श्रीमतां जिनचन्द्राख्यसत्प्रभूणां नियोगतः ॥ ६ ॥
श्रीमज्जिनेश्वराचार्यशिष्याणां गुणशालिनाम् । जिनभद्रमुनीन्द्राणामस्माकं चांह्रिसेविनः ॥ ७ ॥
यशश्चन्द्रगणेर्गाढसाहाय्यात्सिद्धिमागता । परित्यक्तान्यकृत्यस्य, युक्तायुक्तविवेकिनः ॥ ८ ॥ युग्मम् ।

॥९८०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वृत्तिकार-रचिता प्रशस्ति-गाथा:

शास्त्रार्थनिर्णयसुसौरभलम्पटस्य, विद्वन्मधुव्रतगणस्य सदैव सेव्यः ।
श्रीनिर्वृताख्यकुलसन्नदपद्मकल्पः, श्रीद्रोणसूरिरनवद्ययशःपरागः ॥ ९ ॥
शोधितवान् वृत्तिमिमां युक्तो विदुषां महासमूहेन । शास्त्रार्थनिष्कनिकषणकषपट्टककल्पबुद्धीनाम् ॥ १० ॥
विशोधिता तावदियं सुधीभिस्तथाऽपि दोषाः किल संभवन्ति ।
मन्मोहतस्तांश्च विहाय सद्भिस्तद्ग्राह्यमाप्ताभिमतं यदस्याम् ॥ ११ ॥
यदवाप्तं मया पुण्यं, वृत्ताविह शुभाशयात् । मोहाद्वृत्तिजमन्यच्च, तेनागो मे विशुध्यतात् ॥ १२ ॥
प्रथमादर्शे लिखिता विमलगणिप्रभृतिभिर्निजविनेयैः । कुर्वद्भिः श्रुतभक्तिं दक्षैरधिकं विनीतैश्च ॥ १३ ॥
अस्याः करणव्याख्याश्रुतिलेखनपूजनादिषु यथार्हम् । दायिकसुतमाणिक्यः प्रेरितवानस्मदादिजनान् ॥ १४ ॥
अष्टाविंशतियुक्ते वर्षसहस्रे शतेन चाभ्यधिके । अणहिलपाटकनगरे कृतेयमच्छुप्तधनिवसतौ ॥ १५ ॥
अष्टादश सहस्राणि, षट् शतान्यथ षोडश । इत्येवमानमेतस्याः, श्लोकमानेन निश्चितम् ॥१६॥ अङ्कतोऽपि १८६१६॥

इति श्रीमदभयदेवसूरिविरचिता श्रीपञ्चमाङ्गविशेषवृत्तिः परिसमाप्ता ॥

***इति वृत्तिकार-रचिता प्रशस्ति-गाथा:

पञ्चम-अङ्गसूत्रं ‘भगवती’ मूलं एवम् अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति: परिसमाप्ता

Jain Educati... jainelibrary.org

भाग 11	**भगवती-अंगसूत्र- [५/४] मूलं एवं अभयदेवसूरिजी रचिता टीका परिसमाप्ता:** मूल संशोधकः सम्पादकश्च पूज्य आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराज साहेब **किंचित् वैशिष्ट्य समर्पितेन सह पुन: संकलनकर्ता मुनि दीपरत्नसागरजी** [M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]

	सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि भाग १ से ४० में कहां क्या मिलेगा?		
भाग	इस भागमे समाविष्ट आगम के नाम और आगम-क्रम		कुलपृष्ठ
01	आगम ०१ आचार मूलं एवं वृत्ति भाग-१ श्रुतस्कन्ध-१, अध्ययन- १,२		३१४
02	आगम ०१ आचार मूलं एवं वृत्ति, भाग-२ श्रुतस्कन्ध-१, अध्ययन- ३ से ९, श्रुतस्कन्ध- २		५८६
03	आगम ०२ सूत्रकृत मूलं एवं वृत्ति, भाग-१ श्रुतस्कन्ध-१, अध्ययन- १ से १३		४९८
04	आगम ०२ सूत्रकृत मूलं एवं वृत्ति, भाग-२ श्रुतस्कन्ध-१, अध्ययन १४ से १६, श्रुतस्कन्ध-२		३९२
05	आगम ०३ स्थान मूलं एवं वृत्ति, भाग-१ स्थान- १ से ४		५९४
06	आगम ०३ स्थान मूलं एवं वृत्ति, भाग-२ स्थान- ५ से १० संपूर्ण		४९४
07	आगम ०४ समवाय मूलं एवं वृत्ति.		३३८
08	आगम ०५ भगवती मूलं एवं वृत्ति, भाग-१ शतक- १ से ६		५९२
09	आगम ०५ भगवती मूलं एवं वृत्ति, भाग-२ शतक- ७ से ११		५५२
10	आगम ०५ भगवती मूलं एवं वृत्ति, भाग-३ शतक- १२ से २०		५१४
11	आगम ०५ भगवती मूलं एवं वृत्ति, भाग-४ शतक- २१ से ४१ संपूर्ण		३८४
12	आगम ०६ ज्ञाताधर्मकथा मूलं एवं वृत्ति.		५२२
13	आगम-७,८,९,१०उपासकदशा, अंतकृतदशा, अनुत्तरोपपातिकदशा, प्रश्नव्याकरण मूलं एवं वृत्ति.		५३८
14	आगम-११,१२, विपाक, उववाई मूलं एवं वृत्ति.		३८४
15	आगम १३ राजप्रश्नीय मूलं एवं वृत्ति.		३१४
16	आगम१४ जीवाजीवाभिगम भाग-१ मूलं एवं वृत्ति. [प्रतिपत्ति-३-अतर्गत] सूत्र- १ से १३८		४८०
17	आगम१४ जीवाजीवाभिगम भाग-२ मूलं एवं वृत्ति. [प्रतिपत्ति-३-अतर्गत] सूत्र- १३९ से प्रतिपत्ती-१० संपूर्ण		४८८
18	आगम १५ प्रज्ञापना भाग-१ मूलं एवं वृत्ति. पद- १ से ५		४२६
19	आगम १५ प्रज्ञापना भाग-२ मूलं एवं वृत्ति. पद- ६ से २२		५१४
20	आगम १५ प्रज्ञापना भाग-३ मूलं एवं वृत्ति. पद- २३ से ३६ संपूर्ण		३३६
21	आगम १६ सूर्यप्रज्ञप्ति मूलं एवं वृत्ति.		६१०

सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि भाग १ से ४० में कहां क्या मिलेगा?

भाग	इस भागमे समाविष्ट आगम के नाम और आगम-क्रम		कुलपृष्ठ
22	आगम १७ चन्द्रप्रज्ञप्ति मूलं एवं वृत्ति.		६१४
23	आगम१८ जंबूद्विपप्रज्ञप्ति भाग-१ मूलं एवं वृत्ति. वक्षस्कार- १ एवं २.		३७६
24	आगम१८ जंबूद्विपप्रज्ञप्ति भाग-२ मूलं एवं वृत्ति. वक्षस्कार- ३ एवं ४.		४२६
25	आगम१८ जंबूद्विपप्रज्ञप्ति भाग-३ मूलं एवं वृत्ति. वक्षस्कार- ५ से ७.		३४४
26	आगम १९ थी ३२ निरयावलिका, कल्पवतंसिका, पुष्पिका, पुष्पचूलिका, वृष्णिदशा, चतु:शरण, आतुरपरत्याख्यान, महाप्रत्याख्यान, भक्तपरिज्ञा, तंदुलवैचारिक, संस्तारक, गच्छाचार, गणिविद्या, देवेन्द्रस्तव मूलं एवं छाया		३१२
27	आगम ३३ थी ३९ मरणसमाधि मूलं एवं छाया, निशीथ, ब्रुहत्कल्प, व्यवहार, दशाश्रुतस्कंध, जीतकल्प/पंचकल्प, महानिशीथ मूलं एव		३३०
28	आगम ४० आवश्यक मूलं एवं वृत्ति, भाग-१, निर्युक्ति- १ से ५२१		४६६
29	आगम ४० आवश्यक मूलं एवं वृत्ति, भाग-२, निर्युक्ति- ५२२ से ९५१		४४२
30	आगम ४० आवश्यक मूलं एवं वृत्ति, भाग-३ निर्युक्ति- ९५२ से १२७३ अपूर्ण, [अध्ययन- १ से ४ अपूर्ण]		४६४
31	आगम ४० आवश्यक मूलं एवं वृत्ति, भाग-४ निर्युक्ति- १२७३ अपूर्ण से १६२३, [अध्ययन- ४ अपूर्ण से ६ संपूर्ण]		४२६
32	आगम ४१/१ ओघनिर्युक्ति मूलं एवं वृत्ति.		४७२
33	आगम ४१/२ पिंडनिर्युक्ति मूलं एवं वृत्ति.		३७६
34	आगम ४२ दशवैकालिक मूलं एवं वृत्ति.		५९०
35	आगम ४३ उत्तराध्यन मूलं एवं वृत्ति, भाग-१, अध्ययन- १ से ५		५२२
36	आगम ४३ उत्तराध्यन मूलं एवं वृत्ति, भाग-२, अध्ययन- ६ से २१		४८२
37	आगम ४३ उत्तराध्यन मूलं एवं वृत्ति, भाग-३, अध्ययन- २२ से ३६		४६६
38	आगम ४४ नन्दिसूत्र मूलं एवं वृत्ति.		५२८
39	आगम ४५ अनुयोगद्वार् मूलं एवं वृत्ति.		५६०
40	कल्प[बारसा]सूत्र... चतु:शरण, तन्दुलवैचारिक, गच्छाचार मूलं एवं वृत्ति.		३९४

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

पूज्य आनंद-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर गुरूभ्यो नम:

5/4

पूज्य आगमोध्धारक आचार्य श्री सागरानंदसूरीश्वरेण संशोधित: संपादितश्च

"भगवती सूत्र"शतक- २१ से ४१ [मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचित वृत्ति:]

(किंचित् वैशिष्ठ्यं समर्पितेन सह)

मुनि दीपरत्नसागरेण पुन: संकलित:

"भगवती" मूलं एवं वृत्ति:" नामेण **परिसमाप्त:**

"सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि" श्रेणि, भाग- 11

आगम

वाचना शताब्दी वर्ष

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि

मूल संशोधक

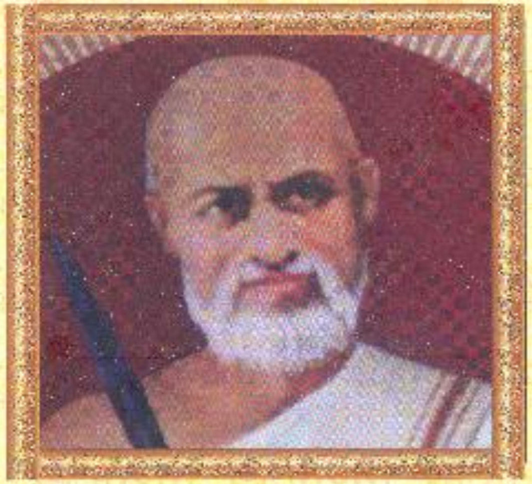

पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्य

श्री आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराज

अभिनव-संकलनकर्ता

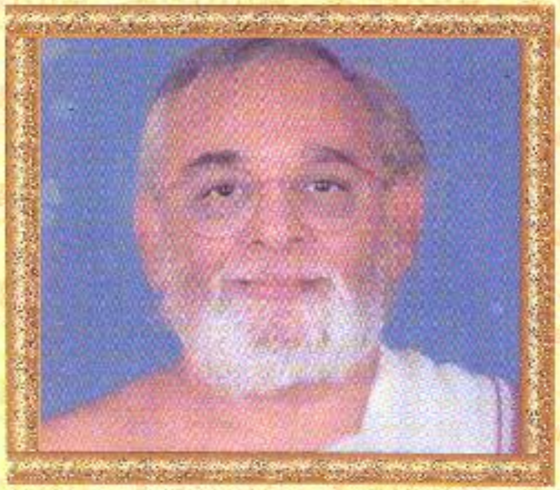

आगम दिवाकर **मुनिश्री दीपरत्नसागरजी**

[M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]

प्रत-प्राप्ति और पेज-सेटिंग कर्ता : www.jainelibrary.org के चेरमन श्री प्रवीणभाई शाह, अमेरिका

मुद्रक : नवप्रभात प्रिन्टींग प्रेस अमदाबाद Mo 9825598855 / 9825306275

ईस प्रोजेक्ट के संपूर्ण-अनुदान-दाता

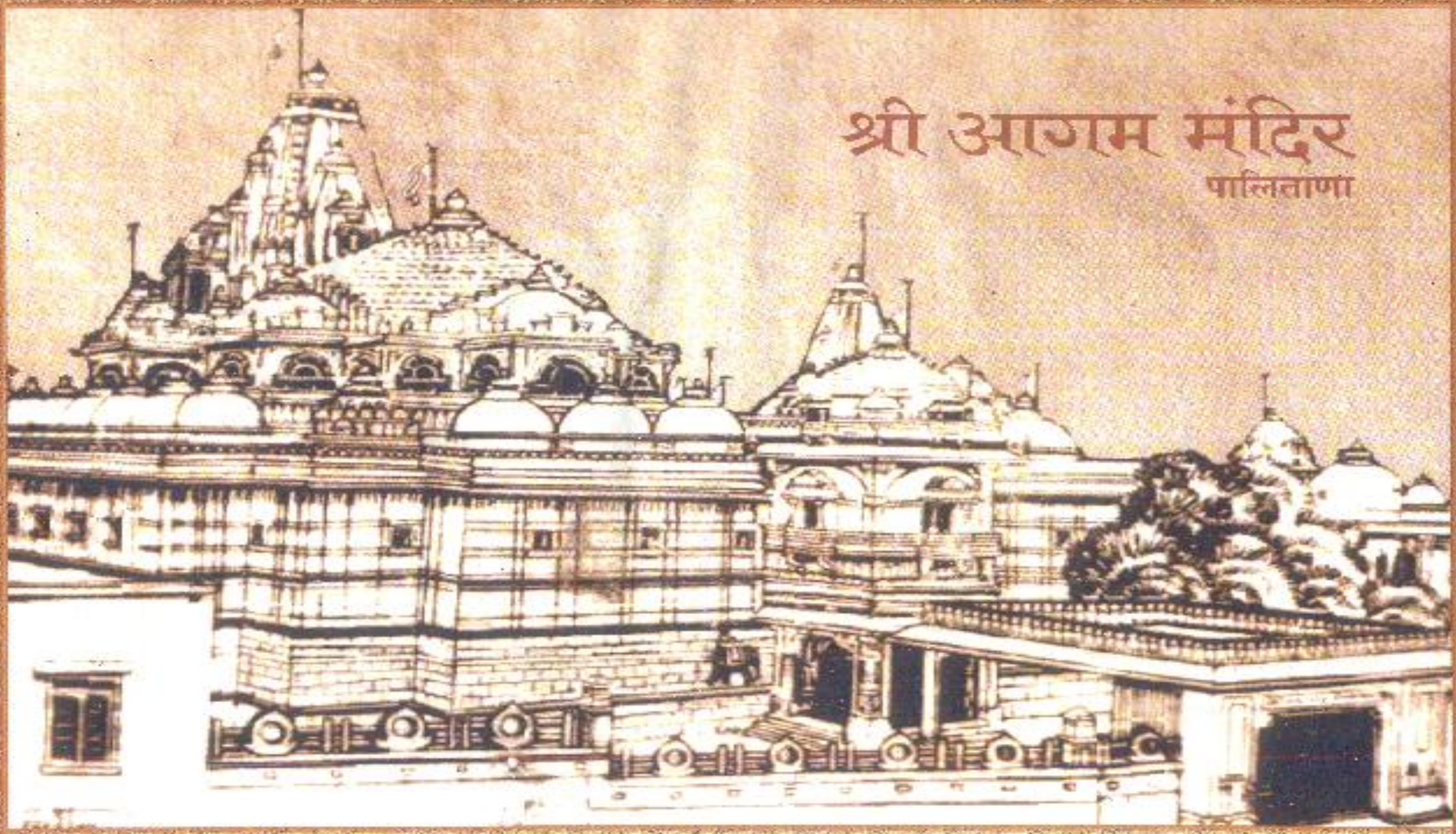

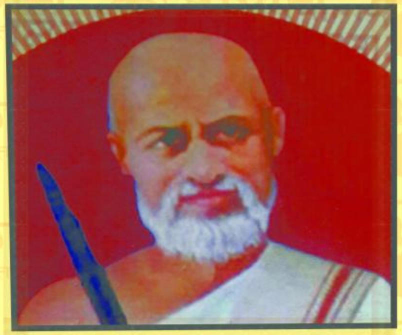

मूल संशोधक

पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्य

श्री आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराजसाहेब

आगम - ५

'भगवती' मूलं एवं वृत्तिः [४]

अभिनव-संकलनकर्ता

आगम दिवाकर **मुनिश्री दीपरत्नसागरजी**

[M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]